बँगला (भाषा और साहित्य) पर हिन्दी (भाषा और साहित्य) का प्रभाव

(आगरा विश्वविद्यालय की पी-एच०डी० उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबन्ध)

लेखक
डॉ० ब्रह्मानन्द एम० ए० पी-एच० डी०
प्राध्यापक हिन्दी-विभाग
डूंगर कालेज, बीकानेर

प्रकाशक
अशोक प्रकाशन
नई सड़क, दिल्ली।

प्रकाशक
जगदीशप्रसाद गुप्त
अशोक प्रकाशन
नई सड़क दिल्ली।

प्रथम संस्करण फरवरी १९६२
मूल्य १५.००

मुद्रक
निरंजन स्वरूप सक्सेना
हीलाईट प्रेस
दिल्ली।

भूमिका

'जादू उसे कहते हैं जो सिर पर चढ़ कर बोले' यह उक्ति गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर के संबंध में शत-प्रतिशत चरितार्थ होती है, निःसन्देह उनकी गीतांजलि के माध्यम से उनके व्यक्तित्व एवं कवित्व का जादू भारत पर ही नहीं, प्रत्युत सारे विश्व पर हुआ है।

आज से दस वर्ष पूर्व जब लेखक १९५० में इन्टरमिडियट श्रेणी का विद्यार्थी था, तब गीतांजलि के हिन्दी अनुवाद रूपी वातायन से ही उदात्त-भावना का समन्वित आलंकारिक-भाषा-सम्पन्न रवीन्द्र साहित्य रत्नाकर की एक झलक पा सका। लेखक गीतांजलि के भावपक्ष से ही रवीन्द्रनाथ के प्रति आकर्षित हुआ और रवीन्द्रनाथ के माध्यम से ही गौरवमयी बंगभारती के दर्शन कर भाव-विभोर हो गया।

यह सन् १९५१ की बात है कि जब साहित्यरत्न के एक प्रश्न-पत्र के लिए प्रान्तीय भाषाओं में से किसी एक को चुनने का विकल्प था। अतः बँगला से सहज प्रेम होने के कारण इसी को चुना।

जब आगरा विश्वविद्यालय हिन्दी-विद्यापीठ में शोध-कार्य के लिये प्रवेश लिया तब विषय चुनने के कई सुझाव मिले। तुलनात्मक अध्ययन का भी एक सुझाव था। तब पूर्व संस्कारोंवश लेखक ने बँगला को ही इस अध्ययन का विषय बनाना श्रेयस्कर समझा।

बँगला के प्रति लेखक का सहज मोह था और इस कार्य के लिये विद्यापीठ तथा पूज्य श्री हरप्रसाद शास्त्री महोदय का निजी काली मंदिर पुस्तकालय, बँगला लाइब्रेरी आदि उपयुक्त साधन भी मिल गये।

श्रद्धेय बाबू गुलाबराय जी और जिन जिन बंगाली विद्वानों से लेखक ने लिखा पढ़ी की उनसे पूर्ण प्रोत्साहन मिला।

अन्ततोगत्वा गुरुवर डॉ० सत्येन्द्र जी की देखरेख में यह शोध-कार्य करना निश्चित हो गया।

अतः प्रस्तुत अनुसंधान कार्य में बँगला और हिन्दी की आदान-प्रदान की युग-युगीन विस्मृत एवं प्रच्छन्न कड़ी को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। लेखक का उद्देश्य किसी एक भाषा एवं साहित्य की श्रेष्ठता दिखाना नहीं है, वरन् घटनाओं और तथ्यों के आधार पर बँगला और हिन्दी दोनों का निकट सम्पर्क और भारत की आत्मास्वरूप व्यापक विचारों और भावों के मिले-जुले तन्तुओं को देखना है। दोनों ही व्यापक भारतीय साहित्य के पुष्ट और प्रबल अंग हैं। दोनों ही भारतीय विचारधारा और काव्य-परम्पराओं से अनुप्राणित हैं। दोनों ही एक दूसरे

के आदान प्रदान से पनपे और पुष्ट हुए हैं। अत लेखक का इसी आदान प्रदान के अध्ययन के लिये यह शोध प्रबंध एक प्रयास है।

भारत में अनुस्यूत सांस्कृतिक एकता है इसी विशाल देश को एक सूत्र में पिरोने वाली भारतीय संस्कृति ही है। इस संस्कृति का स्रोत संस्कृत भाषा एवं साहित्य के रूप में भारतीय भाषाओं में प्रवाहित होता रहा है।

संस्कृत एवं इसकी परवर्ती भाषाएं मध्यदेशीय भाषा होने पर समग्र देश को उत्प्रेरित और प्रभावित करती रही हैं। यह एक इतिहास का सत्य है जैसा कि स्वनाम-धन्य भारत के प्रसिद्ध भाषाचार्य डॉ॰ सुनीतिकुमार चटर्जी का कथन है 'मध्यदेश ही (दिल्ली आगरा का प्रदेश) सर्वदा से भारत में संस्कृति का अग्रदूत राजनीति और प्रशासन का केन्द्र भाषा और साहित्य का दुर्ग और प्रेरणास्थल रहा है। संस्कृत की परवर्ती समस्त मध्यदेशीय भाषाएं क्रमश पाली प्राकृत शौरसेनी अपभ्रंश ब्रजभाषा (पश्चिमी हिन्दी) एवं आधुनिक हिन्दी या उर्दू (खड़ी बोली के दो रूप) सर्वदा से भारतीय जीवन के हर पहलू पर गंभीर और चिरस्थायी प्रभाव छोड़ती आई हैं। मध्यदेश को भारत का हृदपिण्ड कह सकते हैं और इसकी भाषाओं के साहित्य को इसका युग युगीन स्पन्दन।

हिन्दी का अन्य प्रान्तीय भाषाओं पर प्रभाव एवं भारतीय गणराज्य की राष्ट्र भाषा होने का रहस्य भी इसी में निहित है।

एक भाषा का प्रभाव दूसरी भाषाओं पर यों ही (अकस्मात) नहीं पड़ता है। उसके पीछे गंभीर एवं ठोस सांस्कृतिक राजनीतिक साहित्यिक तथा ऐतिहासिक कारण और घटनाएं हुआ करती हैं।

यह विदित इतिहास से सिद्ध हो चुका है कि संस्कृति एवं साहित्य के क्षेत्र में सर्वदा आदान प्रदान होता रहता है। पारस्परिक आदान प्रदान का सिद्धान्त भारतीय भाषाओं पर भी लागू होता है।

हिंदी भाषा और साहित्य का प्रभाव युग-युगान्तर से बंगला मराठी गुजराती और पंजाबी आदि इसकी भगिनियों पर रहा है। उक्त भाषाओं का प्रभाव भी न्यूनाधिक रूप में हिंदी पर पड़ा है।

हिंदी का प्रभाव बंगला भाषा और साहित्य पर उसके शैशव काल से लेकर आधुनिक-काल तक दृष्टिगोचर होता है बंगाल के लब्धप्रतिष्ठ विद्वान बंगला भाषा एवं साहित्य के इतिहासकार सर्वश्री डॉ॰ दीनेशचन्द्र सेन डॉ॰ सुनीतिकुमार चटर्जी डॉ॰ सुकुमार सेन डॉ॰ मोहम्मद शहीदुल्ला डॉ॰ सुशील कुमार दे डॉ॰ शशिभूषण दास गुप्त डॉ॰ सत्येन्द्रनाथ घोषाल डॉ॰ उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य आदि महानुभाव हिंदी का बंगला पर प्रभाव मुक्तकण्ठ से स्वीकार करते हैं।

कुछ लोगों की धारणा है कि बंगला का प्रभाव ही हिंदी पर है हिन्दी का बंगला पर नहीं प्रतीत होता। यह विचार ठीक नहीं है। क्योंकि संस्कृति और भाषा के क्षेत्र में एक हाथ से ताली नहीं बजती ? क्योंकि प्रत्येक भाषा अनेक भाषाओं की खिचड़ी होती है। प्रत्येक साहित्य अनेक भाषाओं के साहित्यों से कुछ न कुछ आधार एवं प्रेरणा लेकर निर्मित होता है। संसार के इतिहास में ऐसी कोई भाषा नहीं है जो बिलकुल अन्य भाषाओं के प्रभाव से बच सकी हो।

ऐसे भ्रामक विचार दोनों भाषाओं के साहित्य एवं इतिहास की अनभिज्ञता तथा अन्य कारणों से उत्पन्न होते हैं। कुछ भी हो हिन्दी का बँगला पर प्रभाव ऐतिहासिक घटना है।

अतः इस प्रभाव का परिचय देने के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध के बँगला साहित्य के इतिहासानुसार काल विभाजन के अनुसार चार अध्याय किये गये हैं। तथा प्रत्येक अध्याय के साथ ही उसका परिशिष्ट भी दे दिया गया है।

प्रथम अध्याय	पृष्ठभूमि तथा प्रारम्भिक काल (चैतन्य पूर्वयुग)	(८०० १४०० ई०)
द्वितीय अध्याय	प्रारम्भिक भक्ति आन्दोलन का इतिहास (चैतन्य वैष्णव युग)	(१४०० १७०० ई०)
तृतीय अध्याय	चैतन्योत्तर (वैष्णवोत्तर) काल (इस्लामिक बँगला) परम्परा साहित्य की	(१७०० १८५० ई०)
चतुर्थ अध्याय	आधुनिक काल	(१९०० से)

यह कालक्रम सकड़ों साल तक जाता है। अतः प्रत्येक युग की कोई अन्तिम ठोर सीमारेखा निर्धारित नहीं हो सकती। अतः प्रत्येक युग की साहित्यिक एवं भाषायी धारायें समानान्तर भी चलती रहती हैं। एक दूसरी की सीमा को पार (overlap) भी कर जाती हैं। किन्तु किसी एक की प्रधानता होने पर युग का नामकरण उसी प्रवृत्ति के आधार पर होता है।

प्रथम अध्याय में दोनों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि एवं एकता और प्रारम्भिक काल पर कुछ प्रकाश डाला गया है। अपभ्रंश साहित्य नाथ साहित्य मैथिली भाषा या विद्यापति साहित्य के विषय में कुछ विवेचन किया गया है। इसी अध्याय के परिशिष्ट में कुछ पत्रों की प्रतिलिपियाँ भी दी गई हैं।

द्वितीय अध्याय में बँगला के गौड़ीय वैष्णव साहित्य पर हिन्दी का प्रभाव पाँच रूपों में दिखाया गया है। यह प्रभाव भक्ति आन्दोलन का कुछ परिचय देते हुए स्पष्ट किया गया है। क्योंकि भक्ति आन्दोलन के परिणामस्वरूप ही हिन्दी का प्रभाव बंगला पर पड़ा है। यह पंचमुखी प्रभाव इस प्रकार है—

१—शब्दगत हिन्दी प्रभाव।
२—वाक्यविन्यासगत हिन्दी प्रभाव।
३—पदगत हिन्दी प्रभाव।
४—भावागत (ब्रजबुलिगत) हिन्दी प्रभाव।
५—हिन्दी भक्तमाल का प्रभाव।

इस अध्याय के परिशिष्ट में गौड़ीय वैष्णव पदावली में हिन्दी शब्दावली की सूची भी दी गई है।

तृतीय अध्याय में इस्लामिक बँगला साहित्य की परम्परा पर हिन्दी प्रभाव की चर्चा की गई है। दौलत काज़ी आलाओल मुसलमानी बँगला साहित्य एवं मुसलमानी बँगला भाषा भारतचन्द्र राय तथा रामनिधि गुप्त पर हिन्दी प्रभाव का दिग्दर्शन है। इसी अध्याय के परिशिष्ट में बँगला रामायणों पर तुलसी रामायण के प्रभाव के बारे में कुछ प्रकाश डाला गया है, और अन्य रायबार (राज प्रशस्तियों) पर हिन्दी प्रभाव का सिंहावलोकन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में भी आधुनिक बँगला भाषा और साहित्य पर हिन्दी के प्रच्छन्न प्रभाव की रूपरेखा प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर हिन्दी संगीत और संत साहित्य के प्रभाव के विषय में विशेषरूप से लिखा गया है।

इसी अध्याय के परिशिष्ट में बँगला में हिन्दी शब्दावली हिन्दी लोकोक्तियों का प्रभाव बँगला लोकोक्तियों और कुछ मर्यादा-मर्यादाओं पर और हिन्दी संगीत का बँगला संगीत और साहित्य पर प्रभाव का कुछ विवेचन किया गया है। अन्त में कुछ अनुवादों की विशेषत हिन्दी से बँगला में जो अनुवाद हुए हैं उदाहरण के लिए उनकी छोटी सी सूची भी दी गई है। सहायक ग्रन्थों की सूची भी दी गई है।

लेखक की शैली कहीं-कहीं प्रस्तुत प्रबन्ध में बँगला से प्रभावित हो गई है। अत सहज भाव से अवचेतन अवस्था में कुछ शब्दों का प्रयोग इस प्रकार हो गया है। जैसे—ईस्वी सन् के लिए खीष्टाब्द लोकोक्ति के लिए प्रवाद ओगवान के लिए भगवान साहित्यिक भाषा के लिए साधु भाषा बोलचाल की भाषा के लिए चलित भाषा शास्त्रीय हिन्दी संगीत के लिए उच्चांग हिन्दी संगीत आदि शब्दों के प्रयोग हुए हैं।

प्रस्तुत प्रबन्ध में यह दिखाने का प्रयत्न किया गया है कि हिन्दी का प्रभाव भारत की आत्मा का प्रभाव है। भारत की आत्मा को बँगाल ने प्रचुर मात्रा में अपनाया है। हिन्दी भारतीय आत्मा का दर्पण एवं माध्यम है। इसी माध्यम से इन दोनों बहनों का परस्पर मिलन हुआ है। भूतकाल की तरह भविष्य में भी इनमें आदान-प्रदान होता रहेगा और ये घनिष्ठता के आलिंगन में आबद्ध हो जायेंगी।

इस प्रबन्ध का निर्माण करने में लेखक को विकटतम परिस्थितियों का सामना करना पड़ा है। इस प्रबंध के सृजन का श्रेय भारत के दो बड़े ऐतिहासिक नगरों को है। यदि प्रबंध की आत्मा कलकत्ता (बंगभूमि) की है तो निस्सन्देह इसका सुन्दर शरीर आगरा (ब्रजभूमि) का है।

इस प्रबन्ध के अनुसंधान काम के लिए लेखक को दो साल तक कलकत्ता में रहना पड़ा है। वहाँ बंगाल के चोटी के विद्वानों का सहयोग और स्नेह प्रचुर मात्रा में उसे प्राप्त हुआ है। प्रस्तुत प्रबन्ध उनके वरदान और आशीर्वाद का फल है। इस प्रबन्ध की रचना के लिए भिन्न-भिन्न स्रोतों का सहयोग और प्रेरणा प्राप्त हुई है लेखक उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता है। इस प्रबंध के निर्माण में दो महानुभावों डॉ० सुकुमार सेन और डॉ० सत्येन्द्र जी का सर्वाधिक सहयोग और आशीर्वाद रहा है। यह दोनों दिग्गज विद्वान उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के समान हैं। जिन्होंने अनेक आशंकाओं के मध्य में भी लेखक को दिग्भ्रमित नहीं होने दिया।

सर्वप्रथम लेखक उन संस्थाओं का धन्यवाद करता है जिन्होंने इस प्रबंध की सामग्री जुटाने में भरसक सहायता की है। नेशनल लायब्रेरी कलकत्ता एशियाटिक सोसाइटी आफ् बंगाल बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता, कलकत्ता विश्वविद्यालय का केन्द्रीय पुस्तकालय तथा बंगला विभाग विश्वभारती विश्वविद्यालय का केन्द्रीय पुस्तकालय तथा पुथि शाला; श्री आशुतोष स्मृति मन्दिर पुस्तकालय कलकत्ता आगरा विश्वविद्यालय की केन्द्रीय लायब्रेरी आगरा विश्वविद्यालय की हिन्दी विद्या

पीठ लायब्रेरी दिल्ली विश्वविद्यालय का पुस्तकालय साहित्य अकादमी का पुस्तकालय श्री नागरी प्रचारिणी सभा आगरा का पुस्तकालय, श्री हरप्रसाद बागची की निजी वाणी मन्दिर पुस्तकालय आदि संस्थाओं द्वारा पर्याप्त सामग्री प्राप्त हुई। उक्त संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने अमूल्य सहयोग प्रदान कर लेखक का उत्साह बढ़ाया। जिन सज्जनों ने पुस्तक या सूचना सम्बन्धी अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की लेखक उनका अत्यन्त आभारी है।

बंगजगत् के विद्वानों सर्वश्री डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी डॉ० सुकुमार सेन डॉ० शशिभूषणदास गुप्त डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल डॉ० उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य और श्री भूदेव चौधरी आदि ने प्रोत्साहन प्रदान किया तथा अन्य प्रकार की सहायता की।

भारत के सुप्रसिद्ध कलाकार नंदलाल बोस और संत-साहित्य के मर्मज्ञ स्वर्गीय आचार्य क्षितिमोहन सेन (भूतपूर्व उपकुलपति विश्वभारती शान्ति निकेतन) के वात्सल्य को भी लेखक नहीं भूल सकता।

हिन्दी जगत् के विद्वानों सर्वश्री महापंडित राहुल सांकृत्यायन, डॉ० गुलाबराय डॉ० विश्वनाथ प्रसाद जी (हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय के संचालक महोदय) डॉ० सत्येन्द्र जी, डॉ० महादेव प्रसाद साहा, पंडित प्रवर उदयशंकर शास्त्री जी ने अकुण्ठित भाव से लेखक की सहायता की है। हिन्दी जगत् के प्रसिद्ध विद्वान डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी डॉ० बाबूराम सक्सेना, डॉ० इन्द्रनाथ मदान आदि ने पत्र-व्यवहार द्वारा मूल्यवान सहायता की और सुझाव देकर लेखक को अनुगृहीत किया है।

अन्यान्य विद्वान श्री हरप्रसाद बागची डॉ के० आर० पी० रूप डॉ० कमलेश डॉ० केलकर आदि ने भी लेखक की जी खोलकर सहायता की है। सम्बन्धियों साथियों और समवयस्कों में श्री गुरुदेव भट्टाचार्य, श्री भवतोषदत्त श्री राजेन्द्र यादव डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया डॉ० चन्द्रभान रावत डॉ० गणपतिचन्द्र गुप्त श्री गया प्रसाद पाठक और लेखक के सुहृदवर कलाकार धर्मेन्द्र का नाम भी उल्लेखनीय है।

लेखक गुरुजनों के आशीर्वाद और बंधुओं की सद्भावनाओं के साथ अपना यह प्रबन्ध विद्वज्जगत के समक्ष प्रस्तुत करता है।

—ब्रह्मानन्द

विषय सूची

तृतीय अध्याय

चतुर्थ अध्याय

सहायक ग्रंथों की सूची

सांकेतिक चिह्न

> परिस्थिति ज्ञापक या विकास या विकार की गति-द्योतक चिह्न, जैसे—संस्कृत हस्त> प्राकृत हत्थ> हिन्दी हाथ>।

\+ धन या संयोगवाचक चिह्न—भाग्योदय=भाग्य+उदय।

> उत्पत्ति ज्ञापक या पूर्ववर्ती या गतिद्योतक चिह्न जैसे—समझ <समति <समते।

। पूर्णविराम

कामा

सेमीकालन

= तुलनात्मक चिह्न—हि० बहू=संस्कृत वधूक

√ करणी या धातुवाचक चिह्न—गम्धातु √ गम्

* तारक चिह्न

( ) कोष्ठ

" " इनवर्टेड कॉमा

अर्धचन्द्र बिन्दु

% प्रतिशत

अवरोध चिह्न जैसे—है यदि आमनि भान निवारो

? प्रश्नवाचक चिह्न

संयोजक चिह्न या हाइफन

' रेफ चिह्न

' द्विरेफ चिह्न

अतएव

∵ कि कारण [illegible]

× काकपद चिह्न समास चिह्न

— स्मरण चिह्न

' दीर्घ कॉमा

संक्षेप और संकेत

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
अ०	अध्याय		
अ० मं०	अन्नदामंगल	भारतचन्द्र राय	ब्रजेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय सजनी कान्तदास बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता प्रथम संस्करण, १३५८ बंगाब्द ।
अ०प्र०प०र०	अप्रकाशित-पद रत्नावली	श्री सतीशचन्द्र राय	बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता १३३८ बंगाब्द ।
अष्ट०छा०व०	अष्टछाप और वल्लभ-संप्रदाय	डॉ० दीनदयालु गुप्त	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग २००४ वि० ।
अप०सा०	अपभ्रंश-साहित्य	डॉ० हरिवंश कोछड़	भारतीय-साहित्य मंदिर, फव्वारा, दिल्ली, सन् १९५७ ई० ।
इ०बो०सा०	इस्लामिक-बांगला साहित्य	डॉ० सुकुमार सेन	बंग भाषा-साहित्य सभा प्रथम संस्करण १३५८ बंगाब्द ।
ई०	ईसवी		
क० वि०	कल्याण-विशेषांक		गीताप्रेस गोरखपुर ।
गी० अं०	गीतांजलि	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती शांति निकेतन १९११ ई० ।
गौ० च०	गौरचन्द्रोदय	स्वामी हरिदास दास	हरिबोल कुटीर, नदिया ।
गौ०च०चि०	गौरचरित चिन्तामणि	नरहरि चक्रवर्ती	
गौ०प०त०	गौरपद तरंगिणी	जगद्बंधु भद्र	
गौ०वै०सा०	गौड़ीय-वैष्णव साहित्य	स्वामी हरिदास दास	श्रीधाम-नवद्वीप, हरिबोल कुटीर, ४६१ गौराब्द ।
गौ०वै०प०	गौड़ीय-वैष्णव पदावली		
गो०बा०	गोरखबानी	गोरखनाथ	पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।
चै० च०	चैतन्य चरितामृत	कृष्णदास कविराज	राधागोविन्दनाथ, भक्ति ग्रंथ प्रचार भंडार, ११ नं० सुरेन ठाकुर रोड बालिगंज, कलकत्ता १३५२ बंगाब्द ।

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
जा० ग्र०	जायसी ग्रंथावली	रामचन्द्र शुक्ल	
तु० ग्र०	तुलसी ग्रंथावली		नागरी प्रचारिणी सभा काशी २००४ वि०।
तु०श०सा०	तुलसी शब्द सागर	हरगोविंद तिवारी	श्री भोलानाथ तिवारी हिन्दुस्तानी एकेडेमी, उत्तर प्रदेश १९५४ ई०।
दो० को०	दोहा कोश	राहुल सांकृत्यायन	राष्ट्रभाषा परिषद् पटना प्रथम संस्करण १९५७ ई०।
नं० ग्रं०	नंददास ग्रंथावली	व्रजरत्नदास	काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी प्रथम संस्करण सं० २००६ वि०।
ना०प्र०स० का०	नागरी प्रचारिणी सभा काशी		
पद्०	पद्मावत	जायसी	डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल साहित्य सदन, चिरगांव झांसी प्रथमावृत्ति २०१२ वि०।
प० च०	पउमचरिउ	स्वयंभू	आचार्य जिनविजय मुनि डा० हरिवल्लभ चुनीलाल-भायाणी, सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ, भारतीय विद्या भवन बंबई, प्रथम भाग सं० २००६ वि०।
प०क०त०	पदकल्पतरु		श्री सतीशचन्द्र राय बंगीय साहित्य परिषद् मंदिर, १३१८ बंगाब्द।
पृ०	पृष्ठ		
पु नि०	पुरातत्त्व निबंधावली	राहुल सांकृत्यायन	इंडियन प्रेस लिमिटेड प्रयाग १९३७ ई०।
पु० हि०	पुरानी हिन्दी	श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी	नागरी प्रचारिणी सभा काशी।
व०	वर्ष		
बं भा० ओ सा०	बंगभाषा ओ साहित्य	डॉ० दीनेशचंद्र सेन	कलकत्ता विश्वविद्यालय १९१४ ई०।
बं०सा०प०	बंग-साहित्य परिचय	"	कलकत्ता विश्वविद्यालय १९१४ ई०।

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
बां०सा०इ० प्र० ख०	बांगला-साहित्येर इतिहास, प्रथम खंड	डॉ० सुकुमार सेन	मडार्न-बुक एजेन्सी, १० स्क्वायर कलकत्ता १२, १९४८ ई० ।
बां०भा०अ०	बांगला भाषार अभिधान	ज्ञानेन्द्रमोहनदास	दी इंडियन पब्लिशिंग हाउस २२।१, कार्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता ।
बां०भा०भू०	बांगला भाषा तत्वेर भूमिका	डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी	कलकत्ता विश्वविद्यालय १९५५ ई० ।
वि० सा०	विचित्र साहित्य	डॉ० सुकुमार सेन	
बृ०हि०को०	बृहत्-हिन्दीकोश		ज्ञानमण्डल लिमिटेड कबीर चौरा, वाराणसी १ ।
बौ०गा०औ०दो०	बौद्धगान औ दोहा	म०म० हरप्रसाद शास्त्री	बंगीय-साहित्य-परिषद् १९१६ प्रथम बार ।
भ०क०व्या०	भक्तकवि व्यासजी	वासुदेव गोस्वामी प्रभुदयाल मीतल	अग्रवाल प्रेस मथुरा २००९ वि० प्रथम संस्करण ।
भ०बं०	भक्तमाल ग्रंथ बंगला	लालदास (कृष्णदास) बाबाजी	उपेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय वसुमती साहित्य मंदिर, द्वितीय संस्करण चैतन्याब्द ४१७ ।
भ०र०	भक्ति रत्नाकर	नरहरिदास चक्रवर्ती	स्वामी हरिदासदास नवद्वीप हरिबोल कुटीर चैतन्याब्द ४२६ ।
भ० हि०	भक्तमाल हिन्दी	नाभादास प्रियादास	नवल किशोर प्रेस लखनऊ पंचम बार १९५० ई० ।
भा०सा०	भारतीय साहित्य	डॉ० विश्वनाथ प्रसाद	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय आगरा ।
भा०च०ग्रं०	भारतचन्द्र ग्रंथावली	भारतचन्द्र	ब्रजेन्द्रनाथ बंद्योपाध्याय सजनी कांत दास बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता, १३५७ बंगाब्द ।
भा०ठा०प०	भानुसिंह ठाकुरेर पदावली	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	रवीन्द्र रचनावली विश्वभारती, शांति निकेतन ।
मा०श०सा०	मानस शब्द सागर	बद्रीदास अग्रवाल	काशीप्रसाद विजयकुमार अग्रवाल ६१ बीडन स्ट्रीट, कलकत्ता ६, १९५५ ई० ।
मि०बं०वि०	मिश्रबंधु विनोद		
मै० गी०	मैमनसिंह गीतिका	डॉ० दीनेशचंद्र सेन	

संक्षिप्त रूप	मूल रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
मै० स०	मैनासत	श्री हरिहरनाथ द्विवेदी	श्री उदय द्विवेदी विद्या मन्दिर प्रकाशन, ग्वालियर प्रथम संस्करण १९५९ ई०।
र०का०प०	रवीन्द्र काव्य परिक्रमा	उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य	
र० जी०	रवीन्द्र जीवनी	श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय	विश्वभारती शांति निकेतन।
र० र०	रवि रश्मि	चारुचन्द्र बंद्योपाध्याय	ए० मुखर्जी एण्ड को कलकत्ता।
रा०च०मा०	रामचरितमानस	तुलसीदास	डा० माताप्रसाद गुप्त हिंदुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद उत्तरप्रदेश।
रा० र०	रामरसायण	रघुनंदनदास गो०	लाहिड़ी टोला कामार पाड़ा स्ट्रीट १०, विद्यारत्नधाम।
वं०सा०प०क०	बंगीय-साहित्य परिषद् कलकत्ता		
वं०सा०प०प०	बंगीय साहित्य परिषद् पत्रिका		
वि० प०	विनय पत्रिका	तुलसीदास	श्री वियोगीहरि, रामदास पीड़दास साहित्य-सेवा-सदन, वाराणसी २०१५।
वि० प०	विद्यापति पदावली	विद्यापति	खगेन्द्र मित्र विपिनविहारी मजूमदार।
वि०भा०प० स०	विश्वभारती पत्रिका शांति निकेतन		
वि० सं०	विक्रमी संवत्		
वि० सा० ग्रं०	विद्यासागर ग्रंथावली	ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	ब्रजेन्द्रनाथ बंद्योपाध्याय सजनी कांत दास बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।
सं० शा०	संगीत-शास्त्र	के० वासुदेव शास्त्री	प्रकाशन शाखा सूचना-विभाग उत्तर प्रदेश प्र० सं० १९५८।
स०मै०लो०च	सतीमयना और लोर चन्द्रानी	दौलतकाजी	सत्येन्द्रनाथ घोषाल विश्वभारती, शांति निकेतन।
सं० रा० क०	संगीत राग कल्पद्रुम		नगेन्द्रनाथ गुप्त बंगीय साहित्य परिषद्-कलकत्ता १९११।
स० मै०	सती मैना		

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
स० प०	सम्मेलन पत्रिका		हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।
सू०ब्र०भा०क०	सूर ब्रजभाषा कोश	डॉ० दीनदयालु गुप्त	लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ।
सं०हिं०श०सा०	संक्षिप्त हिंदी शब्द-सागर	रामचन्द्र वर्मा	नंददुलारे वाजपेयी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी प्र० सं० संवत् २००७ वि०।
ह०लि० ग्रं०	हस्तलिखित ग्रंथ		
हिं०का०धा०	हिंदी-काव्य-धारा	राहुल सांकृत्यायन	किताब महल प्रकाशन इलाहाबाद १९४५ ई०।
हिं०बो०प्रवि०	हिंदी बोधना प्रविधान	श्री गोपालचन्द्र वेदान्त शास्त्री	बंगाल भाषा एजूकेशन सोसाइटी, ११।१९, कार्नवालिस स्ट्रीट श्याम बाजार, कलकत्ता।
हिं० भा० इ०	हिंदी भाषा का इतिहास	डॉ० धीरेन्द्र वर्मा	हिंदुस्तानी एकेडेमी उत्तरप्रदेश प्रयाग १९५३।
हिं०मु०कोष०	हिंदी मुहावरा कोष	भोलानाथ तिवारी	किताब महल इलाहाबाद १९५१।
हिं०सा०आ० इ०	हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डॉ० रामकुमार वर्मा	रामनारायणलाल इलाहाबाद चतुर्थ संस्करण १९५८।
हिं०सा०इ०	हिंदी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचंद्र शुक्ल	नागरी प्रचारिणी सभा काशी संस्करण छठा २००७।
हिं० सा०	हिंदी-साहित्य	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	अतरचन्द कपूर एंड संस देहली अंबाला, आगरा १९५२ ई०।
हिं०का०नि० सं०	हिंदी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय	डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल	
हिं०वि०ग्रं० दि०	हिंदी-विद्यापीठ ग्रंथ दीपिका	डॉ० विश्वनाथ प्रसाद	हिंदी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
हिं०वि०को०	हिंदी विश्व-कोष	डॉ० नगेन्द्रनाथ वसु	
हिं०श०सा०	हिंदी शब्दसागर		नागरी प्रचारिणी सभा काशी।
हिं०सा०बृ०इ०	हिंदी-साहित्य का बृहद् इतिहास (प्र०भाग)		सम्पादक राजबली पांडेय नागरी प्रचारिणी सभा काशी, सं० २०१४ वि०।
हिं०सा०स०प्र०	हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।		

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
मै० स०	मैनासत	श्री हरिहरनाथ द्विवेदी	श्री उदय द्विवेदी विद्या मन्दिर प्रकाशन ग्वालियर प्रथम संस्करण १९५९ ई० ।
र०का०प०	रवीन्द्र काव्य परिक्रमा	उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य	
र० जी०	रवीन्द्र जीवनी	श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय	विश्वभारती शांति निकेतन ।
र० र०	रवि रश्मि	चारुचन्द्र बंद्योपाध्याय	ए० मुकर्जी एण्ड को कलकत्ता ।
रा०च०मा०	रामचरितमानस	तुलसीदास	डा० माताप्रसाद गुप्त हिंदुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद उत्तरप्रदेश ।
रा० र०	रामरसायण	रघुनंदनदास गो०	साहित्य टीका कामार पाड़ा स्ट्रीट १० विद्यारत्नचन्द्र ।
ब०सा०प०क०	बंगीय-साहित्य परिषद्, कलकत्ता		
बं०सा०प०प०	बंगीय साहित्य परिषद् पत्रिका		
वि० प	विनय पत्रिका	तुलसीदास	श्री वियोगीहरि, रामदास गौड़ दास साहित्य-सेवा-सदन, वाराणसी २०१२।
वि० प०	विद्यापति पदावली	विद्यापति	खगेन्द्र मित्र विपिनबिहारी मजूमदार ।
वि०भा०प० ष०	विश्वभारती पत्रिका शांति निकेतन		
वि० सं०	विक्रमी संवत्		
वि० सा० ग्रं०	विद्यासागर ग्रंथावली	ईश्वरचन्द्र विद्या सागर	ब्रजेन्द्रनाथ बंद्योपाध्याय सजनी कांत दास बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता ।
सं० शा	संगीत-शास्त्र	के०वासुदेव शास्त्री	प्रकाशन शाखा सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश प्रं० सं० १९५८ ।
स०मैं औ च०	सतीमयना और लोरचन्द्राणी	दौलतकाजी	सतीशचन्द्र घोषाल विश्वभारती, शांति निकेतन ।
सं०रा क०	संगीत-राग कल्पद्रुम		नगेन्द्रनाथ गुप्त बंगीय साहित्य परिषद्-कलकत्ता १९११ ।
स मैं०	सती मैना		

संक्षिप्त रूप	पूर्ण रूप	लेखक	प्रकाशक और सन् व संवत्
स० प०	सम्मेलन पत्रिका		हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।
सू०ब्र०भा०क०	सूर ब्रजभाषा कोश	डॉ० दीनदयालु गुप्त	लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ।
सं०हिं०श०सा०	संक्षिप्त हिंदी शब्द-सागर	रामचन्द्र वर्मा	नंददुलारे वाजपेयी नागरी प्रचारिणी सभा काशी प्र० सं० संवत् २००७ वि०।
ह०लि० ग्रं०	हस्तलिखित ग्रंथ		
हिं०का०धा०	हिंदी-काव्य-धारा	राहुल सांकृत्यायन	किताब महल प्रकाशन इलाहाबाद १९४५ ई०।
हिं०लो०अभि०	हिंदी लोपमा अभिधान	श्री गोपालचन्द्र वेदान्त शास्त्री	बंगाल मास एजुकेशन सोसाइटी ११।१९, कार्नवालिस स्ट्रीट श्याम बाजार, कलकत्ता।
हिं० भा० इ०	हिंदी भाषा का इतिहास	डॉ० धीरेन्द्र वर्मा	हिंदुस्तानी एकेडेमी उत्तरप्रदेश प्रयाग १९३३।
हिं०मु०कोष०	हिंदी मुहावरा कोष	भोलानाथ तिवारी	किताब महल इलाहाबाद १९५१।
हिं०सा०आ० इ०	हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डॉ० रामकुमार वर्मा	रामनारायणलाल इलाहाबाद चतुर्थ संस्करण १९५८।
हिं०सा०इ०	हिंदी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचंद्र शुक्ल	नागरी प्रचारिणी सभा काशी संस्करण सं० २००७।
हिं० सा०	हिंदी-साहित्य	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	अतरचंद कपूर एंड संस दिल्ली अंबाला आगरा १९५२ ई०।
हिं०का०नि०स०	हिंदी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय	डॉ० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल	
हिं०वि०प्र०वि०	हिंदी-विद्यापीठ ग्रंथ वीथिका	डॉ० विश्वनाथ प्रसाद	हिंदी विद्यापीठ आगरा विश्व-विद्यालय आगरा।
हिं०वि०को०	हिंदी विश्व-कोष	डॉ० नगेन्द्रनाथ बसु	
हिं०श०सा०	हिंदी शब्दसागर		
हिं०सा०बृ०इ०	हिंदी-साहित्य का बृहद् इतिहास (प्र०भाग)		[illegible] २०१६ वि०।
हिं०सा०स०प्र०	हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।		

A.B.D C.E.C (ए०बी०डी०सी०ई०सी०)	Anglo Bengali Dictionary of Colluquiel Expressions. R.P Do., 22/53 Shamapooker Lane Calcutta. 1927
B.R. (बी० आर०)	Bengali Ramayanas Dr Dineshchandra Sen Calcutta University 1920
B S.R.B.L. (बी०एस०आर०बी०एल०)	Beginning of secular Romance in Bengali Literature Dr S. N Ghoshal, Vishwabharti Shanti Niketan, First Edition 1959
G.H.L. (जी०एच एल०)	Grammar of Hindi Language Rev S.H. Kellog. Routledge and Kegan Paul Ltd. Broadway House 68 74 Carter Lane London E.C.4, 1955
H.B.L. (एच०बी०एल०) हि ब्र लि	History of Brijbuli Literature Dr Sukumar Sen, University of Calcutta, 1935
H.B.L.L. (एच०बी०एल०एल०) हि बँ०ला लिट०	History of Bengali Language and Literature Dr. Dineshchandra Sen, University of Calcutta Edition 19.4
H M.L. (एच एम०एल०)	The History of Maithili Literature Dr Jai Kanta Misra Tirhut Publications Allahabad Sir P C Banerji Road 1949
K.S.I.L (के०एस०आई०एल०)	Kaleidoscopic Survey of Indian Languages, Madras 1959
J D.L.C U (जे०डी०एल०सी० यू०)	Journal of Department of Letters Calcutta University
L.S.I. (एल एस०आई०)	Linguistic Survey of India George Grierson.
L. (एल०)	Language, Edward Spi, Harcourt Brace and Company, New York 1921
M.V.L.H. (एम०वी०एल एच०)	Modern Vernacular Literature of Hindustan, George Grierson, Asiatic Society of Bengal. 57 Park Street Calcutta 16, 1889
O.D.B.L. (ओ०डी बी०एल०)	Origin and Development of Bengali Language I and II Volumes. University of Calcutta 1926
O.R C (ओ०आर०सी)	Obscure Religious Cults as the background of Bengali Literature, Dr S B Dass Gupta, Calcutta University 1946.
V.B Q (वी०बी०क्यू०)	Vishwa Bharti Quarterly

नोट—इससे आगे पृष्ठ १९ पढ़ें।

प्रथम-अध्याय

पृष्ठभूमि तथा आरम्भ काल

१
भारतीय संस्कृति की सामान्य पृष्ठभूमि

पृष्ठभूमि—बँगला और हिन्दी एक ही भाषा-परिवार की शाखाएं हैं[1] और दोनों का जन्म भी प्राय साथ ही हुआ है[2]। दोनों ही एक दूसरे की पड़ोसिनें हैं एवं दोनों के क्षेत्रों में पारस्परिक आदान-प्रदान रहा है। साथ ही ये दोनों भाषाएं भारत की समग्र सांस्कृतिक परंपरा की भी उत्तराधिकारिणी बनी हैं।

क्या जीवन-दर्शन, क्या पौराणिक-कथा संपत्ति क्या भाषातात्त्विक प्रवृत्ति और क्या सांस्कृतिक प्राण प्रतिष्ठा सभी में प्रागैतिहासिक काल से ही एक साम्य भारत के प्राय सभी क्षेत्रों में दिखायी पड़ता है। यही साम्य हिन्दी-बँगला में भी प्रतिफलित हुआ है।

जीवन-दर्शन—भारत दार्शनिकों का देश कहलाता है पारलौकिक कल्याण कर्मवाद एवं धर्म के प्रति यहाँ के लोगों का विशेष आकर्षण विश्वास एवं मोह रहा है। यहाँ लौकिक अभ्युदय को सदैव परमार्थ से गौण-स्थान प्रदान किया गया है। इसीलिए आस्तिक तथा नास्तिक सभी दर्शन जीवन का ध्येय दुःख और उससे छुटकारा या मुक्ति मानते हैं। मुक्ति की साधना के भी अनेक पथ वैयक्तिक-मेधा रुचि देश-काल तथा पात्र के अनुसार निर्मित हुए हैं, किन्तु सभी की आत्मा एक ही है।

काश्मीर से कुमारी अन्तरीप तक एवं अरबसागर से बंग देश तक प्रत्येक भारतीय के जीवन-दर्शन का मर्म एक ही है। अतः भारत की एकता मूल में यहाँ की संस्कृति एवं यहाँ के जीवन-दर्शन में है। दूसरे शब्दों में इस देश को ऋषियों का देश' अध्यात्म-प्रधान कहा जाता है। धार्मिक संस्कार जीवन की प्रत्येक क्रिया के साथ संलग्न हैं। यही इसकी सांस्कृतिक एकता का कारण है।

पौराणिक कथायें—इस सांस्कृतिक एकता का एक सूत्र पौराणिक-कथाओं में भी देखा जा सकता है। ये कथायें समान रूप से समस्त देश में प्रचलित हैं। वशिष्ठ-ऋषियों की गाथायें समान रूप से सारे देश की संपत्ति हैं। रामायण

१ बं० भा० भू० पृ० १८।
२ वही वही ।

महाभारत के पात्र अखिल भारतीय समाज के आदर्श हैं। राम-कृष्ण कौरव-पाण्डवों की गाथायें भी समान रूप से एक छोर से दूसरे छोर तक देश में व्याप्त हैं। सभी संतों और भक्तों की कहानियाँ भी समस्त देश में एक ही साँचे ढली हुई हैं और एक सा सम्मान पाती हैं।

भाषा—भारत में अनेक आर्य अनार्य और देशी विदेशी भाषाओं का जमघट रहा है। किन्तु इस देश को ऐतिहासिक भौगोलिक साहित्यिक एवं सांस्कृतिक, सामाजिक राजनीतिक एवं भाषायी एकता संस्कृत ही प्रदान करती रही है। समान रूप से आर्य-अनार्य समस्त उत्तरी और दक्षिणी भारत की भाषायें संस्कृत की ऋणी हैं और इससे अत्यन्त प्रभावित हैं। संस्कृत भाषा और साहित्य भारत की महान् ऐतिहासिक सांस्कृतिक सामाजिक साहित्यिक एकता तथा अखण्डता की परंपरा का प्रतीक है।

२

हिन्दी और बँगला की सामान्य पृष्ठभूमि एवं सांस्कृतिक एकता

संस्कृत भाषा तथा साहित्य एवं उसमें प्रतिबिम्बित भारतीय संस्कृति को पुरातन-काल से एकता एवं अखण्डता प्रदान करती आई है। भौगोलिक दृष्टि से उत्तरी और दक्षिणी भारत में जो भेद किया जाता है, उस भेद में यह सांस्कृतिक अभेद विद्यमान है। तब उत्तरी भारत में तो सदैव से ऐतिहासिक एवं भौगोलिक एकता रही है। जब कभी भी कोई आन्दोलन उत्तरी भारत के किसी भी कोने में छिड़ा है उसका प्रभाव सारे प्रदेश पर पड़ा है। आर्य-संस्कृति एवं भारतीय आर्य भाषा परिवार ने उसको घनिष्ठ-सूत्र में बाँधे रखा है।

इसी कारण हिन्दी प्रदेश (पंजाब का हरियाना प्रदेश पर्वतीय-प्रदेश, राजस्थान उत्तर प्रदेश बिहार एवं मध्य प्रदेश) और बंग प्रदेश (पूर्वी एवं पश्चिमी बंगाल) में अद्भुत सांस्कृतिक एकता रही है। इसे निम्नलिखित रूपों में हृदयंगम किया जा सकता है —

(१) सीमा संबंधी या भौगोलिक एकता
(२) ऐतिहासिक एकता
(३) जनसंख्या का आवास-प्रवास
(४) धार्मिक एकता
(५) वेशभूषा एवं आचार-विचार की एकता
(६) साहित्यिक एवं भाषा-वैज्ञानिक-समानता परस्पर प्रभाव एवं आदान-प्रदान।

(१) सीमा संबंधी या भौगोलिक एकता

इस एकता का अभिप्राय यह नहीं है कि इन दोनों की सीमाएँ अभिन्न है। वस्तुत भौगोलिक दृष्टि से हिन्दी प्रदेश और बंग प्रदेश में कोई विभाजक रेखा नहीं है। दोनों का प्रादेशिक विभेद कृत्रिम है। हिन्दी प्रदेश (बिहार) की पूर्वी एवं बंग प्रदेश की पश्चिमी सीमायें मिली हुई है*। जो गंगा हिन्दी-क्षेत्र को सींचती है; वही बंग-क्षेत्र को भी सींचती है। जो हिमालय हिन्दी क्षेत्र की जलवायु को अनुशासित करता है वह बंगला क्षेत्र की जलवायु का भी नियंत्रण करता है।

(२) ऐतिहासिक एकता

ऐतिहासिक एवं राजनीतिक दृष्टिकोण से भी हिन्दी प्रदेश एवं बंग प्रदेश युग-युगों से एकाधिक बार एक ही शासन में बंधे हैं। मुस्लिम काल में दोनों ही प्रदेश एक-सी परिस्थितियों से गुजरे हैं। धार्मिक सामाजिक एवं भक्ति संबंधी आन्दोलनों ने समय-समय पर दोनों को ही समान रूप से प्रभावित किया है।

(३) जनसंख्या का आदान-प्रदान

जनसंख्या का आदान प्रदान सदैव से होता आया है मुस्लिम काल (मध्यकाल) में आज के बंगाली ब्राह्मणों के पूर्वज कान्य-कुब्ज से आये थे[1]। चैतन्य-काल में बहुत से बंगाली मथुरा वृन्दावन में रहने लगे थे। मिथिला एवं बंगाल का आदान-प्रदान तो बहुत पुराना है[2]।

(४) धार्मिक एकता

दोनों ही प्रदेशों के निवासी मूलत एक से धर्म को मानते हैं यद्यपि क्योंकि वे हिन्दू हैं। शक्ति-पूजा बंगाल में विशेष है पर हिन्दी-क्षेत्र में यह देवी-पूजा के रूप में अन्तर्धारा की भाँति व्याप्त है।

वैष्णव धर्म का प्रभाव दोनों प्रदेशों में समान रूप से रहा है। ऐतिहासिक क्रम से भी दोनों ही प्रदेशों पर हिन्दू बौद्ध इस्लाम ईसायत एवं पश्चिमी संस्कृति और सभ्यता का गंभीर प्रभाव है। सिद्धों के सहज मार्ग का प्रभाव बंगाल पर विशेष रहा है। शैव शाक्त एवं नाथ सम्प्रदाय का प्रभाव पूर्वी भारत में अधिक रहा है। दोनों ही प्रदेशों में तीर्थ-स्थान हैं। ऋषिकेश हरिद्वार बद्रीनारायण मथुरा-वृन्दावन काशी (वाराणसी) प्रयाग, गंगासागर नवद्वीप एवं तारकेश्वर के दर्शनों के लिए दोनों ही प्रदेशों के लोग लालायित रहते हैं।

(५) वेशभूषा एवं आचार-विचार की एकता

रहन-सहन वेश भूषा आचार विचार एवं नैतिकता के प्रति दोनों

---

१ बं० भ० भो० सा० पृ० २४७।

*देखिये ग्रंथ में मानचित्र (घ)

२ बं० भा० भो० सा० पृ० २२६।

लोगों में समान विचार एवं सम्मान रहा है। बंगाल के प्रख्यात विद्वान डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं—केवल भाषा में ही नहीं किन्तु वेषभूषा और आदतों में भी उस समय के बंगाली अपने से ऊपर के देशवासी भाइयों से अधिक मिलते-जुलते थे। साफा पहना करते थे। धोती कभी कांच लगाकर आज के हिन्दुस्तानी लोगों की तरह पहना करते थे[१]।

(३) साहित्यिक एवं भाषा वैज्ञानिक समानता

इन दोनों भाषाओं में परस्पर प्रभाव एवं एक दूसरे के साथ आदान प्रदान भी निरंतर होता रहा है। साहित्य समाज का प्रतिबिंब है। अतः हिन्दी साहित्य एवं बंगला-साहित्य की वे परिस्थितियाँ समान ही रही हैं जिन्होंने समस्त उत्तरी भारत को प्रभावित किया है। वे परिस्थितियाँ ऐतिहासिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक हैं। इसी कारण हिन्दी एवं बंगला साहित्यों के युगों में कुछ सामान्य अन्तर होते हुए भी बहुत कुछ समानता है। हिन्दी एवं बंगला के इतिहासों के काल-विभाजन में भी अद्भुत समानता है। उदाहरण से स्पष्ट करते हैं—यह काल विभाजन हिन्दी साहित्य का पंडित रामचन्द्र शुक्ल एवं बंगला साहित्य का डा० दीनेशचन्द्र सेन के अनुसार है[२]।

हिन्दी		बंगला	
युग-नाम	कालावधि	युग-नाम	कालावधि
सिद्ध-सामंत साहित्य (आदिकाल)	८००-१४०० ई०	प्राचीन काल	८००-१४०० ई०
मध्यकाल (भक्तिकाल)	१४००-१७०० ई०	वैष्णव काल	१४०० १७०० ई०
रीतिकाल	१७०० १९०० ई०	इस्लामिक साहित्य परम्परा	१७००-१९०० ई०
आधुनिक काल	१९०० ई०	आधुनिक काल	१८३० ई०

भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से भी दोनों भाषाओं का उद्भव एवं विकास का क्रम सामान्य रूप से हुआ है*। जिसे यों समझा जा सकता है —

१ Not only in the language but also in costumes and habits, the Bengalis of past times were more like their brethren of the *up-country They used to wear a turban and tuck up the* Dhoti tightly between the legs as the Hindustani people do now

H.B.L.L. P.509

२ हि० सा० इ० पृ० १ बं० सा० प० प्र० ख० भू० पृ० १६।

* देखिए चार्ट—परिशिष्ट (१)।

(क) प्राचीन भारतीय आर्य भाषायें वैदिक (साहित्यिक) तथा जनभाषायें
(ख) मध्यकालीन ,, ,, संस्कृत (लौकिक) ,,
(ग) उत्तर मध्यकालीन ,, पाली प्राकृत (गाथा),, ,,
(घ) संधियुगीन ,, ,, अपभ्रंश (अपभ्रंशकालीन जन भाषायें)



नागर अपभ्रंश | शौरसेनी | अर्धमागधी | मागधी

(ङ) आधुनिककालीन
भारतीय आर्य भाषाएँ राजस्थानी पश्चिमी हिंदी पूर्वी हिंदी बंगला

११ भाषा की दृष्टि से दोनों ही भाषायें पूर्ववर्ती भाषाओं से विकसित हुई हैं। संस्कृत पाली, प्राकृत और अपभ्रंश का साहित्यिक एवं भाषा मूलक प्रभाव दोनों ही भाषाओं पर है। ये सभी इन दोनों की पूर्वज हैं और इनकी संपत्ति दोनों की अपनी संपत्ति है।

अपभ्रंशोत्तर काल में उत्तरी भारत की समस्त भारतीय आर्य-भाषाओं में बहुत कुछ सादृश्य था। कालान्तर में प्रत्येक भाषा ने अपना स्वतंत्र अस्तित्व बना लिया है। उस काल में शौरसैनी अपभ्रंश मध्यदेशीय एवं जनभाषा होने के कारण दूसरी अपभ्रंशों पर अपना कुछ प्रभाव डालती रही है। शौरसेनी अपभ्रंश पश्चिमी हिन्दी का पूर्ववर्ती रूप माना जाता है।[1]

परस्पर प्रभाव की दृष्टि से हिन्दी का प्रभाव अन्य आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं (बंगला, गुजराती, पंजाबी) पर विशेष रहा है। बंगला पर हिन्दी के प्रभाव के कारण मुख्यतया ये हैं —

(१) हिन्दी मध्यदेश अथवा उस प्रदेश की भाषा थी जिसकी पूर्ववर्ती भाषा संस्कृत ने समस्त भारत में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक गौरव प्राप्त किया था। वास्तव में यह संस्कृत की उत्तराधिकारिणी बनी।

(२) *साधु-समाज, सिद्धनाथ, निर्गुणी-संतों आदि ने भी हिन्दी को देश के* एक कोने से दूसरे कोने तक बहुत पहले ही पहुँचा दिया था।

(३) मध्ययुगीन प्रधान वैष्णव भक्ति आन्दोलन के दोनों इष्ट महापुरुषों की पुण्यभूमि भी हिन्दी-क्षेत्र ही है। कृष्ण और राम के भक्त ब्रज और अवध की ओर आकर्षित होते रहे हैं। कृष्णभक्ति ने इस सम्पर्क को बहुत महान बनाया है। इससे यहाँ की भाषा का प्रभाव और भी बढ़ गया।

(४) मुस्लिम साम्राज्य ने भी अविकसित हिन्दी को अखिल भारतीय भाषा का रूप प्रदान किया।

---

१ पु० हि०।

(५) वणिक सार्थवाहों से इसके प्रचार प्रसार में पूरा सहयोग मिला।

(६) बँगला और हिन्दी के भाषा-साहित्य की परम्परा एक थी। दोनों एक युग से सम्बद्ध रहीं।

हिन्दी भाषा एवं साहित्य का इसी कारण प्रभाव बँगला भाषा और साहित्य पर दीर्घकालीन है। यह साहित्यिक भी है एवं भाषामूलक भी है।

(१) हिन्दी मध्यदेश की भाषा है यह इतिहास सिद्ध तथ्य है कि मध्यदेश ही संस्कृति साहित्य तथा राजनीति के क्षेत्र में सदैव से समस्त देश का प्रेरणास्रोत रहा है। यह क्रम संस्कृत पाली प्राकृत शौरसेनी अपभ्रंश एवं ब्रजभाषा आधुनिक हिन्दी या उर्दू (खड़ी बोली) के प्रसार एवं प्रभाव से प्रकट है[1]। संस्कृत भाषा ने सभी भारतीय भाषाओं को अत्यधिक प्रभावित किया है। ब्रजभाषा इसी के क्षेत्र की है व उसकी प्रतिनिधि बन गयी है। मध्ययुग में संस्कृत में निष्णात होने के लिए काशी जाना अनिवार्य था, इससे काशी अखिल भारतीय शिक्षा-केन्द्र था।

(२) हिन्दी साधुओं की भाषा मानी जाती है। प्राचीनकाल से ही अर्थात् मुस्लिम-पूर्व युग से ही साधुओं के साथ-साथ भारत के विविध स्थानों में फैली। अतः इसका प्रभाव अन्य आधुनिक भाषाओं पर भी पड़ा है। बँगला पर भी इसका प्रभाव पड़ा है।

(३) मध्ययुग के सभी प्रमुख वैष्णव भक्ति-आन्दोलनों का केन्द्र हिन्दी-क्षेत्र हो गया। चैतन्य संप्रदाय में वृन्दावन को जो आध्यात्मिक महत्त्व मिला उससे वृन्दावन बंगाल का एक उपनिवेश बन गया। इससे हिन्दी बंगला क्षेत्रों की पारस्परिक घनिष्ठता बहुत बढ़ गयी[2]।

(४) मुस्लिम शासकों के कर्ता-धर्ता प्रायः हिन्दी-क्षेत्र से होकर भारत के अहिन्दी-क्षेत्रों में गये। उनके साथ उनकी मिली भाषा भी गयी। इससे हिन्दी राजकीय स्तर पर भी अन्य क्षेत्रों में पहुँची। उनकी विशाल सेनाओं में अधिकांश हिन्दी क्षेत्रीय होते थे। फलतः जहाँ-जहाँ मुस्लिम-साम्राज्य फैला वहाँ-वहाँ हिन्दी भी आकर्षण का विषय बनी।

(५) साधु-समाज पर्यटनशील समाज था उसी भाँति मध्ययुग में वणिकों के सार्थवाह भी देश भर में घूमते थे। दिल्ली-आगरा इनके केन्द्र थे। समस्त क्षेत्रों के व्यवसायी और वाणिज्य-प्रेमी इन सार्थवाहों में सम्मिलित होकर दिल्ली-आगरा आते या दिल्ली से विविध भारतीय क्षेत्रों को जाते थे। इनके मिली बाजारों की भाषा हिन्दी ही होती थी। आज के कलकत्ता में रहने वाले मारवाड़ी समाज एवं बिहार निवासियों की भाषा भी हिन्दी है।

---

१ ओ डी बी० एल० पृ० ११।

२ [illegible]

(६) इसका प्रमाण अपभ्रंश भाषा है। दोनों का मूल अपभ्रंश है। शौरसेनी अपभ्रंश की पहुँच पूर्व में विशेष थी*। इसके विवेचन के लिए आगे अपभ्रंश पर इसी अध्याय में कुछ पृष्ठ दिये गये हैं।

३

अपभ्रंश-साहित्य (८०० १४०० ई०)

वैदिक संस्कृत तथा पाली एवं प्राकृत के प्रभाव की परम्परा पर यहाँ विस्तारपूर्वक चर्चा करना अनावश्यक माना जा सकता है, अपभ्रंश भाषाओं के प्रभाव की परम्परा का अनुसंधान स्वयं ही एक महान विषय है। किन्तु अपभ्रंश तो हिन्दी बँगला भाषाओं से घनिष्ठतः सम्बन्धित है। अतः उस पर एक दृष्टि डालना समीचीन होगा।

ऐतिहासिक दृष्टि से अपभ्रंश नाम ईसा की पहली तथा दूसरी शताब्दी पूर्व से सुनाई पड़ता है[1] किन्तु भाषा-विज्ञान के पंडित[2] इसकी ५५० या छठी शताब्दी ईसवी से मानते हैं। साहित्य में अपभ्रंश के उल्लेख छठी शताब्दी से मिलने लगते हैं। भामह (छठी शताब्दी ईसवी[3]) अपभ्रंश को काव्योपयोगी भाषा और काव्य का एक विशेष रूप मानते हैं—'काव्य शब्द और अर्थ को लेकर होता है यह गद्य-पद्य में दो प्रकार का है। संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश को लेकर तीन प्रकार का है तथा इन तीन भाषाओं में काव्य रचना होती है[4]। दण्डी (सातवीं शताब्दी ईसवी[5]) समस्त वाङ्मय को संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश और मिश्र इस प्रकार चार तरह का मानते हैं[6]। रुद्रट (नवीं शताब्दी ईसवी[7])—देश-विशेष से भाषा कहीं प्राकृत संस्कृत, मागधी तथा पैशाची एवं शौरसेनी तथा अपभ्रंश आदि के नामों

---

* हिं० भा० उ० मू० पृ० ११

१ भर्तृहरि—वाक्यपदीयम् प्रथम काण्ड कारिका १४८, लाहौर संस्करण सं० पं० चारुदेव शास्त्री।

२ हिं० भा० इ० पृष्ठ ४७।

३ सं० सा० इ०, पृ० १०१।

४ शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं च तद्द्विधा।
संस्कृतं प्राकृतं चान्यदपभ्रंश इति त्रिधा॥ काव्यालंकार—१ १६-२८।

५ सं० सा० इ० पृ० १०१।

६ तदेतद् वाङ्मयं भूयः संस्कृतं प्राकृतं तथा।
अपभ्रंशश्च मिश्रं चैत्याहुरार्याश्चतुर्विधम्॥ —काव्यालंकार, १ १ ३२।

७ सं० सा० इ०, पृ० ११४।

भी प्रयुक्त होती है[1]। स्वयंभू (नवीं १वीं शताब्दी ईसवी) अपभ्रंश के कवि हैं, इन्होंने पउम-चरिउ (पद्म-चरित) और रिट्ठणेमि चरिउ (रिष्टनेमि-चरित) या हरिवंश पुराण इसमें ही लिखा है। पउम चरिउ में इसका अंतरंग प्रमाण है[2]। पुष्पदंत (दशम शताब्दी ईसवी) लिखते हैं संक्कउ पायउ पुणु या हुँसउ मित्तउ उप्पा हुउ अपभंस[3]। अभिनव गुप्त (९७० १०५० ई०) द्वारा दी गयी विभाषा विषयक विवृति से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि 'अपभ्रंश भाषा' विभाषा के अन्तर्गत उस समय में बोली जाती होगी।

इन प्रमाणों से प्रकट होता है अपभ्रंश की परम्परा बहुत प्राचीन है। इसको देशभाषा भी कहा गया है। ८०० से १४०० ई० तक अपभ्रंश का अधिक प्रचार था। भारतीय भाषा-विकास में अपभ्रंश आधुनिक भाषाओं के पूर्व की (संधिकाल) भाषा है। इसका साहित्य बहुत विशाल है। अपभ्रंश का गौरव हमें अभी मालूम हुआ है। जबकि आधुनिक देशी विदेशी विद्वानों ने इस पर यथेष्ट गवेषणात्मक कार्य किया है[4]। म० प० हरप्रसाद शास्त्री एवं राहुल सांकृत्यायन आदि ने अब इसके नये ग्रंथों का अनुसंधान किया है। यह एक ओर संस्कृत-पाली प्राकृत से अपना नाता जोड़ती है। क्योंकि अपभ्रंश क्रमशः संस्कृत पाली प्राकृत तथा तत्कालीन जनभाषाओं से विकसित हुई है। अत इसका नाता उनके साथ है। यह उनकी जीवित परंपरा की प्रतीक है। उनकी भाषा-तात्विक एवं साहित्यिक धारायें इसमें प्रतिबिंबित हुई हैं। दूसरी ओर यह हमारी आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की जननी है। ऐतिहासिक-दृष्टि से यह संस्कृत पाली प्राकृत तथा आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओं के बीच की कड़ी है। हमारी आधुनिक भारतीय आर्य भाषायें अपभ्रंश की भाषा-वैज्ञानिक एवं साहित्यिक परंपरा का सीधा विकास है। अपभ्रंश-साहित्य के विषय में विद्वानों में मतभेद है। बंगाली हिन्दी उड़िया एवं आसामी आदि प्रान्तीय भाषाओं के विद्वान अपभ्रंश को अपनी भाषा का पूर्व रूप मानते हैं[1]। (पृष्ठ ४१ पर देखें)

अपभ्रंश के विषय में भारत के विभिन्न विद्वानों का मत उल्लेखनीय है। अपभ्रंश का सर्वप्रथम ग्रंथ 'बौद्धगान ओ दोहा है'। सर्वप्रथम म० म० हरप्रसाद

---

१ प्राकृत संस्कृत मागध पिशाच भाषाश्च शौरसेनी
षष्ठोऽत्र भूरिभेदो देशविशेषादपभ्रंशः २ १२।

२ दीह-समास-पवाहालंकिय—सक्कय—पायय पुलिणालंकिय॥
देसीभासा-उभय-तडुज्जल कवि दुक्कर घण सद्द सिलायल॥
पउम-चरिउ (१ २)   (१४)

३ महापुराण ९ १८ ६।

४ हि० का० धा० भूमिका।

विद्वान का नाम	विद्वान की भाषा का प्रान्त	ग्रंथ	उपयुक्त उद्धरण	मतों के आधारभूत ग्रंथ
१ म० म० हरप्रसाद शास्त्री	बंगाल	बौद्धगान ओ दोहा भूमिका	बंगला	बौद्धगान ओ दोहा
२ डा० मोहम्मद शहीदुल्ला		शाखा मिस्टी के द कान्ह ऐट सरह [दोहाकोश]	अपभ्रंश	दोहाकोश सरह और कान्ह।
३ राहुल सांकृत्यायन	हिन्दी	पुरातत्व निबन्धावली, हिन्दी काव्य धारा भूमिका पृ० ११ दोहाकोश पृ० ८।	हिन्दी	दोहाकोश
४ प्रबोधचन्द्र बागची	बंगाल	दोहाकोश		
५ डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी	बंगाल	ओ० डी० बी० एल० पृष्ठ ११२		
६ विनयतोष भट्टाचार्य	बंगाल	दोहाकोश	अपभ्रंश व	दोहाकोश
७ डा० बाणीकान्त ककाती	असमी	आसामीज इट्स फॉरमेशन एण्ड डेवलपमेन्ट पृ० ६	बंगला	,,
८ रायबहादुर आर्तवल्लभ महन्ती।	उड़िया	उ० सा० इ० पृ० १	असमी	,,
९ डॉ० नगेन्द्रनारायण चौधरी।	बंगाल	डाकार्णव पृ० १६		
१० डॉ० सुकुमार सेन	बंगाल	चौरस बंगाली टैक्स पृ० ४४।	उड़िया	चर्यापद
११ श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी	हिन्दी	पुरानी हिन्दी	बंगला	डाकार्णव
१२ मिश्रबन्धु विनोद	,	मिश्रबंधु विनोद	बंगला	अपभ्रंश व चर्यागीतिका
१३ पं० रामचन्द्र शुक्ल		हि० सा० इ० पृ० १६	हिन्दी	अपभ्रंश का साहित्य
१४ डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी	,,	हिन्दी साहित्य का उद्भव एवं विकास	,,	,,
१५ डा० रामकुमार वर्मा	,,	हि० सा० आ० इ० पृ० २७		
१६ डा० विश्वनाथप्रसाद		ऐ० आई० के० स० पृ० १५		

शास्त्रीजी को यह दोहा संग्रह नेपाल में मिला है। उन्होंने इसका नामकरण 'हजार बछरेर पुरान बंगला भाषाय बौद्धगान ओ दोहा'[१] अर्थात् "हजार वर्ष पुरानी बंगला भाषा में बौद्धगान ओ दोहा' किया है। दूसरे विद्वान डॉ॰ शहीदुल्ला ने तिब्बती अनुवाद से मूल को मिलाकर 'चाचा' मिसटी के द काण्ह ऐंद सरह'[२] दोहाकोष प्रबंध रूप में प्रकाशित किया है। इसकी भाषा अपभ्रंश बतलाई गई है। तीसरे विद्वान डॉ॰ प्रबोधचन्द्र बागची हैं उन्होंने तिब्बती के साथ मूल को दिया है। इसका परिचय अपभ्रंश भाषा के नाम से दिया है। चौथे विद्वान महापण्डित राहुल सांकृत्यायन हैं, जिन्होंने सिद्ध-कवियों का संग्रह हिन्दी-काव्यधारा के नाम से किया है। उनका दूसरा ग्रंथ दोहाकोष सरहपाद पर प्रकाशित हुआ है। राहुल जी ने पहले इसकी भाषा को बिहारी 'प्राचीन मगही एवं मैथिली माना है[३]। साथ ही राहुल जी समस्त उत्तरी भारत की आर्य-भाषाओं का पूर्व रूप भी अपभ्रंश को मानते हैं[४]। श्री चन्द्रधर शर्मा गुलेरी अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी मानते हैं[५]। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अपभ्रंश को प्राकृताभास हिन्दी मानते हैं[६]। डॉ॰ हजारीप्रसाद द्विवेदी भी उपर्युक्त मतों का समर्थन करते हैं[७]। डॉ॰ रामकुमार वर्मा भी अपभ्रंश को हिन्दी की पूर्ववर्ती मानते हैं[८]। डॉ॰ विश्वनाथप्रसादजी का भी यही मत है[९]। डॉ विनयतोष भट्टाचार्य सरहपा को बंगला का सर्वप्रथम कवि मानते हैं। राय बहादुर मार्तण्डवल्लभ महन्ती ने इसको पुरानी उड़िया कहा है[१०]। डॉ॰ बाणीकान्त ककाती ने इसको आसामी कहा है[११]। डा सुनीतिकुमार चटर्जी ने केवल बौद्धगान ओ दोहा' में ही संग्रहीत दोहाकोषों और चर्यापदों में ही दो तरह की भाषाओं की ओर संकेत किया है। चर्यापदों की भाषा पूर्व की है वे उसे प्राचीन बंगाली कहते हैं। क्योंकि क्रिया रूप तथा मुहावरे ऐसे हैं जिनकी परंपरा पुरानी बंगला में है। दोहाकोष की एक ही भाषा है पश्चिमी (शौरसेनी अपभ्रंश) किन्तु पूर्व भारत में

१ बौ गा ओ॰ दोहा भूमिका।
२ चाचा मिसटी के द काण्ह ऐंद सरह, प्रबंध—डि॰ लिट भूमिका पृष्ठ ११।
३ पु॰ त॰ नि॰ पृ १६७। हि का॰ धा॰ पृ॰ ११।
४ दो॰ को पृ॰ ८।
५ पु॰ हि॰।
६ हि सा इ पृ १९।
७ हि॰ सा (उद्भव एवं विकास) पृ १६।
८ हि॰ सा॰ आ इ पृ॰ ५७।
९ मे॰ इ के स॰ पृ॰ ११।
१० अ॰ सा स इ पृ॰ १।
११ ककाती आसामीज इट्स फारमेशन एण्ड डेवलपमेंट पृ॰ ९।

मिलने जाने के कारण इसमें कुछ पूर्वी मुहावरे एवं रूप भी मिल गये हैं[1]। डॉ० नगेन्द्रनारायण चौधरी डाकार्णव की भाषा का आधार शौरसैनी अपभ्रंश मानते हैं किन्तु इसमें पूर्वी बंगाल के शब्दों, रूपों उच्चारणों तथा मुहावरों का समावेश मानते हैं[2]। डॉ० सुकुमार सेन हेवज्र की कथ गीतियों एवं डाकार्णव की भाषा शौरसैनी अपभ्रंश मानते हैं। चर्यापदों की भाषा को असम (पूर्वी) मानते हैं[3]।

किन्तु उपर्युक्त मतों के आधार पर अपभ्रंश के बारे में यह निष्कर्ष निकलता है कि अपभ्रंश-साहित्य समस्त आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की साझे की सम्पत्ति है। १ अर्थात् हर भाषा इसको अपना पूर्ववर्ती मानती है। २ शौरसैनी अपभ्रंश तत्कालीन दूसरी अपभ्रंशों पर प्रभावशाली रही है। ३ अत हिन्दी को कई विद्वान शौरसैनी अपभ्रंश का परवर्ती रूप मानते हैं। इन तीनों सिद्धांतों का स्पष्टीकरण इस प्रकार हो सकता है।

(१) अपभ्रंश साहित्य एवं भाषा आधुनिक आर्य भाषाओं की सामूहिक (साझे की) सम्पत्ति है। विद्वानों का एक समन्वयवादी दृष्टिकोण भी है जो अपभ्रंश-साहित्य को आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओं के साझे की सम्पत्ति समझता है। डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं, 'केवल शब्दों के अध्ययन की अपेक्षा प्रत्यय जो कारक और क्रिया रूप बताते हैं वे भाषायी भेद के अधिक वैज्ञानिक आधार हैं। अधिकतर प्रत्यय जो इन गीतों और दोहों में प्रयुक्त हुये हैं यह विचारणीय विषय है वे सामान्यत मैथिली, हिन्दी, उड़िया, आसामी, बंगला मारवाड़ी और नेपाली में भी मिलते हैं। किसी एक भाषा का एकाधिपत्य इन पर (कपो) नहीं हो सकता'[4]। राहुल जी हिन्दी के पक्ष की बात करते हुए अपनी हिन्दी काव्यधारा और दोहाकोष में स्पष्ट करते हैं। "यहाँ एक बात को हम और साफ कर देना चाहते हैं, हम जब इन पुराने कवियों की भाषा को हिन्दी कहते हैं तो इस पर मराठी उड़िया बंगला

१ ओ० डी० बी० ऐल०, पृ० ११२।

२ डाकार्णव पृ० १६।

३ ओ० बं० ई०, पृ० ४४। डॉ० सा० इ० पृ० ४६।

४ The post-positions to denote cases and forms of verbal inflex tions are a far more scientific basis for linguistic differentition than a mere study of words In regard to most of the post positions denoting casesused in these Songs and Dohas it is to be observed that they are those found in common in Maithili Hindi Oriya Assamese Bengali and even Marwari and Nepalese. No one language in particular can claim any of these forms as peculiary its own.

(H B L L pp 63)

आसामी, गोरखा पंजाबी एवं गुजराती भाषाभाषियों को आपत्ति हो सकती है। लेकिन हमारा यह अभिप्राय हरगिज नहीं है कि ये पुरानी भाषा मराठी आदि की अपनी साहित्यिक भाषा नहीं है। उन्हें भी उसे अपना कहने का उतना ही अधिकार है जितना हिन्दी भाषाभाषियों को। वस्तुतः ये आर्य आधुनिक भाषाएँ १२वीं १३वीं शताब्दी में अपभ्रंश से पृथक होती दीखती हैं। जिस समय (८वीं सदी में) अपभ्रंश का साहित्य पहले-पहल तैयार होने लगा था। उस समय बंगला आदि उससे अलग अस्तित्व नहीं रखती थी।" आगे फिर लिखते हैं "वस्तुतः यह सिद्ध सामंत-युगीन कवियों की सारी भाषाओं की सम्मिलित निधि है। अर्थात १२वीं १३वीं शताब्दी तक द्राविड़ भाषाभाषी आंध्र तमिल केरल और कर्णाटक को छोड़कर भारत के सभी प्रान्तों की एक सम्मिलित भाषा भी थी[१]।

कोशकोश में लिखते हैं "अपभ्रंश वैसे केवल हिन्दी की अपनी चीज नहीं है। उस पर उत्तर भारतीय या भारत की हिन्दू (आर्य) सभी भाषाओं का एक समान अधिकार है। यह मराठी गुजराती पंजाबी हिन्दी-क्षेत्र की भाषाओं—राजस्थानी मालवी बुन्देली हरियानी कौरवी (मूल हिन्दी) पहाड़ी ब्रज अवधी भोजपुरी मैथिली मगही असमिया बंगला और उड़िया की अपनी निधि है। इन सभी भाषाओं के क्षेत्र में अपभ्रंश-साहित्य की रचना हुई, उसको अपना समझा गया और वह सभी को अपने साहित्यिक दाय भाग के रूप में मिली[२]। डॉ० सत्येन्द्र जी का मत है, 'सिद्धों की भाषा एक सामान्य लोकभाषा थी जो विभिन्न प्रान्तीय तत्त्वों को लेकर निर्मित हुई थी[३]। उस सामान्य लोकभाषा में प्रान्तीय तत्त्वों का समावेश था यहाँ से हिन्दी और बंगला का एक ही मूल और स्रोत दिखलाई पड़ता है। सिद्ध लोग विभिन्न स्थानों से एकत्रित होते थे और उस सामान्य भाषा में स्थानीय स्वरूपों का भी समावेश हो जाता था।

२ किन्तु इस सामान्य भाषा में सर्वप्रधान तत्त्व शौरसेनी-अपभ्रंश का ही था। विद्वानों का मत है कि शौरसेनी अपभ्रंश का दूसरी अपभ्रंशों पर प्रभाव रहा है। यह एक इतिहास सिद्ध तथ्य है कि मध्यदेश सदैव से सारे देश को प्रभावित करता रहा है। यहाँ की भाषा सदैव से देश की अन्य भाषाओं पर अपना प्रभाव डालती रही है। क्योंकि जैसा डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने बताया है, 'ऊपरी गंग प्रदेश इतिहास के उदयकाल से ही सांस्कृतिक एवं राजनीतिक जीवन का केन्द्र रहा है। स्वभावतः यहाँ की भाषायें क्रमात्, संस्कृत पाली शौरसेनी प्राकृत तथा अप

१ हि० का० धा पृ ११।
२ हो को० भू० पृ ८।
३ मध्ययुगीन हिन्दी के प्रेमगाथा काव्य तथा भक्तिकाव्य में लोकवार्ता-तत्त्व, पृष्ठ ८१ (अप्रकाशित डी० लिट० प्रबंध) १९२७ प्रकाशित पृ ।

भ्रंश के रूप में, अवहट्ट के रूप में ब्रजभाषा के रूप में तथा हिन्दुस्तानी के रूप में भारत के इतिहास भर में एक शक्ति रहेगी[१]। डॉ॰ चटर्जी आगे फिर लिखते हैं कि यह पश्चिमी अपभ्रंश साहित्यिक भाषा के रूप में पूर्वी भारत में प्रचलित थी[२]। डॉ॰ सुकुमार सेन मध्यदेश की भाषा शौरसेनी [redacted] प्रभुत्व के बारे में लिखते हैं "आठवीं शताब्दी से शौरसेनी अपभ्रंश समस्त उत्तरी भारत (उत्तरापथ) की साहित्यिक (साधु) भाषा रही है। जैनियों द्वारा लिखे हुए अनेक ग्रंथ मिलते हैं। बंग देश के बौद्ध तान्त्रिक सहजपंथी एवं शैव-योगी नाथपंथी सिद्धाचार्य इसी भाषा में अपने कड़वा पद एवं दोहावाल लिख गये हैं[३]। शौरसेनी का प्रभुत्व [redacted] कारणों से हुआ था जैसा कि विद्वान मानते हैं। डॉ॰ चटर्जी राजपूतों के राजनीतिक प्रभुत्व को शौरसेनी अपभ्रंश के प्रचार एवं प्रसार का कारण मानते हैं[४]। डॉ॰ सत्येन्द्र जी लोकमानस को शौरसेनी अपभ्रंश के प्रसार का कारण मानते हैं[५]। शौरसेनी-अपभ्रंश ने तीन स्वरूप धारण किये। प्रथम अन्य अपभ्रंशों के समरूप थी। दूसरे उसने अवहट्ट रूप धारण किया जिसमें विद्यापति की कीर्तिलता, कीर्तिपताका एवं प्राकृत-पैंगलम् की रचना हुई। तीसरे वह हिन्दी के अधिक पास आ गई। जिसे पुरानी हिन्दी भी कहते हैं[६]। शौरसेनी अपभ्रंश का प्रभाव पूर्वी अपभ्रंश पर रहा है। बंगला पूर्वी अपभ्रंश (मागधी अपभ्रंश) से विकसित हुई है। हिन्दी शौरसेनी अपभ्रंश का ही एक

---

१ ओ॰ डी॰ बी॰ एल॰ पृष्ठ ११।

२ The upper gangetic valley has been the centre of culture and political life in India since the dawn of history and it is in the nature of things that its language successively as Sanskrit as Pali as Sauraseni prakrit and Apbhransa as Avahatta as Brajbhakha and as Hindustani should be a force through out the history of India.

(O D B. L. pp 13.)

३ अष्टम शताब्दी हइते शौरसेनी अपभ्रंश समस्त उत्तरापथेर साधु भाषा हइया दाँड़ाय। एइ भाषाय जैनदेर लेखा बई अनेक पाओया गियाछे। बंगदेशेर बौद्धतान्त्रिक सहजपंथी एवं शैवयोगी, नाथपंथी सिद्धाचार्येरा एइ भाषा दोहा वेर कड़वा बई एवं बहुप्रमाण लिखिया गियाछेन।

(बा॰ सा॰ इ॰ प्र॰ ख॰ पृ॰ ११)

४ ओ॰ डी॰ बी॰ एल॰ मध्ययुगीन हिंदी के प्रेमगाथा तथा चरितकाव्य में लोकवार्ता तत्त्व (अप्रकाशित)।

५ डॉ॰ मिश्र प्रबन्ध प्रकाशित पृ॰ ७१।

६. देखिये चार्ट पृ॰ १० लेखक का प्रबन्ध।

परवर्ती रूप है। श्री सुकेश चौधरी महाशय इस रूप में हिन्दी का प्रभाव प्राचीन बंगाली पर थोड़ा ही मानते हैं[1]।

निष्कर्ष यह है कि अपभ्रंश साहित्य को समस्त आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य की सामान्य निधि मानना अधिक ऐतिहासिक एवं भाषा-वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संगत है। आनुपातिक दृष्टि से शौरसेनी अपभ्रंश मध्यदेशीय भाषा होने के कारण राजनीतिक सहायता एवं-परम्परा प्राप्त कर अधिक प्रसार एवं प्रचार पा सकी फिर भी उसके साथ ही दूसरी अपभ्रंश भाषायें भी चलती रही और अपना योगदान देती रहीं। एक ओर दोहाकोषों में शौरसेनी अपभ्रंश का प्राधान्य है[2] तो दूसरी ओर पूर्वी अपभ्रंश के रूप चर्यापदों में मिलते हैं[3]। वास्तव में अपभ्रंश साहित्य अखिल उत्तर-भारतीय जनता का साहित्य है। जिस प्रकार हम हिन्दी की परम्परा अपभ्रंशों में मानते हैं उसी तरह बँगला आसामी उड़िया गुजराती, मराठी सिंधी पंजाबी एवं नेपाली आदि अन्य भाषाओं की भाषा-वैज्ञानिक एवं साहित्यिक परम्परा अपभ्रंश में या उसके किसी न किसी रूप में ही मिलती है। इसके सम्बन्ध में ऊपर मत दिये जा चुके हैं।

हिन्दी-बँगला में तो यह सामान्य-स्रोत की बात उनके इतिहासकारों के लेखों से विशेषतः पुष्ट हो जाती है। यहाँ एक उदाहरण से उसे स्पष्ट देखा जा सकता है। हिन्दी और बँगला दोनों के प्रामाणिक इतिहासकारों ने हम्मीर रासो को अपनी भाषा का माना है। उसके पद दोनों में उद्धृत हैं। दोनों इतिहासों में कुछ पाठ का ही भेद है। जैसे हिन्दी पाठ यह है—

ढोला मारिय ढिल्लि महं मुच्छिअ मेच्छ शरीर।
पुर जज्जला मन्तिवर चलिअ वीर हम्मीर॥
चलिए वीर हम्मीर पाअभर मेइणि कंपइ।
दिगमग णह अंधार धूलि सुरह आच्छाइहि॥

1. बाँगला साहित्येर इतिवृत्त के लेखक श्री सुकेश चौधरी से नेपालस लायब्रेरी में इस विषय पर चर्चा हुई। लेखक के सामने उन्होंने इस तथ्य को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया "प्राकृत-पैंगलम् के कई पदों को पुरानी हिन्दी का रूप माना जा सकता है'।

2. दोहाकोष।

3. बा सा० इ प्र ख पृ० ४७ देखिये चर्यागीत का नमूना—

अद्धिल गुण परमार्थेर पात
कर्म्म कुरण समाधि कपाट।
कमल विकसिल कहई ण जमरा
कमल मधु पिबि धोके न भमरा। (चर्यागीत २१)

दिगमग णह अन्धार आणु खुरसाणक उल्ला।
दरमरि दमसि विपक्ख मारु ढिल्ली मह ढोल्ला[1] ॥

अर्थात् दिल्ली में ढोल बजाया गया, म्लेच्छों के शरीर मूर्च्छित हुए। आगे मंत्रिवर जज्जल को करके वीर हम्मीर चले। चरणों के भार से पृथ्वी कांपती है। दिशाओं के मार्गों और आकाशों में अंधेरा हो गया है धूल सूर्य के रथ को आच्छादित करती है। ओल में खुरासानी से आए। विपक्षियों को दल मल कर बजाया दिल्ली में ढोल बजाया।

और बंगला के इतिहास में यह पाठ है —

ढोल्ल मारिय ढिल्लिमह-मुच्छिअ मेच्छ शरीर।
पुर जज्जल मल्लवर चलिअ वीर हम्मीर ॥
चलिअ वीर हम्मीर पाअभर मेइनि कम्पइ।
दिगमग णह अन्धार धुलि सुरह रह झम्पइ ॥
दिगमग णह अन्धार आणु खुरसाणक उल्ला।
दलमलि दमसि विपक्ख मारम ढिल्लि मह ढोल्ला[2] ॥

अर्थात् ढोल मारिल ढिल्लि माझे, म्लेच्छ शरीर मूर्च्छित हइल मल्लवर पज्जलके पुर. सर करिया वीर हम्मीर चलियाछे। वीर हम्मीर चलियाछे, मेदिनी कांपितेछे, दिक् मार्गओ नभ अन्धकार, धूलाय सूर्यर रथ झाँपियाछे, दिक मार्ग ओ नभ अन्धकार खोरासानेर उल्ला आसियाछे दलबले विपक्षे दलन कर, ढिल्लिमाझे ढोल पिटोओ।

दोनों ही साहित्यों के इतिहासकार इन पदों को अपनी भाषा एव साहित्य का अभिन्न अंग मानते हैं। इस प्रकार दोनों ही इतिहासों में अपभ्रंश और अवहट्ट के प्रकरण में ऐसे बहुत से पद हैं जो समान हैं। अपभ्रंश का पूर्ववर्ती स्वरूप अभी दोनों में अधिक भेद से युक्त नहीं है। किन्तु उत्तरकालीन अपभ्रंशों में मध्य भारतीय आर्य भाषाओं के बीज अंकुरित हो उठे हैं। पर सभी के रूप साथ-साथ चलते दीखते हैं। ऐतिहासिक सत्य तो यह है कि इन भाषाओं में पहले कोई अधिक भाषामूलक एव साहित्यिक अन्तर नहीं था। उस काल में इन भाषाओं की कोई कठोर सीमा रेखा निर्धारित नहीं थी। अत अपभ्रंश को शौरसेनी अपभ्रंश अथवा पुरानी हिन्दी से प्रभावित (अभिमत) अपभ्रंश मध्य भारतीय आर्य भाषाओं के साझे की (पैतृक) सम्पत्ति कहा जा सकता है। साथ ही यह बात भी द्रष्टव्य है कि यह अपभ्रंश शौरसेनी अपभ्रंश से अत्यधिक प्रभावित है। अत हिन्दी के प्रभाव का मूल इसी युग से दिखाई पड़ने लगता है।

---

१ हि० सा० इ० पृ० २१।
२ बां० सा० इ० पृ० १९।

४

नाथ-सम्प्रदाय का साहित्य (१००० ई० से १८०० ई० तक)

२१. अपभ्रंश भाषा के अंतिम छोर पर जब पुरानी हिन्दी तथा आधुनिक अन्य देश भाषायें पृथक्-पृथक् अपना रूप ग्रहण कर रही थीं। तब भारत भर में नाथ सम्प्रदाय प्रबल था। नाथ-सम्प्रदाय विषयक प्रभूत-साहित्य हिन्दी में लिखा गया। इस संप्रदाय का प्रभाव बंगाली-साहित्य पर बहुत था। डॉ० शशिभूषणदास गुप्त ने लिखा है—"नाथ-सम्प्रदाय एक अन्य अस्पष्ट धार्मिक-सम्प्रदाय है जिसने बंगला साहित्य के विकास को अत्यधिक-रूप में उसके आदिकाल से ही प्रभावित किया है। नाथ-सम्प्रदाय एक अखिल भारतीय धार्मिक आन्दोलन के रूप में अत्यधिक लोकप्रिय रहा है और अब भी है। आदिकाल और मध्यकाल में इसने कई अन्य भारतीय साहित्यों को भी प्रभावित किया है। नाथ-सम्प्रदाय का इतिहास धार्मिक एवं साहित्यिक रूप में भारत के अन्य प्रदेशों और हिमालय के भागों नेपाल और तिब्बत के साथ भी घनिष्ठ रूप में सम्बंधित रहा है। यह जानना सरल है कि इसका सहज वही है जो सहज बौद्ध-तंत्रों बौद्धगानों और दोहों में वर्णित है। बहुधा नाथ-सम्प्रदाय के आधुनिक भाषाओं के साथ में और विशेषकर पुरानी हिन्दी के ग्रंथ गोरखबोध और इसी तरह के चर्पटी और सिद्ध-साहित्य में इसी सहज के दर्शन होते हैं[1]।

यह भारतव्यापी संप्रदाय था। इसके माध्यम से पश्चिम और पूर्व का पारस्परिक आदान-प्रदान भी बढ़ा। गोरखनाथ के ग्रंथ हिन्दी में इस संप्रदाय के विशिष्ट ग्रंथ हैं। इनके एक हिन्दी-ग्रंथ का प्रभाव बंगाली-ग्रंथ पर स्पष्ट है। जिसे उस भाषा के विद्वान इतिहासकार भी स्वीकार करते हैं। उदाहरणार्थ डा० सुकुमार सेन ने लिखा है—"एई आदान प्रदान एक तरफा हय नाई। भारतेर अन्य प्रान्तेर

---

१ Another obscure religious cult that has influenced the growth of Bengali Literature to a considerable extent from an early period of its history is Nathism. As an all India religious movement Nathism enjoyed and is still enjoying immense popularity and it influenced the growth of many other modern Indian Literatures in the early and the middle periods. The religious and literary history of Nathism in Bengal is therefore, intimately connected with that of many other provinces of India as also of the Himalayan regions like Nepal and Tibet. It is very easy to see that this sahaj is the same as the sahaj described in the Buddhist tantras and the Buddhist Dohas and Songs. In the vernacular Literature of the Nath cult we frequently meet with this conception of Sahaj particularly in the old Hindi text Gorakh bodh and in the similar Literature of Carpati and other Siddhas.

(C. K. B. O.)

गोरख पंथी देर प्रहार प्रभाव को बाँगाला देयेर नाथ योगीदेर मिलन्ने पावयाछि। उत्तर बंगे सेका एकटि क्षुद्र प्राचीन निबंध श्री गोर्ख-संहिताय प्रहार भाषाय ओ छन्दे गोरख-पन्थी हिन्दी प्रहार स्पष्ट-प्रभाव रहियाछे।[1] इसके निर्दशन के लिये यह तुलनात्मक अंश दिया जाता है —

बँगला (श्री गोर्ख संहिता)	हिन्दी (मछिन्द्र गोरखबोध)
गोरखनाथ—तुमि गुरु स्वामि शिष्य सम्वके पुछो गुरु मनेते ना करिह रोष	गोरखो वाच—स्वामी तुम्हें गुरु गुसाईं अम्हें जु सिष (सबद एक पूछिस्या) दया करि कहिबा मन ही में करिबा रोष
कावेसर कौन उपदेशा, सुन्येर कथा कहा रसे ज्ञानेर कौन परिचय	गोरख स्वामी आदेशो का कौन उपदेश सुनि का कर्म वाच सबद का कौन गुर, कथंत मछिन्द्रनाथ।
मछन्दर नाथ वाच—अवधू आदेसेर अन्य उपदेशा, सुन्येर निरन्तर वासा, ज्ञानेर अकथ्य मुद्रा तुम गोर्ख मिलेर चेला गोरखनाथ वाच—गुरु गोसाईं, केमन गुरु केमन चेला केमन मूल, केमन बेला किम न तोम मेके फेरे अकेला।	मछिन्द्र—अवधू आदेस का अनूपम उपदेस सुनि का निरन्तर वास। सबद का परचा गुरु कथत मछिन्द्रनाथ। गोरख स्वामी कौण मूल कौण बेला। कौण गुरु कौण चेला, कौण तत्व कौण मेला।
मछन्दरि नाथ वाच—अवधू मन मूल पवन बेला सबद गुरु सुरत चेला निर्मल तत्व मेके फेरे अकेला। कहे मछन्दरि गुरु गोर्ख चेला।	मछिन्द्र—अवधू मन मूल पवन बेला सबद गुरु सुरति चेला त्रिकुटी बँध उलटि मेला तृबाण तत्व ले रमौ अकेला।
गोरखनाथ वाच—गुरु गोसाईं कौन सरोवर पानि बिनो, कौन मूल बिनो डाल कौन परिमल वाया बिनो, कौन मृत्यु बिनो काल।	गोरख स्वामी कौण पैंड़ि बिन डाल, कौण पंथि बिन सूवा, कौन पानि बिन नीर कौन बिन कालहि मुवा।
मछन्दरि नाथ वाच—अवधू मन सरोवर पानि बिनो मूल पवन बिना डाल माया परिमल वाया बिनो निद्रा मत्यु बिनो काल।	मछिन्द्र—अवधू पवन पैंड़ि बिन डाल मन पंथि बिन सूवा धीरज पानि बिन नीर, निद्रा बिन कालहि मुवा

1. [illegible]

४

नाथ-सम्प्रदाय का साहित्य (१००० ई० से १५०० ई० तक)

२१ अपभ्रंश भाषा के अंतिम छोर पर जब पुरानी हिन्दी तथा आधुनिक अन्य देश-भाषायें कुछ-कुछ अपना रूप ग्रहण कर रही थीं। तब भारत भर में नाथ सम्प्रदाय प्रबल था। नाथ-सम्प्रदाय विषयक प्रभूत-साहित्य हिन्दी में लिखा गया। इस संप्रदाय का प्रभाव बंगाली-साहित्य पर बहुत था। डॉ० शशिभूषणदास गुप्त ने लिखा है— 'नाथ-सम्प्रदाय एक अन्य अस्पष्ट धार्मिक-सम्प्रदाय है, जिसने बंगला साहित्य के विकास को अत्यधिक-रूप में उसके आदिकाल से ही प्रभावित किया है। नाथ-सम्प्रदाय एक अखिल भारतीय धार्मिक आन्दोलन के रूप में अत्यधिक लोकप्रिय रहा है और अब भी है। आदिकाल और मध्यकाल में इसने कई अन्य भारतीय साहित्यों को भी प्रभावित किया है। नाथ-सम्प्रदाय का इतिहास धार्मिक एवं साहित्यिक रूप में भारत के अन्य प्रदेशों और हिमालय के भागों नेपाल और तिब्बत के साथ भी घनिष्ठ रूप में सम्बन्धित रहा है। यह जानना सरल है कि इसका सहज वही है जो सहज बौद्ध-तंत्रों दोहागानों और दोहों में वर्णित है। बहुधा नाथ-सम्प्रदाय के आधुनिक भाषाओं के साथ में और विशेषकर पुरानी हिन्दी के ग्रंथ गोरखबोध और इसी तरह के चर्पटी और सिद्ध-साहित्य में इसी सहज के दर्शन होते हैं[1]।

यह भारतव्यापी संप्रदाय था। इसके माध्यम से पश्चिम और पूर्व का पारस्परिक आदान प्रदान भी बढ़ा। गोरखनाथ के ग्रंथ हिन्दी में इस सम्प्रदाय के विशिष्ट ग्रंथ हैं। इनके एक हिन्दी-ग्रंथ का प्रभाव बंगाली-ग्रंथ पर स्पष्ट है। जिसे उस भाषा के विद्वान इतिहासकार भी स्वीकार करते हैं। उदाहरणार्थ डा० सुकुमार सेन ने लिखा है— 'एई आदान प्रदान एक तरफा हय नाई। भारतेर अन्य प्रान्तेर

१ Another obscure religious cult that has influenced the growth of Bengali Literature to a considerable extent from an early period of its history is Nathism. As an all India religious movement Nathism enjoyed and is still enjoying immense popularity and it influenced the growth of many other modern Indian Literatures in the early and the middle periods. The religious and literary history of Nathism in Bengal is therefore intimately connected with that of many other provinces of India as also of the Himalayan regions like Nepal and Tibet. It is very easy to see that this sahaj is the same as the sahaj described in the Buddhist tantras and the Buddhist Dohas and Songs. In the vernacular Literature of the Nath cult we frequently meet with this conception of Sahaj particularly in the old Hindi text Gorakh bodh and in the similar Litera ture of Carpati and other Siddhas.

(C. K. R. C.)

गोरख पंथी देर छड़ार प्रभाव ओ बाँगाला देशेर नाथ योगीदेर मिलने पाइमाछि। उत्तर बंगे सेखा एकटि शुद्ध प्राचीन निबंध श्री गोर्स-संहिताय छड़ार भाषाय ओ छन्दे गोरख-पन्थी हिन्दी छड़ार स्पष्ट-प्रभाव रहियाछे।[1] इसके निदर्शन के लिये यह तुलनात्मक अंश दिया जाता है —

बंगला (श्री गोर्स संहिता)

गोरखनाथ—तुमि गुरु आमि शिष्य सबके पूछो गुरु मनेते ना करिह रोष

आदेशेर कौन उपदेश सुनेर कथा बसा रसे ज्ञानेर कौन परिचय

मछन्दरि नाथ बाच—अवधु आदेशेर अन्य उपदेश सुनेर निरन्तर बासा ज्ञानेर अकथ्य कथा सुन गोर्स मिनेर चेला गोरखनाथ बाच—गुरु गोसाई, कमन गुरु केमन चेला केमन मूल केमन चेला केमन ठंग लेके फेरे अकेला।

मछन्दरि नाथ बाच—अवधु मन मूल पवन चेला सबद गुरु सुरत चेला निर्मल ठंग लेके फेरेरे अकेला। कहे मछन्दरि सुन गोर्स चेला।

गोरखनाथ बाच—गुरु गोसाई
कौन सरोवर पानि बिनो,
कौन मूल बिनी डाल
कौन परिमल बासा बिनो

कौन मृत्यु बिनो काल।
मछन्दरि नाथ बाच—अवधु
मन सरोवर पानि बिनो मूल पवन बिनो डाल
आशा परिमल बासा बिनो निद्रा मृत्यु बिनो काल।

हिन्दी (मछिन्द्र गोरखबोध)

गोरखो बाच—स्वामी तुम्हें गुरु गुसाई अम्हें जु शिष (सबद एक पूछिस्या) दया करि कहिबा मन ही में करिबा रोष

गोरख स्वामी आदेशे का कौन उपदेश, सुनि का कथ बास सबद का कौन गुर, कथत मछिन्द्रनाथ।

मछिन्द्र—अवधू आदेश का अनुपम उपदेश सुनि का निरन्तर बास। सबद का परचा गुरु, कथंत मछिन्द्रनाथ। गोरख स्वामी कौण मूल कौण बेला। कौण गुरु कौण चेला कौण छेत्र कौण मेला।

मछिन्द्र—अवधू मन मूल पवन बेला सबद गुरु सुरति चेला त्रिकूटी बंध उलटि मेला गुर्वाण तन से रमो अकेला।

गोरख
स्वामी कौन पेड़ बिन डाल,
कौन पंषि बिन सूवा
कौन पालि बिन नीर, कौन बिन कालहि मुवा।
मछिन्द्र—अवधू
पवन पेड़ बिन डाल
मन पंषि बिन सूवा

धीरज पालि बिन नीर, निद्रा बिन कालहि मुवा

१. [illegible]

यह मछिन्द्र गोरखबोध हिन्दी का ग्रंथ है और श्री गोरक्ष संहिता ग्रंथ बंगला का है।

पहले कहा जा चुका है कि भारत में सदैव एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में आदान-प्रदान होता आया है अतः गोरखनाथ प्रभावशाली व्यक्ति थे उनका प्रभाव बंगला पर होना स्वाभाविक है। इसी तरह यह प्रश्नोत्तर शैली संतनाथ पंथियों की एक विशेषता है। बंगला में अब भी इस तरह की हेंयाली (पहेलियाँ) चलती हैं[१]। हिन्दी का प्रभाव बंगला के जनपद के लोक-साहित्य पर भी कुछ-कुछ है। यह लोक-साहित्य का उदाहरण गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर संकलित सुधीर नाम से है।

प्रश्न	उत्तर
कौन देश में राजा माता	उत्तर में राजा माता
कौन देश में रानी	दक्षिण में रानी
कौन देश में कापड़ माता	पश्चिम देश में कापड़ माता
कौन देश में पानी	पूर्व देश में पानी।

इस प्रकार के सम्भार कुछ तो शब्दानुसार कुछ भावानुसार एवं कुछ शैली का अनुकरण मात्र हैं। इस एक संकेत से हम इस युग में इस संप्रदाय द्वारा पड़े प्रभाव के कुछ रूप को समझ सकते हैं।

५

मैथिली (विद्यापति ठाकुर १३५०–१४५०)

हिन्दी का प्रभाव बंगला भाषा पर जिन परंपरागत स्रोतों से पड़ा है उनका कुछ दिग्दर्शन ऊपर कराया जा चुका है। यहाँ मैथिली का प्रश्न भी हमारे सामने आता है। हिन्दी वाले मैथिली को हिन्दी के अन्तर्गत मानते हैं उन्हीं के साथ वैज्ञानिक ऊहापोह के बाद यही मत समीचीन लगता है। इस स्थिति में मैथिली का प्रभाव भी हिन्दी का ही प्रभाव माना जाएगा। विद्यापति मैथिली के महाकवि हैं। उनका प्रभाव बंगला पर इतना है कि पहले मैथिली को बंगला ही माना जाने लगा था। वैसे तो यह विषय हमारे प्रबंध के विषय से सीधा संबंध नहीं रखता फिर भी वस्तुस्थिति का परिचय देने के लिये यह आवश्यक है कि मैथिली विषयक तीन मतों की कुछ चर्चा करली जाय। ये तीन मत ये हैं—(१) मैथिली बंगला के अन्तर्गत है। (२) मैथिली स्वतंत्र भाषा है। (३) मैथिली हिन्दी है। इस विचार को इस तालिका से समझा जा सकता है[१] —

---

१ देखिये डॉ० सा इ प्र० का० पुलक पृ १०१४—१०१२।

बंगलावादी

समय	विद्वान	अभिमत के तर्क
(१८९६ १९१२) सर्वत्र से बंगाली विद्यापति को बंगला का कवि मानते आये हैं।	डॉ० दीनेशचन्द्र सेन एवं अन्य बंगाली विद्वान	बंगला भाषा ओ-साहित्य पृष्ठ २२५, हि० क० सं० सि० पु० १३४ चण्डीदास एवं विद्यापति प्रकरण। बंगला और मैथिली एक ही मागधी समुदाय की भाषायें हैं।
	स्वतन्त्र-अस्तित्व	
	सर जार्ज ग्रियर्सन, डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी डॉ० सुभद्र झा डॉ० जय कान्त मिश्र	अन्य आधुनिक भारतीय भाषाओं की तरह मैथिली की भी अपनी प्राचीन साहित्यिक स्वतंत्र परंपरा है। हि० मै० सि० पृ० ४७।
	हिन्दीवादी	
	डॉ० कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल राहुल जी डॉ० धीरेन्द्र वर्मा डॉ० राम कुमार वर्मा, डा० बाबू गुलाबराय मिश्रबन्धु, डॉ० सत्येन्द्र, डॉ० वासुदेव शरण अग्रवाल डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी डॉ० बाबू राम सक्सेना, डा० विश्व नाथप्रसाद पं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र	हिन्दी ग्रामर, पृ० १२ देखिये शब्द-तत्व नामक-प्रबंध हि० सा० इ० पृ० १७ पत्र-व्यवहार पृ० ठ० सि० पृ० २११, हि० भा० इ० पृ० ५४, हि० सा० भा० इ० पृ० ११, हिन्दी काव्य विमर्श में निबंध, साहित्य सन्देश पत्र-व्यवहार, हिन्दी साहित्य, पृ० ७६; पत्र-व्यवहार, एस० आइ० के० स० पृ० १२ हिन्दुस्तान १२ जून १९६१ ई० में हिन्दी के आद्य कवि विद्यापति अभिभाषण।

तालिका का कुछ स्पष्टीकरण भी आवश्यक है। कुछ समय पूर्व लोगों की यह धारणा थी कि विद्यापति बंगाली कवि हैं किन्तु अब यह विचारधारा बदलती जा

रही है। डॉ० दीनेशचन्द्र सेन एक ओर विद्यापति पर बंगाली का दावा मानते हैं[१]। उनका कथन है कि सदैव से बंगाल विद्यापति से प्रेरणा लेता आया है। किन्तु वे उनको वास्तव में मैथिल कवि ही मानते हैं। उड़िया आसामी व बंगला की तरह मैथिली भी मागधी में अपभ्रंश व प्रसूत है। अतः मैथिली और विद्यापति का सम्बन्ध इनके साथ घनिष्ठ है। कुछ क्रिया रूपों में मैथिली का इन पूर्वी भाषाओं के साथ मेल है। किन्तु अब विद्वान् इस बात को मानने लगे हैं कि विद्यापति बंगला कवि नहीं हैं[२]। वह मैथिली का सर्वश्रेष्ठ कवि है। अतः यह स्पष्ट और सिद्ध है कि मैथिली भाषा बंगला के अन्तर्गत नहीं आती है। विद्यापति भी बंगाली कवि नहीं हैं।

अन्य विद्वान् मैथिली को स्वतंत्र भाषा का पद प्रदान करते हैं। उनमें से प्रमुख विद्वान् जार्ज ग्रियर्सन डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी डॉ० सुभद्र झा और डॉ० जयकांत मिश्र हैं जो इसको स्वतंत्र भाषा मानते हैं। उनका तर्क है कि भाषा-विज्ञान की दृष्टि से मैथिली मागधी अपभ्रंश व प्रसूत है। जिस प्रकार मागधी अपभ्रंश व प्रसूत अन्य भाषायें उड़िया बंगला एवं आसामी स्वतंत्र हैं उसी प्रकार मैथिली भी स्वतंत्र भाषा है। मैथिली का संबंध पश्चिमी भाषाओं की अपेक्षा पूर्वी भाषाओं के साथ घनिष्ठ है। यह हिन्दी और बंगला की मध्यवर्तिनी भाषा है।

किन्तु अन्य विद्वान् मैथिली को हिन्दी की उपभाषा मानते हैं, उनका कथन है कि मैथिली हिन्दी के अन्तर्गत ही आती है जिनमें प्रमुख हैं[३]—डॉ० कैलोग मैथिली को हिन्दी के अन्तर्गत मानते हैं। वे अपनी हिन्दी ग्रामर में लिखते हैं इस क्रम में हिन्दी विभाषाओं की गणना इस प्रकार होती है—पश्चिम से शुरू होकर और पूर्व की ओर जाते हुए उदाहरण स्वरूप ये भाषायें आती हैं —

(१) राजस्थान की विभाषायें मारवाड़ी मेवाड़ी जैपुरी हाड़ोती।

(२) हिमालय की विभाषायें: गढ़वाली कुमाऊंनी नेपाली।

(३) द्वाबा की बोलियाँ: ब्रज कन्नौजी।

(४) पूर्वी विभाषायें अवधी रिवाई (रीवाँ की) भोजपुरी। मागधी मगही और मैथिली।[४]

---

१ बंगभाषा और साहित्य पृष्ठ २२१।

२ हि० बं० मैथि पृष्ठ ११४।

३ देखिए-पृष्ठ २१ प्रस्तुत निबन्ध में हिन्दीभाषी तालिका।

४ With this region the dialects of Hindi may be enumerated as follows. beginning in the west and proceeding eastward namly·

(1) The dialects of Rajputana: Marwari Mewari, Mairwari, Jaipuri and Haroti

(²) The Himalayan dialects, Garhwali Kumeoni and Naipali

शब्दावली, साहित्यिक परम्परा तथा विभक्तियों आदि की दृष्टि से मैथिली का हिन्दी से सादृश्य होने के कारण वह हिन्दी ही के अन्तर्गत आ जाती है। एक उदाहरण देते हैं — (देखिये पृ० २४-२५)

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर हिन्दी की बोलियों की षष्ठी विभक्ति का वर्णन करते हुए मैथिली को भी सम्मिलित कर लेते हैं। उदाहरण से घोड़ा शब्द देकर स्पष्ट करते हैं—

खड़ी बोली	कन्नौजी	ब्रजभाषा	मारवाड़ी	मेवाड़ी	गढ़वाली	अवधी
घोड़ा का	घोड़ना का, घोड़ा को	घोड़िरौं	घोड़ा का, घोड़ोका	घोड़नकेर		

बिहारी	भोजपुरी	मागधी	मैथिली
घोड़नकर	घोड़नकि	घोड़नकेर	घोड़ानिक, घोड़ानिकर[1]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल विद्यापति की पदावली को हिन्दी के अन्तर्गत मानते हैं।[2] राहुल जी मैथिली को उसी तरह हिन्दी की विभाषा मानते हैं जिस प्रकार ब्रज भाषा को।[3] डॉ० धीरेन्द्र वर्मा भी मैथिली को हिन्दी की उपभाषा मानते हैं।[4] डॉ० रामकुमार वर्मा भी इसी मत के समर्थक हैं।[5] बाबू (डॉ०) गुलाबराय विद्यापति को हिन्दी का कवि मानते हैं।[6] डॉ० सत्येन्द्र भी उनके मत का समर्थन

---

(3) The dialects of the Doab Braj Kananji,

(4) The Purbi or Eastern dialects, Awadhi, Riwai Bhojpuri Magadhi and Maithili.

Kellogg The grammar of the Hindi Language Chapter IV Page 88

१ देखिये—रवीन्द्र रचनावली में द्वादश खण्ड, पृ० ६१०-६११ 'शब्द तत्त्व' नामक प्रबन्ध।

२ हि० सा० इ०, पृ० ५७।

३ देखिये—पुरातत्त्व निबंधावली पृ० २११ और परिशिष्ट १ में पत्र संख्या १।

४ हि० भा० इ० भू० पृ० ५९ और परिशिष्ट में पत्र संख्या २।

५ हि० सा० आ० इ० पृ० ६३।

६ देखिये—'हिन्दी काव्य विमर्श' में 'विद्यापति का हिन्दी-साहित्य में स्थान' नामक निबन्ध।

एकवचन (मैं)

मू० हिन्दी	कर्ता	कर्म	करण	सम्प्रदान	अपादान	सम्बन्ध	अधिकरण
	मैं	मुझको मुझे	मैंने	मेरे लिए	मुझसे	मेरा	मुझ, मैं पै पर।
कन्नौजी	मैं	मोहि मोको	मैंने	मोको	मो सै तै	मेरो	मोपै मोपर।
ब्रज	मैं हौं हो	मोहि	मैंने	हौं	मोसौं मुझसौं	मेरो	मोपै मुझपरि, मुपै।
मारवाड़ी	हूं	म्हनै मनै	म्हैं, मैं	मोपूं	म्हैंसू	म्हारो	म्हैं माहिं मैंऊपरै
मेवाड़ी	म्हूं	म्हांएं	म्हैंने	मैं	म्हांसू	म्हारो	म्हां माएं, म्होऊपर
गढ़वाली	मैं	मैं कणि	मैंने		मैंसे	मेरो	मैंमा, मैंपर
कुमाऊनी	मैं	मैंकुणि	मैंले	मैंहैं	मथें	मेरो	मैंमा
नेपाली	मैं प मी	मौं	मैंलाई	मलाई	मैंबाट	मेरो	मैंमा मरसथ
बैसवाड़ी	मैं	मो मोहि	मैं	मो	मोहि, मोहिसन	मोर	मोमाहि
मगधी	मैं	मोका	समान 'इन्हिका'	मोख	मोसे	मोर	मोपर, मोम
भोजपुरी	मैं मौं हम	हमरा मोरा	मोराके	हमरा	हमरासे	मोर	मोरा में, हमरा में
मगही	हम	मोरा हमरा	हमराके	इन्हिका	मोरासे, हमरासे	मोर मोरा हमार	मोरा में हमरा में
मैथिली	हम हमे हमका	हमरा हम्में हम्मे मोरा	मोराके	हमरासे	मोरासे हमरासे	मोर, मोरे हमर, हमरे	मोरा में हमरा में

बहुवचन (हम)

	कर्ता	कर्म	करण	सम्प्रदान	अपादान	सम्बन्ध	अधिकरण
मू० हिन्दी	हम	हमें, हमको	हमने, हमको	हमसे, हमनैं	हमसे, हमसे	हमारा, हमारी	हममें हमपर, हममें, हमपर
कन्नौजी	हम	हमें			हमतें		
ब्रज	हम	हमें	हमकों, हमों	हमन हमनि	हम, हमों सोंतें, हमन हमनि	हमारो	हममें, हमोपर, हमनि हमन, परि, पै
मारवाड़ी	म्हें	म्हांनें	म्हाने	म्हां	म्हांसूं, मासूं	मारो, म्हारो	म्हांउपरी
गढ़वाली	हम	हमूं	हमचरिण	हमु	हमुमे	हमारो	हमुमा हमुपर
कुमाऊँनी	हम	हमनकुणि	हममसे		हमंथ	हमरो	हममा
नेपाली	हामि, हामेहरु	हामेरु	हामिसे	हामिबाट	हामरी	हामरो, हामिको	हामिमा हामेर माथि
बैसवाड़ी	हम, हमन	हमहिं	हमरकहँ	हम	हमसन	हमार	हममाहिं
बघेली	हम	हममा	इच्छित	हमसे	हमसे	हमार	हमरेम
भोजपुरी	हमनीका, हमरन	हमरन	हमनी	हमरन	इच्छित	हमरनका	हमरनमें, हमनीमें
मगही	हमनी, हमरनि	हमनी	हमरनी	इच्छित	हमनीके, हमरनीका	हमनीकेर, हमरनीकेरा	हमरनीमें, हमनीमें
मैथिली[2]	हमनी, हमें, हम सब, हमरा सबके	हमरा, सबके	हमरासबकें, हमरासबसेस	इच्छित	हमरासबसें	हमरासबकें	हमरासबकमें[1]

१ हिन्दी ग्रामर, पृष्ठ १६९।

२ इन तालिकाओं में उन बोलियों के सर्वनाम के रूपान्तर दिये गये हैं जो हिन्दी की बोलियाँ कही जाती हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि 'मैथिली' की प्रवृत्ति हिन्दी की बोलियों की परम्परा से सम्बन्धित है।

करते हैं।[1] डॉ॰ वासुदेवशरण अग्रवाल का मत है—मैथिली के साहित्य भाव, भाषा शब्दावली* व्याकरण आदि के अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी के अन्तर्गत मानना उचित है।[2] डॉ॰ बाबूराम सक्सेना भी मैथिली को हिन्दी की उपभाषा मानते हैं।[3] सुप्रसिद्ध—भाषा वैज्ञानिक डॉ॰ विश्वनाथप्रसाद जी का मत है—ब्रजभाषा अवधी राजस्थानी मारवाड़ी और मैथिली का प्रारम्भिक और समृद्ध-साहित्य है किन्तु अब भी अपने अपने क्षेत्रों की सीमाओं में साहित्यिक लहरों से सजीव हो जाती हैं। किन्तु जो व्याकरण लिखने एवं बोलने में प्रचलित है वह सबमें सामान्य है। सामान्य ढाँचा और शब्दावली, सृजनात्मक शक्ति और परस्पर बुद्धिगम्य होने के कारण अपने भाषाभाषियों को एक ही परिवार में आबद्ध कर रखा है। अब उनका एक ही भाषायी परिवार है, जो हिन्दी भाषा को सामान्य साहित्यिक एवं सांस्कृतिक आधार मानती हैं।[4] पं॰ विश्वनाथप्रसाद मिश्र विद्यापति को हिन्दी का आदिकवि मानते हैं।[5]

विद्यापति का बँगला पर प्रभाव

बंगाल और मिथिला प्रदेश का सम्बन्ध बहुत प्राचीन और गौरवपूर्ण रहा है। मिथिला और बंगाल का सांस्कृतिक आदान प्रदान बहुत पुराना है। सुप्रसिद्ध विद्वान डा॰ दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं "हमारे अनेक प्रथम श्रेणी के कवि विद्यापति के शिष्य हैं। यह शिष्यत्व हमारी नूतन कथा नहीं है। मिथिला के राजर्षि जनक

१ देखिये साहित्य संदेश के एक अंक में 'क्या विद्यापति हिन्दी के हैं?' नामक लेख।

* देखिये 'विद्यापति पदावली' के अन्त में ब्रजेन्द्रलाल मिश्र द्वारा संकलित शब्दावली।

२ परिशिष्ट में पत्र संख्या १।

३ परिशिष्ट में पत्र संख्या ४।

४ Some of these like Brajbhasha Awadhi Rajasthani or Marwari and Maithili have early and rich literature of their own and are still animated by literary urges within their respective territorial limits. But by working out the grammar operating into their written and speech forms, that as much in common between them. The mutual intelligibility based on a community of structure vocabulary and creative will has bound their speakers in a close fellowship and they all now belong to one speech-community looking upon Hindi of their common literary and cultural language. (K. S. I. L. Page 35)

५ देखिए—हिन्दुस्तान १२ जून १९५९ ई॰।

याज्ञवल्क्य गार्गी मैत्रेयी गौतम और कपिल सारे भारत के गुरु स्थानीय हैं। मिथिला राजा इक्ष्वाकु के चार पुत्रों ने विमाता के कुचक्रों से ताड़ित होकर कपिलवस्तु में नया राज्य स्थापित किया। बुद्धदेव उसी वंश में उत्पन्न हुए हैं। नवद्वीप का न्याय टोल मिथिला के शिष्य काना शिरोमणि द्वारा प्रतिष्ठित हुआ है।[1] इससे प्रकट है कि मिथिला का बंगाल पर कितना सांस्कृतिक प्रभाव है। सदैव से मिथिला विद्या का बड़ा केन्द्र रहा है। भारत के चोटी के संस्कृत के विद्वान आज भी मिथिला में मिलते हैं। मैथिली भाषा एवं साहित्य का प्रभाव बंगला भाषा और साहित्य पर गम्भीर और युगान्तरकारी है। इससे बड़ा प्रभाव का प्रमाण क्या हो सकता है? मैथिली एवं बंगला के सम्पर्क से व्रजबुलि पर आधारित एक नयी साहित्यिक भाषा का जन्म हुआ जिसे हम व्रजबुलि कहते हैं। मैथिली भाषा एवं साहित्य का सबसे बड़ा महाकवि विद्यापति ठाकुर है। उनका प्रभाव बंगला भाषा एवं साहित्य पर बंगला के आदि मध्ययुग से लेकर आधुनिक विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक जाता है। चैतन्य महाप्रभु विद्यापति के पद सुनकर भावविभोर हो जाया करते थे। ऐसी वैष्णव पदावली कौन सी है, जिस पर विद्यापति का प्रभाव नहीं हो। बंगाल विद्यापति के पदों से इतना भावमग्न हुआ है कि उसने उनको बंगाली का कवि मान लिया है।

डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं कि विद्यापति बंगाली कवि नहीं हैं फिर भी उनका नाम बंगला साहित्य के इतिहास में लिखते हैं। विद्यापति के पद समस्त वैष्णव पदावलियों में स्थान पा गए हैं और वे प्रत्येक अवसर पर गाए जाते हैं[2]। सचमुच विद्यापति के पद बंगला पदों में दूध और पानी की तरह घुलमिल गए हैं। उनका पूर्णतया बंगालीकरण हो गया है। उनमें भेद करना बहुत कठिन है। जो मुख्यभाग पद हैं वे तो अब केवल बंगला में ही मिलते हैं जो मौलिक रूप से मैथिली में अप्राप्य हैं[3]। कई शताब्दी से वे पद अब बंगला रूप धारण किए हुए हैं। पूर्णतया अविभाज्य हैं। जार्ज ग्रियर्सन का मत है 'प्रसिद्ध वैष्णव सुधारक चैतन्य महाप्रभु ने

---

१ आमादेर अनेक गुलि प्रथम श्रेणीर कवि विद्यापतिर शिष्य। मिथिलार शिष्यत्व आमादेर नूतन कथा नहे। मिथिलार राजर्षि जनक याज्ञवल्क्य गार्गी, मैत्रेयी गौतम कपिल—समस्त भारतवर्षेर गुरुस्थानीय। मिथिलाराज इक्ष्वाकुर चारि पुत्र विमातार चक्रान्ते ताड़ित हइया कपिलवस्तुते नवराज्य स्थापन करेन बुद्धदेव सेइ वंशोद्भव। नवद्वीपेर न्यायटोल मिथिलार शिष्य काणा शिरोमणि द्वारा प्रतिष्ठित। (बं० भा० ओ० सा० पृ० २२१)

२ हि० बं० ला० लि० पृ० ११४।

३ देखिए—जनम अवधि हाम रूप नेहारिनु। तोपि नयनना तिरपित भेल।

विद्यापति को अपनाया है।[1] इसी कारण उनके गीत बंगालियों के घर में इसी तरह गाए जाते हैं जिस प्रकार बाइबिल अंग्रेजों के घर में। उनके पदों को तोड़ा मोड़ा गया है बढ़ाया गया है छोटा किया गया है और उनका अनुकरण किया गया है जिससे एक नयी भाषा बनी है जिसे ब्रजबुलि कहते हैं।[2] डा॰ सुनीतिकुमार चटर्जी लिखते हैं विद्यापति ठाकुर (चौदहवीं शताब्दी के अंत और पन्द्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ) मैथिली के सबसे बड़े महाकवि हैं। विद्यापति के राधाकृष्ण के प्रेमगीत भारतीय गीतिकाव्य के सुन्दरतम पुष्प हैं। इन्होंने बंगाल-वैष्णव गीतिकाव्य को बहुत प्रभावित किया है। उनके पद बंगाल में वैसे बंगालियों द्वारा प्रशंसित हुए, अपनाए गए और सोलहवीं शताब्दी से उनका प्रभाव चला आ रहा है। बंगाल में एक नई काव्य की भाषा बनी जो मैथिली बंगला और पश्चिमी हिन्दी का मिश्रण है। जो बंगाल में राधा-कृष्ण के प्रेम गीतों के लिए बहुत फैली है। इस मिश्रित भाषा को ब्रजबुलि कहते हैं। यह कृष्ण के बचपन यौवन की भूमि के गीत गाती है। अर्थात् ब्रजभाषा से यह अलग भाषा है। इस भाषा में जो गीतिकाव्य लिखा गया है वह बंगाल की अनुपम निधि है।[3] डॉ॰ सुकुमार सेन लिखते हैं बंगाल में सोलहवीं शताब्दी के साहित्य में इन्हीं मैथिली गानों का प्रभाव सार्थक हुआ था। ब्रजबुलि में रचित वैष्णव पदावली सर्वांश में नहीं तो अधिक परिमाण में मैथिली पदावली का अनुसरण किया गया था। यह अविसंवादित है कि ब्रजबुलि के गठन में मैथिली ही प्रधान उपादान है। अवश्य अवहट्ठ का भी प्रभाव है। ब्रजबुलि में जो पश्चिमी हिन्दी के पद और वाक्य रीति पायी जाती है, वह प्रधानतः अवहट्ठ से ही आयी हुई कह सकते हैं।[4]

डा॰ सुभद्र झा ने बंगला पर मैथिली के प्रभाव का इस प्रकार वर्णीकरण किया है —

---

१ चण्डीदास विद्यापति राधेर नाटक गीति स्वरूप रामानन्दे सने महाप्रभु रात्रिदिने गाये शुने परम आनन्दे। चै॰ च॰

२ ई॰ ए॰ ग्रार्ड (हि॰ मैं हि॰ क॰ वा॰ १६७)

३ ओ॰ डी॰ बी॰ एल॰ पृ १०३।

४ बांगलाय षोड़श शतकेर पदावली-साहित्य एइ मैथिल गानगुलिर प्रभाव सार्थक हइयाछिल। ब्रजबुलिते रचित वैष्णव पदावली सर्वांशे ना हउक अधिक परिमाणे ये मैथिल पदावलीर अनुसरण करियाछे ताहा अविसंवादित। ब्रजबुलि भाषार गठने मैथिलइ प्रधान उपादान। अवश्य अवहट्ठेर प्रभाव ओ आछे हय। ब्रजबुलिते ये पश्चिमा हिन्दीर पद ओ वाक्य रीति पाओया याय ताहा प्रधानत अवहट्ठ हइते आगत बलिया मने करि।

(बां॰ सा॰ इ॰ प्र॰ ख॰ पृ ८१)

(क) कुछ पद जिनकी भाषा बिल्कुल मैथिली है।

(ख) कुछ पद जो मैथिली एवं बँगला मिश्रित हैं।

(ग) कुछ पद जो विशुद्ध बँगला हैं।

(घ) कुछ पद जो बँगला में हैं, जिनमें ब्रजभाषा के पद मिले हुए हैं।[1]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं कि विद्यापति की पदावली ने आगे चलकर बंगाल आसाम और उड़ीसा के वैष्णव भक्तों को खूब प्रभावित किया और यह उन प्रदेशों के भक्ति-साहित्य में नयी प्रेरणा और नयी प्राणधारा संचारित करने में समर्थ हुई। इसीलिए पूर्वी प्रदेशों में सर्वत्र यह पुस्तक धर्मग्रन्थ की महिमा पा सकी है[2]। मैथिली साहित्य के इतिहासकार डा० जयकांत मिश्र बंगाल में विद्यापति के प्रभाव के बारे में लिखते हैं—बंगाल आसाम और उड़ीसा में ये बड़े वैष्णव माने जाते हैं। पूर्वी भारत के सर्वप्रथम गीतिकार हैं, जिन्होंने एक बोलचाल की साधारण भाषा को साहित्यिक स्वरूप प्रदान किया है। विद्यापति और चंडीदास का नाम साथ-साथ लिया जाता है। रमेशचन्द्र दत्त जैसे विद्वान् कहते हैं, विद्यापति एवं चंडीदास का मिलन नहीं हुआ था चंडीदास की कविता विद्यापति से परवर्ती है। वे विद्यापति द्वारा प्रभावित हैं विशेषकर उनके श्रीकृष्ण संकीर्तन में देखा जा सकता है। चंडीदास की पदावली में जो ब्रजबुलि के रूप हैं वे कहाँ से आए हैं? यह आश्चर्यपूर्ण प्रश्न है।[3]

विद्यापति के अनुकरण पर जो गीत-शैली बनी, वह लगभग साढ़े तीन सौ साल तक बंगालियों का कण्ठहार बनी रही। विद्यापति का प्रभाव गीतिकाव्य कार के रूप में ही अधिक हुआ है। वे रूप सौन्दर्य एवं यौवन के कवि हैं। विद्यापति लौकिक प्रेम के कवि हैं, किन्तु भक्तों ने सदैव उनके पदों का अर्थ आध्यात्ममूलक किया है। राधा और कृष्ण का प्रेम सांसारिक नर-नारी का प्रेम नहीं है। वह आत्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक प्रेम का प्रतीक है। उनका विरह मुमुक्षु आत्मा की परमात्मा से मिलन की आकुलता है।

विद्यापति ने अपने गीतों से भारत में जो माधुर्य बिखेरा है। उस माधुर्य की गंगा में बंगालियों ने बहुत गहरे गोते लगाये हैं। सचमुच विद्यापति भावुक बंगालियों के जातीय कवि माने जाते हैं। पहले कहा जा चुका है कि वे शृंगार या आदि रस के कवि हैं। उनके गीतों में भू और स्वरलोक का संगम है। कवि धरती के गीत गाते हैं और अंत में स्वर्गीय आनंद बिकीर्ण करते हैं। भाव एवं भाषा के रूप में विद्यापति का प्रभाव बँगला भाषा एवं साहित्य पर अमित और अमिट है। सचमुच वे बँगला

---

1 हि० मैं० वि० प० का० पृ० १६८।

2 हिन्दी साहित्य पृ० ७६।

3 ए हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर फर्स्ट वाल्यूम पृ० १६७।

साहित्य के साथ एकाकार हो गये हैं। वैष्णव बँगला-साहित्य के निर्माण में इनका सहयोग एवं देन अनुपम है। क्षणदा गीत चिंतामणि (१६०० ई०) पदामृत समुद्र (१७२५) पद कल्पतरु (१७६०) संकीर्तनामृत (१७७१) पदरस सार (१७२१) पदकल्प लतिका (१८४१) कीर्तन-पद तरंगिणी (१६०१) अप्रकाशित पदरत्नावली (पदकल्पतरु की पूरक) पदमेरु[1] और इस प्रकार के विद्यापति के पद वैष्णव पदावलियों में प्रचुर रूप में पाए जाते हैं।

६ :

उपसंहार

इस अध्याय में भारत की सांस्कृतिक एकता का कारण यहाँ का जीवनदर्शन पौराणिक गाथायें एवं संस्कृत भाषा एवं साहित्य बताया गया है। यही सांस्कृतिक ऐक्य हिन्दी प्रदेश और बंग प्रदेश में प्रतिफलित हुआ है। हिन्दी और बँगला ही इस महान सांस्कृतिक धरोहर की उत्तराधिकारिणी बनी है। मध्यदेश इस संस्कृति का केन्द्रस्थल रहा है। इसी प्रदेश ने सर्वदा से भारत के इतिहास एवं जीवन के हर क्षेत्र में नेतृत्व किया है। यहाँ की भाषायें ही समग्र भारत की अन्य भाषाओं को प्रभावित करती रही हैं। हिन्दी इसी प्रदेश की भाषा है। अतः बँगला पर इसका प्रभाव इस कारण पड़ा है। भक्ति आन्दोलन एवं मुस्लिम साम्राज्य ने इस प्रभाव में योगदान दिया है। हिन्दी और बँगला का स्रोत अपभ्रंश भाषा और साहित्य है। अपभ्रंश साहित्य के विषय में बहुत विवाद रहा है किन्तु शौरसैनी अपभ्रंश प्रमुख मानी गयी है। शौरसैनी अपभ्रंश में ही पश्चिम हिन्दी के अंकुर छिपे हैं। सिद्धों नाथों की साहित्यिक परम्परा अपभ्रंश से ही देशी भाषाओं में चलने लगी थी। इन नाथों में सर्वशक्तिशाली गुरु गोरखनाथ का प्रभाव हिन्दी के माध्यम से कुछ बँगला पर पड़ा। हिन्दी के आद्य कीर्तिकाव्यकार विद्यापति ठाकुर माने जाते हैं। विद्यापति का प्रभाव बँगला और बँगला भाषा एवं साहित्य पर गंभीर गुरुतर और युगान्तरकारी है। ब्रजबुलि विद्यापति की पदावली के अनुकरण पर बनी है। जो सदियों तक बंगाली वैष्णव-साहित्य का माध्यम बनी रही है। मैथिली भाषा एवं विद्यापति को लेकर बहुत विवाद रहा है। प्रत्येक विद्वान् के मत दिये गये हैं। हिन्दी के विद्वान् इनको हिन्दी का कवि मानते हैं। क्योंकि वे शौरसैनी परंपरा में अवहट्ठ के कवि भी हैं। उनकी कीर्तिलता एवं कीर्तिपताका पश्चिमी हिन्दी के निकट आजाती हैं। इनकी पदावली में हिन्दी शब्दावली का प्राचुर्य है।

---

[1] पदमेरु हस्तलिखित ग्रंथ है। यह शांति निकेतन पुँथिशाला में सुरक्षित है। यह वैष्णव पदावली का ग्रंथ है।

मतः इनको हिन्दी का कवि मान कर बँगला पर प्रभाव दिखलाया गया है। इनका प्रभाव आधुनिक काल में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक जाता है। सामान्यतया, विद्यापति बंगाली वष्णव साहित्य के प्रकाशदीप एवं प्रेरणाकेन्द्र हैं। विशेषतया गौड़ीय वष्णव (ब्रजबुलि) साहित्य के मेरुदण्ड हैं।

परिशिष्ट

मथिली के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों से जो पत्र-व्यवहार हुआ है। उसका उल्लेख भी आवश्यक है।

१ राहुल-सांकृत्यायन

द्वारा पंजाब आयुर्वेदिक फार्मेसी चकासी मार्केट अमृतसर,
२६ १२ ६७

प्रिय ब्रह्मानन्द जी

हिन्दी जो ब्रज, राजस्थानी अवधी की तरह मथिली को भी अपनी मान चुकी है। उसके लिये जो ब्रजभाषा की स्थिति है वही मैथिली की भी है।

आपका
राहुल

२ डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

काशी विश्वविद्यालय
१४ १ ५६

प्रियवर,

मैथिली साहित्य भाव भाषा शब्दावली व्याकरण आदि के अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी के ही अन्तर्गत मानना उचित है।

भवनीय
वासुदेवशरण

३ डा० धीरेन्द्र वर्मा

प्रयाग
११ १ ५६

प्रिय महोदय

मैं मथिली को हिन्दी प्रदेश की एक महत्त्वपूर्ण उपभाषा मानता हूँ और इसलिये हिन्दी भाषा और साहित्य के इतिहासों में इस उपभाषा का भी समावेश किया जाता है।

भवदीय
धीरेन्द्र वर्मा

४ डा० बाबूराम सक्सेना

प्रयाग २
११ १ ५९

प्रियवर,

भाषा की गठन की दृष्टि से मैथिली बिहारी भाषा समूह की एक शाखा है। इसे प्राचीन साहित्य की दृष्टि से स्वतंत्र भाषा का पद मिला है पर कालक्रम से शाखियाँ अन्य किसी शाखा की प्रभुता मानकर बोली अथवा उपभाषा का स्थान ग्रहण कर लेती हैं। इसलिये अवधी और ब्रज जो सम्पन्न भाषाएं थीं आज हिन्दी के अन्तर्गत हैं। बिहार की भी आज प्रमुख दैनिक व्यवहार की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है। यद्यपि बोलचाल में भोजपुरी मगही और मैथिली हैं।

शुभेच्छु
बाबूराम सक्सेना

द्वितीय अध्याय

आरम्भिक भक्ति-आन्दोलन का इतिहास

१

मध्यकाल (चैतन्य-वैष्णव-युग १४०० १७०० ई०)

बँगला के वैष्णव-साहित्य पर हिन्दी प्रभाव का दिग्दर्शन कराने के पूर्व भारतीय भक्तिवाद के उद्गम और विकास पर अतीव संक्षेप में कुछ पंक्तियों द्वारा प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है।

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का सूत्र सदैव अविच्छिन्न रहा है। संस्कृति की आत्मा एक रही है किन्तु उसके शरीर ने अनेक बार ऐतिहासिक राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के भँवर-जाल में पड़कर अनेक रूप धारण किए हैं।

भारत के मध्ययुगीन इतिहास में एक बहुत बड़ी क्रान्ति हुई जिसे पुरातन संस्कृति का भक्ति-आन्दोलन के रूप में पुनर्जागरण कह सकते हैं। मनुष्य की प्रवृत्तियाँ या तो कर्म प्रधान होती हैं या ज्ञान प्रधान। किन्तु मनुष्य की एक और स्वाभाविक प्रवृत्ति है जिसे हम हृदय का श्रद्धायुक्त भावावेश या भक्ति कहते हैं।

भारतीय भक्तिमार्ग के विषय में बहुत मतभेद है। विशेषकर भारतीय भक्ति वाद को अनेक विद्वान विदेशियों की देन मानते हैं उनमें से कुछ विद्वानों वील वेबर, बार्थ ग्रियर्सन[1] और हॉपकिन्स का मत है कि भारतीय भक्तिवाद ईसायत की देन है। कोई कोई विद्वान इसको इस्लाम का प्रभाव भी मानते हैं।

किन्तु अनेक पूर्व और पश्चिम के विद्वान उक्त मतों का प्रत्याख्यान करते हैं। जैसा कि विश्वविख्यात दार्शनिक डा॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन का मत है, अब हम महाभारत के सर्वप्रमुख धार्मिक सिद्धान्त वासुदेवकृष्ण मत के सम्बन्ध में विचार करते हैं, जो श्रीमद्भागवद् गीता और आधुनिक वैष्णव धर्म का आधार है। आर्व भागवद् धर्म के विकास में चार सोपानों का उल्लेख करते हैं, प्रथम सोपान में इनका अस्तित्व

---

१ Journal of the Royal Asiatic Society 1909 page 311—39 Encyclopaedia of Religion and Ethics Part II Article on Bhakti Marg. page 539—557

४ डा० बाबूराम सक्सेना

प्रयाग २
११ १ ५६

प्रियवर

भाषा की गठन की दृष्टि से मैथिली बिहारी भाषा समूह की एक शाखा है। उसे प्राचीन साहित्य की दृष्टि से स्वतंत्र भाषा का पद मिला है पर कालक्रम से शाखाएँ अन्य किसी शाखा की प्रभुता मानकर बोली अथवा उपभाषा का स्थान ग्रहण कर लेती हैं। इसलिये अवधी और ब्रज जो सम्पन्न भाषाएँ थीं आज हिन्दी के अन्तर्गत हैं। बिहार की भी आज प्रमुख दैनिक व्यवहार की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है। यद्यपि बोलचाल में भोजपुरी मगही और मैथिली हैं।

शुभेच्छु
बाबूराम सक्सेना

द्वितीय अध्याय

आरम्भिक भक्ति-आन्दोलन का इतिहास

१

मध्यकाल (चैतन्य-वैष्णव युग १४००-१७०० ई०)

बँगला के वैष्णव-साहित्य पर हिन्दी-प्रभाव का दिग्दर्शन कराने के पूर्व भारतीय भक्तिवाद के उद्गम और विकास पर अतीव संक्षेप में कुछ पंक्तियों द्वारा प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है।

भारतीय सांस्कृतिक परम्परा का सूत्र सदैव अविच्छिन्न रहा है। संस्कृति की आत्मा एक रही है, किन्तु उसके शरीर ने अनेक बार ऐतिहासिक राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के भँवर-जाल में पड़कर अनेक रूप धारण किए हैं।

भारत के मध्ययुगीन इतिहास में एक बहुत बड़ी क्रान्ति हुई जिसे पुरातन संस्कृति का भक्ति-आन्दोलन के रूप में पुनर्जागरण कह सकते हैं। मनुष्य की प्रवृत्तियाँ या तो कर्म प्रधान होती हैं या ज्ञान प्रधान। किन्तु मनुष्य की एक और स्वाभाविक प्रवृत्ति है जिसे हम हृदय का श्रद्धायुक्त भावावेग या भक्ति कहते हैं।

भारतीय भक्तिमार्ग के विषय में बहुत मतभेद है। विशेषकर, भारतीय भक्ति भाव को अनेक विद्वान विदेशियों की देन मानते हैं उनमें से कुछ विद्वानों सीस वेबर, वार्थ जार्ज ग्रियर्सन[1] और हॉपकिन्स का मत है कि भारतीय भक्तिवाद ईसायत की देन है। कोई कोई विद्वान इसको इस्लाम का प्रभाव भी मानते हैं।

किन्तु अनेक पूर्व और पश्चिम के विद्वान उक्त मतों का प्रत्याख्यान करते हैं। जैसा कि विश्वविख्यात दार्शनिक डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का मत है जब हम महाभारत के सर्वप्रमुख धार्मिक सिद्धान्त वासुदेवकृष्ण मत के सम्बन्ध में विचार करते हैं जो श्रीमद्भागवत् गीता और आधुनिक वैष्णव धर्म का आधार है। गार्ब भागवद् धर्म के विकास में चार सोपानों का उल्लेख करते हैं, प्रथम सोपान में इसका अस्तित्व

---

१ Journal of the Royal Asiatic Society 1909 page 311—50 Encyclopaedia of Religion and Ethics Part II Article on Bhakti Marg page 539—557

ब्राह्मण धर्म से स्वतन्त्र था। गार्बे के मतानुसार इसके मूलतत्व ईसा पूर्व से तीसरी शती तक प्रचलित थे ये वासुदेव कृष्ण द्वारा सर्व-विश्रुत एकेश्वरवाद का सांख्ययोग के संयोग से प्रवर्तन भक्ति के आधार पर गंभीर धार्मिक भावनाओं और धर्म प्रवर्तक का दैवीकरण आदि हैं।[1]

आगे वे फिर लिखते हैं हमारे पास भागवत् धर्म को ईसायत से पूर्ववर्ती सिद्ध करने के लिये पुरातत्त्व सम्बन्धी प्रमाण भी हैं। भागवत् हेलियोडोरस(Holivdura) ने वासुदेव के सम्मान में गरुड़ांकित ध्वज स्तम्भ का निर्माण कराया था। यह दो शती ईसवी पूर्व के बसनगर के शिलालेख में अंकित है। भागवत् संकर्षण और वासुदेव की पूजा का उल्लेख घोसुण्डी शिलालेख में है। तीसरे नानाघाट में स्थित एक शती ईसवी पूर्व के शिलालेख में संकर्षण और वासुदेव की प्रशस्ति है। समस्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि भारत का एकेश्वरवादी धर्म विदेशी प्रभावों से पूर्णतया मुक्त है और युग के जीवन एवं विचारों का स्वाभाविक विकास है।[2]

---

१ We now pass to the most important religious doctrine of the Mahabharata the Vasudeva Krisna cult, which is the basis of the Bhagavadgita as well as of modern Vaisnavism Garbe traces four different stages in the growth of the Bhagavata religion. In the first stage it had an existence independent of Bramahanaism The central features of this stage which in the opinion of Garbe continued till 300 B. C are the founding of a popular monotheism by Krisna Vasuvda its alliance with Sankhy yogh the deification of the founder of the religion and a deepened religious sentiment on the basis of Bhakti. Indian philosophy Page 489

२ We have also archaelogical evidence to prove the priority of the Bhagavata religion to the rise of christianity The Besnagar inscription of the second century B. C mentions the erection of a flag staff with Garudas image in honour of Vasudeva by Halivdora, the Bhagvata. The Ghosundi inscription speaks of the worship of Bhagavata Sanakarsana and Vasudeva A third inscription of the first century B. C. existing at Nanaghat contains an adoration of Sankarsana and Vasudeva. From all this it is evident that the monotheistic religion of India is absolutely independent of any foreign influences and is the natural outcome of the life and though of the period. *Vide P 501*

भारत की भक्ति परम्परा उतनी ही प्राचीन है जितना कि वैदिक-साहित्य। वैदिक काल में धार्मिक एवं आध्यात्मिक साधना के तीन पथ चल चुके थे। जिन्हें हम कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड कहते हैं। वस्तुतः उपासनाकाण्ड के गर्भ में ही भक्तिवाद के अंकुर छिपे हैं। भक्ति का सम्बन्ध हृदय से है। फिर यह कहना सरासर भूल होगी कि भक्तिवाद भारत को ईसाइमत या इस्लाम की देन है। हमारा गुरुमन्त्र (गायत्री मंत्र) भक्ति का उज्ज्वलतम दृष्टान्त है। वेदों में अनेक मन्त्र हैं, जिनको हम भारतीय भक्तिवाद का बीजक[1] कह सकते हैं। ऋग्वेद का ऋषि लिखता है—'हे परमैश्वर्य-सम्पन्न भगवन्! हे सर्वपुरातन सनातन, शाश्वत प्रभो! यहाँ आपके अस्तित्व से ऊँचा किसी का भी अस्तित्व नहीं है। आपका ही अस्तित्व सर्वोत्तम है। यहाँ आपकी तुलना में कोई भी सानी देव नहीं है। आप जो कर रहे हैं, आगे जो कुछ करेंगे, उसका उत्पन्न हुए और होने वाले प्राणियों में से कोई भी नहीं जानता। आप का व्यक्तित्व और आपका ज्ञान अनुपम है[2]।'

एनसाइक्लोपीडिया आफ् रिलिजन एण्ड एथीक्स में लिखा है—'भक्तिमत केवल व्यक्तिक देव की ओर नहीं प्रत्युत एक देव की ओर संकेत करता है। वास्तव में यह धार्मिक विचार का एकेश्वरवादी दृष्टिकोण है। यदि हम विचार करते हैं कि भक्ति एक धार्मिक पारिभाषिक शब्द के रूप में ईसा से चौथी शताब्दी पूर्व नहीं मिलता। किन्तु यह महत्त्वपूर्ण अनुसंधान का विषय है कि हम इसकी प्रतिनिधि भावना की कहाँ तक खोज कर सकते हैं। भारत में यह धारणा बहुत प्राचीन है बहुधा हमें ऐसी बातें मिलती हैं जिनसे वैदिक भावनाओं से कोई भेद नहीं कर सकते। विशेषकर उनसे जो वरुण देवता को समर्पित हैं[3]।

---

१ देखिये—डा० मुन्शीराम जी का प्रबन्ध 'भक्ति का विकास' चतुर्थ अध्याय पृष्ठ ११२, २१९।

२ अनुत्तमा ते मघवन्नकिर्नु न त्वावाँ अस्ति देवता विदानः।
न जायमानो नशते न जातो यानि करिष्या कृणुहि प्रवृद्ध॥
(ऋ० १।१६५।९)

३ Devotional Faith implies not only a personal God, but one God It is essentially a monotheistic attitude of the religious sense If there we assume that the word Bhakti, as a religious technical term can not be traced to a period earlier than 4th century B C. it is important inquire how far back we can trace the feeling which it represents this feeling was very old in India We occasionally come across what it is difficult to distinguish from Bhakti even in Vedic Hymns especially those dedicated to Varruna.

Encyclopaedia of Religion and Ethics. P 539

अतः वैदिक युग के बाद भक्ति का सूत्र भागवत-धर्म के रूप में दिखाई पड़ने लगा। जैसा कि हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वानों के मत हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं—'धर्म की भावनात्मक अनुभूति या भक्ति जिसका सूत्रपात महाभारत काल में और विस्तृत प्रवर्तन पुराणकाल में हुआ था कभी कहीं दबती कभी कहीं उभरती किसी प्रकार चली आ रही थी'[1]।

बाबू गुलाबरायजी का मत है—'भारतवर्ष में ईश्वर प्राप्ति या सद्गति के ज्ञान भक्ति और कर्म ये तीन मार्ग माने गये हैं। ये तीन मार्ग आदिकाल से चले आये हैं किन्तु कभी किसी की प्रधानता रही और कभी किसी की। भक्ति-मार्ग मानव प्रकृति के अनुकूल होने के कारण लोकप्रिय रहा है—भक्तिर्यानानामहं विष्णुः'। प्राचीनकाल में यह भागवत-धर्म के नाम से प्रख्यात था। इसी को महाभारत में 'पांचरात्र धर्म' और 'सात्वत धर्म' भी कहा है। श्रीमद्भगवद्गीता में भक्ति और शरणागति के भाव प्राचुर्य के साथ पाये जाते हैं (सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज—गीता १८।६६)। देवर्षि नारद भागवतधर्म के मुख्य आचार्य माने गये हैं। उन्होंने अपने भक्ति सूत्रों में भक्ति को ज्ञान की अपेक्षा प्रधानता दी है[2]। डा० मुन्शीरामजी का कथन है—'पतंजलि ने पाणिनि की अष्टाध्यायी सूत्र ४ । ३ । ९८ पर जो भाष्य लिखा है, उसके अनुसार वासुदेव ईश्वर का नाम है जिसकी पूजा की जाती है। अतः भागवतों का आराध्य देव वासुदेव और उनके नाम से प्रचलित सम्प्रदाय विक्रम संवत् से कई सौ वर्ष पूर्व ही इस देश में प्रतिष्ठित हो गये थे। भागवत शब्द इतना अर्थ गर्भित समझा जाता था कि शिव सम्प्रदाय वाले भी अपने को शिव भागवत कहने में प्रतिष्ठा का अनुभव करते थे[3]।

मध्ययुगीन भक्ति-आन्दोलन का इतिहास

वैदिककालीन भक्ति की गंगधारा और भागवतकालीन भक्ति की यमुना धारा का पूर्ण प्रवाह मध्ययुगीन वैष्णव भक्ति-आन्दोलन में दृष्टिगोचर होता है। कालक्रम से वैदिकयुगीन भक्ति में कुछ परिवर्तन हो गया था और भागवत भक्ति में उसकी आत्मा तो वही रही किन्तु रूप में परिवर्तन हो गया था। अतः मध्ययुगीन भक्ति आन्दोलन परम्परागत भक्ति की धारा का अनेक रूपों में सहज विकास है।

किन्तु यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि मध्यकाल में भक्ति की धारा दक्षिण से आई। आलवार भक्त इसके प्रवर्तक माने जाते हैं, जैसा कि भागवतकार भी

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ ११।
२ हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास पृष्ठ ६०।
३ भक्ति का विकास पृष्ठ २४६।

दक्षिण को ही भक्ति आन्दोलन का मूल स्रोत मानते हैं। द्राविड़ देश में उत्पन्न हुई कर्नाटक में वृद्धि को प्राप्त हुई कुछ-कुछ महाराष्ट्र में इसकी उन्नति हुई, गुजरात में वृद्धावस्था को प्राप्त हुई[1]। अतः दक्षिण से यह धारा उत्तर में आई इसका प्रमाण कबीरदास जी के शब्दों में इस प्रकार है —

भक्ति दक्षिण ऊपजी लाए रामानन्द
प्रकट करी कबीर ने सप्तदीप नव खण्ड ॥

विद्वानों को सन्देह हो सकता है कि इससे पहले उत्तरी भारत में भक्ति नाम की कोई वस्तु थी या नहीं। दक्षिण में भक्ति का उदय होने पर यूरोपीय विद्वानों को अपना मत पुष्ट करने का आधार मिल जाता है। क्योंकि वे इसे ईसाई मत का प्रभाव मानते हैं। क्योंकि भारत में ईसाई धर्म सर्वप्रथम दक्षिण से आया। जैसे जार्ज ग्रियर्सन का कथन है—बिजली की चमक की तरह ईसाई भक्तिवाद का प्रभाव दक्षिण से उत्तर को आया।

किन्तु दक्षिण में ही शंकर के अद्वैतवाद का अधिक प्रचार रहा। इसी शंकर वेदान्त की प्रतिक्रियास्वरूप, सगुण उपासकों का आन्दोलन चला। भक्ति शुष्क बुद्धिवाद के प्रति मधुर हृदय का विद्रोह है। क्योंकि भगवान शंकराचार्य का आविर्भाव भी दक्षिण में ही हुआ था। वैष्णव आचार्यों की जन्मभूमि भी दक्षिण ही है। भगवान शंकर औपनिषदिक अद्वैतवाद के प्रचारक हैं। रामानुजाचार्य ने शंकर अद्वैत की जगह विशिष्टाद्वैतवाद की प्रतिष्ठा की। माध्वाचार्य ने द्वैतवाद को प्रधान माना। विष्णु स्वामी ने शुद्धाद्वैत का प्रतिपादन किया। निम्बार्क स्वामी ने द्वैताद्वैत का मडन किया।

अब प्रश्न उठता है कि क्या इससे पहले उत्तरी भारत में भक्ति नाम की कोई साधना नहीं थी? इसका उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है कि जिस प्रकार शंकराचार्य से भी पूर्व औपनिषदिक अद्वैतवाद था किन्तु सिद्धान्त एवं व्यवहार रूप में उसके प्रथमतम प्रचारक भगवान शंकर ही थे। इसी प्रकार उत्तरी भारत में वैष्णवाचार्यों से पहले भी भक्ति साधना का एक अंग थी। जैसा कि वैदिक साहित्य से सिद्ध होता है। किन्तु वैष्णव भक्तिवाद के प्रबल प्रचारक तो ये आचार्य ही थे। उत्तरी भारत में उस समय भक्ति आन्दोलन की बड़ी आवश्यकता थी। क्योंकि उस समय नाथ पंथ का जोर था। उसी परम्परा की प्रतिक्रिया में तुलसीदासजी जैसे भक्तशिरोमणि तक ने गोरखपंथियों को फटकारा है —

---

१ उत्पन्ना द्राविड़े साहं वृद्धिं कर्णाटके गता।
क्वचित् क्वचित् महाराष्ट्रे गुर्जरे जीर्णतांगता।
(भागवत १।२८ प्रथम खण्ड, पृष्ठ ५)

गोरख जगायो जोगु भक्ति भगायो लोग।

तथा—

कलजुग्ही काल के राम नाम जप नीचु॥

चैतन्य महाप्रभु से पूर्व बंगाल में सिद्धों और नाथों का बोलबाला था। बौद्ध सिद्धों की प्रतिक्रियास्वरूप नाथ-पंथ का जन्म हुआ। नाथों की प्रतिक्रिया वैष्णव धर्म में हुई। अतः वैष्णवभक्ति का आन्दोलन तत्कालीन विचारधारा की प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुआ था।

इस सम्बन्ध में यह विचारणीय विषय है कि दक्षिण और उत्तर भारत की भक्ति परम्परा में साम्य होते हुए वैषम्य भी है। जहाँ तक भावना का सम्बन्ध है वहाँ तो सब समान हैं। किन्तु, सूफी और निर्गुणोपासक संतों की जैसी साधना दक्षिण में दृष्टिगोचर नहीं होती।

जहाँ उत्तर पश्चिम भारत के वैष्णवों और पूर्व भारत बंगाल के वैष्णवों में समानता है वहाँ विभिन्नता भी बहुत है। बंगाल में संत-साधना का अधिक प्रभाव नहीं रहा है। सूफी साधना बहुत बाद में आयी। किन्तु बाउलों [1] में संतों और सूफियों के कुछ तत्त्व दृष्टिगोचर होते हैं। बंगाल में कृष्णभक्ति की साधना अधिक हुई है किन्तु रामोपासना का उतना अधिक प्रचार नहीं हुआ जैसा कि हिन्दी प्रदेश में हुआ। हिन्दी-क्षेत्र में रामोपासना और कृष्णोपासना को समान स्थान मिला। विष्णु के इन दोनों अवतारों में कुछ भेदभाव नहीं समझा गया किन्तु बंगाल में कृष्णोपासना के पहिले अनेक प्रकार की सहजिया और शाक्त साधनाओं का अधिक प्रचार रहा है।

एक प्रसिद्ध दार्शनिक का मत भी द्रष्टव्य है— 'दक्षिण भारत के वैष्णव मत में वृन्दावन लीला के महत्व पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। यद्यपि आलवारों के स्रोत से कृष्ण की गोपियों के साथ लीला की ओर संकेत है। किन्तु, उत्तर में कुछ और बात थी। निम्बार्क सम्प्रदाय में प्रियतमा राधा केवल गोपियों में प्रधान ही नहीं है अपितु कृष्ण की सनातन संगिनी भी है। गीत गोविन्द के लेखक और उमापति, विद्यापति और चण्डीदास की रचनाओं में राधा-कृष्ण मत का प्रभाव बंगाल और बिहार में दृष्टिगोचर होता है। उसका श्रेय शाक्त सिद्धान्त और साधनाओं को है [2]।

---

१ लोकसार बाउल पृ० १२६ से १३१।

२ The Vaisnaism of South India did not pay much attention to the glorification of the Brindaban Lila, though some of the Allavars refer to Krisna's sports with the Gopies. In the North, however the case was different. In Nimbark, Radha the beloved mistress, is not simply the chief of the Gopies

भक्ति आन्दोलन मध्ययुगीन भारत के इतिहास में एक बहुत बड़ी घटना है। इस आन्दोलन ने समस्त आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में साहित्य सृजन को अभूतपूर्व उत्कर्ष प्रदान किया है। बंगाल में भी चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव एक नए युग का सन्देशवाहक है। वैष्णव आन्दोलन कुछ प्रादेशिक विशेषताओं के साथ समस्त भारतव्यापी था। विशेषकर हिन्दी ही उनके आन्दोलन के प्रभाव का माध्यम बनी। महाप्रभु चैतन्यदेव के कारण बंगाल एवं मथुरा-वृन्दावन का घनिष्ठ सम्बन्ध हुआ। महाप्रभु चैतन्य महाभाव के उपासक थे। राधा के महाभाव के जो वृन्दावन में परिपूर्ण हुआ था। यही इस घनिष्ठता का मूल था। अत बंगला के साथ-साथ हिन्दी (ब्रजभाषा) भी उनके साहित्य का माध्यम बनी। चैतन्य महाप्रभु मथुरा-वृन्दावन को वैकुण्ठ की उपमा दिया करते थे। अतः उस समय बंगाल एवं ब्रजमण्डल का बहुत घनिष्ठ सम्पर्क हुआ था। ब्रजभाषा का प्रभाव चैतन्य वैष्णव पदकर्ताओं के गीति काव्य में साकार हुआ[1]।

---

but is the eternal consort of Krisna. The writings of Jaidera the author of Gita Govinda Vidyapati Umapati and Chandidas (fourteenth century) show growing influence of the Radha Krisna cult in Bengal and Bihar thanks to the influence of the Sakta system of thought and practice
Vol. II P 767 (Indian Philosophy).

१ डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं—'एई युगेर साहित्ये हिन्दी-उपकरणे विशेष रूपे पुष्ट। एखन ये रूप इंगरेजी भाषार राजत्व वैष्णव धर्मेर प्रभाव काले तखन छिल वृन्दावनी (ब्रजभाषा) भाषार राजत्व। वृन्दावन एखनओ बड़ तीर्थ बलिया गण्य किन्तु तखन बंगेर शिक्षित समाज इहाके वराबरे स्वर्ग बलिया मन्य करितेन श्यामकुण्ड कि राधाकुण्ड दर्शनार्थ ताँहादेर ये उत्साह पूर्ण आग्रह छिल विलात आसिते शिक्षित गणेर तेमन ऐकान्तिक आग्रह नाई एखन ये रूप आमरा बांगला कथार मध्ये चारि आना इंगरेजी मिशाइया दिया ऐक्यरस्य फाकि तखन सेई रूप वैष्णव गणेर बोलचालकथा चारि आना वृन्दावनीर मिश्रणे सिद्ध हइत। कोन काव्य की इतिहासे ये स्थले कथावार्ता वर्णित हय सेइस्थले ग्रंथकर्त्ता प्रचलित भाषा व्यवहार करिया थाकेन। चैतन्यचरितामृत नरोत्तमविलास प्रभृति पुस्तके दृष्ट हइबे ये स्थले कथावार्तार उल्लेख छेइ सालेइ वृन्दावनी भाषार समधिक छड़ाछड़ि हइयाछे।
वं० भा०, सो० सा० पृ० १६०।

अर्थात् इस काल के साहित्य में अधिक हिन्दी उपकरणों का मिश्रण है। इस समय जिस प्रकार अंग्रेजी भाषा का राजत्व है वैसे ही वैष्णव धर्म के प्रभाव

डा दीनेशचन्द्र सेन ने अपने अंग्रेजी ग्रंथ में वैष्णव साहित्य पर हिन्दी प्रभाव के तीन कारण बताये हैं—१ वैष्णव धर्म के कई प्रमुख आचार्य वृन्दावन में निवास करते थे इससे वृन्दावन और बंगाल के लोगों में आदान प्रदान बढ़ा। २ पदकर्ता विद्यापति के गीतों पर मुग्ध थे। अतः उन पद रूपों का अनुकरण उन्होंने किया। वैष्णव पदावलियों में ब्रजबुलि का उदय इसी से हुआ। ३ वैष्णव धर्म का प्रचार भारत में करने के लिये हिन्दी ही उस समय उचित माध्यम थी। इससे हिन्दी के अगणित शब्द उन्होंने लिये। वे आगे लिखते हैं[1]।

काल में उस समय वृन्दावनी (ब्रजभाषा) का राजत्व था। उस समय वृन्दावन बड़ा तीर्थ माना जाता था। उस काल में बंगीय-शिक्षित समाज इसको धरती पर स्वर्ग कहा करते थे। श्यामकुण्ड अथवा राधाकुण्ड के दर्शनों के लिए जितना उत्साहपूर्ण आग्रह था उतना आज शिक्षितगणों का विलायत जाने में भी वैसा ऐकान्तिक-आग्रह नहीं है।

इस समय जबकि हम अपनी भाषा में चार आना अंग्रेजी मिलाकर अपना पांडित्य प्रदर्शन करते हैं। उस काल में इसी प्रकार चार आना ब्रजभाषा का मिश्रण कर पंडित कहे जाते थे। किसी भी काव्य इतिहास कथावार्ता का वर्णन होता था। उस समय ग्रंथकार प्रचलित भाषा का व्यवहार करते थे। चैतन्य-चरितामृत नरोत्तमविलास को देखें तो जिन स्थलों पर कथावार्ता का उल्लेख है वहीं ब्रजभाषा का समधिक मेल है।

१ Bengali in the Vaisnava-period was subject to the influence of Hindi this I have already mentioned on page 337 Many of the great masters of the vaisnava faith lived in Brindavan and there was a constant exhange of ideas between the people of that place and those of Bengal. This circumstance explains why we find such a large number of Hindi words imported into the Bengali writings of the vaisnavas The padakaratas held Vidyapati s songs in great admiration and as a result many of them imitated the Maithil forms in their padas and too Brajabuli of the vaisnava songs is a result of this imitation Thirdly in their attempts to propagate the creed of vaisnavism all over India the vaisnavas came in contact with different races of India speaking different languages.

Hindi had grown to be the lingua franca of all India under the suzerain power of the Muslim Emperor of Delhi. Those who had the propaganda of their faith to carry to all Indians could not help having recourse to the most convenient vehicle

तत्कालीन

इस प्रकार डा० सेन ने बंगला में हिन्दी के शब्द-बाहुल्य का स्पष्टीकरण किया है। किन्तु हिन्दी का प्रभाव केवल शब्दगत नहीं था वह पंचमुखी था।

(१) वैष्णव पदावलियों में हिन्दी के शब्द आए हैं।

---

already available for approaching them The vaisnavas imported a large number of Hindi words into their works to make them intelligible to the people of all parts of India

Owing to these causes the works written by a large number of vaisnavas are more or less influenced by Hindi, and instances of

जैसे, कैसे कबहुँ तबहुँ दुहुँ हमनु, कोहाँ ताहाँ चमक विथुरिल।

are numerous in all vaisnava writings, not to speak of Brajabuli which is a thoroughly Hindi ized form of Bengali.

(History of Bengali language & Literature)

By Dr D C Sen Page 508.

हिन्दी रूपान्तर

वैष्णवकाल में बंगला पर हिन्दी का प्रभाव पड़ा है। यह मैंने पृ० ११७ पर दिखलाया है। बहुत से वैष्णव धर्म के आचार्य वृन्दावन में रहा करते थे। वहाँ के निवासियों और बंगालियों में निरन्तर विचारों का आदान प्रदान हुआ करता था। इन्हीं कारणों से इतने अधिक शब्दों का समावेश बंगला वैष्णव पदावलियों में हुआ है। परवर्ती विद्यापति के पदों को बहुत आदर की दृष्टि से देखा करते थे। इसलिए उन्होंने मैथिली रूपों का अनुकरण अपने पदों में किया, इसी अनुकरण के फलस्वरूप ब्रजबुलि बनी है। तीसरे वैष्णव लोग अपने धर्म को अखिल भारतीय बनाना चाहते थे। वे भारत की अनेक जातियों और भाषाभाषियों के सम्पर्क में आए। दिल्ली के मुगल बादशाहों के कारण हिन्दी अखिल भारत की सार्वजनिक भाषा बन चुकी थी। जो अपने सिद्धान्तों को अखिल देशव्यापी बनाना चाहते थे उनके लिये इसका अपनाना आवश्यक था। वैष्णव पदकर्ताओं ने निखिल भारतवासियों को समझाने के लिए हिन्दी शब्दों को अपनी पदावलियों में मिलाया। इन कारणों से थोड़ा-बहुत हिन्दी का प्रभाव वैष्णवों की कृतियों पर पड़ा है। जैसे उदाहरण रूप में—जैसे कैसे कबहुँ तबहुँ दुहुँ हमनु कोहाँ ताहाँ चमक विथुरिल इत्यादि शब्द वैष्णव पदावलियों में पाये जाते हैं। ब्रजबुलि के बारे में क्या कहा जाये यह तो पूर्णरूपेण हिन्दीकृत बंगला का रूप है।

(२) वैष्णव पदावलियों में हिन्दी का वाक्य विन्यास।

(३) इसमें बहुत से मैथिली ब्रजभाषा के पद के पद मिल गये हैं।

(४) इससे ब्रजबुलि नाम की एक नयी साहित्यिक भाषा का जन्म हुआ।

(५) भक्तमाल के अनुवाद के रूप में ग्रंथ के ग्रंथों का अवतरण।

इन्हीं को दूसरे शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि इस प्रभाव के पांच रूप ये हैं —

(१) शब्दगत

(२) वाक्य-विन्यासगत

(३) रूपावतरणगत

(४) भाषा रूपगत (ब्रजबुलि सम्पूर्ण भाषा ही हिन्दीमय हो गई)

(५) अनुवादावतरणगत

२ :

१ बंगाली गौड़ीय वैष्णव पदावली में शब्दगत हिन्दी प्रभाव

बंगला ने हिन्दी के बहुत से शब्द अपनाये हैं। इनमें बहुत से शब्द ऐसे भी हैं जो दोनों को समान स्रोत से मिले हैं। इन्हें दोनों ही अपने शब्द कह सकती हैं। अथवा स्रोत की दृष्टि से एक ही मूलस्रोत का निर्देश कर सकती हैं। बंगला के कोशों में बंगला भाषा में गृहीत हिन्दी शब्दों का उल्लेख हुआ है[1]। विशेषकर बांगला भाषार अभिधान (कोष) में इसके कोषकार श्री ज्ञानेन्द्रमोहनदास ने हिन्दी शब्दों का उल्लेख किया है। इससे यह स्पष्ट है कि बंगला की शब्द-सम्पत्ति को हिन्दी ने बहुत प्रभावित किया है। ऐसे प्रभाव को ठीक-ठीक समझने के लिये हमें यह देखना होगा कि बंगला में शब्दगत प्रभाव किन रूपों में पड़ा है। कोई भी भाषा किसी दूसरी भाषा के शब्दों को कब-कब और क्यों ग्रहण करती है? इस ग्रहण का रूप क्या होता है? वास्तव में भाषाओं का पारस्परिक सम्बन्ध जैसा होता है वैसा ही प्रभाव भी होता है। ये सम्बन्ध कुछ ऐसे हो सकते हैं —

(१) जन्यजनक सम्बन्ध

(२) समानमूलक सम्बन्ध

(३) पड़ोस का सम्बन्ध

(४) आरोपित सम्बन्ध

प्रथम तो ऐतिहासिक है। दोनों का एक ही अर्थ है इस विशेषता के साथ कि जनक भाषा से अन्य कई भाषायें हो सकती हैं। ये कई भगिनियाँ ही समानमूलक

१ देखिये परिशिष्टगत पंचम खण्ड शब्द सूची एवं बंगीय शब्दकोष।

की भाषाएँ हैं। समान मूल से उद्भूत होने के कारण बहुत से अन्तर की प्रवृत्तियाँ दोनों में मिलेंगी और दोनों बहुत समय तक बिना अपने व्यक्तित्व के वैभिन्य के साथ साथ चलती रहेंगी। बंगला हिन्दी के सम्बन्ध में यह स्थिति विशेषतः दिखायी पड़ती है। एक युग इन भाषाओं के इतिहास में ऐसा प्रतीत होता है जबकि ये दोनों भाषायें परस्पर ऐसी गुँथी हुई थीं कि उनके अलग-अलग अस्तित्व को उस समय अलग-अलग पहचाना नहीं जा सकता था। सबसे प्रारम्भिक काल का सिद्ध-साहित्य भी इसका एक प्रमाण है। उसमें हिन्दी-बंगला दोनों के तत्व हैं। यही कारण है कि दोनों ही भाषायें उन्हें अपना ही साहित्य मानती हैं। अब तक की विविध ऊहापोहों ने भी स्थिति में कोई अन्तर प्रस्तुत नहीं किया। वस्तुतः जब दोनों भाषाएँ एक ही थीं और सन्धिकाल की मिश्रण प्रवृत्ति विद्यमान थी तब एक के दावे को दूसरे के दावे से कैसे अलग किया जा सकता है।

यह बात काफी समय तक रही, और भक्तिकाल में तो यह और भी बढ़ गयी। ऐसी स्थिति में ब्रज और बंगाली की शैली भेद के रूप में ही इस काल में लिया जा सकता है। अन्यथा बंगला भाषा के ब्रज बोली समन्वित भावपूर्ण उत्कृष्ट पद भाषा समक अलंकार के उदाहरण ठहराये गये थे। निश्चय ही भक्त भाषा-समक नहीं लिख रहे थे उन्हें शैलियों की भिन्नता भले ही प्रतीत होती रही हो। भाषा भिन्नता का वैभिन्य उनमें नहीं था। अतः जहाँ जन्य-जनक संबंध से संस्कृत प्राकृत अपभ्रंश की शब्दावली पैतृक सम्पत्ति के रूप में हिन्दी-बंगला ने प्राप्त की, वहाँ समानमूलक ही नहीं, सहजात होने के कारण भी बंगला हिन्दी में बहुत समय तक अभेद रहा। बंगाल के क्षेत्र में और अन्यत्र भी बंगलाभाषी हिन्दी के शब्दों, मुहावरों और वाक्यों को अपने ही समझकर अपनाते रहे। भाषा-वैभिन्य आने पर बंगला भाषियों ने देखा कि भक्ति का युग था तब उन्हें कृष्ण का इष्ट हो गया। पहले कहा जा चुका है कि इष्टदेव की भूमि की भाषा 'ब्रजभाषा' में उनका आकर्षण बढ़ गया। इससे निःसंकोच वे ब्रजभाषा में अपनी अभिव्यक्ति के लिये ललचाने लगे और उसके शब्दों को अपनी भाषा में निःसंकोच लेने लगे। तीसरा सम्बन्ध भौगोलिक है। बंगला और हिन्दी भौगोलिक कारणों से पड़ोसिनें हैं। पड़ोसी में पारस्परिक आदान प्रदान रहता ही है। चौथा 'आरोप' विषयक सम्बन्ध अप्राकृतिक अथवा राजनीतिक है विजेता की भाषा का विजित की भाषा से सम्बन्ध। ऐसा ही आरोप धार्मिक सत्ता की प्रबलता के कारण भी हो सकता है। धार्मिक सत्ता का प्रभाव भावनात्मक विशेष होता है। साहित्यिक सम्पर्क से भी आरोपी सम्बन्ध बनता है। साहित्यिक के साथ ज्ञान-विज्ञान विषयक सम्पर्क भी परिगणनीय है।

हिन्दी बंगला के सम्बन्ध में ये सभी तत्व मिलते हैं। इन्हीं के कारण इस काल बंगला में हिन्दी के शब्द गृहीत हुए।

किन्तु प्रश्न यह है कि ऐसे संबंधों से कोई भाषा चाहे कितने या सभी शब्द दूसरी भाषा से नहीं लेती। प्रत्येक गृहीत शब्द का इतिहास होता है उसका एक कारण होता है। बंगला हिन्दी के उक्त शब्दों से बंगला ने हिन्दी के जो शब्द ग्रहण किये होंगे वे तुलना से ही मिलेंगे। इस तुलना से हमें उन शब्दों का पता लग जाता है जो दूसरी भाषा से आगत या गृहीत होते हैं[1] तथा अनुकरणिक होते हैं। आगत अथवा गृहीत शब्दों की दो कोटियाँ की जा सकती हैं —

(१) उधारागत (उधार+आगत)

(२) धारागत (धारा + गत)

उधारागत वे शब्द हैं जो उधार लिए शब्दों की भाँति व्यवहार में आते हैं। तथा धारागत वे शब्द हैं जो किसी भाषा के प्रवाह में प्रविष्ट हो जाते हैं। भाषा वैज्ञानिकों ने इन समस्त शब्दों के लिये 'लोन (Loan) या 'बोरोड' (Borrowed words) शब्दों का व्यवहार किया है[2]।

वैन्द्रियेस महोदय ने (Loan Words) के संबंध में कहा है—'पारिभाषिक शब्दों के रूप में लोन वर्ड्स (आगत शब्दों) और 'बोरोड वर्ड्स' (उधार लिये हुए) जैसे शब्दों का प्रयोग सुविधाजनक और बहुप्रयुक्त है। भाषायी उधार लेने और अन्य पदार्थों के उधार लेने में अन्तर है। अन्य पदार्थों के उधार पर कृतज्ञता के साथ उन्हें लौटाना पड़ता है किन्तु भाषायी क्षेत्र में यह नियम लागू नहीं होता। क्योंकि भाषायी उधार लेना तो अनुकरण (Imitation) मात्र है[3]।

इस उद्धरण से स्पष्ट है कि इन भाषा-वैज्ञानिकों ने उधार शब्द का बहुत विस्तृत अर्थ लिया है। वस्तुतः उधार लिये हुए शब्द वही हैं जो किसी सामयिक आवश्यकता के कारण कुछ काल के लिए भाषा में गृहीत हो जाते हैं किन्तु कुछ काल बाद वे प्रयोगबाह्य (Obsolete) हो जाते हैं वे उस भाषा की धारा में नहीं मिल पाते। उधार धन की भाँति यह शब्दधन भी इस प्रकार लौट जाता है। उदाहरणार्थ अंग्रेजी की गुलामी के समय में हिन्दी ने अनेक अंगरेजी शब्द अपनाये

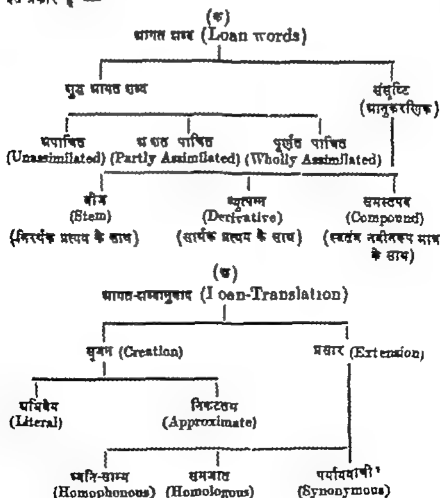
---

१ A word taken over from another Language. Pike D.L.P 125
The concuse Oxford Dictionary Fourth Edition P 242.
देखिये डा हि० भा डा पृ० १२० ।

२ 'भाषा में आगत-शब्द'। भारतीय-साहित्य पृष्ठ १०१ १८१ सन् अक्तूबर १९५६। एवं अप्रकाशित प्रबंध हिन्दी में अंग्रेज आगत-शब्द डा० कैलाश चन्द्र भाटिया १९५८ ई० पृष्ठ २६।
Vendryes; Language P 227
Gleason (Descriptive Linguistics P 200)

३ Language its development and Origin Page 208

अंग्रेजी से उधार लिये हुए शब्दों में से बहुत से आगत हो जायेंगे और बहुत से प्रयोग-बाह्य। वस्तुतः ये प्रयोगबाह्य शब्द ही उधारागत शब्द हैं। एकाउन्टेंट एवेन्यू, असेम्बली, सेक्रेटरी आदि शब्द कुछ समय बाद हिन्दी में न दिखायी पड़ें तो आश्चर्य नहीं। भाषा का गहरा प्रभाव उन शब्दों से परिलक्षित होता है जो उसमें आगत हो जाते हैं। अन्य जनक और सामान्यमूलक संबंध वाली भाषाओं में तो बहुत सा शब्द भांडार समान संपत्ति के रूप में होता ही है, फिर भी उनका प्रवृत्ति भेद शब्द चयन में झलकने ही लगता है। इसी तथ्य को अधिक स्पष्ट करने के लिये आइनर हाँगेन महोदय द्वारा प्रस्तुत उधृत या आगत शब्दों का वर्गीकरण इस प्रकार है —



१ Einar Haugen. The Norwegian Language in America Vol. II खं० १ फिलाडेल्फिया, १९५३ भा० छा०, पृ० ३८१।

इस वर्गीकरण की किंचित व्याख्या समीचीन है ।

अपाचित—अपाचित उन आगत शब्दों को कह सकते हैं जो एक भाषा में दूसरी भाषा से आकर अपना तत्सम रूप ही बनाये रखते हैं । उनको दूसरे शब्दों में अविकृत आगत शब्द कह सकते हैं । इस प्रकार के हिन्दी से आगत शब्दों के उदाहरण बंगला में बहुत हैं[1] ।

अंशतः पाचित—अंशतः पाचित उन अद्भुत शब्दों को कह सकते हैं जो तद्भव रूप में रह गये हैं । जो पूर्णतया विकृत नहीं है अर्धविकृत अवस्था में हैं[2] ।

पूर्णतः पाचित—पूर्णतः पाचित वे गृहीत शब्द हैं । जिनका पूर्णरूपेण रूप परिवर्तन या ध्वनि परिवर्तन हो गया हो, ऐसे शब्द पूर्णतः विकृत हो जाते हैं । मूल भाषा में उनका रूप कुछ और ही होता है । जिस भाषा में वे आत्मसात किये गये हैं उसमें उनका रूप बिलकुल और ही हो जाता है । वे उस भाषा के तद्रूप या देशज शब्दों के समान होकर उसकी धारा में विलीन हो जाते हैं[3] । वे जिस भाषा में गृहीत होते हैं उसके व्याकरण के अनुसार ढल जाते हैं और उस भाषा की स्थायी निधि बन जाते हैं । विशेषकर, संज्ञाओं विशेषणों एवं क्रियाओं में यह प्रवृत्ति देखी जाती है । डॉ॰ दीनेशचन्द्र सेन ऐसे शब्दों को भाषा में 'स्थायी चिह्न' मानते हैं ।[4] क्योंकि जिस भाषा में वे पाचित या आत्मसात होते हैं उसका स्थायी अंग बन जाते हैं । उन पूर्णतः पाचित शब्दों का अपना अलग अस्तित्व या व्यक्तित्व नहीं होता । जिस प्रकार नदी सागर में गिरकर अपना अस्तित्व खो बैठती है उसी प्रकार वे शब्द भी भाषा के सागर में विलीन हो जाते हैं ।

यहाँ तक हमने यह देखने की चेष्टा की है, कि एक भाषा जब दूसरी भाषा को प्रभावित करती है तो उस प्रभाव का 'शब्द' संबंधी रूप कैसा हो सकता है ।

---

१ हिन्दी अर्थ और प्रसंग	बंगला अर्थ और प्रसंग
अचाहे—बेचाह	अचाई—अकस्मात्
हरिपद विमुख परमगति चाहा	आमर काय अचाई हिलायत
(मा॰ बा॰ पृ॰ ११२)	(कृष्णकीर्त प॰क त॰ पद २८८६)
२ अस—ऐसा	असु—ऐसन
अस बिचारि जिय जागहु ताता	को असु बेरन तहई
(मा॰ बं॰, पृ॰ ११२)	(गोविंददास प॰क॰त॰ पद १७४)
३ दुलार—प्यारा	दुलाल—प्रिय
मिटि जु गयो संताप जनम को देख्यो नंद दुलारो	आभीर दुलाल दुष्कृति देखिनु

४ बं॰ भा॰ औ॰ सा॰ पृ॰ ४०८ ।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि ऐसे प्रभाव में आत्मसात करने एवं अपनत्व की भावना है। प्रभाव में प्रभावित करने वाले और प्रभावित होने वाले में कोई अन्तर नहीं रह जाता है। दोनों एक आत्मस्वरूप और एकाकार हो जाते हैं। जिस प्रकार एक संस्कृति का प्रभाव दूसरी पर पड़ता है। उसी तरह एक भाषा का प्रभाव भी दूसरी पर पड़ता है। एक भाषा के ऊपर दूसरी भाषा का प्रभाव एवं सम्पर्क सांस्कृतिक एवं राजनीतिक आदि कारणों से होता है। भाषा संस्कृति का वाहन है। यदि कोई भाषा अपूर्ण रहती है, तो उसकी संस्कृति भी अपूर्ण ही रहती है। जैसे कि डॉ॰ एडवर्ड सपिर लिखते हैं 'संस्कृतियों की तरह भाषायें भी कभी पूर्ण नहीं होती हैं, आदान-प्रदान की आवश्यकता एक भाषा के बोलने वालों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में पड़ोसी या सांस्कृतिक प्रभुत्वसम्पन्न भाषाओं के बोलने वालों के सम्पर्क में ले आती है'[1]। एक भाषा पर दूसरी भाषा का पड़ने वाला प्रभाव कई प्रकार का होता है। इनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। इनमें से अन्यजनक संबंध तथा समानमूलक संबंध से जातिगत (औरस) प्रभाव प्रकट होता है।

१ जातिगत (औरस) प्रभाव—जो चीजें एक जाति की होती हैं उनकी एक परम्परा होती है। अतः परम्परा एक होने पर समानता स्वाभाविक है। अतः जातिगत (औरस) प्रभाव को वास्तविक अर्थ में प्रभाव नहीं कहना चाहिये। क्योंकि एक ही जाति की भाषाओं की एक ही परंपरा होने के कारण बहुत कुछ एक सी शब्दावली, एक से साहित्यिक मानदण्ड आदि होंगे ही। किन्तु जब एक ही जाति की दो भाषाएँ अलग-अलग हो जाती हैं तब ऐतिहासिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों के कारण कालान्तर में उनमें भेद उत्पन्न हो जाते हैं। उनकी शब्दावली और साहित्यिक परंपराओं में विविधता एवं विभिन्नता उत्पन्न होने लग जाती है। उनका मूल एक होते हुए भी उनकी शाखाएँ भिन्न-भिन्न होती चली जाती हैं। उनके विकास का अपना अलग मार्ग बन जाता है परिस्थितियों वश वे भाषाएँ जब फिर कभी सम्पर्क स्थापित करती हैं तब उनमें परस्पर आदान प्रदान होना स्वाभाविक है।

२ पड़ोस—जिस प्रकार एक पड़ोसी संस्कृति दूसरी को प्रभावित करती है उसी तरह पड़ोसी भाषाएँ भी परस्पर प्रभाव डालती हैं। भाषायी पड़ोस के कारण भौगोलिक होते हैं। यात्रा एवं व्यापार आदि के द्वारा भी पड़ोस जैसे ही प्रभाव-क्षेत्र प्रस्तुत होते हैं।

---

१ Languages, like cultures are rarely sufficient unto themselves, the necessities of intercourse bring the speakers of one language into direct or indirect contact with those of neighbouring or culturally dominant languages. —Language P 192.

३ आरोप—एक भाषा का आरोप दूसरी पर दो प्रकार से हो सकता है—
(१) सांस्कृतिक और (२) राजनीतिक।

(१) सांस्कृतिक—शक्तिशाली संस्कृति निम्नस्तर की संस्कृति को प्रभावित करती है। कभी-कभी बराबर की संस्कृतियां भी एक दूसरी को प्रभावित करती हैं। निम्नस्तर की संस्कृति भी कुछ न कुछ अपना प्रभाव ऊँची संस्कृति पर छोड़ जाती है। अतः संस्कृतियों में पारस्परिक प्रभाव होना आवश्यक है। संस्कृतियों के कारण एक भाषा का प्रभाव दूसरी पर पड़ता है।

(२) राजनीतिक—राजनीतिक कारणों से भी एक भाषा का प्रभाव दूसरी पर पड़ता है। राजनीतिक प्रभुता के कारण भी शासितों की भाषा पर शासकों की भाषा का प्रभाव पड़ता है। किन्तु शासितों की भाषा का भी थोड़ा बहुत प्रभाव शासकों की भाषा पर रहता है।

४ गुणनिष्ठता या आवश्यकता—भाषा वैज्ञानिक "वेन्द्रयेज" (Venedryes) ने इस गुणनिष्ठता को Worth का नाम दिया है। इसी पर किसी भाषा की प्रतिष्ठा (Prestige) निर्भर करती है[1]। अतः गुणों की ओर आकर्षण स्वाभाविक है आवश्यकता के कारण जीवन में गति उत्पन्न होती है। उच्च साहित्य-सम्पन्न भाषा की ओर आकर्षण स्वाभाविक है। जिस भाषा में अधिक साहित्यिक सौन्दर्य होगा वह दूसरी भाषाओं के साहित्यकारों एवं पाठकों को मोहित करेगी। उदाहरणतया संस्कृत और यूनानी आदि भाषायें अपने गुणों के कारण ही सारे विश्व को आकर्षित करती आई हैं। गुणसम्पन्न भाषायें अपूर्ण भाषाओं के विकास में सहायक होती हैं। उस गुणसम्पन्न भाषा का प्रभाव अपूर्ण अविकसित भाषा पर स्वाभाविक रूप से पड़ जाता है। जब कभी अपूर्ण एवं अविकसित भाषा में किसी चीज का अभाव होता है, तब वह गुणसम्पन्न एवं विकसित भाषा से ही उधार लेकर अपने साहित्य की श्रीवृद्धि करती है। उदाहरणतया—आज पारिभाषिक शब्दों के लिये भारत की आधुनिक भाषायें संस्कृत अथवा अंग्रेजी से ही उधार लेकर अपने ज्ञान भाण्डार को पूरा करती हैं। विविध भावों के सूक्ष्म से सूक्ष्मतर पक्षों को प्रस्तुत करने के लिए सम्पन्न भाषायें भी दूसरी भाषाओं से शब्दों को ग्रहण कर लेती हैं।

बंगला और हिन्दी के प्रसंग में ये चारों भाषायी प्रभाव के कारण आ जाते हैं। दोनों भाषायें हिन्दी और बंगला एक आर्य भाषा-परिवार की दो शाखायें हैं। दोनों का घनिष्ठ औरस सम्बन्ध है। अर्थात् जन्य-जनक तथा समानमूलक संबंध। प्रथम अध्याय में इस विषय पर प्रकाश डाला जा चुका है। पूर्ववर्ती भारतीय आर्य

---

१ Language pp. 282—283

भाषाओं में उपलब्ध भाषात्मक-सौंदर्य एवं साहित्यिक समृद्धि दोनों भाषाओं की सामान्य धरोहर है। हिन्दी और बंगला की अधिकतर शब्दावली सामान्य है, किन्तु दोनों में साम्य होते हुए वैषम्य भी बहुत है। दोनों ही अपनी-अपनी शब्दावली और साहित्यिक परंपराओं के साथ विभिन्न क्षेत्रों में फली फूली हैं। कालान्तर में वियोग के साथ संयोग भी दोनों में होता रहा है। हालांकि दोनों भाषायें संस्कृत की महान् शब्दावली की उत्तराधिकारिणी हैं फिर भी दोनों ने उस शब्दावली को अपनी भौगोलिक एवं ऐतिहासिक प्रवृत्ति और प्रकृति के अनुसार ही आत्मसात किया है। कई संस्कृत के शब्दों का हिन्दी में कुछ और अभिप्राय होता है, बंगला में कुछ और ही होता है। पर जो औरस शब्द हिन्दी से बँगला में गये हैं वे हिन्दी के अर्थ विचार के अनुसार हैं अर्थात् जो अर्थ उनका हिन्दी में है बंगला में भी उसी अर्थ के लिये उनका प्रयोग हुआ है कुछ औरस शब्द इस प्रकार समझे जा सकते हैं —

(१) मूल संस्कृत	हिन्दी अर्थ एवं प्रसंग	बँगला अर्थ और प्रसंग
ग्रामीण	गँवार=गाँव का	गोँयार=गाँव का
	गोंड गँवार नृपाल महि (दो० ५२९)	रहिरस ना जानय कानू से गोँयार (वि० प०)
(२) ग्रस् धातु	गरसइ=ग्रसना	गरस=द्रवीभूत हुए
	गई गरासि कुटिल कैकेई (रामचरितमानस)	जाहाँ जाहाँ धेनु चंदन गरम बसे गरसह (प० क० त० पद २१५)
(३) धृष्ट	ढीठ=उद्धत	धृष्ट=प्रगल्भ
	मैं जानति हौं ढीठ कन्हाई (सूरदास—सू०सा० १०।१५२४)	ढीट कानाइ कडए मापि जानत (गोविन्ददास प०क०त० पद ११६)
(४) भ्रातृ	भैया=भाई	भैया=भ्राता
	भैया भरत भावते के संग (गी० २।३१।४)	भैया अभिराम बलनु बल आमोद (प० क० त० पद १२११)
(५) *निद्रा*	*निन्द=नींद*	*निन्द=घूम, निद्रा*
	सुख्य बाह पौढ़ बोर भैया सीतल पाई निन्द (सू०सा० १०।२५०)	बिगलित लोचन निन्द (प० क० त० पद ४०)

पालिगत प्रभाव से ये शब्द संस्कृत से चले आ रहे हैं निश्चय ही ये औरस हैं। इन शब्दों की परम्परा हिन्दी में अपनी प्रकृति के अनुरूप जीवित रही। बँगला भाषा में इन शब्दों की यह परंपरा नहीं मिलती। वैष्णव-काल में हिन्दी और बँगला का सम्पर्क पुनः स्थापित हुआ, तब ये शब्द हिन्दी से बँगला में गये। जैसे संस्कृत शब्द "सौभाग्य' हिन्दी में सुहाग बन गया। संस्कृत में सौभाग्य का अर्थ है, ऐश्वर्य अथवा

भाग्यशालीत्व किन्तु हिन्दी में "सुहाग" का अर्थ है स्त्री की सधवा अवस्था" अर्थात् सपतित्व। बंगला वैष्णव-पदावली में इसका अर्थ है प्यार[1]।

आज दोनों भाषाएँ अपने-अपने विकास की कई शताब्दियाँ समाप्त कर चुकी हैं। अपने-अपने क्षेत्र की विशेष भौगोलिक एवं ऐतिहासिक विशेषताओं के कारण अपनी-अपनी निजी शब्दावली का विकास किया है। दोनों पड़ोसिनें हैं। पड़ोसी होने के कारण दोनों में आदान प्रदान स्वाभाविक था। मैथिली और बंगला का पड़ोस भौगोलिक कारण से है। मिथिला और बंगाल का घनिष्ठ सम्बन्ध तो इतिहाससिद्ध तथ्य है। प्रथम अध्याय में लिख चुके हैं कि मिथिला सदैव से बंगाल का गुरु रहा है। मिथिला-संस्कृति एवं भाषा का प्रभाव बंगाल पर गंभीर रहा है। ब्रजभाषा और बंगला का सम्पर्क या पड़ोस धार्मिक यात्राओं के कारण हुआ है। पहले कहा जा चुका है कि ब्रजप्रदेश (मथुरा वृन्दावन) सदैव से बंगाली वैष्णवों का-गढ़ रहा है आज भी है। नवद्वीप और वृन्दावन की संस्कृति किसी समय एक हो गई थी। एक आनन्द-कन्द-कृष्णचन्द्र की जन्मभूमि थी एक प्रेमावतार चैतन्य-महाप्रभु की। अतः दोनों स्थानों की भाषा के लिये गौड़ीय बंगाली वैष्णवों की बड़ी महान श्रद्धा थी। पड़ोसी होने के नाते हिन्दी के कुछ शब्द बंगला में चले गये हैं। उदाहरणस्वरूप कुछ शब्द इस प्रकार हो सकते हैं —

प० क० त० पद १२३२—चौलि हि० चोली　प० क० त० पद १८८७
म्रीक्ष्मे हि० म्रीकला　　(प० क० त० पद २९११) — टेंटि हि० टेंट
(करील का फल)　　प० क० त० पद १०३२ ठोर हि० ठौर।

सांस्कृतिक आरोप के कारण एक भाषा का प्रभाव दूसरी पर पड़ता है। पहले कहा जा चुका है कि मध्यदेश की संस्कृति का प्रभाव सारे देश पर ऐतिहासिक काल से रहा है वैष्णव-काल में मध्यदेश ही संस्कृति व धार्मिक व्यक्तियों का गढ़ था। अतः वैष्णव-भक्ति आन्दोलन ही प्रमुखतया बंगाल और ब्रजमंडल के पारस्परिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक सम्पर्क का कारण है। अतः उनकी भाषाओं पर भी परस्पर प्रभाव होना स्वाभाविक है। इसी सांस्कृतिक आरोप के कारण हिन्दी शब्दावली का अधिकतर प्रवेश बंगला-वैष्णव-पदावलियों में हुआ है,[2] क्योंकि वैष्णव-भक्ति आन्दोलन के कारण हिन्दी भाषाभाषियों और बंगला भाषाभाषियों का अभूतपूर्व घनिष्ठ संबंध हुआ था। उस समय ब्रजभाषा का बोलबाला सारे उत्तरी

१　देखिये (प० क० त० पद ८६, ७१९, २८३४)।
　बं०—देख देख प्रीतम प्यारिक सोहागे।
　हि०—अनुराग भाग सोहाग सील सरूप बहु भूषण भरी।
२　देखिये—भो० वै० स० (द्वितीय भाग)।

भारत में प्रथम रूप से दूर-दूर तक था। ब्रजमण्डल और बंगदेश की भाषा चैतन्य सम्प्रदाय के गायकों के कारण एकाकार हो रही थी। कृष्णभक्ति और ब्रजभाषा साहित्य एक दूसरे के पर्यायवाची बन गये थे। कृष्णभक्ति ने ब्रजभाषा को भारती का कण्ठहार बनाया और ब्रजभाषा ने कृष्णभक्ति को अखिल भारतव्यापी बनाने में योगदान दिया। कृष्णभक्ति केवल संस्कृत के ग्रंथों, भागवत और जयदेव के गीत गोविंद एवं पंडितों तक ही सीमित नहीं रही किन्तु वह ब्रजभाषा के माध्यम से जनता तक पहुँच गयी।

पंजाब से लेकर सुदूर बंगाल तक ब्रजभाषा की मधुर-मुरली कई शताब्दियों तक बजती रही है। इस भाषायी आरोप का कारण विशुद्ध सांस्कृतिक है[1]। चैतन्य महाप्रभु ने अपने आराध्यदेव भगवान् कृष्ण की अवतार-भूमि ब्रजमण्डल को वैकुण्ठ से उपमा दी थी। गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदाय के आचार्यों और उनके अनुयायियों में वृन्दावन-दर्शन एवं वहाँ निवास करने की उत्कट उत्कण्ठा रहती थी। वहाँ पर मरना भी उनके लिये महापुण्य का कार्य और मोक्ष-द्वार समझा जाता था। अतः वहाँ की भाषा के प्रति तत्कालीन बंगालियों और चैतन्य महाप्रभु के अनुयायियों में अगाध श्रद्धा रहती थी। ब्रजभाषा में बोलना और कविता अथवा संकीर्तन करना गौरव का प्रतीक माना जाता था। अतः वृन्दावन की महिमा के साथ ब्रजभाषा की भी महान् प्रतिष्ठा हुई। वह परम आकर्षण का विषय बन गई।

विद्यापति की पदावली तो सदियों से ही गौड़ीय वैष्णव गायकों की वृत्तीणा के तारों को स्पन्दित करती रही थी। यह पदावली बंगला गौड़ीय वैष्णव पदावली साहित्य का प्रेरणास्रोत एवं एकमात्र कृष्णभक्ति का माध्यम बन गई। जिसके अनुकरण पर राधा-कृष्ण के प्रणय को अभिव्यंजित करने वाली साहित्यिक भाषा ब्रजबुलि का उद्गम और विकास हुआ था। यदि विद्यापति पदावली की भावधारा ब्रजबुलि की आत्मा है तो निःसन्देह ब्रजभाषा एवं तत्कालीन बंगला उसका सुन्दर शरीर है। इसी ब्रजबुलि के रूप में बंगला गौड़ीय-वैष्णव-धार्मिक पदावली पर हिन्दी की गंभीर छाप स्पष्ट परिलक्षित होती है।

प्रत्येक धर्म या सम्प्रदाय का नेता अथवा अनुयायी जब अपने धर्म का प्रचार एवं प्रसार करना चाहता है, तब उसको सरस सर्वजन सुलभ भाषायी माध्यम का

---

१ इस सांस्कृतिक आरोप के कारण गये हुए कुछ शब्द इस प्रकार हो सकते हैं—

(१) कृष्ण	कन्हैया या कान्हा	कानया कानाइ आकुल भइ बहु कानमा
(२) उद्धव	ऊधो	ऊधो
(३) केशव	केसो	केशो, मथुरा में केशवराय विराजै
(४) माधव	माधो	माधो, माधाइ—माधोये माधो बेपर— माधो (प० क० त० १७११)

सहारा (आश्रय) लेना पड़ता है। गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के प्रवर्त्तक अथवा अनुयायी तथा अन्य सम्प्रदायों के आचार्य तथा अनुयायी अपने-अपने मत का प्रचार करना चाहते थे तब उनको हिन्दी की ही शरण लेनी पड़ती थी[१]।

इसके अतिरिक्त मुसलमानी राजनीतिक प्रभुता के कारण हिन्दी लगभग सारे भारत में थोड़ी बहुत फैल चुकी थी। इसी कारण फ़ारसी के साथ साथ हिन्दी के शब्द भी बंगला एवं अन्यान्य तत्कालीन भाषाओं में प्रवेश पा गये। पहले कहा जा चुका है कि मुसलमानी राज में अरबी और फ़ारसी तहजीबी एवं दफ़्तरी जबान थी। दिल्ली और आगरा के मुगल-बादशाहों का राजनीतिक प्रभुत्व मध्यकाल में लगभग सारे देश पर था। दिल्ली और आगरा की भाषा का प्रभाव भी थोड़ा-बहुत सारे देश पर होना स्वाभाविक था। अतः जनता से सम्पर्क स्थापित करने एवं भारत के अन्य प्रान्तों पर शासन करने के लिए हिन्दी को अपनाये बिना कार्य असंभव-सा था।

मुगल बादशाहों का हिन्दी-प्रेम तो ऐतिहासिक तथ्य है[२]। अकबर से लेकर औरंगजेब तक ने अपने रसास्वादन के लिये हिन्दी को अपनाया था। यह माना जाता है कि अरबी फ़ारसी एवं हिन्दी के सम्पर्क-स्वरूप उर्दू का उद्गम और विकास हुआ है। अतः साधारणतया यह सिद्ध ही है कि मुसलमानी राज विशेषतया मुगल-बादशाहों ने हिन्दी के उद्गम और विकास में महत्त्वपूर्ण हाथ बटाया है। आज अखिल भारत-पाक महोपद्वीप में हिन्दी और उर्दू का बोलबाला इसी कारण है। इस राजनैतिक आरोप के कारण भी कुछ हिन्दी शब्द बंगला में गये हैं[३]।

गुणनिष्ठता आवश्यकता एवं उपयोगितावश भी हिन्दी शब्द बंगला में गये हैं। क्योंकि सब देशों सब कालों और सब परिस्थितियों में एक ही भाषा पूर्ण नहीं होती है। अपनी इस अपूर्णता या अभाव को पूरा करने के लिये दूसरी भाषाओं से सम्पर्क स्थापित करना ही पड़ता है। हिन्दी से सम्पर्क स्थापित किये बिना बंगाली वैष्णव-प्रवर्त्तकों को वृन्दावन की महिमा का परिचय और वहाँ निवास करने की सुविधा नहीं हो सकती थी। आवश्यकतावश उनको प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में ब्रजभाषा को अपनाना ही पड़ता।

---

१ देखिये—प्रस्तुत प्रबंध द्वितीय अध्याय पृष्ठ १६।

२ देखिये—अकबरी दरबार के हिन्दीकवि।

३

	फ़ारसी	हिन्दी	बंगला प्रयोग और प्रकरण	
(१)	अफ़सोस	अफसोस	बेर अपशोसई—अफ़सोस—हि० इ—	(प० क० त० ७११)
(२)	खिताबत	खिताब	खिताब (कर्तृत्व)	(प० क० त १०९)
(३)	चस्का	चस्का	चाखकि	(प० क० त० १०९)

जो मुसलमान-शासक अथवा जनसाधारण पंजाब तथा दिल्ली उत्तर प्रदेश बिहार से भारत के अन्य प्रदेशों में गये वे हिन्दी को साथ ले गये। क्योंकि अरबी फ़ारसी से उनका काम नहीं चल सकता था। पहले कहा जा चुका है कि हिन्दी को अखिल भारतीय बनाने में पूर्व-मुगलकाल से ही मुसलमानों का जबरदस्त हाथ है। अतः जो भी मुसलमान हिन्दी प्रदेश से बंग प्रदेश में गये वे हिन्दी को साथ ले गये। अतः कुछ हिन्दीनुमा अरबी-फ़ारसी शब्दों का प्रभाव गौड़ीय वैष्णव-पदावली में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अतः गुणात्मकता के कारण अथवा आवश्यकतावश कुछ हिन्दी शब्द बंगला में घुलमिल गये हैं[1]।

तीन सौ से अधिक साल तक हिन्दी-शब्दों का प्रयोग गौड़ीय-वैष्णवपद कर्त्ता अपनी वैष्णव-पदावलियों में करते रहे हैं। पहले कह चुके हैं कि इसका कारण सांस्कृतिक था। डा० सपिर महोदय ने सांस्कृतिक प्रभाव के इस सिद्धान्त की पुष्टि इस प्रकार की है 'सरलतम प्रकार का जो प्रभाव एक भाषा का दूसरी पर होता है वह शब्दों का उधार लेना या अपनी भाषा में उनका प्रयोग है। जब सांस्कृतिक तत्वों को उधार लिया जाता है तब सदैव यह सम्भावना रहती है कि तत्सम्बन्धी शब्दों को भी उधार ले लिया जाये[2]।

कितने ही पदकर्त्ताओं के पदों में हिन्दी प्रभाव की झलक है हिन्दी शब्द उनके पदों में मोती के समान जड़े हुए हैं। इनको दूसरे अध्याय के परिशिष्ट में हिन्दी शब्दावली की तालिका में देखा जा सकता है[3]। किन्तु यह कहना सरल नहीं है कि किस शताब्दी में अधिक हिन्दी शब्द बंगला वैष्णव-पदावलियों में प्रवेश पा गये हैं।

१

संस्कृत	हिन्दी प्रयोग और प्रकरण	बंगला प्रयोग और प्रकरण
दुर्लभ	दुलहा नहिं बरात दुलह मनुष्या (मा० ११९२।४)	दुलह-परिचय दुलह रहु केलि (प० क० त० पद ५२)
दुर्लभा	दुलहिन-दुलहिनि कहत वीरि दीजहु हिय पाती (सू० सा० १०।११२०)	दुलहिनी (प० क० त० २६९८)
	दुर्लभित दुलार	दुलाल (प० क० त० २७७)

२ The simplest kind of influence that one language may exert on another is the borrowing of words. When there is cultural borrowing there is always the likelihood that the associated words may be borrowed too

—Edward Sapir Language. Page 193

३ देखिए—दूसरे अध्याय का परिशिष्ट 'गौड़ीय-वैष्णव-बंगला पदावली में उपलब्ध हिन्दी प्रभाव।

सहारा (माध्यम) लेना पड़ता है। गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के प्रवर्तक अथवा अनुयायी तथा अन्य संप्रदायों के आचार्य तथा अनुयायी अपने-अपने मत का प्रचार करना चाहते थे तब उनको हिन्दी की ही शरण लेनी पड़ती थी[1]।

इसके अतिरिक्त मुसलमानी राजनीतिक प्रभुता के कारण हिन्दी लगभग सारे भारत में थोड़ी बहुत फैल चुकी थी। इसी कारण फारसी के साथ साथ हिन्दी के शब्द भी बंगला एवं अन्यान्य तत्कालीन भाषाओं में प्रवेश पा गये। पहले कहा जा चुका है कि मुसलमानी राज में अरबी और फारसी तहजीबी एवं दफ्तरी जबान थी। दिल्ली और आगरा के मुगल-बादशाहों का राजनीतिक प्रभुत्व मध्यकाल में लगभग सारे देश पर था। दिल्ली और आगरा की भाषा का प्रभाव भी थोड़ा-बहुत सारे देश पर होना स्वाभाविक था। अत जनता से सम्पर्क स्थापित करने एवं भारत के अन्य प्रान्तों पर शासन करने के लिए हिन्दी को अपनाये बिना कार्य असंभव-सा था।

मुगल बादशाहों का हिन्दी-प्रेम तो ऐतिहासिक तथ्य है[2]। अकबर से लेकर औरंगजेब तक ने अपने रसास्वादन के लिये हिन्दी को अपनाया था। यह माना जाता है कि अरबी फारसी एवं हिन्दी के सम्पर्क-स्वरूप उर्दू का उद्भव और विकास हुआ है। अत साधारणतया यह सिद्ध ही है कि मुसलमानी राज विशेषतया मुगल-बादशाहों ने हिन्दी के उद्भव और विकास में महत्त्वपूर्ण हाथ बटाया है। आज अखिल भारत-पाक महोपद्वीप में हिन्दी और उर्दू का बोलबाला इसी कारण है। इस राजनीतिक- आरोप के कारण भी कुछ हिन्दी शब्द बंगला में गये हैं[3]।

मुखसिप्ठ्या आवश्यकता एवं उपयोगितावश भी हिन्दी शब्द बंगला में गये है। क्योंकि सब देशों सब कालों और सब परिस्थितियों में एक ही भाषा पूर्ण नहीं होती है। अपनी इस अपूर्णता या अभाव को पूरा करने के लिये दूसरी भाषाओं से सम्पर्क स्थापित करना ही पड़ता है। हिन्दी से सम्पर्क स्थापित किये बिना बंगाली वैष्णव-प्रवर्तकों को वृन्दावन की महिमा का परिचय और वहाँ निवास करने की सुविधा नहीं हो सकती थी। आवश्यकतावश उनको प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में ब्रजभाषा को अपनाना ही पड़ता।

---

१ देखिये—प्रस्तुत प्रबंध द्वितीय अध्याय पृष्ठ ३१।
२ देखिये—अकबरी दरबार के हिन्दीकवि।
३

फारसी	हिन्दी	बंगला प्रयोग और प्रकरण	
(१) अफसोस	अफसोस	ऐद अफसोसई—अफसोस—हि० इ—	
(२) खिताबत	खिताब	खिताब (स्पृ त्व)	(प० क० त० ७३१)
(३) चस्का	चसका	चमकि	(प० क त० १०१)
			(प० क० त० १०१)

जो मुसलमान-शासक अथवा जनसाधारण पंजाब तथा दिल्ली, उत्तर प्रदेश बिहार से भारत के अन्य प्रदेशों में गये वे हिन्दी को साथ ले गये। क्योंकि अरबी फ़ारसी से उनका काम नहीं चल सकता था। पहले कहा जा चुका है कि हिन्दी को अखिल भारतीय बनाने में पूर्व-मुगलकाल से ही मुसलमानों का जबरदस्त हाथ है। अतः जो भी मुसलमान हिन्दी प्रदेश से बंग-प्रदेश में गये वे हिन्दी को साथ ले गये। अतः कुछ हिन्दीनुमा अरबी-फ़ारसी शब्दों का प्रभाव गौड़ीय वैष्णव-पदावली में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अतः गुणात्मकता के कारण अथवा आवश्यकतावश कुछ हिन्दी शब्द बंगला में घुलमिल गये हैं[1]।

तीन सौ से अधिक साल तक हिन्दी-शब्दों का प्रयोग गौड़ीय-वैष्णवपद कर्ता अपनी वैष्णव-पदावलियों में करते रहे हैं। पहले कह चुके हैं कि इसका कारण सांस्कृतिक था। डा० सॅपिर महोदय ने सांस्कृतिक प्रभाव के इस सिद्धान्त की पुष्टि इस प्रकार की है 'सरलतम प्रकार का जो प्रभाव एक भाषा का दूसरी पर होता है, वह शब्दों का उधार लेना या अपनी भाषा में उनका प्रयोग है। जब सांस्कृतिक तत्त्वों को उधार लिया जाता है तब सदैव यह संभावना रहती है कि तत्संबंधी शब्दों को भी उधार ले लिया जाये'[2]।

कितने ही पदकर्ताओं के पदों में हिन्दी प्रभाव की झलक है हिन्दी-शब्द उनके पदों में मोती के समान जड़े हुए हैं। इनको दूसरे अध्याय के परिशिष्ट में हिन्दी शब्दावली की तालिका में देखा जा सकता है[3]। किन्तु यह कहना सरल नहीं है कि किस शताब्दी में अधिक हिन्दी शब्द बंगला वैष्णव-पदावलियों में प्रवेश पा गये हैं।

---

१ संस्कृत	हिन्दी प्रयोग और प्रकरण	बंगला प्रयोग और प्रकरण
दुर्लभ	दुलहा नहिं बरात दुलह मनुजन्मा (मा० ११९२१४)	दुलह-अनिचय दुलह रहे देलि (प० क० त० पद ३२)
दुलभा	दुलहिन-दुलहिनि कहत बोरि दीजहु जिन पाती (भू० सा० १०।१२२०)	दुलहिनी (प० क० त० २६६८)
	दुर्लभित दुलार	दुलाल (प० क० त० [illegible])

२ The simplest kind of influence that one language may exert on another is the borrowing of words. When there is cultural borrowing there is always the likelihood that the associated words may be borrowed too

—Edward Sapir, Language, Page [illegible]

३ देखिए—दूसरे अध्याय का परिशिष्ट [illegible] शब्दगत हिन्दी प्रभाव।

संभवतः सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध एवं सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में ही हिन्दी के अधिक शब्दों का प्रयोग हुआ होगा।

यह कहना भी आसान नहीं है कि किस बंगाली पदकर्ता ने अधिक हिन्दी शब्दों का प्रयोग किया है, किन्तु हमारे अनुमान से सोलहवीं शताब्दी में गोविन्ददास कविराज (१५१२ १६११ ई०) ने ही अधिक हिन्दी शब्दों का प्रयोग अपने पदों में किया है क्योंकि पदकर्ताओं में सबसे अधिक पदों की रचना ही गोविन्ददासजी ने की है। १७वीं शताब्दी में नरहरिदास चक्रवर्ती ने अधिक हिन्दी शब्दों को प्रयोग किया है। इनकी रचनाएँ भी कम नहीं हैं और ये व्रज में ही वास भी करते थे। अंत में हम कह सकते हैं कि चैतन्य-सम्प्रदाय का आन्दोलन सारे बंगाल और व्रजभाषा क्षेत्र में सदियों तक छाया रहा है और इस दीर्घकाल में व्रज के शब्दों को मुक्तभाव से ग्रहण किया जाता रहा है।

अत अवश्य हिन्दी प्रभाव को सारे सम्प्रदाय एवं उसके इतिहास विस्तार और आन्दोलन को लेकर ही ठीक तरह समझा जा सकता है और उसके उचित स्थान का निर्धारण और मूल्यांकन हो सकता है।

हिन्दी शब्दों के प्रयोग के कारण बंगला में हिन्दी शब्दों की स्थूलतः दो श्रेणियाँ होती हैं। हिन्दी के वे शब्द जो बंगला में तत्सम् रूप में या ज्यों के त्यों चले गये हैं।[1] दूसरी श्रेणी में वे शब्द आते हैं जिनका किसी आंतरिक या बाह्य कारण से ध्वनि परिवर्तन या रूप परिवर्तन अथवा अन्वय में परिवर्तन हो गया है। सुप्रसिद्ध भाषा-वैज्ञानिक डा० एडवर्ड सपिर का भी मत हमारे सिद्धान्त का समर्थन करता

---

१ इनको अपाचित उधार लिए शब्द भी कह सकते हैं। इनके उदाहरण कुछ इस प्रकार हैं:—

शब्द	हिन्दी प्रयोग और प्रकरण	बंगला प्रयोग और प्रकरण
महेरा	फिरत महेरैं परबैं भुलाई	माधव मनमथ फिरत महेरा
(स)	(पु० रा० च० मा० मा १२६)	(गोविन्ददास प०क०त० पद ११६)
अगोरह		धाम धरम गुन पुन पुन अगोरह
(क्रि०)		(प० क० त० २०४२)
अधिकाइ	एकटक नैन हृद छबि की अधिकाइ	कानु अनुराग बाढ़ये अधिकाइ
(वि०)	(रा० च० म पृ० ११८)	(प० क० त० पद २११०)
छबीले	छबीले मुरली नैकु बजाउ	सरस छबीले रस बरखोवै
(वि०)	(सूरदास सु० सा० १०।१२११)	(गोपालदास प० क० त० पद २११६)
दीजै	दीजै कान्ह काँधे को कौंवर—	तम मन अनह निछावरि दीजै—
क्रिया	(सूरदास सु० सा० १०।१६६१)	(उद्धवदास, प० क० त० पद २८२८)

—

है। वे लिखते हैं कि अन्य क्षेत्रीय शब्दों के उधार लेने में सदैव ही ध्वनि-संशोधन होता है निश्चय ही अन्य क्षेत्रीय ध्वनियाँ या बलाघातिक विशेषताएँ ऐसी हो सकती हैं जो स्वदेशी प्रकृति के अनुकूल नहीं होंगी[1]।

अत: हिन्दी के अनेक शब्दों के रूप में बंगला में अन्वय एवं ध्वनि-असामञ्जस्य के कारण परिवर्तन हो गया है। क्रियाओं में सबसे अधिक विशेषणों सर्वनामों एवं संज्ञाओं की एक बहुत बड़ी संख्या में ऐसा रूप या ध्वनि परिवर्तन हुआ है। इनमें बहुतों में स्वरागम, स्वरलोप, व्यंजनागम एवं व्यंजन लोप हुआ है[2]।

---

१ The borrowing of foreign words always entails their phonetic modification. There are sure to be foreign sounds or accentual peculiarities that do not fit the native phonetic-habits.

—Language. P 197

२ हि॰ मगहन—

बं॰ आघन —आघन मासे आघ बहु मालिक (प॰ क॰ त॰ पद १७४८)

(आ का आगम, ग का घ में महाप्राणत्व, ह महाप्राण का लोप)

हि॰ पगड़ी —एठे पर अंखियाँ रसखानि अब पगीया लपटानी (सु॰ सा॰ ११६७)

बं॰ पाग — नरपति पाग धरे (प॰ क॰ त॰ पद १४१)

(अ स्वर के स्थान पर आ स्वर का आगम ड़ व्यंजन का लोप)

हि॰ बनवारी —मथुरा जन्म लियो बनवारी (गोविंद की॰ र॰ नाम चौबी पृ॰ ८१)

बं॰बनओयारि—वीर हरण नागर बनओयारि (प॰ क॰ त॰, पद २६६६)

(व व्यंजन का लोप ओ आ स्वरों का आगम)

हि॰ मत —मत बिचारि जिय आयहु ताता (रा॰च॰मा॰ सं॰ पृ॰ ४३८)

बं॰ मधु —को मधु बेकम सहइ (गोविंददास प॰ क॰ त॰ पद १७४)

(त के स्थान पर बंगला में ध का नित्य ध्वनि परिवर्तन होता है)

हि॰ घुंघुराली—घुंघुराली लटें लटकें मुख ऊपर (तुलसी क॰ प॰ बा॰ ५)

बं॰ घुंघुरओयाली घुंघरओयालि अलकें झलके (कृष्णदास, प॰ क॰ त॰ पद २८६०)

(आ का ओ में परिवर्तन 'व' का बंगला उच्चारण 'ओ आ' होता है।)

हि॰ चतुरपन—

बं॰ चोयानपना—पुन सांगातिनि नागर चोयानपना (प॰ क॰ त॰ पद १०६)

यहाँ तक हमने शब्दों के प्रभाव और प्रभाव प्रकार पर जो विचार किया है उससे स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी शब्दों का गंभीर प्रभाव बँगला शब्दावली पर पड़ा है, यह प्रभाव उधार ली हुई अस्थायी शब्द-सम्पत्ति के रूप में नहीं है। यह प्रत्यक्ष प्रभाव है उच्चारण भेद के कारण हिन्दी-शब्दों का ध्वनि-परिवर्तन हुआ है। इसी कारण शब्दों के रूप और अन्वय में भी परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है।

प्रभाव की धारणा

हिन्दी से बँगला में आगत-शब्दों के पर्याय भी मिलते हैं। साथ में उनके बँगला-पर्याय भी बहुत हैं। हिन्दी-शब्दों के बँगला में गये हुए पर्याय अधिकतर तद्भव अथवा देशज हैं। कुछ तद्भव अथवा देशज मैथिली अथवा विद्यापति की पदावली से भी आए हैं। किन्तु यह प्रश्न पैदा होता है कि बँगला में इतने पर्यायवाची शब्दों के होते हुए भी हिन्दी शब्दों को बँगाली शब्दों के स्थान पर क्यों अपनाया गया है? इसका कारण यह हो सकता है कि हिन्दी के पर्यायवाची शब्द प्रयत्न-लाघव या प्रयोग की सुविधा के लिए अपनाये गये हों। पहले कहा जा चुका है कि हिन्दी एक विशाल भूभाग की भाषा थी उसका प्रचार भारत के तत्कालीन अहिन्दी प्रदेशों में भी कुछ न कुछ था। अन्य भाषाभाषी प्रदेशों के लोग भी कुछ न कुछ इसको समझ लेते थे। बँगाली गौड़ीय वैष्णव पदकर्ताओं ने अपने सम्प्रदाय और पदों को सर्वजन ग्राह्य या बोधगम्य बनाने के लिए हिन्दी पर्यायों को बँगला में मिलाया होगा। आवश्यकता एवं गुणनिष्ठता के कारण भी ऐसा हो सकता है।

पर्यायवाची शब्द किसी प्रभाव की पूर्ति ही नहीं करते किन्तु गुणात्मकता के कारण प्रभाव के भी द्योतक होते हैं। परन्तु प्रभाव अर्थ के उस अनुमान के तत्व को अभिव्यक्त करने वाला नहीं है जो गुणात्मकता व गुणनिष्ठता के कारण होता है। एक तरह प्रभाव के कारण हैं, किन्तु प्रभाव वाले शब्द के पर्याय का प्रयोग वस्तुगत हुआ है या भावगत। अब कभी-कभी सहज सम्पर्क के कारण

(रूप एवं अन्वय में परिवर्तन भाववाचक संज्ञा पन हिन्दी का प्रत्यय)

हि० नवल —नवल नेहु नव पिया नवो नवो (सूरदास सू० सा० १०।६६१)

बँ० नयोल —नयोल नयोल नयो रंग में (शिवराम प० क० त० पद१५५७)

(व व्यंजन का लोप यो स्वर का आगम एवं व के स्थान पर नित्य ध्वनि परिवर्तन हिन्दी से बँगला में होता है)

हि० मीचक — —

बँ० मच मक —भनस्व बिभुरि नयन मच मक (प० क० त० पद १० १)

(ओकारांत का लोप व व्यंजन का आगम)

ी गृहीत हो जाते हैं। सहज रूप से प्राप्त शब्द भी पर्यायवाची का स्थान पा जाते ं। अर्थ वैशिष्ट्य की गुणात्मकता उस शब्द में होती है परन्तु प्रयोग की सुविधा ी दृष्टि से तथा व्यवसाय की दृष्टि से भी शब्द गृहीत होते हैं।

शब्दों का प्रयोग सामान्य व्यवसायी दृष्टि से हुआ है या लोकप्रियता की ष्टि से भी। हिन्दी के बँगला में आये हुए शब्दों में अर्थ-संकोच नहीं है। अर्थ-विस्तार ी नहीं हुआ है। जिस भाव के द्योतक वे हिन्दी में थे उस भाव की आत्मा बँगला में ी सुरक्षित रही है। हिन्दी के पर्यायवाची शब्द बँगला में हीन अर्थ के द्योतक नहीं ैं न उसमें अर्थापकर्ष है। अतः वस्तु एवं भाव की दृष्टि से ये शब्द अपनाए गए हैं। त्कालीन ब्रजभाषा की चलित या आवश्यक-शब्दावली (Current Vocabulary) बँगला में समावेश पा गई है। वस्तु एवं भाव के द्योतक कुछ शब्दों के पर्यायों के उदाहरण समीचीन हैं। (देखिए तालिका पृष्ठ ८८।) अगले पृष्ठों में वाक्य विन्यासगत गौड़ीय-वैष्णव-पदावली पर हिन्दी प्रभाव का कुछ विवेचन है।

४

बंगला-गौड़ीय-वैष्णव-पदावलियों में वाक्य विन्यासगत हिन्दी प्रभाव

भाषायी प्रभाव केवल शब्दगत ही नहीं होता है वाक्य-विन्यासगत प्रभाव भी उसमें समाविष्ट है। जिस प्रकार शब्द-सम्पत्ति एक भाषा से दूसरी भाषा में गृहीत होती है उसी तरह वाक्य भी एक भाषा से दूसरी भाषा में प्रवेश पा जाते हैं। जैसा कि भाषा-वैज्ञानिक सइस ने बताया है, कि यह शब्दों ध्वनियों मुहावरों, प्रत्ययों का ही नहीं वरन् व्याकरणिक-रूपों को एक भाषा दूसरी से लेती रहती है। यह कोई अत्युक्ति नहीं कि पूर्णतया विशुद्ध और अमिश्रित भाषा संसार की सभ्य जातियों में नहीं मिलती है।[1] इसी प्रकार शब्दों की तरह अनेक हिन्दी वाक्य बँगला वैष्णव-पदावलियों पदकल्पतरु, गौरपद-तरंगिणी पदमेरु एवं चरित काव्यों, चैतन्य चरितामृत भक्तिरत्नाकर गौर-चरित-चिन्तामणि गीत चन्द्रोदय आदि में गृहीत हुए हैं। मध्यकालीन बँगला भाषा के गठन पर इस वाक्य-विन्यास का गहरा प्रभाव पड़ा है। जिससे भाषा कुछ खिचड़ी बन गई है। बँगला-साहित्य में यह हिन्दी-वाक्यावली कुछ बँगला के साँचे में ढल गई है। बँगला के अनेक पद ऐसे हैं जो हिन्दी-वाक्य विन्यासगत प्रभाव के कारण भाषा-समक अलंकार के उदाहरण कहे जा सकते हैं ये पद उभय भाषात्मक हैं कुछ बँगलामय हैं, कुछ हिन्दी प्रभाव-गर्भित हैं।

---

[1] The modes of borrowers are read into the language he borrows words sounds idioms, suffices and even the grammatical forms may be and constantly are borrowed from one dialect by another and it is not too much to say that a thoroughly pure and unmixed language does not exist among the civiliz ed races of mankind A. H. Sayce, *Introduction to the* Science of Language 1890 Page 172

१ वस्तुगत शब्द एवं इनके प्रसंग

हिन्दी		बँगला
माघ (संज्ञा)	=	फागुन (संज्ञा)
फागुनि झोडनी (संज्ञा)	=	फाल्गुनि (संज्ञा)
खोज भू (क्रि०)	=	खुँजिलाम (क्रि०)
घूँघट (सं०)	=	घोमटो (सं०)
जागसु (क्रि०)	=	जागिलाम (क्रि०)
टिकै (क्रि०)	=	थाके (क्रि०)
ठौर (सं०)	=	स्थान जगह (सं०)
बूझनु (क्रि०)	=	बूझिलाम क्रि०
मारि (क्रि०)	=	मारिया (क्रि०)
लिये (क्रि०)	=	लियाछे (क्रि०)
बरली (सं०)	=	बरिमी (सं०)
निचोरि (क्रि०)	=	निचराइया (क्रि०)
पहिरन (सं०)	=	पिन्धन (सं०)
पूछइ (क्रि०)	=	जिज्ञासा करे (क्रि०)
फोरि (क्रि०)	=	फुडिया (क्रि०)
बात (सं०)	=	कथावार्ता (सं०)
बैठनु (क्रि०)	=	बैसिलाम (क्रि०)
लिये (क्रि०)	=	जन्ये निमित्त (क्रि०)
होय (क्रि०)	=	हय (क्रि०)

भावगत् शब्द और उनके प्रसंग

हिन्दी		बँगला
अभागिया (वि०)	=	दुर्भाग्य व्यक्ति (वि०)
अयानि (वि०)	=	अज्ञानी बोका (वि०)
उरमाई (क्रि०)	=	जडाइयि (क्रि०)
केवो (सं०)	=	केवल कामाई (सं०)
कुबुरबोलि (वि०)	=	कुवित कोकडानो (वि०)
चतुरपन (वि०)	=	चातुर्य (वि०)
छबीले (वि०)	=	सुन्दर, नायक (वि०)
ढीठपना (वि०)	=	धृष्टता (वि०)
दुलहिन (सं०)	=	नववधू नूतन बो (सं०)
निपट (वि०)	=	नितान्त (वि०)
परदेसिया (सं०)	=	प्रवासी (सं०)
रसिकपन (भा सं०)	=	रसिकता भा० (सं०)
लतखरिया (सं०)	=	जार, व्यभिचारी (न०)
सतीपन भा० (सं०)	=	सतीत्व भा० (सं०)
सब (सं०)	=	सज्जन भालमानुष, भद्रलोक (सं०)
सयानि (वि०)	=	चतुरा (वि०)
सीधे (वि०)	=	सोजासोजि (वि०)
सुघार (वि०)	=	सुगठन (वि०)
सौतिनि (सं०)	=	सपत्नी, सतिन (सं०)

हिन्दी वाक्य-विन्यास के प्रभाव के कारण बँगला वैष्णव-पदावलियों की भाषा की प्रकृति में विकार उत्पन्न हुआ है यह नीचे के उदाहरणों से स्पष्ट है —

पद	पदकर्ता	प्रसंग	पद संख्या
मससात अम्हात, सयात मलमात	कृष्णदास	४६४ सा० प० पुथि	१४४
मसि रि होत मनहुँ	जगतदास	गौ० प० त० पद	२७०
मानु परम रंगहासि स्याम रसिक-राज	नरहरि चक्रवर्ती	भ० र०	पृ० ४२०
काहां की काहां पायो ब्रजेन्द्रनन्दन	कृष्णदास कविराज	चै० च० मध्यलीला प्र० खंड दूसरा परि०	१४

कुछ वाक्य हिन्दी के ऐसे हैं जो ज्यों के त्यों आये हैं जैसे—

पद	पदकर्ता	प्रसंग	पद संख्या
आरति जय वृषभानु किशोरी	परमानन्द	प० क० त० पद	२८२८
आरति युगल किशोरकि कीज	"	"	"
ए दुहुं मंगल आरति कीजै नयने-नयने निरखि सुख लीजै	रामराय	"	२२४४
ए धनि मानिनि मान निवारो	ब्रजहरिदास		१४६९
गोविन्द मुखारविन्द निरखि मनविचारों	सूरदास	"	१०८६
जय मेरो प्राण सनातन रूप	नरहरि चक्रवर्ती	गी० च०	पृ० १४१
धीमो-धीमो मेरे मन चोरायोरा	शाह अकबर	गौ० प० त०	४।२।१६
तब मन हरि विमुखन के संग	माधो	प० क० त०	पद १०१२
देख सखि झूलत राधा श्याम	प्रसाद	"	१५६१
नवीन किशोर नवीन रंग में	शिवराम	"	१५२४
माधव मनमथ फिरत अहेरा	गोविन्ददास	पदमेरु	३१८
कबहुँ गावत कबहुँ नाचत			२०८०
समय जानि सब सखिगन धाई	नरहरि चक्रवर्ती	गी० च० चि० पद १५	पृ० २१५
होरि खेलत नवल किशोर रसवती नारी गदाधर कोर	शिवानंद	गौ० प० त०	३।१।४७

किन्तु काफी संख्या में ऐसे वाक्य हैं, जिनमें उनकी प्रकृति एवं प्रवृत्ति और विधेय तत्त्व एवं सम्बन्धतत्त्व हिन्दी से प्रभावित हैं। शब्दगत और वाक्य-विन्यासगत हिन्दी प्रभाव की भाँति हिन्दी पदगत प्रभाव का विवेचन अगले प्रकरण में किया जाएगा।

४

बँगला गौड़ीय-वैष्णव-पदावलियों में पदगत हिन्दी प्रभाव

भाषायी प्रभाव का एक रूप पदान्तरणों का आगम भी है। एक भाषा में दूसरी भाषा के कवियों के पदों का समावेश भी हो जाता है। इसी कारण बहुत-से हिन्दी पद बँगला वैष्णव-पदावलियों में सहजरूपेण मिल गए हैं। पदकर्ताओं ने उनको पदावलियों के अभिन्न अंग समझकर ग्रहण किये हैं। हिन्दी कवियों के जो पद बँगला में पड़े हैं उनकी भावधारा बँगला और ब्रजबुलि के पदों से भिन्न नहीं है। सब राधाकृष्ण विषयक हैं। वैष्णव-युग में इतना अधिक भाषा विषयक भेद भी नहीं था। जिस सरलता एवं सुविधा से वैष्णव आचार्य अथवा उनके अनुयायी बँगला ब्रजबुलि अथवा विद्यापति की पदावली को समझते थे उसी तरह वे हिन्दी के पदों को भी समझ लेते थे। संकीर्तन एवं गेय पदावली में बँगला पदों के साथ साथ हिन्दी पद भी गाये जाते थे।

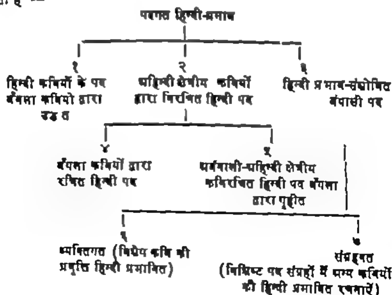
किन्तु, स्थूलतः इन पदों की दो श्रेणियाँ हो सकती हैं —

१　हिन्दी क्षेत्रीय कवियों के उद्धृत हिन्दी पद।

२　(क) बँगालियों एवं वैष्णवों कवियों द्वारा विरचित हिन्दी पद।

　(ख) बँगला के अन्य कवि जो हिन्दी से प्रभावित हैं।

इस पदगत प्रभाव को निम्न मानचित्र के द्वारा भली प्रकार समझा जा सकता है —



१ कुछ पद मूलतः हिन्दी-क्षेत्रीय कवियों द्वारा विरचित हैं। बँगला पदों से विचार साम्य के कारण एवं ब्रजबुलि के पदों से भाषायी सादृश्य के कारण बंगला पदावलियों में बहुत से हिन्दी पद घुलमिल गये हैं। और ये पद बँगला वैष्णव पदावलियों के सहअस्तित्वेण अभिन्न अंग हो गये हैं। आगे के मानचित्र द्वारा इस स्थिति को सरलता से समझा जा सकता है।

१ हिन्दी क्षेत्रीय कवियों के उद्धृत पद

क्रमांक	पदकर्ता	पद सं०	संग अथवा पृष्ठ[1]	ग्रंथ का प्रकाशन सन्[2]
१	सूरदास—३ पद	१	४६१ सा० प० पुथि २११, प्र० प्र० प० र०	बं०सा०प० कलकत्ता
		१	प० क० त० पद १०८६	बं०सा०पा० कलकत्ता सं० १३१८, प्रथम सं० प० प्र०प०र०
		१	४६६ पद रससार प० प्र० प० र०	पदकल्पतरु की पूरक
२	नंददास—४ पद	१	४१२ पद रससार ,, पृ० १११	,, ,
		१	४१६ ,,	,
		१	४१७ ,, ,,	,,
		१	४१८ ,,	
३	कृष्णदास—१ पद	१	४६२ , ,	,,
४	माधो (माधव)—४ पद	१	प० क०त० पद २११४	बं० सा०प०,कलकत्ता
		१	पद २१६२	सं०१३१८,प्रथम सं०
		१	पद २११८	,
		१	पद ३०१२	,, ,,
५	गोपाल भट्ट या गोपालदास ३ पद	१	,, पद १०८८	,, ,,
		१	, पद २११८	,,
		१	,, पद	,,
६	सुन्दर कवि—१ पद	१	४६४ सा० प० पुथि १७४	,,
७	आयरमोआलि १ पद	१	प० क० त० पद २८१४	,,
८	नृप रघुनाथ—१ पद	१	४४१सा०प०२०१पुथि१४१	,,
९	भक्तकवि व्यासजी २	१	भ० र० पृ० ४०१	भ० र०
		१		,,

१ देखिये—संकेत रूपों के लिए सांकेतिक चिह्न।

२ ,, ,, ,,

अब इनके कुछ उदाहरण और विवेचन देना आवश्यक है[1]।

१ सूरदास (१५३५–१६३८ वि० सं०)

हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि सूरदास के कुछ पद बंगला-वैष्णव-पदावलियों के अभिन्न अंग बन गये हैं हिन्दी से बंगला में उच्चारण भेद होने के कारण उनके पदों में कुछ विकृति आ गयी है उदाहरणार्थ—

बंगला पाठ —

देखनु एकहि अद्भुत राग, युगल कमल पर गजवर क्रीरत—१
तापर सिंह करत अनुराग तहिपर सरवर तापर गिरिवर—२
गिरि पर फूल कंज पराग, रुचिर कपोत बसई तहि उपर—३
ताहि अमृत फल लाग, फल पर पुहुप पुहुप पर पल्लव—४
तापर शुकपिक मृग मद काग, खंजन धनुष चन्द्रमा ऊपर—५
कबहुँ न करत विराग सूरदास प्रभु रसिक-शिरोमणि—६
ताकहुँ सिन्धु—सोहाग (४६८, सा० प० २११ पुथि)

बंगला का यह पद 'सूरदास' का ही पद है इसमें संदेह नहीं किन्तु कितने ही विकारों से युक्त हो गया। इसका मूल हिन्दी पाठ यों है—

हिन्दी पाठ :—अद्भुत एक अनूपम बाग। १

जुगल कमल पर गजवर क्रीड़त तापर सिंह करत अनुराग—२
हरिपर सरवर सर पर गिरिवर गिर पर फूले कंज पराग—३
रुचिर कपोत बसे ता ऊपर अमृत फल लाग—४
फल पर पुहुप पुहुप पर पल्लव तापर सुकपिक मृग-मद-काग—५
खंजन धनुष चन्द्रमा ऊपर ता ऊपर एक मनिधर नाग—६
अंग-अंग प्रति और और छवि उपमा ताकी करत न त्याग—७
सूरदास—प्रभु पियो सुधारस मानौं अधरन के बड़भाग।

(सूरदास—सू० सा० पद २७२८)

अब इन दोनों की तुलना से बंगला पद में विकृतियों को भली प्रकार समझा जा सकता है—इसके लिए यह तालिका दी जाती है[2]।

---

१ देखिये—हिस्ट्री आव ब्रजबुलि लिटरेचर, पृष्ठ १७५।

२ कुछ शब्दों का रूपान्तर तो लिपि दोष के कारण विदित होता है। 'राग' बाग के लिए रूपान्तर नहीं माना जा सकता, बंगाली लिपि में (ब) और (र) में केवल बिन्दु का अन्तर है। लिपिक ने हिन्दी के 'ब' पर भूल से बिन्दु लगा दिया है ऐसे ही और स्थलों पर भी वास्तविक रूपान्तर न होकर लिपि दोष ही हो सकता है।

१	२	३	४
उच्चारण भेद से	आगम से	लोप से	रूपान्तर से
बंगला चरण—कमल	१ पेखनु	१ अद्भुत	६ सोहाग
हि० १ कमल	—	१ अनुपम	७ बड़भाग
बं० १ उपर	२ तहिपर	२ अनुराग	—
हि० १ पर	२ तापर	२ अनुराग	—
बं० १ नीरव	१ एकहि	—	—
हि० २ नीरज	१ एक	—	—
बं० ६ पहुँ	—	—	—
हि० ७ प्रभु	—	-	—

बंगला के संग्रहों में सूरदास नाम की छाप से एक ऐसा पद भी मिला है जो हिन्दी सूरसागर की प्रतियों में नहीं मिलता। यह पद यों है।

गोविंद मुखारविंद निरखि मन विचारों।
चन्द्रकोटि भानुकोटि, मदन-कोटि वारो ॥
सुन्दर कपोल लोल, पंकज दल नयना।
अधर बिम्ब मधुरहास कुन्दकलिक दशना ॥
मणि-कुण्डल मकराकृत श्रवण-मूल पुंजा।
केशर को तिलक बनो सोभे अलिपुंजा ॥
नव जलधार तड़िताम्बर गले बनमाला सोहे।
लीला नट सूर के प्रभु रूपे जग-मन-मोहे ॥

(प० क० त० १०८६) (एच० बी० एस०, पृ० १७१)

इस पद को पदकल्पतरु के संकलनकर्ता वैष्णवदास एवं डा० सुकुमार सेन सूरदास का प्रामाणिक पद मानते हैं। किन्तु हिन्दी सूरसागर में इसका न मिलना कुछ सन्देह पैदा कर सकता है पर यथार्थ यह है अभी तक सूरदास के समस्त पदों का संग्रह हो ही नहीं पाया। हो सकता है यह पद सूरदास का ही हो पर हिन्दी संग्रहों में न संकलित हो सका हो। एक संभावना यह भी हो सकती है कि यह किसी अन्य सूरदास का हो।

यही स्थिति नीचे संकलित दो पदों की भी है। इन पदों के संकेत के लिए प्रथम चरण ही यहाँ दिये जाते हैं :—

(१) "कानाइ आमारे नयमन मनमोहन राखल" एवं
(२) "झूमे मैंजि झूलन आइ किशोर बंशी बट तट सब सखि मोर।
झूलन नन्दकिशोर (४६१ पद रससार)

ये दोनों पद हिन्दी सूरसागर में नहीं मिलते। बंगला के संग्रहों में हैं, और बंगाल के विद्वानों ने इन्हें भी सूरदासकृत माना है। किन्तु यथार्थता संदिग्ध है जैसा कि अभी ऊपर बताया गया है।

२ नंददास (१५९० १६४३ वि०सं०[1])

अष्टछाप के प्रसिद्ध कवि नंददास के चार पद अप्रकाशित पद रत्नावली में मिलते हैं,[2] उनमें से एक इस प्रकार है —

झूलत नव नागरवर चंद्रानमि संग झुलहि झुलहि रुचि रुचे।
लटपटात कटहि बंधि भूषन मंद गावत धु व राग रचत रंगे॥
तार्थे तावे मधुर बोल भूलने नुपुर किंकिनि बोल
झनझिमि बरखै घोर घर गर घर बरखे घोर
वरिखत तहँ घोर घोर तड़ित चकित भये॥
झमकि झमकि झरत नीर, चातक पप बोलत कीर
डार झुक कदंब-कुल पु ज पु ज कुहकत सब कु ज कु ज
भमरी सखी पु ज गु ज पु ज सब गु ये कालिंदि-कूल कुसुम-पु ज
विविने बहत अति सुगंध पवन गमन गमन मंद मंद
हंस-नाद-सु ग हरि-मुख रस-विलास नन्ददास निज ही प्राण
पूरत काम रंगे।

(४१२ पदरससार अप्रकाशित-पद रत्नावली पृ १११)

३ कृष्णदास (१५५२–१६३२ ई०)[3]

अष्टछाप के कवि कृष्णदास का भी एक पद इस प्रकार है —

"झूलन लीला"
झूले झूले झूले स्याम वृन्दावन कु ज भवन में मोहन
रगहि रंग हिंडोर-आदि

(४६२ पदरससार)

---

१ अष्ट० सं० स पृ० २११-२६१।

२ शेष तीन पद इस प्रकार हैं —

(१) झूल-कु ज बिहारी संगहि नवल किशोरि आदि (४१६ पदरससार)

(२) देख धार न झूले अपने-प्यारि पियामहि झूले आदि-(४१७ पदरससार)

(३) झूलतध्वनि चन्द्रानमि नागर नटराज आदि (४१८ पदरससार)
झूलन लीला पर नंददासजी के जो पद हिन्दी में प्राप्त हैं उनमें ये पद भी नहीं हैं।

३ अष्ट ब० स० पृ० २५१ २५४।

४ माधो (माधव)[1] (१५२३ ई०)

हिन्दी के कवि माधो के चार पद पदकल्पतरु एवं भक्ति रत्नाकर में मिलते हैं। वे इस प्रकार हैं[2]—

जय जय रूप महारस सागर।
दरशन परशन बचन रसायन प्रानबहुके पागर॥
अति गंभीर धीर करुणामय प्रेम भकतिक आगर।
उज्ज्वल[3] प्रेम महामणि प्रकटित हैन गौड़ बैरागर॥
सतगुन-मण्डित पण्डित रंजन वृन्दावन-निज-नागर।
किरित बिमल यश गुनतहि माधो सतत रहल हिये जागर॥[4]

(प० क० त० पद २३६५)

---

१ एक माधवदास का परिचय भक्तमाल में मिलता है जैसे—

जिते ब्यास मनो प्रकट ह्वै जन को हित माधो कियो—छप्पय ७० पृ०६६१

श्री सतीशचन्द्र राय 'पदकल्पतरु' के पाँचवें खण्ड में पृ० १६२ पर इनको हिन्दी का कवि मानते हैं एवं श्री जगद्बंधु भद्र के मत का समर्थन करते हैं— माधो भनिताए पदगुलि व्रजमण्डलेर प्रचलित व्रजभाषा सुतराम् ताहाके ऐ प्रदेशे लोक बलियाई मने हय। माधव नामेर अपभ्रंश मामटी जो हिन्दुस्तानेर विशेषत्व (गौ० प० त० भूमिका पृ०२२७)

डा० जार्ज ग्रियर्सन ने भी माधोदास नाम के कवि को व्रजभाषा का कवि माना है और उसका जन्मकाल १५२१ सन् दिया है (वर्नाक्युलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान।)

डॉ० सुकुमार सेन भी इन्हें हिन्दी का कवि मानते हैं। ग्रियर्सन का उल्लेख करते हुए उन्होंने यह सन्देह भी प्रकट किया है कि क्या ग्रियर्सन के माधोदास ये ही माधो हैं।

२ माधो के चारि पदों के यहाँ प्रारम्भिक चरण दिये जाते हैं। ये पद भी हिन्दी (व्रजभाषा) के हैं।

(१) जब कलित रूप शरीर ना धारत—(माधो प०क०त० पद २३६४ भ० र० पृ० ५७२)

(२) धन्य गोकुल धन्य मथुरा धन्य मधुकुल-अवतरी—(माधो प०क०त० पद २६६८)

(३) नैन मन हरि-त्रिभुवन के संग—(प०क०त० पद ३०३५)

देखिये—सूरदासजी का भी एक पद इससे मिलता जुलता है—

रह्यो मन हरि त्रिभुवन के संग (सूरदास सु० सा ३३२)

३ पाठ "उज्ज्वल"।

४ पाठ "जागर"।

५ गोपाल भट्ट[1] या गोपालदास (१५०६ १५४२ वि० १४२५ १५०० शकाब्द)

ये गोपाल भट्ट न तो हिन्दी क्षेत्रीय कवि हैं न बंगाली क्षेत्रीय किन्तु ये दाक्षिणात्य-ब्राह्मण थे। दाक्षिणात्य होते हुए भी चैतन्य मत में दीक्षित हो ये बंगाली वैष्णव माने जाने लगे। इनके पदों का समावेश बंगाली वैष्णव-पदावलियों में हुआ है। नीचे जो पद दिया जा रहा है वह इनकी हिन्दी-कृति तो है, पर स्पष्टतः बंगाली व्याकरणयुक्त है। इसी कारण इन्हें इस प्रसंग में स्थान दिया गया है। उदाहरणार्थ इनका एक पद इस प्रकार है[2] —

---

१ देखिये—वृन्दावन की माधुरी हम मिलि आस्वादन कियो।
      सहस राधारमन भट्ट गोपाल उजागर—
(हि० म० खंड १४ पृ० २०८)

हृषीकेश भगवान विपुल कौतुक रस सागर
सार्वभौम जगन्नाथ लोकनाथ महामुनि मधु श्री रंग
कृष्णदास पंडित उभै अधिकारी हरि अंग
घमंडी जुगलकिशोर भृत्य भूगर्भ जीव दृढ़ ब्रत लियो
वृन्दावन की माधुरी हम मिलि आस्वादन कियो।

अथवा—

अष्ट म० स पृ ११ १७
सौ० ए० के हि पं म० कवि पृ० ४७
प० क० त० पद पृ १०।

२ वृषभानु-नन्दिनि मनमोहन केमन लागि बलि—
(प० क० त० पद २७११)

अंतिम पद गोपालदास की भणिता के नाम से है। पदकल्पतरु के संपादक श्री सतीशचन्द्र राय इस पद को भी गोपाल भट्ट का ही मानते हैं। पदकल्पतरु पंचम-खण्ड (परिशिष्ट) में मिलते हैं—गोपालदास की भणिता के साथ पाँच पद पदकल्पतरु में उद्धृत हुए हैं। उनके बीच में २९९९ संख्यक पद बंगाल की ब्रजबुलि का नहीं है सोलहवीं शताब्दी की विशुद्ध ब्रजभाषा का है। बंगाली पदकर्ताओं के निकट ब्रजभाषा में कविता करना कुछ कठिन था तो हम इस पद को भी वृन्दावनवासी षड़-गोस्वामियों में अन्यतम गोपाल भट्ट गोस्वामी की रचना ही अनुमान करते हैं पद इस प्रकार है —

श्री राधे कृष्ण गोविंद हरे।
गोपीनाथ मदन-मोहन वर— (प क० त० पद २९९९)

देखिरि सखि कदल नयन कुञ्ज में विराज हैं।
वामेते किशोरि गोरि, अलस अंग अति किशोरि
हेरि श्याम-वयन चंद मंद, हास हैं।
घनी घनी बाहु भीड़ पुलक गात अति निबीड़
प्रेम-तरंगे हरखि पड़त, कदल मधुपर्संग हैं।
धारि, शुक, पिकु करत गान भमरा भमरि धरत तान
मुनि मनि मनि पढि बैठत, चोर चपल जात हैं।
श्री गोपाल भट्ट भाष, वृन्दावन कुञ्जे वास
श्यम सपन नयन हेरि, मूसल मन प्राप हैं।
(प० क० त०, पद १०८८)

६ सुन्दर कवि[1]

भक्तिकाल के फुटकर रचनाकारों में सुन्दर-शृंगार के लेखक सुन्दर कवि का एक पद अप्रकाशित पद रत्नावली में मिलता है वह बंगला और हिन्दी-पाठ भेद के साथ इस प्रकार है —

बंगला पाठ —

अलसात अन्मात लगे लजगात किधौं तुतराहु बोलत हूँ
कवि सुन्दर उत्तर लों गुन उत्तर एतमहु लौं करे प्रभ हूँ।
उनसे कहु क्या कहिये सजनी, उपने नहि लाज भई कबहूँ॥
उनमें सखि औषद है सबकि, पत लोभा औषद नहि कहूँ।
(४६४ सा० प० पूथि १४४)

हिन्दी पाठ —

अरसात अन्मात लगे लजगात (किती) तुतरात सुबोलत हूँ।
कवि सुन्दर अनहि और सुनो इतने पर सौंह करैं प्रभ हूँ॥
तिनसों न कहा कहिये जिनके सुपने हूँ न लाज भई कबहूँ।
जग में सखि औषधि है सबकी पै स्वभाव की औषधि नाहीं कहूँ॥[2]
(हि० म० पृ० १०३)

७ आगरवासी[3] (आगरप्रोआलि)

आगरवासी के सम्बन्ध में यह निश्चितरूपेण नहीं कहा जा सकता है कि

---

१ हि० सा० इ० पृ० २११।

२ इन दोनों पदों की तुलना से यह विदित होता है कि बंगला के क्षेत्र में हिन्दी पद को किस प्रकार अपनाने की चेष्टा की गयी है।

३ देखिये—सा० प० प० २ संख्या सं० १३२६ 'प्राचीन पदार्ह्सगण' शीर्षक प्रबंध तथा प० क० त० पं० सं०, पृ० २१।

यह हिन्दू या मुसलमान कवि था अथवा मिश्री है। हिन्दी-साहित्य के इतिहास में मायरस्वामी नामक किसी कवि का नाम नहीं मिलता है। इनके दो ब्रजभाषा के पद वैष्णव पदावलियों में प्राप्त हुए हैं वे इस प्रकार हैं —

प्रिया मुख देखो स्याम नेहारी।
कही ना जाति आनन की शोभा रही बिचारी॥
है देख प्रीतम प्यारिक सोहावे।
स्वच्छे नील स्याम देह ललित साथ मायकैत
पीतवर पट पीत नील अतिशय मधुराये॥
कांचन के पदुम नाम भाँति भाँति रावलमाल
निरखत नवनारीबिर पलक नाहि लावे॥
कुंज में रस-पुंज केलि साथ पायोपे बाढ़ि प्रीति
[illegible] पीयुष ताम्बुल पाइ आगरसोआमी गावे।
(प० क० त० पद २८१४)

८ व्यासजी (१६६७ वि० स०)

हरिराम व्यासजी के हिन्दी पद 'भक्ति-रत्नाकर' में प्रवेश पा गये हैं वे इस प्रकार हैं[1] —

बँगला उच्चारण को देखने से तो यह विदित होता है कि यह कोई 'मरवाल' है। किसी 'मरवाल' के रचित ये पद हैं। फिर भी यह एक संभावना मात्र है। निश्चय पूर्वक कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

१ व्यास जी के पद का हिन्दी पाठ इस प्रकार है —

ऐसे ही मेरे प्राण सनातन रूप
भक्तिन की गति दीपक जैसो, लोक-पथ के भूप
(भक्तकवि व्यासजी पृ० ११४)

उनके अन्य पद बँगला और हिन्दी ग्रन्थों में किस प्रकार हैं —

जय मेरे साधु शिरोमनि रूप सनातन
जिनके भक्ति एकरस निबहि। प्रीति कृष्ण राधातन
(भ० र०, पृ० ४७३)

साधु सिरोमनि रूप-सनातन।
जिनकी भक्ति एक रस निबही प्रीति कृष्ण राधा तन
(भक्तकवि व्यास जी, पृ० ११८)

अब मेरी प्राण सनातन रूप ।

अगतिन के, गति बोध भाया; योग यश के रूप ।
वृन्दावन के सहज माधुरी प्रेम सुधा के कूप ।
करुणा सिन्धु अनाथ बंधु, भक्त सभा के भूप ।
भक्ति भागवत, मतहि आचरन कुशल सुचतुर अनूप ।।
भुवन चतुर्दश विदित विमल यश रसना के रस यूप ।
चरन कोमल कमल रज छाया मोहत कलि रवि धूप ।
व्यास उपासक, सदा उपासे राधा चरन अनूप ।।

(स० र० पृ० ५७१)

यहाँ तक हमने उन पदों और पदकर्त्ताओं का उल्लेख किया है जो बंगाली वैष्णवों को प्रिय थे और जिन्हें उन्होंने अपनी पदावलियों में स्थान दिया है। ये पद जैसे उनके ही हो गये हैं। और जैसे इन पदों के माध्यम से हिन्दी ने उनके हृदय में ही स्थान प्राप्त कर लिया है और यह हिन्दी पद उनकी प्रेरणा के स्रोत बने हैं। हिन्दी के प्रभाव का यह रूप अत्यन्त भावपूर्ण है। आगे बँगला-वैष्णव पदकर्त्ताओं द्वारा हिन्दी के विरचित पदों का उल्लेख किया जा रहा है।

२ बंगाल वैष्णव-पदकर्त्ताओं के पद

दूसरे प्रकार के वे पद हैं जो अहिन्दी-क्षेत्रीय कवियों द्वारा विरचित हैं क्योंकि गौड़ीय-वैष्णव-सम्प्रदाय के बहु गोस्वामी तथा अन्य आचार्यगण व्रजमण्डल में निवास करते थे। उनके अनुयायियों के दल के दल बहुधा मथुरा-वृन्दावन तीर्थ-यात्रार्थ आया जाया करते थे। वृन्दावन प्रवासी वैष्णव-महन्तों के बीच में किसी-किसी ने व्रज प्रभावतः व्रजबुलि एवं व्रजभाषा में पद लिखे थे।[1]

पहले कहा जा चुका है कि बंगाली-वैष्णवों का एक बड़ा तीर्थ-स्थान वृन्दावन था। अतः उस प्रदेश की भाषा के साथ भी उन पदकर्त्ताओं में घनिष्ठ अनुराग की वृद्धि हुई। कुछ पदकर्त्ता तो स्थायी रूप से वृन्दावन-वासी हो गये थे जिस प्रकार यह परम्परा आज तक जीवित है। कुछ तीर्थयात्रा के लिये आते थे और अपने प्रदेश को लौट जाते थे। किन्तु व्रजभाषा के सम्पर्क और प्रभाव से नहीं बच पाते थे। बँगला पदों के साथ हिन्दी पदों की रचना भी स्वतः ही करने लगते थे। इस प्रकार बहुत हिन्दी पद बंगाली वैष्णव पदकर्त्ताओं द्वारा विरचित हैं। बंगाली-वैष्णव पदावलियों में जो गौरवपूर्ण स्थान बँगला पदों का है, वही स्थान हिन्दी पदों का भी है। वे बँगला साहित्य की स्थायी निधि बन गये हैं। इस प्रकार हिन्दी प्रभाव

१ वृन्दावन-प्रवासी वैष्णव महान्तदेर मध्ये ओ कह कैह पद लिखियाछिलेन तबे प्रभावत व्रजबुलिते एवं व्रजभाषाय। (डा० सुकुमार सेन-बां०सा०इ०, प्र०खं०, पृ० ३२४)

की परम्परा गौड़ीय वैष्णवों में मध्यकाल से लेकर वर्तमान काल तक विद्यमान है। इसको हिन्दी का वास्तविक एवं आन्तरिक स्थायी प्रभाव कहा जा सकता है।

गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय के वैष्णव भी इसके अपवाद नहीं हैं। ब्रज के प्रभाव के कारण बंगला कवि या ब्रजबुलि के पदकर्ता ब्रजभाषा में भी कविता करने लगते थे। क्योंकि जैसा भाषायी वातावरण होता है उसके अनुसार ही कवि काव्य-रचना करने लगते हैं। अतः इस काल में बंगाली चैतन्य-सम्प्रदाय के आचार्यों एवं अनुयायियों में भाषा की त्रिविध-धारा बह रही थी।

यह कहना सरल नहीं है कि कितने बंगाली या अहिन्दी-क्षेत्रीय चैतन्य-मतानुयायी वैष्णवों ने हिन्दी के पदों की रचना की है। साथ में यह कहना भी कठिन है कि संख्या में कितने पद हिन्दी में विरचित हैं और अमुक कवि ने कितने पदों का सृजन किया है। प्रस्तुत प्रबंध में कम महानुभाव पदकर्ताओं के कवित्व पर निम्न चित्र द्वारा एक विहंगम-दृष्टि डाली गई है।[1] यहाँ कुछ ऐसे बंगाली पदकर्ताओं

क्रमांक	पदकर्ता	पद सं०	प्रसंग अथवा पृष्ठ	ग्रंथ का प्रकाशन सन्
१	कृष्णदास—४	१	प० क० त० पद २८११	बं०सा०प० १३१५बं०
		१	" पद २८६०	" "
		१	" पद २८११	"
		१	पद १०८६	" "
२	कृष्णकांत उनका १	१	" पद २८११	"
३	परमानन्द—३	१	पद ११८३	" "
		१	पद २८३८	" "
		१	पद २८०१	"
४	रघुनाथदास—४	१	" पद २१८०	" "
		१	पद २४६७	"
		१	" पद २८११	" "
५	रामराय—१	१	" पद २८४४	" "
६	राधावल्लभदास—१	१	श्री प० त० ११३१७	जगद्बंधु भद्र बं०सा०प० १३१० बंगाब्द
७	शिवराम—१	१	प० क० त० पद १३३७	बं०सा०प० १३१५ बं०
८	रोहिनीनंदनदास—१	१	पद ७७०	"
९	अकबर शाह—१	१	गौ० प० त० ४।२। ९	१३१० बंगाब्द
१०	घनश्यामदास—१	१	" ३।११।०	" "

१ इस संबंध में हिन्दी के बंगाली-वैष्णव कवि' श्री सुदर्शन-भाद्र १३३७ बंगाब्द के लेख में भी यह बात है।

के नाम दिये जाते हैं जिन्होंने ऐसी भाषा में पद रचना की जो या तो यथार्थतः ब्रज भाषा थी या ब्रजभाषा के अत्यन्त निकट थी[1] ।

उक्त कवियों का कुछ विस्तृत विवरण यहाँ दिया जाता है —

१ कृष्णदास[2]

कृष्णदास ने चार ब्रजभाषा के पद ब्रजबुलि की रंगीनी के साथ लिखे हैं वे इस प्रकार हैं —

जय राधे श्री राधे कृष्ण श्री राधे जय राधे ।
नंदनन्दन जय भानु-दुलारी सकल गुण अगाधे ॥
नव-घन-सुन्दर-नयोल किशोरी निज गुण शीतल साधे ।
चांचर केशमयोर शिखंडक कुंचित केशिनि बांधे ॥
पीताम्बर-धर मोहे नील शाड़ि धन सौदामिनि राधे ।
जानु-प्रलम्बन-माला-विराजित राइ वक्षे मोतिम साजे ॥
मरकित बरनो मंजित रंजित कंचन-बरन साजे ।
कृष्णदास भने श्री वृन्दावने युगल-किशोर विराजे ॥[3]

(प० क० त० २८५६)

---

१ ब्रजभाषा पदावली एम वैष्णव एन्थोलोजीज हिस्ट्री आफ ब्रजबुलि लिटरेचर उक्त सूची का आधार है ।

२ हि० बु० लि० पृ १०१ तथा १७६, प० क० त० पंचम खंड पृ० ६६ ।

३ शेष तीन पदों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —

(१) जय राधे कृष्ण गोविन्द गोपाल
गिरिवरधारी कुंज विहारी, ब्रज मोहन नंदलाल
(कृष्णदास प० क० त० पद २८६०)

\+ + +

(२) जय राधा गिरिवरधारी ।
नंदन मंदन वृषभानु-कुमारी ॥ (कृष्णदास प० क० त० पद २८६१)
वी० सा० इ० पृ० १२१ ।

तथा (३) अंतिम पद दीन कृष्णदास' के नाम से है । यह दीन कृष्णदास' कोई अन्य कवि हैं या प्रस्तुत कृष्णदास से अभिन्न हैं निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता । यह पद इस प्रकार है —

तोमरो जय गौरचन्द्र नागर-बनयारि ।
नवद्वीप इन्दु करुणासिन्धु भक्त-वत्सलकारी—।

(दीन कृष्णदास प० क० त० १०९५)

२ कृष्णकांत तनया[1]

कृष्णकांत तनया का एक पद मिलता है जो इस प्रकार है —

नागरि नागर सम्पुन-सागर आनन्द सागरे भासि
सुभग विलोकन भाव सुधुवन वचनहि रंग-तरंग परकासि
सखि हे किये इह अपरूप रंग।
बाहुनि बाह्योनि अंग ओड़ायनि नाम्योनि एकहि संग ॥
श्यामर काय सचाहे हिलायत बात मधित घन-आस
नगरक-गौरि सुअंग सुकम्पई ता सँगे जैसन बिजुरिक भास ॥
परमत भाल विलास मिलायोन शोभा वरनि न होय।
ए कृष्णकांत नितांत निचारल निविविधि अन्तर भागि रहुजय ॥
(प० क त १८८६)

३ परमानंद[2]

परमानंद के छ पद ब्रजभाषा के मिलते हैं,[3] जिनमें से एक इस प्रकार है —

---

१ हि० बु० लि० पृ० १७५।

२ परमानन्द कई हैं किन्तु यहाँ जिनके पद दिये गये हैं उनका उल्लेख 'चैतन्य चरितामृत' में परमानंद सेन या दास के नाम से मिलता है।

प० क त० प० खं पृ० १४६। वाँ सा० इ० प्र० खं० पृ० २६८।

इन परमानन्द के सम्बन्ध में डा० सेन ने पृ १७६ पर जो पाद टिप्पणी दी है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इनके सम्बन्ध में इन्हें भ्रम रहा। उसी भ्रम में इन्होंने इसी ग्रंथ के पृष्ठ ९१ पर इन्हें परमानन्द कवि कर्णपूर मान लिया। इनकी ९ ब्रजबुलि कविताओं का उल्लेख पृ ९२ पर उन्होंने किया है। पृ० १७६ पर इनका अत्यन्त जोरदार कथन यह है कि 'कर्णपूर' ने देशी भाषा में कुछ भी नहीं लिखा और इन्होंने अपनी रचनाओं में कभी 'परमानंद' का उपयोग ही नहीं किया। अतः इसके बाद उल्लेख को अधिक प्रामाणिक मानना होगा। अत ये परमानन्द १५२७ वाले कर्णपूर परमानंद नहीं। न ये वल्लभाचार्य जी की अष्टछाप वाले परमानंद हैं। डॉ० सेन के अनुसार ये वे परमानंद भट्टाचार्य हैं जो रूप गोस्वामी के शिष्य थे और वृन्दावन में रहते थे। एक परमानंद गुप्त का भी संकेत चैतन्यदेव के अनुयायियों में मिलता है। संभावना है कि इन्होंने भी कुछ ब्रजबुलि पद रचे। परमानंद के, यहाँ जो पद दिये जा रहे हैं वे किसी एक ही परमानन्द के हैं यह ऐसी स्थिति में निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।

आजु बनि नव अभिषेक गोविन्द की।
परमानन्द प्रेम-सुख-कन्दहि ॥
झलकत नील-नलिनि मुख-सोहा।
हेरइते चकित भुवन-मन-मोहा ॥
गोरस बनि घृत हलदिक नीरे।
गागरि भरि भरि ढारइ सिरे ॥
बाजत घंटा ताल मृदंग।
जय देइ सुर नारीगण रंग ॥
बलि बलि जातहि चरणारविन्द।
परमानन्द के पहुँ श्रीगोविन्द ॥
(परमानन्द प० क० त० पद १२८५)

४ रघुनाथदास[1] (१५०६–१५८२)

रघुनाथदास का ब्रजभाषा का एक पद मिलता है। इनके दो पद और भी हैं पर वे ब्रजबुलि में हैं। ब्रजभाषा का एक पद इस प्रकार है[2] —

हरत सकल संताप जनम को मिटत तलप यम कालहि।
आरति किये मदनगोपालहि ॥
गोघृत रचित कपूरहि बाति झलकत कांचन थारहि।
घंटा ताल मृदंग झांझरि बाजत वेणु विसालहि ॥
चन्द्र-कोटि ज्योति भानु-कोटि छवि मुख शोभा नंदलालहि।
मयूर-मुकुट पिताम्बर सोहे उरे वैजयन्ती मालहि ॥
चरण कमल पर नूपुर बाजेरि कुसुम गुलालहि।
सुन्दर लोल कपोलक छविसों निरखत मदनगोपालहि ॥

---

१ इनके नाम के शेष दो उपलब्ध पदों के आरम्भिक चरण नीचे दिये जाते हैं—
(१) आरति युगल किशोरि की कीजे
तन मन धनहुँ निछावरि दीजे।—(प० क० त० पद २८६८)
(२) आरति जय वृषभानु कुमारि।
झलकत मुख-शोभा उजियारी ॥ (प० क० त० पद २८७१)

२ प० क० त० प्र० ख० पृ० १९७। हि० वृ० सि० पृ० ४२।

३ 'ब्रजबुलि' के दो पदों का संकेत यहाँ दिया जाता है।
जय जय श्रीकृष्णचैतन्य दयामय पद्मावति-रति कांत।
राधा माधव-प्रेम भकति-रस उज्ज्वल मुरति नितांत ॥ (प०क त० पद २१८७)
+ + +
चन्द्र वदनि धनि आदि (प० क० त० पद २४९७)

२ कृष्णकांत तनया[1]

कृष्णकांत तनया का एक पद मिलता है जो इस प्रकार है —

नागरि नागर सबगुन-आगर आनन्द सागरे भासि
सुमुख विलोकन भाव-मुकुलन बचनहि रंग-तरंग परकासि
सखि हे किये इह अपरूप रंग ।
बाहुलि माझोलि भ्रम मोडायलि माझोलि पूछहि संग ।।
श्यामर काय अथाहे हिल्लोलत भाव जडित बन-माल
कनक-गौरि तनय सुकन्या-सा लगे बैंधल विद्युरिक जाल ।।
परतह लाल विशाल मिलायोल शोभा बरनि न होय ।
ए कृष्णकांत नितांत विचारल निधिनिधि अन्तर लागि रहुकय ।।
(प० क० त० २८८१)

३ परमानंद[2]

परमानंद के छः पद ब्रजभाषा के मिलते हैं[3] जिनमें से एक इस प्रकार है —

---

१ हि॰ बु॰ लि॰ पृ॰ १७५ ।

२ परमानन्द कई हैं किन्तु यहां जिनके पद दिये गये हैं उनका उल्लेख 'चैतन्य चरितामृत' में परमानन्द सेन या दास के नाम से मिलता है ।

प० क० त० पं० सं० पृ० १४६ । बां० सा० इ० प्र० सं० पृ० २१८ ।

इन परमानन्द के सम्बन्ध में डा० सेन ने पृ० १७६ पर जो पाद टिप्पणी दी है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि इनके सम्बन्ध में इन्हें भ्रम रहा । इसी भ्रम में इन्होंने इसी ग्रंथ के पृष्ठ ९१ पर इन्हें परमानन्द कवि कर्णपूर मान लिया । इनकी ९ ब्रजबुलि कविताओं का उल्लेख पृ० ९२ पर उन्होंने किया है । पृ० १७६ पर इनका अत्यन्त जोरदार कथन यह है कि 'कर्णपूर' ने ऐसी भाषा में कुछ भी नहीं लिखा और इन्होंने अपनी रचनाओं में कभी 'परमानंद' का उपयोग ही नहीं किया । अतः इसके बाद उल्लेख को अधिक प्रामाणिक मानना होगा । अतः ये परमानन्द १५२७ वाले कर्णपूर परमानंद नहीं । न ये वल्लभाचार्य जी की अष्टछाप वाले परमानन्द हैं । डॉ॰ सेन के अनुसार ये वे परमानंद भट्टाचार्य हैं जो रूप गोस्वामी के शिष्य थे और वृन्दावन में रहते थे । एक परमानंद गुप्त का भी संकेत चैतन्यदेव के अनुयायियों में मिलता है । संभावना है कि इन्होंने भी कुछ ब्रजबुलि पद रचे । परमानंद के, यहां जो पद दिये जा रहे हैं वे किसी एक ही परमानन्द के हैं यह ऐसी स्थिति में निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता ।

प्रातु बनि नव अभिषेक गोविन्द जी।
परमानन्द प्रेम-सुख-कन्दहि॥
झलकत नील नलिनि मुख-सोहा।
हेरहते अखिल भुवन-मन-मोहा॥
गोरस दधि घृत हरदिक नीरे।
गागरि भरि भरि ढारह सिरे॥
बाजत घटा ताल मृदंग।
जय देइ सुर नारीगण रंग॥
बलि बलि जाउँहु चरणारविन्द।
परमानन्द के प्रहुँ गोपीविन्द॥
(परमानन्द प० क० त० पद ११८१)

४ रघुनाथदास[1] (१५०६–१५८७)

रघुनाथदास का व्रजभाषा का एक पद मिलता है। इनके दो पद और भी हैं पर वे व्रजबुलि में हैं। व्रजभाषा का एक पद इस प्रकार है[2] —

हरत सकल संताप जनम को मिटत तलप यम कालहि।
आरति किये मदनगोपालहि॥
गोघृत रचित कपूरहि बाति झलकत कांचन थारहि।
घंटा ताल मृदंग झांझरि बाजत वेणु बिशालहि॥
चन्द्र-कोटि ज्योति भानु कोटि छवि मुख शोभा नंदलालहि।
मयुर-मुकुट पितांबर सोहे उरे बजयंती मालहि॥
चरण कमल पर नपुर बाजेहि कुसुम गुलावहि।
सुन्दर लोल कपोलक बलिसों निरखत मदनगोपालहि॥

१ इनके नाम के शेष दो उपलब्ध पदों के प्रारम्भिक चरण नीचे दिये जाते हैं —
(१) आरति युगल किशोरि की कीजै
तन मन धनहुँ निछावरि दीजै।—(प० क० त० पद २८१८)
(२) आरति जय वृषभानु कुमारि।
झलकत मुख-शोभा उजियारी॥ (प० क० त० पद २८७१)
२ प० क० त० प्र० ख० पृ० १६७। हि० कु० मि० पृ० ४२।
३ 'व्रजबुलि' के दो पदों का संकेत यहाँ दिया जाता है।
जय जय श्रीजयदेव दयामय पदमावति-रति कांत।
राधा-माधव-प्रेम भकति-रस उज्जल मुरति नितांत॥ (प०क०त० पद २१८७)
+ + +
चाद्र बदनि धनि ... भाविं (प० क० त० पद २४१७)

सुर-नर-मुनिगण करतहिं आरति भगत-वत्सल-प्रतिपालकि।
हूँ बलि बलि रघुनाथदास प्रभु मोहन गोकुल बालकि॥
(रघुनाथदास प० क० त० पद २८६६)

५ रामाराय

रामाराय का एक पद २८४४ संख्यक पदकल्पतरु में मिलता है।

६ राधावल्लभदास के विषय में[1] मतभेद है।

राधावल्लभदास का एक ब्रजभाषा का पद[2] मिलता है।

७ शिवराम[3]

शिवराम ने अनेक पद ब्रजबुलि में लिखे हैं जिनमें ब्रजभाषा का पुट भी है।[4] शिवराम का एक पद ब्रजभाषा का इस प्रकार है —

अमोल अमोल अमो रंग में। सुख कौतुकनि सब संगमें॥
रस माधुरि सब अंग में। रस गुम्फत प्रेम तरंग में॥
जहु ही यामिनि चमके दामिनि। मधुर भामिनि अलि धनि॥
सुखम आकाश बरिखे बादर। सुम्द सुम्बर गहिन गहनि॥
बरत मोर चकोर चातक। कीर कोकिल मतयनि॥
रटत दरदर लोये दादुर। झम्पुरझम्परे गरजनि॥
झामेमे छवि रि चोरि चोरि। रसकेरि झलक चोरि चोरि॥
चोरि चोरि चंद्र उपोग भामीज। बाजे पाखावज मि मि मिला॥
कमन कम नन कण् मा कायर नन नाप्रपथि नायरथि तिमि तिमि॥
वहु नृष्टि ठेरन पहिर सुयश ककते कझारि झनझनन॥
उघट बट घट धो तिम् तिम् धो तिम् तिम् तिम्।
धुन धुन लिति धि धि नन।
बाजे हू हू वीणा। स्वर मण्डल बांसरि बीना॥
भर बीन ताल प्रवीन सुरत प्रेम भरे हिया हरखनि।
मनि सिन्धु शरद-इन्दु। करत अमृत बरखनि॥
हंस सारस बरत पावस चाय चातक रस-धनि
बिहरे से बन शिवराम के प्रभु परम सुघड़ शिरोमणि॥
(शिवराम प० क० त० पद ११६७)

---

१ देखिये—प० क० त० पं० खं पृ० २००
तथा—हि० ब० बि० पृ० १६६। बं० सा० इ० पृ० ४४१।
२ गो० प० त० १।१।३७
३ हि० वि बि० पृ १३७ तथा बं० सा इ पृ० खं पृ० ४४४।
४ देखिये—प० क० त० पं० खं भू पृ० २१२।

७ नृप रघुनाथ या रघुनाथ राय[1]

नृप रघुनाथ का एक हिन्दी का पद अप्रकाशित पद रत्नावली में मिलता है यह इस प्रकार है —

चलिहु चलिहि गोमत ब्रजलालि, सखि आयायोगै आइ हो बिहाने ।
चलति बेसर लटन पलानि मोहन हार टूटि छिटराओ ॥
छिनहि यमुना छिटिक करि डोरि कनक लता गई पयोने झकोरि ।
मानि उठावत मुकतानि जोरि उलझन असके दयन हारि ।
हेरि ससिमुखी उठसि लजानि, नृप रघुनाथ के मनहि समानि ।
(५४१ हा० प० २०१ पुथि १४१)

८ रोहिनीनन्दनदास

रोहिनीनन्दनदास का एक पद ब्रजभाषा का मिलता है —

भज मन राधे राधे कृष्ण गोविन्द । जा को नामहि मुदित भव बन्ध
ए धुव धकर सनक सनातन साम्ब नाहि पायोपै अनत
जाको नामहि त्रिभुवन समाता अहर्निश पायोपे अनन्त ।
जाको नामहि नरवर मुनि जन करत धेयान ।
जाको नाम रटत नारद सदा भुवन फिरत कर गान ॥
वेदहि जाको जाकी यश गायोत करतहि नामकि मास
जाको नामहि पातिजन वचित रोहिणी नन्दन दास ॥

९ अकबरशाह

अकबरशाह का ब्रजभाषा का एक पद इस प्रकार है —

झीमो झीमो मेरे अलबेरा गोरा ।
नाचहि नाचत आपन रस भोरा ॥
ढोल करताल बाजे झिमि झिमि झिमिया ।
मधुर पखावज बाजे तिमि तिमि तिमिया ।
पद धुई बाजि बजु नवल नविया ।
फिर नाहि होयत अलगे मातुलिया ।
ऐसन गहुँके जाहु बलिहारि । शाह अकबर तेरे प्रेम भिकारी ॥
(गो० प० उ० ५।२।२९)

१ देखिये—अप्रकाशित पद रत्नावली की भूमिका तथा हिस्ट्री आफ ब्रजबुलि लिटेचर ।

१० घनश्यामदास[1]

घनश्यामदास का ब्रजबुलि और ब्रजभाषा मिश्रित पद इस प्रकार है —

को कहे अपरूप प्रेमसुधा निधि कोई कहत रस मेहु।
कोई कहत इह सोई कल्पतरु, मझु मने सन्देहु॥
पेखनु गोरचन्द्र अनुपाम। याचक जाक भुवन नाहि त्रिभुवने।
ऐछे रतन हरि नाम को एक तिन्दु बिन्दु नाहि जाचत।
परबस बरखि अपार मानस मनचि बहुत कल्पतरु।
जो कछु करुणा अपार, जाकु चरितामृत श्रुति पथे संचरु।
हृदय सरोवर पुर उमडई नयन अयन मय भूमहि।
होयत पुलक अंकुर नाचहि जाकु ताप सब मेटय।
ताहे कि थोर उपाम मन घनश्याम दास नाहि होयत।
कोटि कोटि एकु ठाम।

(गो० प० त० ३।१।१०)

इस प्रकार अनेक हिन्दी के पद बंगाली-वैष्णवों द्वारा विरचित हैं। आगे के प्रकरण में बंगाली पदों के साथ-साथ हिन्दी का कितना प्रभाव है, अर्थात् कवि विशेषगत और ग्रंथ-विशेषगत हिन्दी के प्रभाव का दिग्दर्शन है।

२ कुछ विशेष बंगाली गौड़ीय-वैष्णव पदकर्ता और उन पर हिन्दी प्रभाव

अन्य सुप्रसिद्ध बंगाली-गौड़ीय वैष्णव पदकारों पर भी हिन्दी प्रभाव पड़ा है। कई विशेष कवियों चैतन्य चरितामृत के लेखक कृष्णदास कविराज गोविन्ददास कविराज और नरहरि चक्रवर्ती आदि पर यह गंभीर प्रभाव स्पष्ट है। बँगला गौड़ीय वैष्णव पदावलियों में भी हिन्दी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अतः इनके विषय में कुछ प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है —

१ कृष्णदास कविराज (१४९७ १५८३ ई०)

कृष्णदास कविराज चैतन्य चरितकारों में सर्वश्रेष्ठ हैं। कृष्णदास कविराज द्वारा विरचित श्रीचैतन्यचरितामृत में हिन्दी प्रभाव के थोड़े उदाहरण मिल सकते हैं इसका कारण यह है कि इस ग्रन्थ की रचना वृन्दावन में हुई थी। अतः कुछ हिन्दी प्रयोग अनायास ही इसमें आ गये हैं। कुछ हिन्दी सर्वनामों और किंचित क्रिया रूपों में ग्रन्थ का कलेवर कहीं-कहीं कुछ-कुछ बदल गया है।

चैतन्य चरितामृत में हिन्दी प्रभाव के सम्बन्ध में बँगला साहित्य के सुप्रसिद्ध इतिहासकारों के मत द्रष्टव्य हैं। डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं कि वैष्णव समाज की कवित—बँगला भाषा उस समय ब्रजावली भाषा से मिश्रित हो गयी थी सुतराम्

1 देखिये—प० क० त० पं० सं० भू० पृ ८४ ८८
तथा श्री ख० इ० प्र० ब ,पृ ४०४४ इ।

जो लोग मुख से जो बोलते थे लेखनी से भी वही लिखते थे। चैतन्य चरितामृत ही इस स्थान पर दृष्टान्त है। दीर्घ काल से वृन्दावन में रहने के कारण कविराज गोस्वामी की बँगला वृन्दावनी (ब्रजभाषा) द्वारा इसी तरह प्लावित हो गई थी[१]।

डा० सुकुमार सेन लिखते हैं 'दीर्घकाल ब्रजवास के कारण कविराज की कलम से कुछ हिन्दी शब्द और प्रयोग आ गये हैं[२]। वास्तव में चैतन्य-चरितामृत में हिन्दी के कुछ शब्दों सर्वनामों विशेषणों एवं क्रिया रूपों का समावेश हुआ है। केवल कुछ हिन्दी शब्द ही हैं जो बँगला पदों को हिन्दी का शरीर प्रदान कर देते हैं उदाहरण स्वरूप कुछ शब्दों और क्रिया रूपों की बानगी इस प्रकार है[३] —

जैसे, तैसे, काहां तांहा ऐसे, कैसे, तैसे, जाहांके काहाँ जाहाँ जाहाँ करो धरौं, सेवौं इत्यादि—

---

१ वैष्णव समाजेर कवित बाँगाला तखन वृन्दावनी—भाषा मिश्रित हइयाछिल सुतराम् ताँहारा मुखे जाहा बलितेन लेखनीते ओ ताहाई व्यवहार करियाछेन। चैतन्य चरितामृत ए सम्बन्धे दृष्टान्त स्थलीय। दीर्घकाल वृन्दावने थाकाते कविराज गोस्वामीर बाँगला वृन्दावनी द्वारा एरूप प्लावित हइयाछिल।
(बँ० भा० सा० प्र० सं० पृ० ११०)

२ दीर्घकाल ब्रजवास हेतु कविराजेर कलमेर मुखे कुचित दुइ एकटी हिन्दी शब्द वा प्रयोग आसिया गियाछे येमन 'नाहि काँहा सो विरोध नाहि काँहा अनुरोध।
(बाँ० सा० इ० प्र० खं० प० २११)।

३ (१) अनंत स्फटिक यते एक सूर्य भासे।
तैछे जीवे गोविंदेर अंश प्रकाशे॥
(आदिलीला द्वितीय परिच्छेद १६ पृ० ११२)

(२) काहाँ करों काहाँ पाउ ब्रजेन्द्रनन्दन।
काहाँ मोर प्राणनाथ मुरली वदन।
(मध्यलीला प्रथम खंड दूसरा परिच्छेद १४ पृ० ४६)

(३) कहाँ ताहाँ कैसे रहे रूप सनातन?
कैसे रहे वैराग्य कैसे वा भोजन?
(मध्यलीला परिच्छेद १६ ११३ पृ० ७७४)

(४) हा हा सखि कि करि उपाय
काहाँ मरों काहाँ जायों काहाँ गेल कृष्ण पायों।
कृष्ण बिनु प्राण मोर जाय॥ (मध्य लीला)

१० घनश्यामदास[1]

घनश्यामदास का व्रजबुलि और व्रजभाषा मिश्रित पद इस प्रकार है —

को कहु अपरूप प्रेमसुधा निधि कोई कहत रस गेहु।
कोई कहत इह सोई कल्पतरु, मधु मने सन्देहु ॥
पेखहु गोरचन्द्र अनुपाम। जाचक जाक मूल नाहि त्रिभुवने।
ऐसे रतन हरि नाम को एक सिन्धु बिन्दु नाहि जाचत।
परसत चरणि सचार मानस अचल बहुत कल्पतरु।
जो कछु करुणा अपार कछु चरितामृत श्रुति पवे सेवक।
हृदय सरोवर पुर उमड़ई नयन अयन मत घुमहि।
होयत पुलक अंकुर, नामहि जात ताप सब मेटय।
ताहे कि कीच उपाय मन घनश्याम दास नाहि होयत।
कोटि कोटि एकु काम।

(गौ० प० त ३।१।१०)

इस प्रकार अनेक हिन्दी के पद बंगाली-वैष्णवों द्वारा विरचित हैं। आगे के प्रकरण में बंगाली पदों के साथ-साथ हिन्दी का कितना प्रभाव है अर्थात् कवि विशेषगत और ग्रन्थ-विशेषगत हिन्दी के प्रभाव का दिग्दर्शन है।

२ कुछ विशिष्ट बंगाली गौड़ीय वैष्णव पदकर्ता और उन पर हिन्दी प्रभाव

अन्य सुप्रसिद्ध बंगाली गौड़ीय वैष्णव पदकारों पर भी हिन्दी प्रभाव पड़ा है। कई विशेष कवियों चैतन्य चरितामृत के लेखक कृष्णदास कविराज गोविन्ददास कविराज और नरहरि चक्रवर्ती आदि पर यह गंभीर प्रभाव स्पष्ट है। बँगला गौड़ीय वैष्णव पदावलियों में भी हिन्दी प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। अतः इनके विषय में कुछ प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है —

१ कृष्णदास कविराज (१४९७ १५८३ ई०)

कृष्णदास कविराज चैतन्य चरितकारों में सर्वश्रेष्ठ हैं। कृष्णदास कविराज द्वारा विरचित श्रीचैतन्यचरितामृत में हिन्दी प्रभाव के थोड़े उदाहरण मिल सकते हैं इसका कारण यह है कि इस ग्रन्थ की रचना वृन्दावन में हुई थी। अतः कुछ हिन्दी प्रयोग अनायास ही इसमें आ गये हैं। कुछ हिन्दी सर्वनामों और किंचित क्रिया रूपों में ग्रन्थ का कलेवर कहीं-कहीं कुछ-कुछ बदल गया है।

चैतन्य चरितामृत में हिन्दी प्रभाव के सम्बन्ध में बँगला साहित्य के सुप्रसिद्ध इतिहासकारों के मत द्रष्टव्य हैं। डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं कि वैष्णव समाज की कथित—बँगला भाषा उस समय पश्चिमी भाषा से मिश्रित हो गयी थी सुतराम्

---

१ देखिये—ब ज सा० पं सं० मू० पृ ८४ ८८
तथा श्री सु० इ० प्र० ख० पृ० ४०४ ४०६।

जो लोग मुख से भी बोलते थे लेखनी से भी नहीं लिखते थे। चैतन्य-चरितामृत ही इस स्थान पर दृष्टान्त है। दीर्घ काल से वृन्दावन में रहने के कारण कविराज गोस्वामी की बँगला वृन्दावनी (ब्रजभाषा) द्वारा इसी तरह आक्रान्त हो गई थी[1]।

डा० सुकुमार सेन लिखते हैं "दीर्घकाल ब्रजवास के कारण कविराज की कलम से कुछ हिन्दी शब्द और प्रयोग आ गये हैं[2]। वास्तव में चैतन्य-चरितामृत में हिन्दी के कुछ शब्दों सर्वनामों विशेषणों एवं क्रिया रूपों का समावेश हुआ है। केवल कुछ हिन्दी शब्द ही हैं, जो बँगला पदों को हिन्दी का शरीर प्रदान कर देते हैं उदाहरण स्वरूप कुछ शब्दों और क्रिया रूपों की बानगी इस प्रकार है[3] —

जैसे, तैसे, काहां तांहा ऐसे, कैसे, तैसे, काहांके काहां काहां, काहां करो मरी, सेवो इत्यादि—

---

१ वैष्णव समाजेर कवित बाँगाला तखन वृन्दावनी—भाषा मिश्रित हइयाछिल सुतराम् ताँहारा मुखे याहा बलितेन लेखनीते ओ ताहाई व्यवहार करिताछेन। चैतन्य चरितामृत ए सम्बन्धे दृष्टान्त स्थानीय। दीर्घकाल वृन्दावने थाकाते कविराज गोस्वामीर बाँगला वृन्दावनी द्वारा एरूप आक्रान्त हइयाछिल।

(बँ० भा० सा० प्र० स०, पृ० १६२)

२ दीर्घकाल ब्रजवास हेतु कविराजेर कलमेर मुखे कुचित [illegible] एकटी हिन्दी शब्द वा प्रयोग आसिया गियाछे येमन 'नाहि काँहां सो विरोध नाहि काँहां अनुरोध'।

(बाँ० सा० इ०, प्र० खं० पृ० २११)।

३ (१) अर्जन स्फटिक जैसे एक सूर्य भासे।
तैछे जीवे गोविन्देर अंश प्रकाशे॥

(आदिलीला द्वितीय परिच्छेद ११ पृ० ११२)

(२) काहां करों, काहां पाउ ब्रजेन्द्रनन्दन।
काहां मोर प्राणनाथ मुरली वदन।

(मध्यलीला प्रथम खण्ड द्वितीय परिच्छेद १६ पृ० ८२)

(३) कहँ काहां कैछे रहे रूप सनातन?
कैछे रहे वैराग्य कैछे या भोजन?

(मध्यलीला परिच्छेद १९,११२ पृ० ४४४)

(४) हा हा सखि कि करि उपाय
काहां करौं काहां जाऊँ काहाँ गेले कृष्ण पाऊँ।
कृष्ण बिनु प्राण मोर जाय॥ [illegible]

२ गोविन्ददास कविराज (१५३५–१६१३ ई०)

गोविन्ददास नाम के तीन-वैष्णव-पदकर्त्ता हैं[१] किन्तु हमारे अभीष्ट गोविन्ददास के जीवन-वृत्त के विषय में बड़ा विवाद है। मैथिल-विद्वान इनको मैथिली कवि मानते हैं[२] बंगाली विद्वानों में एक सज्जन को छोड़कर सब गोविन्ददास कविराज को बंगाली कवि मानते हैं[३]। किन्तु इस ऊहापोह में पड़ना अनावश्यक एवं अप्रासंगिक है किन्तु अंत में यह कहा जा सकता है कि भाषा ही कवि की परिचायक है गोविन्ददास कविराज की ब्रजबुलि भाषा बंगला की अपेक्षा हिन्दी या मैथिली के अधिक पास है, इस तथ्य को बंगाली-विद्वान[४] भी स्वीकार करते हैं। डॉ० सुकुमार सेन महोदय का मत है कि गोविन्ददास कविराज बंगाली कवि होते हुए भी बंगला भाषा में उन्होंने कविता नहीं की है[१]। यह स्पष्ट है कि गोविन्ददास कविराज विद्यापति की काव्य परम्परा के अनुयायी हैं। वे स्वयं लिखते हैं :—

विद्यापति पद-युगल सरोरुह-निस्यन्दित-मकरन्द।
तसु मझु मनसा मातल मधुकर पिवइत करु अनुबंध ॥

डा० सुकुमार सेन महोदय फिर लिखते हैं, "इस विषय में मैथिल कवि विद्यापति का कविराज के साथ बहुत मेल है। प्रधानतः गोविन्ददास कविराज की

---

१ गोविन्द चक्रवर्ती गोविन्ददास गोविन्ददास कविराज।
२ हि० मै० सि० प्रथम भाग पृ० २१४।
३ देखिये—नगेन्द्रनाथ गुप्त इनको मैथिली कवि मानते हैं, बं० सा० प० पृ० १३१२ बंगाब्द।
श्री सतीशचन्द्र राय एम० ए० डा० दीनेशचन्द्र सेन डॉ० सुकुमार सेन इनको बंगाली कवि मानते हैं क्रमशः —
श्री सतीशचन्द्र राय एम० ए०—प० क० त० पं० खं० भू० पृ० ११—८१।
डॉ दीनेशचन्द्र सेन बं० भा० सा० पृ० ३०० हिस्ट्री आफ बं० लि० पृ० ४६४।
डॉ० सुकुमार सेन बं० सा० प० प० १३३१ बं० हि० ब० लि० पृ० १०५,
बां० सा० इ० प्र० खं० पृ० ३२४—३३०।
४ वि० सा० प्र० भा० पृ० ११८—२०० तथा डा० सुकुमार सेन उनके १०
श्रीमा वाग्मीन सेन कलकत्ता के निवास स्थान पर वार्तालाप के प्रसंग में उन्होंने गोविन्ददास की भाषा को हिन्दी के अधिक पास माना है, श्री विष्णुपद भट्टाचार्य ने भी वैष्णव लाइब्रेरी में वार्तालाप के प्रसंग में गोविन्ददास की कविता को हिन्दी के अधिक निकट माना है।
हि० मु० सि० पृ० १०५, बां० सा० इ० प्र० ० खं० पृ० ३३६। वि० सा० पृ० ११८—१००।

गोविन्ददास कविराज ब्रजबुलि के अन्यतम कवि हैं। उनके लगभग ४५० पद पदकल्पतरु में संगृहीत हैं। उन्होंने विद्यापति की काव्य-शैली का अनुकरण भाव एवं भाषा दोनों रूपों में किया है। वास्तव में गोविन्ददास के विषय में तटस्थ एवं स्वतंत्र अनुसंधान की आवश्यकता है। बंगाली कवि होते हुए भी इनकी भाषा हिन्दी या मैथिली से अधिक मिलती जुलती है। इनकी ब्रजबुलि कविता और अन्य पदकर्ताओं की ब्रजबुलि कविता में आकाश-पाताल का अंतर है। अन्य पदकर्ता अपनी ब्रजबुलि कविता में बंगला शब्द, क्रिया एवं कारकों का समावेश करते हैं किन्तु गोविन्द कविराज के पदों से स्पष्ट है कि उनकी भाषा कुछ हिन्दी अथवा मैथिली के समरूप है। कुछ पदों के नमूने इस तथ्य की सत्यता को सिद्ध कर देते हैं—

कांचा कांचन—कांति—कमल-मुखि कुसुमित कानन जोह।
कुंज—कुटीरे कलावति कातर कान करि रोइ॥
कि कहब किशल कतये-कुल-कामिनि कठिन कुसुम-शर सहई।
करहि कपोल कंठ करि कुंचित कालिंदि-कूलमें रहई॥
कर-केयूर कटि किंकिणि कंकण कुंडल कंठकि भासा।
को जाने-कुच-तट कोन कामायन कांकरे कालिम हारा।
कियल कांत-कथा कहि कांदये काम-कलंकिनि गोरि।
किंचित काल कलय करि भाखये गोविंददास पहुँ छोड़ि॥

(प० क० त० पद १८८९)

कविराज के कई पदों में इस प्रकार अनुप्रास की छटा है। एक और उदाहरण देते हैं —

मुखरित मुरलि-मिलित मुख-मोदनी मरकत-मुकुर मिलान।
मानिनि-मान-मथन मुसुकायनि मुनि-मान मुरछान॥
माइ मोहन-मूरति मुरारि मनहते मरये मनोरथ
माधुरि मनमथ—मनमथ मारि।
मुकुलित मल्लिक मधुर मधु-माधुरि मालति—मंजुल माल।
मंद—मरद—मुदित—मत्तमधुकर मंडित—मौलि—मंदार॥
माधहि मोर—मुकुट मद मंथर मणिमंडित मन माल।
मंजु मंजीर—महिम महिमामय गोविंददास गुनगान॥

(प० क० त० पद २४२१)

---

१ "एइ विषये मैथिल कवि विद्यापतिर सहित कविराजेर अनेकटा मेल देखाय याय। कविराजेर काव्य-प्रेरणा आसियाछिल प्रधानत विद्यापतिर कविता हइत (बां० सा० इ० प्र० खं०, पृ० ३२९)।

मैथिल-साहित्य के इतिहासकार निम्नलिखित पद को अपनी भाषा का मानते हैं —

मैथिली पाठ —

जहँ पहुँ अरुण चरण चलि जात तहँ तहँ धरणि होइअओ मोर गात।
जे दरपण पहुँ निज मुख चाह मोर अंग सलिल होइअओ तसुमाहि ॥
जे सरोवर पिय नितमित नाह मोर अंग सलिल होइअओ तसुमाँहि।
जे बीजन पहुँ बिजइत गात मोर अंगताहि होइअओ मृदु वात ॥
जे पहुँ भरमय जलधर श्याम मोर अंग गगन होइअओ तसु ठाम।
गोविन्ददास कह कांचन गोरि से मरकत तनु तोहि कि छोड़ि ॥

(हि मै० सि फ वा० पृ० २१८)

गौड़ीय-वैष्णव-पदावली के वेद कल्प पदकल्पतरु ग्रन्थ में यह पद इस प्रकार है :—

बंगला पाठ—

जाहाँ पहुँ अरुण चरणे चलि जात ताहाँ ताहाँ धरणी हइए मझु गात ॥
जो सरोवरे पहुँ निति निति नाह हाम भरि सलिल होइ तथिमाह।
ए सखी विरह मरण निरदन्द ऐछे मिलायब गोकुल चंद ॥
जो दरपणे पहुँ निज मुख चाह मझु अंग ज्योति होइ तथि माह ॥
जो बीजने पहुँ बीजइ गात मझु अंग ताहे होइ मृदु वात ॥
जाहाँ पहुँ भरमइ जलधर श्याम मझु अंग गगन होइ तछु ठाम।
गोविन्ददास कह कांचन गोरि सो मरकत तनु तोहे कि छोड़ि ॥

(प० क० त० पद १६५१)

गोविन्ददास कविराज के अधिकतर पद हिन्दी पदों में सरलता से आत्मसात हो सकते हैं। अतः कविराज पर गंभीर हिन्दी प्रभाव माना जा सकता है।

३ नरहरिदास चक्रवर्ती[1] (सतरहवीं शताब्दी)

नरहरिदास चक्रवर्ती को यदि 'उभय भाषा-कवि' कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। नरहरिदास चक्रवर्ती बंगला के कवि होते हुए भी हिन्दी के बड़े कवि हैं। श्री सतीशचन्द्र राय एम० ए० लिखते हैं घनश्याम नरहरि के संबंध में यह स्वाभाविक तथ्य है कि उनके ब्रजबुलि के पद अधिकांश स्थलों पर ब्रजमण्डल की विशुद्ध ब्रजभाषा में रचित हैं। उन्होंने वृन्दावनवास काल में प्रतीत होता है विशेष यत्न के साथ ब्रजभाषा की शिक्षा प्राप्त की तब ही हम उनकी रचना में अनेक स्थलों पर तथाकथित ब्रजबुलि तथा मैथिल

---

१ बां० सा० इ० प्र० सं० ६२६।
हि० पु० लि० पृ० २७७।

ब्रजभाषा मिश्रित कृत्रिम भाषा के परिवर्त में तत्सम् शब्द-बहुल ब्रजभाषा का व्यवहार देखते हैं। हिन्दी भाषा की प्रादेशिक-विभाषाओं में ब्रजमण्डल की भाषा सर्वाधिक सुमधुर कही जाने पर समस्त हिन्दुस्तान में स्वीकृत हुई हैं। इस भाषा के सहित स्वल्प परिचित बंगाली के निकट यह अनेक स्थलों पर जटिल और मिश्रित विरचित हो जाये तो यह आश्चर्य का विषय नहीं है। हमारी विवेचना में नरहरि चक्रवर्ती की यह इस श्रेणी का पद-समुदाय ब्रजभाषा के अभिज्ञाता अथवा जानकर पाठकों की अप्रीति-जनक न होकर वरन् उनकी विशेष प्रीतिजनक ही होगी[1]। नरहरि चक्रवर्ती संगीत शास्त्र के अच्छे ज्ञाता हैं। जहाँ कहीं संगीत-शास्त्र का वर्णन आता है तब उनकी लेखनी हिन्दी उगलने लगती है। अंत में हम यों कह सकते हैं कि सब पदकर्ताओं में हिन्दी का सर्वाधिक प्रभाव नरहरिदास चक्रवर्ती पर है, उनकी भक्तिरत्नाकर गीतचन्द्रोदय और गौरचरित चिंतामणि हिन्दी से ओत प्रोत हैं। इस प्रसंग में उपयुक्त ग्रन्थों में हिन्दी प्रभाव का कुछ सोदाहरण विवेचन आवश्यक है। भक्तिरत्नाकर बंगला साहित्य और संगीत शास्त्र का अनुपम भण्डार है। बंगला एवं ब्रजबुलि के साथ साथ हिन्दी का अत्यधिक प्रभाव इस ग्रंथ रत्न में है। पहले कहा जा चुका है कि यह ग्रंथ तरह-तरह की कविताओं का भाण्डार है। संगीत-शास्त्र की दृष्टि से यह ग्रंथ एक पथप्रदर्शक है। जहाँ संगीत का वर्णन कवि करता है वहाँ हिन्दी पर्वत के निर्झर के समान स्वतः ही बहने लगती है। यदि यह कहें तो कोई बड़ी बात नहीं है कि इस ग्रंथ में संगीत-शास्त्र और हिन्दी का चोली-दामन का साथ है। कुछ उदाहरणों से इस तथ्य की सत्यता प्रकट करते हैं:—

---

१ जगबन्धु नरहरि सम्बन्धे ओइहार प्रकृत तथ्य बटे। ताँहार ब्रजबुलीर, पद अधिकांश स्थलेइ ब्रज-मण्डलेर खाँटि ब्रजभाषाय रचित। तिनि वृन्दावने वास कराकाले श्रीहृदय विशेष यत्न-सहकारे ब्रजभाषा शिक्षा करिया छिलेन ताइ आमरा ताँहार रचना अनेक स्थलेइ तथा कथित ब्रजबुलीर वा मैथिल-ब्रजभाषा मिश्रित कृत्रिमय भाषाकार परिवर्तें (तत्सम्) शब्द बहुल ब्रज भाषार व्यवहार देखिते पाई। हिन्दी भाषार प्रादेशिक रूपान्तर गुलिर (Dialects) मध्ये ब्रजमण्डल भाषा सर्वापेक्षा सुमधुर बलिया समस्त हिन्दुस्ताने स्वीकृत हइयेछे एईभाषार सहित स्वल्प-परिचित बांगालीर निकट उहा ये अनेक स्थलेइ जटिल ओ अस्पष्ट विवेचित हइबे इहाते आश्चर्येर विषय नाई। आमादेर विवेचनाय नरहरि चक्रवर्ती एइ श्रेणीर पदगुलि ब्रज-भाषा अभिज्ञ पाठकदिगेर अप्रीतिजनक ना हइया वरम् ताँहादेर विशेष प्रीति जनकई हइबे।

(प० क० त० प० सं० भू० पृ० ११७)

सुरधनी तीर परम निरमल पात तहि वसन्त सब भकत उदार ।
गावत फल कत, गीत अमिय मय बाजत बाजय विविध परकार ॥
नाचत पुलिनमनि गौर किशोर ।
चन्दन चरचित रुचिर अंग अति चपक रमनि मनचोर ।
चमक कमल दल लोचन झलमल भाव अंग नव चमक विलास ।
शरद निशाकर, निकर निंद मन कोटि मदन भट हास ॥
चंचल ललित विलास वक्षपरि झलकत विधि भामिनि मणिहार ।
नरहरि पहुं पद धरत ताल मध तब कि मधुर रब नुपुर झनकार ।

(भ र० पृ० ८११)

नरहरिदास की ब्रजबुलि-कविता हिन्दी से अत्यधिक प्रभावित है—जैसे
सुरधनी-तीर तरुन तव वल्लरी पल्लव नव नव कुसुम विकास
परिमल मुग्ध मधुप कुल कूजत कोकिल कीर फिरत चहुं पास
नाचत तहि नव गौर किशोर। केसर भूप नव चंदन चरचित
काम्‌ अरुन तनु अधिक उजोर ॥
निरुपम वेश वसन भनि भूषन झलकत चाव चपल चमकास ।
अभिनव भंगि, भुवन मन मोहन चल चल धरत चरन तहे तास ॥
गावत परम मधुर परिकर-गन निरखि वदन शशि उलस अमंद ।
सुरगने मगने मगन मन जय जय बाजत नरहरि मधुर मृदंग ॥

(भ० र० पृ ८१२)

भक्ति रत्नाकर संगीत शास्त्र के लिये एक प्रामाणिक ग्रन्थ है। संगीत का जहाँ कहीं वर्णन आता है, वहाँ कवि की लेखनी से संगीत की स्वर लहरी का शरीर हिन्दी का ही होता है। उदाहरण ऐसा प्रासंगिक ही होगा —

जय जगरंजन कंज नयन धन अतन निन्द नव नागर ऐ ऐ ।
गोकुल कुलजा कलपति गोचर जन्द नंदन गुन सागर ऐ ऐ ॥
नव तनुज व्रजभूषण रसमय मंजुल गुन गुन वर्द्धन ऐ ऐ ।
गीत निपुन त्रिभुवन जय ललित निरुपम ताण्डव पंडित ऐ ऐ ॥
भू तनयी पुलिनांगन परिसर सघनी निकर अभिमंडित ऐ ऐ ।
बंशीधर वरनीवर कुल धम्पुर अपराजन सुन्दर ऐ ऐ ।
कृष्ण केलि कलहिक धुरंधर धा धा धि धि तप वेल्मा ऐ ऐ ।
स रसरि गरि नरहरि नाथ ए ई अ इति मई मई प्रतेल्मा ऐ ऐ ।

(भ० र०, पृ० १७२)

भक्ति रत्नाकर ग्रंथ में लगभग १०० ऐसे पद हैं जिनमें बंगला और ब्रजबुलि के साथ हिन्दी का मिश्रण है, ये सरलता से बंगला साहित्य की निधि के साथ हिन्दी-

साहित्य की संपत्ति भी कहे जा सकते हैं। भक्ति रत्नाकर के अतिरिक्त गौरचरित्र चिंतामणि और गीतचन्द्रोदय नामक चरितकाव्यों एवं पदसंग्रहों पर भी हिन्दी का प्रचुर प्रभाव है। जैसे—

यथा राग

को बरनब बर गौर सरस उताम शयन शोभा सुखकारी
मरकत अंग मुललित ललित थिर दामिनी पुञ्ज पुञ्ज मदहारी ॥
शरद सुधाकर—निकर विनिर्जित मुखति बिम्ब
श्रुति अति विमल मकर मण्डित नव कुण्डल अतुल जटित मणि मोती ॥
बिम्ब अधर कर ध्यान बदन दुति किंचित विलसत रुचिर रुचिपुर ।
विकसित दन्त विरंजित सुन्दर तारक पुञ्ज कुन्द दहु दूर ॥
प्रखर रस परिहार प्रचुर लहि कर करयुगल ललत मनिहार ।
नरहरि मन अनुभव न होत बुद्धि भामिनी निकट करत परिहार ॥
(गौ० च० चि० पृ० १२)

गौरचरित्र चिन्तामणि में अनेक पद ऐसे हैं जिनको हिन्दी पद कहे जा सकते हैं। जैसे—

ललित राग

सखत परिकर मध्य गौर किशोर निरुपम साज।
ललित-कु कुम कनक चम्पक पुञ्ज जिनि छबिराज ॥
भाल-चाचर चिकुर चमकत विरल काजर-कांति।
नयन-अञ्जन विमल झलकत दरत मौक्तिम पाँति ॥
नैन कमल विशाल मुख श्रुति नासिका मधु गन्ध।
सिंह ग्रीव नव भंगि निरुपम अनुपम भुज बन्ध ॥
वक्ष परिसर पीन कटियुग चारु भुजिमन चोर।
दास नरहरि—पहुँक पद मन भुवन चकोर ॥
(गौ० च० चि० प० १४१)

गीत चन्द्रोदय

गीत चन्द्रोदय में भी हिन्दी का प्रभाव है। कुछ उदाहरण देकर स्पष्ट किया जाता है —

भरि भरि कि नव गौर हरि बदना अभिनव भंगि भाव भर हुलना।
निरुपम अमिय झरई आनि बचने टलमल चल जल चाहन नयने।
भाव-विभोर फिरत माहि रहई गरजि सघने घन हरि हरि करई।

धूसर धूरि भरयि तले लुठई पवने भैगे पाई कर्हीपिम मुरई।
मुरयम-मुख्हु चरित भनुगाम एक बदने कि माव घनश्याम॥
(गी० च० पृ० ११)

गीत चन्द्रोदय में कई पद घनश्याम की भनिता के साथ हैं, कई नरहरिदास की भनिता के साथ हैं जैसे—

देखमु परम मुदित सुकुमारी अलकत अंगकिरण अधिकारी।
निरखने बैठि मुकुर लेई हाथ मुख अवलोकने धवनत माथ।
सखी कछु धुघाई मतने हसि मोरि, मुलाहते लागे रहई मुख मोरि।
मनहै डोले कर रस परकाश कि कहब नरहरि प्रेम विलास।
(गी० च० पृ० ९२)

गीत चन्द्रोदय में अनेक ऐसे पद हैं जिनमें अन्य वैष्णव-पदकर्ताओं के पदों का भी समावेश हुआ है और अन्य पदावलियों में नरहरिदास चक्रवर्ती या घनश्यामदास के पदों का मिश्रण हुआ है। गौर-पद-तरंगिणी से एक पद का उदाहरण देना अप्रासंगिक नहीं होगा —

होत गुन अधिवास शुभ क्षणे
सयने सुरगण भवन मन सने
परस्पर पहु चरित अभिसार शुभ मति मति भयी।
गौर रसमय रसिक-शेखर सरस भासने विलसे अधिर।
कर कनक दरपन दरप-भर-हर मुकुर तनु मनमय भवी॥
वदन विधु विधु परस-मंजन हास [illegible] मृदु द्युम रचन
मंजु दिठि-युग-कंज अलकत भाले तिलक सुहोमुये॥

तथा—

निरुप गुनवर-रस परिहर कीन कहि प्रति मन सुरचित।
निरुप चांचर चिकुर निरुपम भुवन जन-मन-मोहये॥
[illegible] माधुरि हेरि पुनियन भाति मुरुथि रपकहु घन-घन।
विविध राग अलापि गायत कोन पहि मुति सरसये।
मुनहु चातक-मुख भावत मधुर मुरंग मुखर बाजत।
कोप कोलाहल विविदिय अलीकि दिकदि दम भव न नाचि।
नउल नतक हस्त-अभिनय चलित भंगि विथारि अतिशय।
वरत तक तक थैत थैतत था धि तिमि तिमि सततई।
निरत नाय नाय सारद मुनि नव भूरि मुकुर वैद बनि कर।
देत पहु मुनु नारि-मन घनश्याम-हिय मुख रचलई॥
(प० क० त० पं० कं० मू० पृ० ११७)

उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त अन्य बहुत पदकर्ता हैं जिन पर हिन्दी का कुछ-कुछ प्रभाव है यह ब्रजबुलिगत प्रभाव के शीर्षक के अन्तर्गत अगली-पंक्तियों में द्रष्टव्य है। उनमें से रायवसंत[1] के २१६१ से २१२० इत्यादि पद पदकल्पतरु में हिन्दी से प्रभावित ब्रजबुलि के उत्कृष्ट पद हैं ऐसा प्रतीत होता है रायवसंत बहुत दिन तक ब्रज प्रदेश में रहे थे। उसी कारण उनके पदों में हिन्दी की झलक है, एक उदाहरण से इसका स्पष्टीकरण हो सकता है :—

नागर नाचत नागरि संग, विविध यन्त्र कत अन्य तरंग।
धृमि धमि धृमि धृमि बाजे मृदंग कत रबाब बिन मुरलि उपांग॥
बलय नुपुर मणि किंकिण कनने घु घर रुनझुन बाजत भरने।
भालवे संग-अंग अवलम्ब, रस भरे विरज मिल परिरंभ।
झमके मोति छिये मुख कमचारि, रसिक कलागुरु कहे बलिहारि॥
बहति विलोकइ घूं घूंवित कोरि, राय बसत पहुँ रहुँ हिय कोरि॥
(प० क० त०, पद २१२१)

४ गौड़ीय वैष्णव पदावली (ग्रन्थ) विशेषगत हिन्दी प्रभाव—

कवि विशेषगत प्रभाव के साथ-साथ समस्त ग्रन्थ या पदावलीगत हिन्दी प्रभाव का मूल्यांकन हो सकता है। इसका एक संकेत ही पर्याप्त है। बँगला-वैष्णव पदावली-साहित्य किसी व्यक्ति विशेष की देन या कृतित्व नहीं है। शताब्दियों तक सामान्यतया समस्त बंग प्रदेश एवं विशेषतया गौड़ीय-वैष्णवों का मेघदान इस साहित्य निर्माण में अनुपम है। समस्त ग्रंथों अथवा पदावलियों में या पाण्डु लिपियों अन्यान्य अप्रकाशित पदावलियों पदों एवं संकीर्तनों में थोड़ा बहुत छुटपुट रूप में हिन्दी प्रभाव प्राप्त हो सकता है।[2]

५

४ भाषागत प्रभाव (मिश्रित भाषा ब्रजबुलि)

संसार की संस्कृतियों धर्मों और भाषाओं में यह बहुधा देखा जाता है कि दो संस्कृतियों के सम्पर्क से एक संकर संस्कृति का जन्म होता है। इसी प्रकार दो भाषाओं के सम्पर्क से एक संकर भाषा का भी आविर्भाव हो जाता है। विश्व में ही नहीं किन्तु भारत में भी संकर भाषा की यह परम्परा प्राचीन काल (वैदिक

१ देखिए—प० क० त०, प्र० खं० भू०, पृ० ११८।
तथा —हि० भू० लि०, पृ० ४२४ २६।
बां० सा० इ०, प्र० खं० पृ० ४४७।

२ देखिये—पदावलियों के परिचय के लिए प्रस्तुत प्रबन्ध में प्रथम अध्याय पृ० १०।

काल) से ही चली आ रही है। गाथा या बौद्ध संस्कृत इसका अच्छा उदाहरण है। आधुनिक भारतीय-आर्य भाषाओं की पूर्ववर्ती अपभ्रंश भाषा और साहित्य भी इसका अच्छा दृष्टांत है। इसी तरह शौरसेनी अपभ्रंश की भाषायी-परम्परा ब्रजबुलि के रूप में दृष्टिगोचर होती है।

ब्रजबोली (ब्रजबुलि) पर हिन्दी-प्रभाव का दिग्दर्शन कराने के पहले उसके उद्भव और विकास पर कुछ प्रकाश डालना प्रासंगिक है। ब्रजबुलि के नाम करण के विषय में विद्वानों में मतभेद है डॉ० दीनेशचन्द्र सेन इसको वृज्जियों की भाषा मानकर इसका नाम ब्रजबुलि करते हैं[1]।

डा सुनीतिकुमार चटर्जी इसको इसलिये ब्रजबुलि मानते हैं कि इसमें ब्रज भूमि में अवतरित होने वाले राधा-कृष्ण की पवित्र लीला का वर्णन है[2]। ब्रजबुलि नाम का उल्लेख सर्वप्रथम ईश्वरचन्द्र गुप्त के लेखों से मानते हैं[3]। किन्तु डा० चटर्जी का दृष्टिकोण ही हमें ठीक जचता है। ब्रजबुलि इसको इसलिये कहा जाता है, ब्रज + बोली—अर्थात् ब्रज की बोली किन्तु ब्रजबोली का वास्तविक अर्थ है ब्रजभाषा। ब्रजभाषा और ब्रजबुलि एक भाषा नहीं है। ब्रजभाषा शताब्दियों से एक स्थान विशेष की भाषा होते हुए भी किसी समय उसका ऐतिहासिक महत्त्व रहा है। वह साहित्यिक भाषा एवं बोलचाल के रूपों में भी प्रचलित रही है। अब भी है किन्तु ब्रजबुलि साहित्यिक भाषा तो रही है संभवतः वह कभी बोलचाल की भाषा रही हो यह निश्चयपूर्वक नहीं नहीं कहा जा सकता है। ब्रजबुलि इसको इसलिये कहा जाता होगा कि भगवान कृष्ण एवं राधा की प्रेम-लीला का स्थान ब्रजमण्डल ही रहा है। पहले कहा जा चुका है कि बंगाली वैष्णवों का सम्पर्क भी ब्रजभूमि के साथ गंभीर रहा है। अतः यह एक भावनात्मक एवं श्रद्धा या आदरसूचक दृष्टिकोण है। चैतन्य महाप्रभु एवं बंगाली वैष्णवों के आराध्यदेव तथा इष्टदेव भी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र रहे हैं। अतः कृष्ण लीलागान के कारण इसका नामकरण ब्रजबुलि हुआ हो ऐसा प्रतीत होता है। पहले लिखा जा चुका है कि ब्रजबुलि का जन्म विद्यापति ठाकुर की कोमल-कांत पदावली के आधार एवं अनुकरण पर हुआ है। जैसा कि डा० सुकुमार सेन का मत है ब्रजबुलि में मैथिली मूलाधार है हिन्दी और ब्रजभाषा के मिश्रण से तत्कालीन बंगला ने इसका ढांचा प्रस्तुत किया है[4]। (ब्रजबुलि एक

---

१ बं० भा० सा पृ० २२९।

२ ओ डी बी० ऐल । बं भा मू० पृ० १३१।

३ भा० सा प० ७२ ब्रजबोली की कहानी (डा० सेन) जनवरी १९६६ प्रथम अंक।

४ 'Maithili is the basic part while Bengali with oddments of Hindi and Brajabhaka forms the Super structure
—A History of Brijbuli literature Page 1

मिश्रित भाषा है मैथिली इसका मूलाधार है बँगला और हिन्दी के मिश्रण से इसका स्वरूप निर्मित हुआ है। आगे फिर लिखते हैं 'व्रजबुलि में रचित वैष्णव पदावली में सर्वांश नहीं तो अधिक परिमाण में जिसमें मैथिली पदावली का अनुसरण किया है यह अविसंवादित है। व्रजबुलि के गठन में मैथिली ही प्रधान उपादान है[1], अवश्य अवहट्ठ का प्रभाव भी माना जा सकता है। व्रजबुलि में जो पश्चिमी हिन्दी के पद और वाक्य रीति पाई जाती है वह प्रधानतः अवहट्ठ से आई हुई कह सकते हैं[2]। वे उसी मत का पुनः समर्थन करते हैं वैष्णव-गीतिकाव्य रचना की प्रथम बंगला में दो विशिष्ट भाषा रीतियाँ रही हैं। एक शुद्ध बंगला एवं दूसरी व्रजबुलि या मिश्रित बंगला। 'व्रजबुलि नाम आधुनिक है ईश्वरचन्द्र गुप्त के पहले इस नाम का व्यवहार किसी ने किया था या नहीं यह मैं नहीं कह सकता। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम भाग में प्रायः इसको 'व्रजभाषा' कहा गया है। राधा कृष्ण-पदावली की भाषा व्रज की 'बोली' अर्थात् भाषा यह अनुमान होने पर व्रजबुलि नामक उद्भव हुआ है। व्रजबुलि मुख्यतः अवहट्ठ और मैथिली के विकृत रूप के ऊपर प्रतिष्ठित है। मैथिल गीतिकवियों का अन्धानुकरण ही इस विकृति का अन्यतम कारण है। किन्तु व्रजबुलि के मूल में शुद्ध मैथिली ही नहीं है इसमें अवहट्ठ का भी पुट है[3]।"

क्रमशः डा० सेन अपने मत का परिवर्तन करते हुए आये हैं, अब उनका नवीनतम दृष्टिकोण व्रजबुलि के सम्बन्ध में इस प्रकार है—'प्रायः बीस वर्षों पूर्व जब मैंने 'व्रजबोली साहित्य का इतिहास लिखा था तब मैंने व्रजबोली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रचलित मत का ही समर्थन किया था। उस मत के अनुसार बंगाली पद रचयिताओं ने मैथिली विद्यापति की पदावली का अनुकरण कर व्रजबोली भाषा की सृष्टि की। अर्थात् मैथिली भाषा व्रजबोली की माँ तथा बंगला भाषा उसकी 'धात्री' हुई। यही सर्वत्र मान्य है। किन्तु विविध कारणों से उपर्युक्त मान्यता का समर्थन अब मैं नहीं कर पाता हूँ। प्रथमतः विद्यापति के समय की

१ सा० प० प० ३६, पृ० १४३ १४४।

२ व्रजबुलिते रचित वैष्णव पदावली सर्वांशे ना हउक अधिक परिमाणे जे मैथिलपदावलीर अनुसरण करिया छे ताहा अविसंवादित। व्रजबुलि भाषार गठने मैथिली इ प्रधान उपादान अवश्य अवहट्ठेर प्रभाव ओ मानिते हय। व्रजबुलिते ये पश्चिमा हिन्दीर जो वाक्यरीति पाओया याय ताहा प्रधानतः अवहट्ठ हइते आगत बलिया मने करि। (बां० सा० इ० प्र० ख०, पृ० ८१)

३ बां० सा० इ०, प्र० ख० पृ० १६१ १६२।

मैथिली भाषा के साथ 'ब्रजबोली' का सादृश्य अनेक स्थानों पर होते हुए भी अनेक स्थानों में नहीं है। द्वितीयतः मैथिली पदावली के अनुकरण पर बंगाली कवियों की ब्रजबोली में पदरचना बिल्कुल अनुमानिक है[1]। अपने मत का पुनः स्पष्टीकरण करते हुए लिखते हैं—'इसी अवहट्ठ से ब्रजबोली की उत्पत्ति हुई है, बंगला, मैथिली, हिन्दी राजस्थानी एवं गुजराती आदि भाषाओं का पूर्ण परिणत रूप अवहट्ठ के प्रचलित दरबारी साहित्य में था। विशेषकर राधा-कृष्ण पदावली में। इसी परवर्ती अवहट्ठ ने जिसके ऊपर मैथिली आदि स्थानीय भाषाओं का प्रभाव पड़ा था १२वीं तथा १६वीं शताब्दी में ब्रजबोली का रूप धारण किया था। सूरदास आदि प्राचीन ब्रजभाषा के कवियों की रचना में जो अहिन्दी शब्द आ गए हैं वे इसी प्राचीन अवहट्ठ या प्राचीन ब्रजबोली के हैं। इसलिये ब्रजबोली किसी प्रान्त-विशेष की सम्पत्ति नहीं है वह आदि भाषा की संपत्ति है, और एक प्रकार से अंतिम सर्व भारतीय आर्यभाषा है[2]।

पहले अध्याय में कहा जा चुका है कि अवहट्ठ-शौरसेनी-अपभ्रंश का बाद का स्वरूप माना जा सकता है। अवहट्ठ का सादृश्य हिन्दी के साथ बहुत है। यदि इसको पुरानी हिन्दी का पूर्व भी कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। अतः यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि ब्रजबुलि का मूलाधार शौरसेनी अपभ्रंश प्रसूत पुरानी हिन्दी है। अतः इस रूप में इसका प्रभाव बंगाल के साथ-साथ उड़ीसा एवं असाम व मिथिला में भी रहा है। असमिया के शंकरदेव[3] और माधवदेव की कविता इसकी साक्षी है। पश्चिमी हिन्दी तथा ब्रजभाषा में भी उसी शौरसेनी अपभ्रंश का प्रेरणास्रोत था। वैष्णव काल में ब्रजभाषा के प्रभाव के कारण ब्रजबोली की कविता में त्वरा उत्पन्न हो गई थी। एक ओर मैथिल कोकिल विद्यापति की पदावली की झंकार भी आ रही थी। डा० विश्वनाथप्रसादजी ब्रजबुलि की प्रवृत्ति को अखिल भारतीय प्रवृत्ति (All Indian tendency) कहते हैं[4]। यह हिन्दी की ही प्रवृत्ति है, जो युग-युगान्तर से आधुनिक काल तक अक्षुण्ण रूप में चली आ रही है। अतः ब्रजबुलि परम्परागत रूप से प्रवाहमान संकर भाषायी गंगा का एक रूप है। हिन्दी और मैथिल तथा बंगला की विचारधाराओं ने मध्यकाल में इसको गति प्रदान की।

---

१ भा सा० अ ध० पृ० ७४ जनवरी १९५९।

२ भा० सा० पृ० ७७ जनवरी १९५९।

३ डॉ० बा०इ० अ० भा० पृ० १२१ १२६।

४ हिन्दी-विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय में लेखक के साथ रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रसंग में विचार-विमर्श करते हुए डा० प्रसाद जी ने अपना मत ब्रजबुलि के सम्बन्ध में प्रकट किया।

डॉ० सत्येन्द्र जी तो ब्रजबुलि पर ब्रजभाषा का प्रत्यक्ष प्रभाव मानते हैं। इस तथ्य की सत्यता अनेक वैष्णव पदकर्त्ताओं के पदों से स्पष्ट हो जाती है। कई कवि एक साथ तीन-तीन भाषाओं बंगला, ब्रजबुलि, ब्रजभाषा में कविता करते पाये हैं[1]। जहाँ भाषामूलक प्रभाव का प्रश्न है वहाँ ब्रजबुलि में हिन्दी का बहुत ताना बाना है। उसके भाषा वैज्ञानिक एवं व्याकरणिक-स्वरूप पर भी हिन्दी का प्रभाव है[2]।

ब्रजबुलि के ऐतिहासिक एवं साहित्यक स्वरूप पर दृष्टि डालना अभीष्ट है। ब्रजबुलि के पदों की संख्या पाँच हजार से ऊपर है। यह समस्त साहित्य गेय पदावली के रूप में है। डॉ० सुकुमार सेन के अनुसार ये पद दो सूत्रों से प्राप्त होते हैं।

(१) वैष्णव गीति-साहित्य के रूप में।

(२) ऐसे पद जो किसी दार्शनिक या सैद्धांतिक ग्रंथ में उदाहरण स्वरूप में उद्धृत हैं।

१ वैष्णव गीति-साहित्य के रूप में

१ क्षणदा-गीत चिंतामणि	८ पदकल्पलतिका
२ पदामृत समुद्र	९. गौरपद-तरंगिणी
३ पदकल्पतरु	१० अप्रकाशित पदरत्नावली
४ कीर्तनानंद	११ पदमेरु (हस्तलिखित ग्रंथ)
५ संकीर्तनामृत	१२ पदसंग्रह (हस्तलिखित)
६ पदरससार	१३ गौरचरित चिंतामणि
७ पद रत्नाकर	१४ गीत चन्द्रोदय

२ ऐसे पद जो किसी दार्शनिक या सद्धांतिक ग्रंथ में उदाहरण स्वरूप में उद्धृत हैं

१ श्री राधाकृष्ण-रस-कल्पवल्ली	४ सिद्धान्त चन्द्रोदय
२ रसमंजरी	५. नायिका-रत्नमाला
३ भक्ति रत्नाकर	६ ग्रन्थ

१ देखिये—'ब्रजबुलि और ब्रजभाषा' पर तुलनात्मक अध्ययन पी-एच० डी० स्वीकृत प्रबन्ध डा० कुमारी कल्याणी-विश्वास (ब्रजभाषा और ब्रजबुलि साहित्य) हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी सन् १९५७ ई०।

२ देखिये—प० क० त० पं० बं०, मू०, पृ० २३१-२४१। बं० सा० प० प० १३३७। भाषार रविमृत पृ० २५२, २९० (ब्रजबुलि व्याकरण तथा हि० बं० वै० कवि पृ० ४६७-४८०)।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से बँगला साहित्य में ब्रजबुलि का सृजन और प्रचलन १६वीं शताब्दी से अठारहवीं एवं १९वीं शताब्दी तक अविच्छिन्न-धारा के रूप में मिलता है। वैष्णव-पदकर्ता तो ब्रजबुलि पदावली में आकंठ रस मग्न थे किन्तु बहुत वैष्णव भावापन्न-मुसलमान कवि भी इस पदावली के प्रेमी थे। दौलत काजी की 'सतीमयना ओ लोर चन्द्रानी' में भी ब्रजबुलि के पद हैं। भारतचन्द्र रायगुणाकर की 'अन्नदामंगल' में भी ये पद पाये जाते हैं। हालांकि दोनों ही कवियों का वैष्णव-काव्यधारा के साथ कभी प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रहा। वे भी ब्रजबुलि के प्रभाव से नहीं बच सके।

उन्नीसवीं शताब्दी के महर्षि बंकिमचन्द्र की मृणालिनी एवं बंग-दर्शन में भी ब्रजबुलि के पद हैं। आधुनिक काल में अनेक बँगला-साहित्यकारों का झुकाव इसकी ओर रहा है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी ब्रजबुलि के गीत अपनी भानुसिंह ठाकुरेर पदावली में वैष्णवों के भावों एवं भाषा में गाये हैं।

ऐतिहासिक नामावली[1] की दृष्टि से सम्भवतः ब्रजबुलि के दो सौ से अधिक पदकर्ता हैं। ऐतिहासिक क्रम से कुछ प्रसिद्ध कवियों के पदों के उदाहरणों से हिन्दी प्रभाव ब्रजबुलि साहित्य में अधिक स्पष्ट हो सकेगा।

१ यशोराज खाँ—इनका निम्न पद ब्रजबुलि का सर्वप्रथम बंगला पद माना जाता है —

एक पयोधर चंदन-लेपित आरे सहजइ गोर।
हिम-धराधर कनक-भूधर कोले मिलल जोर।

—कीर्तनगीत रत्नावली

२ गोविन्ददास कविराज[2]

गोविन्ददास कविराज ब्रजबुलि के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। जो स्थान विद्यापति का मैथिल-साहित्य में है वही स्थान गोविन्ददास कविराज का ब्रजबुलि पदावली में है। एक उदाहरण दिया जाता है।

कुवलय-नील-कुसुम कलेवर कालिम-कांति कलोल।
कोमल केलि-कदम्ब-करम्बित कुण्डल-लोल कपोल।
जय जय कृष्ण कृष्ण कमलेन। कालिय-केलि-दंश-करि-कर्दन
केशव कुंचित-केश कुल-वनिता-कुच-कुसमाचित कुसुमित-कुंतल बध
कालिन्दि कमल-कलित-कर-किसलय कौतुक चंचल चय॥

---

१ देखिये—'हिस्ट्री आव ब्रजबुलि लिटरेचर' में पदकर्त्ताओं की नामावली।
२ देखिये—प्रस्तुत प्रबंध में पृष्ठ ८८-९२।

कमला-केलि कलप-तरु कामद कामिनि कोटि-कपोल कृपन-कृपा-कर
कनुपम् रूप कहु कवि दास गोविंद ॥ (प० क० त० पद २४१७)

३ शिवराम[1]

शिवराम ने ब्रजभाषा और ब्रजबुलि दोनों में ही पद लिखे हैं। ब्रजबुलि का एक उदाहरण देखिये—

फागुरंगे होरि खेलत श्याम गौरि
सखिगन मिलि आमोद आमोद।
किशोर किशोरि माधि माधामोद आनन्दे मनभोरि।
विविध यंत्र ताल मृदंग कोइ मोचंग
बाजये उपांग तन मन तोरि।
तथ तथ तथ तत थेया घुमति घुमति द्रिमि थया
थइ० तइ० तइ० तोरि।
धुधु धुधु धुधुनाम दिमिद्राम, किट किट किट धाम
दुधनाम शिवराम माधोये होरि।
(प० क० त० पद १४३६)

तथा—

रंगे हो हो होरि खेलत नयोल किशोरी।
बाजत ताल रबाब पाखामोज सखिगण धन करतालि।
कुंकुम चन्दन आबिर अगुरु धन बरिखन जनु पिचकारि।
दुहुँ पर दुहुँ पहु भोरि जितमु धन घुघु धन परनम सखियन भो परभोरि।
ऐसे कैसे चकित बदन दुहुँ निरखत खेलन चाव कोकरि।
ठाहि शिवराम दासमन आनन्दे हेरि हासे भोरि भोरि ॥[2]
(प० क० त० पद १४४१)

४ रामबसन्त

रामबसन्त के पदकल्पतरु में ५१ पद हैं। इनमें हिन्दी का मेल है। एक उदाहरण देते हैं —

नागर नाचत नागरि संग विविध यन्त्र बन्त ताल तरंग
घुमि घुमि घुमि बाजे मृदंग डक ढ्याव मिल मुरलि उपांग।
वलय नूपुर मनि किंकिनि-कलने घु घरु घुनुघुनु बाजत चरणे।
आनन्दे अग अंग अवलम्ब, रसभरे पिरत मिलत परिरम।

---

१ देखिये—प्रस्तुत प्रबंध में पृष्ठ ८४ ८५।

२ शिवराम के पदकल्पतरु में १४३० १४४२ १४४३ १४४४ १४४६, १४५२ सख्यक पदों में हिन्दी का प्रभाव है।

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से बँगला साहित्य में ब्रजबुलि का सृजन और प्रचलन १५वीं शताब्दी से अठारहवीं एवं १९वीं शताब्दी तक अविच्छिन्न-धारा के रूप में मिलता है। वैष्णव-पदकर्ता तो ब्रजबुलि पदावली में आकंठ रस-मग्न थे किन्तु बहुत वैष्णव भावापन्न-मुसलमान कवि भी इस पदावली के प्रेमी थे। दौलत काजी की सतीमयना ओ लोर चन्द्राणी' में भी ब्रजबुलि के पद हैं। भारतचन्द्र रायगुणाकर की 'अन्नदामंगल' में भी ये पद पाये जाते हैं। हालांकि दोनों ही कवियों का वैष्णव-काव्यधारा के साथ कभी प्रत्यक्ष संबंध नहीं रहा। वे भी ब्रजबुलि के प्रभाव से नहीं बच सके।

उन्नीसवीं शताब्दी के महर्षि बंकिमचन्द्र की मृणालिनी एवं बंग-दर्शन में भी ब्रजबुलि के पद हैं। आधुनिक काल में अनेक बँगला-साहित्यकारों का झुकाव इसकी ओर रहा है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी ब्रजबुलि के गीत अपनी भानुसिंह ठाकुरेर पदावली में वैष्णवों के भावों एवं भाषा में गाये हैं।

ऐतिहासिक नामावली[1] की दृष्टि से सम्भवतः ब्रजबुलि के दो सौ से अधिक पदकर्त्ता हैं। ऐतिहासिक क्रम से कुछ प्रसिद्ध कवियों के पदों के उदाहरणों से हिन्दी प्रभाव ब्रजबुलि साहित्य में अधिक स्पष्ट हो सकेगा।

१ यशोराज खाँ—इनका निम्न पद ब्रजबुलि का सर्वप्रथम बंगला पद माना जाता है —

एक पयोधर चंदन-लेपित आरे सहजइ गौर।
हिम-धराधर कनक-भूधर कोले मिलल जोर।

—कीर्तनगीत रत्नावली

२ गोविन्ददास कविराज[2]

गोविन्ददास कविराज ब्रजबुलि के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। जो स्थान विद्यापति का मैथिल-साहित्य में है वही स्थान गोविन्ददास कविराज का ब्रजबुलि पदावली में है। एक उदाहरण दिया जाता है।

कुवलय-कंवल-कुसुम कलेवर कालिम-कांति कलोल।
कोमल कलि-कदम्ब-करम्बित कुन्तल-जाल कपोल।
जय जय कृष्ण कृष्ण कमलेश। कालिय-केलि-कंस-करि-मर्दन
केशव कुंचित-केश कुल-वनिता-कुच-कलसांकित कुसुमित-कुन्तल-बंध
कालिन्दि काम-कलित कर किसलय कौतुक कलन कंद ॥

---

१ देखिये—'हिस्ट्री आफ ब्रजबुलि लिटरेचर' में पदकर्त्ताओं की नामावली।
२ देखिये—प्रस्तुत प्रबंध में पृष्ठ ८८ ९२।

कमला-केलि कलप-तरु कामद कामिनि कोटि-कवीन्द्र रूपम-रूपा-कर
अनुपम् रूप कहु कवि दास गोविंद ॥ (प० क० त० पद २४३७)

३ शिवराम[1]

शिवराम ने ब्रजभाषा और ब्रजबुलि दोनों में ही पद लिखे हैं। ब्रजबुलि का एक उदाहरण देखिये—

> आजुरंगे होरि खेलत श्याम गोरि
> सखिगन मिलि गायोत बायोत।
> किशोर किशोरि नाचि नाचायोत आनंदे मनभोरि।
> विविध यन्त्र ताल मृदंग कोइ मोचय
> बाजये उपांग तन मन तोरि।
> तथ तथ तथ तत थेया घुमति घुमति द्रिमि धया
> थइ० तइ० तइ० तोरि।
> झुनु झुनु झुनुनाम रिमिझाम किट किट किट धाम
> दूगधाम शिवनाम भायोये होरि।
> (प० क० त० पद १४३६)

तथा—

> रंगे हो हो होरि खेलत नयोल किशोरी।
> बाजत ताल रवाब पाखावोज सखिगण धन करतालि।
> कुंकुम चन्दन मारिर अबुत घन बरिखन जनु पिचकारि।
> दुहुँ पर दुहुँ पहु भोरि विजुनु धन धुमु घन गरजन सखिगन भी बरखोरि।
> कैसे कैन चकित बदन दुहुँ निरखन बैठन चाँद चकोरि।
> तहिँ शिवराम दासमन आनंदे हेरि हासि थोरि थोरि ॥[2]
> (प० क० त० पद १४४१)

४ रायबसन्त

रायबसन्त के पदकल्पतरु में ५१ पद हैं। इनमें हिन्दी का मेल है। एक उदाहरण देते हैं —

> नागर नाचत नागरि संग विविध यन्त्र कत धाय तरंग
> घुमि घुमि घुमि नाचे भुवन, डंक रबाब बिन मुरलि उपांग।
> कलय नुपुर मनि किंकिनि कलने घु घर घुनुघुनु बाजन बाजे।
> आनंदे मग भय अवसन्न, रसभरे थिरत मिलत परिरम्म।

---

1 देखिये—प्रस्तुत प्रबंध में पृष्ठ ८४-८६।
2 शिवराम के पदकल्पतरु में १४३७ १४४२, १४४१ १४४४ १४४६, १४४२ संख्यक पदों में हिन्दी का प्रभाव है।

कमले मोति किये मुख भमकारि रसिक-कला-गुण कहु बलिहारि ।
विहुसि विलोकहु दु हुँकित कोरि रायबसंत-पहुँ रहुछिम कोरि ।[1]

(प० क० त० पद २९२९)

५ रायशेखर

रायशेखर के पद भी कुछ हिन्दी का आभास लिए हुए हैं। एक पद इस प्रकार है —

मधुर मधुर गोर किशोर मधुर मधुर नाठ ।
मधुर मधुर सब सहचर मधुर मधुर हाट ॥
मधुर मधुर मबंध बाजत मधुर मधुर ताल ।
मधुर हुलन मधुर बोलन मधुर मधुर मति ।
मधुर मधुर बदन सुन्दर मधुर मधुर भाति ।
मधुर अधर विनि धाधर मधुर मधुर हास ।
भारति पिरिति बरिति मधुर मधुर भाव ।
मधुर युगल नयान रञ्जन मधुर इंगित भाव ।
मधुर प्रेमेर मधुर बादर बंचित शेखरराय ।

(प० क० त० पद १०१२)

६ जयकृष्णदास

इनके निम्न पद में हिन्दी की छाया है :—

वेणु बजायत वेणु बजायत यमुना तीर पुलिन बने ।
(प्रिय) सुदामा श्रीदाम सुबल महाबल एसब गोपसखा सनने ॥
(नट) वेश सुवेश पुञ्ज शिखि लावनि मालतीमाल प्रसन्न मने ।
(भुवि) पामविलास—अतिमकराकृति कुडल मंडित गंडे दोले ।
कटि पटि पीत वसन किंकिणि किंकिणि कोकनदाम मने ।
चरनकमल रहे अधिमंडित बंदित ताप मलेद भने ।
कपकिशनदास पहुँ गोवर्धन धारन वीर वैभवमणि ।
भविल ब्रह्मांड चौड करि मंडित साकर आगे कामहाको यदि ।

(पद कल्पलतिका पद २१)

७ सुबलचन्द्र ठाकुर

इनका निम्न पद हिन्दी प्रभाव मण्डित है —

देख नटवर नाचे यमीर कौवर है ।
हेमवरगोरातनु प्रेमभरा गोरा जनु मधुरहसन कमलयनमोहर है ।

---

1 रायबसन्त के पदकल्पतरु में २९११ से २९१२ तक के पदों में हिन्दी का भाव है।

अवध वरन पर नयनहिं नीरझर तरल कमल जनु अलिसर भर हैं ॥
देखि प्रिय पयाधर विपुल पलकभर पुलकेरे पीठ भांग० भर का वेनु भर हैं।
हेरि फेरि नित्यानंद ताकी हिट धयमधाम दह रसपीय पाओये सुबल सुपद हैं।
(पदामृत-समुद्र पृ० ८५)

८ नरहरि चक्रवर्ती[1]

नरहरिदास चक्रवर्ती बंगला ब्रजबुलि और ब्रजभाषा के प्रवीण कवि हैं। इनके नरोत्तमविलास भक्तिरत्नाकर गौरचरित चिन्तामणि एवं गीतचन्द्रोदय आदि ग्रंथों में हिन्दी का प्रचुर प्रभाव है। सम्भवतः समस्त पदकारों में ये हिंदी प्रभाव के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। इनके ब्रजबुलि के कुछ पद द्रष्टव्य हैं —

जय जय रामकृष्ण आचार्य सुधीर महाशय सुजन उदार।
भावावेश निरन्तर कीर्तन लम्पट, अतिशय सुन्दर प्रचार॥
सुखमय रसिक, जनमन रंजन, तत्र पुंजतम भजन कारी।
त्रिभुवन मंडन गुणगण मण्डित पण्डितवर दुरमुख मद हारी॥
श्री जय गोकुल राम, सुविदग्ध सेवा, सतत नियुक्त प्रणाम।
भक्ति रति उल्लसित विद्यानिधि गौरचन्द्रचरितामृत धाम॥
परम दयाल नरोत्तम पद युग बहु सर्वस्व न जानत अन्य॥
को समुझब वह रीति चरित जग, जानत नरहरि मानत धन्य॥
(भ० र० पृ० १०१२)

तथा—

कौन बरनब गौर परिकर चरित अति अनुपाम रे।
भुवन-विदित विशेष असीम हि अहिम धाम रे॥
निपट पृथ्य निशाकर वरनित्य नवगुण धामर।
सकल मंगल मूल सुखमय परम मधुरिम नामरे।
(गौ० च० चि० पृ० १४)

९ नसीर मामुद

हिन्दू पदकर्ताओं के अतिरिक्त मुसलमान वैष्णव भावापन्न कवि भी हैं, जिन्होंने राधाकृष्ण लीला के सम्बन्ध में अपने पद ब्रजबुलि में गाये हैं। नासीर मामुद का एक पद द्रष्टव्य है —

धेनु सँग गोठे रंगे, चलत राम, सुन्दर श्याम,
पाँचनि काँचनि वेत्रवेणु मुरली खुरली गानरि।
प्रिय दाम श्रीदाम सुदाम मेलि, तरणी तनया तीरे केलि
धवलि साङली आओरि आओरि, फुकरि चलत कानरि।

१ देखिये—प्रस्तुत प्रबन्ध में पृष्ठ ९२-१००।

वयस किशोर मोहन भाँति बदन इन्दु जलद कांति ।
चारु चन्द्रि गुंजाहार वदनै मदन भानरि ।
आगम निगम वेदसार लीलाय करत गोठ विहार ।
भनोर मानुष करत आशा चरणे शरण दानरि । (प० क० त० पद १३२६)

विस्तार भय से अधिक उदाहरण देना उपयुक्त नहीं है । उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि ब्रजबुलि के निर्माण में हिन्दी का योगदान अनुपम है । अन्त में विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि विशेषकर ब्रजबुलि पर और सामान्यतः समस्त गौड़ीय वैष्णव पदावलियों पर और चरित-काव्यों पर हिन्दी का गम्भीर सर्वाङ्गीण प्रभाव है ।

अगले पृष्ठों में हिन्दी भक्तमाल के आधार पर विरचित बंगला भक्तमाल का प्रसंग है ।

६

५—अनुवादागतप्रभाव (श्रीभक्तमाल) हिन्दी-प्रभाव

पिछले पृष्ठों में हम बंगला पर हिन्दी के मध्यकालीन सामान्य प्रभाव की बात कर चुके हैं । वैसे तो सामान्य प्रभाव १५वीं शताब्दी से १८वीं शताब्दी तक आता है । किन्तु हिन्दी के विशेषगत प्रभाव का प्रमाण हमें अठारहवीं शताब्दी में मिलता है[1] । जबकि लालदास (कृष्णदास) बाबाजी ने नाभादासजी के मूल हिन्दी भक्तमाल (रचनाकाल संवत् १६४२– १६८० वि० सं०[2]) एवं उनके शिष्य प्रिया दासजी की भक्ति रस-बोधिनी टीका (रचनाकाल १७६९ वि० सं०) को आधार मानकर बंगला भक्तमाल का निर्माण किया है । डा० सुकुमार सेन महोदय का मत है 'मूल भक्तमाल नाभाजी ने ब्रजभाषा में लिखा था प्रियादास ने टीका लिखी थी इसी मूल और टीका का अवलम्बन करके अनेक भक्त-कहानियों को जोड़कर लालदास ने गौड़ भाषा-छन्द' में सत्ताईस मालाओं के सुवृहत् भक्तमाल का गुम्फन किया था[3] ।"

---

१ डा० चटर्जी इसका अनुवाद सत्रहवीं शताब्दी का मानते हैं । देखिये अ० भा० भू० पृ० १३६ ।

२ मि० ब० वि० प्र० सं० पृ० ३११ ।

३ 'मूल भक्तमाल लिखियाछिलेन नाभाजी ब्रजभाषाय सप्तदशे (१५६०—६१) टीका लिखियाछिलेन प्रियादास । एइ मूल ओ टीका अवलम्बन करिया एवं अनेक नूतन भक्तकाहिनी योग करिया लालदास 'गौड़भाषा छन्दे' सातास 'माला' य सुवृहत् 'भक्तमाल गाँथियाछिलेन (बां० सा० इ० पृ० सं० पृ० ६०८) । मुद्रण १८३८ बंगबासी कार्यालय से प्रकाशित संस्करण ।

भक्तमाल के सर्वप्रिय होने के कारण उस समय भक्तमाल के बंगाली करण की बड़ी आवश्यकता थी जैसे कि ग्रंथकार स्वयं स्वीकार करते हैं "मूल भक्तमाल ग्रंथ ब्रजभाषा में होने के कारण सर्व-साधारण नहीं समझ सकते थे। इसलिये गौड़ीय भाषा (बंगला) में भावानुसार कहा है रचना के अनुसार कहना ठीक नहीं समझा। यथाशक्ति जोड़कर कहा है। कोई इस पर उपहास नहीं करें। जैसा मुझे आता था वैसा वैष्णवों का गुणगान किया है। अतएव टीका का अर्थ भी मैंने अपनी बुद्धि के अनुसार किया है। रचना मन संतोष के अनुसार की है। प्रिया दासजी ने अतीव संक्षेप में वर्णन किया था। अतः जन-साधारण की मति से बाहर थी, किसी-किसी स्थान पर कुछ-कुछ विस्तार से उनके पीछे-पीछे कहा है'[1]। बंगला भक्तमाल के ग्रन्थकार (लालदास या कृष्णदास बाबाजी) नाभादास के मूल और प्रियादास की टीका का ऋण स्वीकार करते हुए लिखते हैं :—

'वंदो श्रीअग्रदास और शिष्य नाभा।
जेंहो कैला भक्तमाल सज्जनेर शोभा॥
चारियुगेर भागवत गणेर चरित्र।
भक्तमाल ग्रंथ कैल परम-पवित्र॥
जाहार श्रवणे उपजये कृष्ण रति।
वैष्णव चरण रजे हय दृढ़मति॥
महातमोमति अतिनिन्दुक जे हय।
श्रवणे अवश्य तार श्रद्धा उपजे॥

(बं० भ० पृ० २)

अर्थात् मैं श्री अगरदासजी की वंदना करता हूँ जिनके शिष्य नाभादासजी हैं। जिन्होंने भक्तों के सुनाने के लिये भक्तमाल का निर्माण किया था। चार युगों के भक्तजनों के चरित्र पवित्र भक्तमाल ग्रंथ में मिले हैं। जिनके स्मरण से कृष्ण भगवान् में प्रेम उत्पन्न होता है। वैष्णवों की चरण रज में दृढ़मति होती है। कोई यदि महातमोमति, अतिनिन्दुक भी हो उसकी भी इसके श्रवण करने से श्रद्धा उत्पन्न होती है।

---

१ अब हय ब्रजभाषा सबे बुझे नाहि। सेहेतु गौड़ीया भाषये भेदीमत कहि॥
रचना पूर्वक कहिबारे नाहि जानि। यथाशक्ति योजिया मिलाइया भनि॥
उपहास केह नाहि करिह इहाते। वैष्णवेर गुणगान करि कोन मते॥
अतेव टीकार अर्थ बुद्धि साध्यमते। रचिया कहिब भाव मन बुझाइते॥
यथा यथा प्रियादास संक्षेपेते अति। वर्णिला ना बोझाय साधारणमति॥
सेइ सेइ कोन कोन स्थाने किछु किछु। विस्तार करिया कहिलांर पाछु पाछु॥
(बं० भ०, पृ० २)

भक्तमाल का प्रभाव बँगला-साहित्य बँगाली वैष्णवों एवं बंग समाज पर युग-युगान्तर से गंभीर और आशातीत रहा है। यह भक्तों की माला का मंदार कुसुम है। जिसकी सौरभ दिग्दिगान्तर को आनंदमय करती रही है। इस बँगला भक्तमाल ग्रंथ से ही बँगाली-हृदय में विल्वमंगल जयदेव तुलसीदास रघुनाथदास, प्रबोधानंद सरस्वती रूप सनातन और जीव गोस्वामी श्रीधर स्वामी बोपदेव शंकर, रामानुज मीराबाई करमेतीबाई और कबीर आदि तत्व रस निमग्न महापुरुषों की ज्ञान भक्ति और वैराग्य की वैचित्र्यमयी जीवन-लीला जगमगा रही है। भक्तमाल की महिमा को प्रकट करने वाला एक मर्मस्पर्शी बँगला प्रवाद* है।

"यदि थाके किछु मने गोलमाल तबे पड़ भक्तमाल।"

अर्थात् यदि मन में कुछ गोलमाल हो तो तब भक्तमाल पढ़ना चाहिये।

बँगला भक्तमाल ग्रंथ हिन्दी भक्तमाल का अक्षरशः अविकल अनुवाद नहीं है। बँगला भक्तमाल ग्रंथ को हिन्दी भक्तमाल के आधार, अनुकरण एवं अवलम्बन (Adaptation) पर विरचित कह सकते हैं। अतः हिन्दी भक्तमाल का बँगला भक्तमाल पर प्रभाव का स्पष्टीकरण करने के लिये अध्ययन की रूपरेखा इस प्रकार हो सकती है —

(१) प्रमुखतः हिन्दी भक्तमाल के भक्तों की नामावली का आधार लेकर लालदास बाबाजी ने अपने ग्रंथ का निर्माण किया है।

(२) बँगला भक्तमाल की बहुत आख्यानों का गुम्फन हिन्दी भक्तमाल के प्रसंगों के आधार पर हुआ है।

(३) हिन्दी भक्तमाल से बहुत हिन्दी पद (लगभग ४५ पद) बँगला भक्तमाल में अक्षरशः उद्धृत हैं। हिन्दी के अनेक पदों का बँगलानुवाद भी बँगला भक्तमाल में हुआ है।

(४) बँगला भक्तमाल में अनेक प्रसंगों का प्रसार हिन्दी भक्तमाल के चरित्र लघुवर्णनात्मक पदों के आधार पर हुआ है। अर्थात जिस चरित्र एवं प्रसंग का वर्णन हिन्दी भक्तमाल के ग्रंथकारों ने अतीव संक्षेप में किया है बँगला भक्तमाल के रचयिता ने बहुत विस्तार के साथ किया है। मूलगत तथ्य या सारांश तो हिन्दी भक्तमाल का है, किन्तु विशेष वर्णन कौशल बँगला भक्तमाल का अपना है।

(५) लालदास बाबाजी ने भी अपने ग्रंथ में कुछ हिन्दी पदों की रचना की है। गोविन्ददास और हरिरामव्यासजी अर्थात भक्तव्यासजी के भी एक दो हिन्दी पद बँगला भक्तमाल में उद्धृत हैं।

(६) शेष प्रसंग चरित्र वर्णन बँगला भक्तमाल के मौलिक हैं किन्तु सम्पूर्णतया प्ररणा छाया अनुकरण एवं वर्णनशैली हिन्दी भक्तमाल से ही उधार

---

*प्रवाद—सोसोसित सी० आ० भाग पृ० १००६।

ली गई है। अन्त में यह कहा जा सकता है "बंगला भक्तमाल के गुम्फन में कुछ सूत्र और फूल-पंखड़ियाँ हिन्दी भक्तमाल से उधार ली गई हैं, और कुछ रंगबिरंगे सूत्र और सौन्दर्य-सुगन्ध सम्पन्न प्रसून लालदास बाबाजी के अपने हैं, अतः दोनों के मणिकांचन संयोग से ही बंगला-भक्तमाल का सृजन एवं गुम्फन हुआ है जिसका सौन्दर्य सौरभ आज तक बंग देश में अविरल रूप में प्रवहमान है।"

अतः किंचित-विस्तार के साथ उपयुक्त-रूपरेखा का विवेचन बोधगम्य है।

१ हिन्दी भक्तमाल की वह भक्त-नामावली जो बंगला-भक्तमाल में गृहीत (Adopted) है, निम्न प्रकार है:—

प्रथम माला —

१	(बं॰भ॰) श्री नाभादास जी	पृ॰ १=	(हि॰भ॰) श्री नाभाजी	पृ॰	११ १६

द्वितीय माला —

२	(बं॰भ॰) महाप्रभु चैतन्य	" ६=	" कृष्ण चैतन्यप्रभु	"	१७१
३	" श्री नित्यानन्द	" ६=	" श्री नित्यानंदजी	"	१७०
४	" रघुनाथदास गोस्वामी	" ११=	श्री रघुनाथगोसाईंजी"		१६६
५.	" श्री रूप	" ११=	श्री रूपजी	"	१८६
६	" श्री सनातन	" ११=	श्री सनातन जी	"	१८६
७	" श्री जीव गोस्वामी	" ११=	" श्रीजीव गोसाईंजी		२०३
८	" श्री गोपाल भट्ट	" २१=	" श्रीगोपाल भट्टजी "		२०४
६.	" श्री मधु पंडित ठाकुर	" २४=	श्री मधु गोसाईंजी "		२०६

चतुर्थ माला —

१०	(बं॰भ॰) श्री अजामिलजी	" ४१=	" श्री अजामिलजी	"	२०
११	" हनुमानजी	" ४४=	" श्री हनुमान जी	"	२१
१२	" बभीषणजी	" ४२=	" श्री विभीषणजी	"	२४
१३	" श्री शबरीजी	" ४६=	" श्री शबरीजी		२६
१४	" खगपति जटायु	" ४८=	" श्री जटायु जी	"	२८
१५.	" अम्बरीष महाराजा	" ४६=	" राजा अम्बरीषजी "		२८
१६	" श्री विदुर जी	" ५२=	" श्री विदुर जी	"	३३
१७	" श्री सुदामाजी	" ५३=	" श्री सुदामा जी	"	३४
१८	" श्री चंद्रहास राजा	" ५४=	" राजा चंद्रहास जी "		३८

पंचम माला —

१६.	(बं॰भ॰) श्री कुन्तीजी	" ५७=	" श्री कुन्ती जी	"	४२
२०	" श्री द्रौपदीजी	" ५७=	" श्री द्रौपदीजी	"	४३

	(बं० म०)			(हि० म०)		
२१	श्री शुकदेव	पृ०	५६=	" शुकदेव जी	पृ०	४४
२२	श्री प्राचीन बर्हिराजा	"	५६=	' प्राचीन बर्हिराजा	"	४४
२३	श्री वाल्मीकिजी	"	६१=	" श्री वाल्मीकजी	"	४५
२४	द्विवाल्मीकजी	"	६२=	" स्वपच वाल्मीकि		४५
२५	" श्री रुक्मांगदराजा		६४=	" राजा श्री रुक्मांगद	"	४६
२६	" श्री हरिश्चन्द्र राजा	"	६७=	" हरिचन्द	"	४४
२७	श्री विध्यावलीजी	"	६७=	' रानी विध्यावली		५०
२८	श्री मोरध्वज राजा		६७=	,, राजा श्रीमोरध्वजजी	,,	५
२९	,, अलर्कजी		६८=	,, श्री अलर्कजी	,,	५१
३०	,, श्री रंतिदेव		७०=	श्री रंतिदेवजी		५१
षष्ठम् माला :—						
३१	(बं०म) श्री गुह राजा		७२=	राजा श्री गुहजी		५४
३२	श्री परीक्षित महाराज	,,	८२=	,, राजा श्री परीक्षितजी	,,	५७
३३	श्री शुकदेव गोस्वामी	,,	८३=	श्री शुकदेवजी	,,	५७
सप्तम माला :—						
३४	(बं०म०) भक्तराज श्रीप्रह्लाद	,,	८६=	,, प्रह्लादजी		५८
अष्टम् माला :—						
३५	(बं०म०) भक्तराज श्रीअक्रूर		११२=	,, ,, अक्रूरजी	,,	६०
नवम् माला —						
३६	(बं०म) श्री बलि महाराज	,,	११२=	,, बलिजी	,,	६०
दशम् माला —						
३७	(बं०म०) श्री बोपदेव गोस्वामी	,,	१४६=	बोपदेवजी	,,	६८
३८	,, श्री रामानुज स्वामी	,,	१४७=	,, श्री रामानुजजी	,,	६८
३९	,, श्री निम्बादित्य स्वामी	,,	१४८=	,, निम्बादित्यजी		६७
४०	,, श्री लालाचार्य	,,	१४६=	,, लालाचार्यजी (श्री रामानुजजी के जामाता)	,,	६०
एकादश माला —						
४१	(बं म)गुरुभक्त वैष्णव		१५१=	,, श्रीपाद पद्मजी		७२
४२	,, श्री रंग वणिक	,,	१५२=	,, ,, रंगजी		७४
४३	श्रीकृष्णदास साधु	,,	१५३=	पयहारी श्रीकृष्णदासजी	,,	७४
४४	श्री कल्हूजी	,,	१५३=	,, श्री कोल्हदेवजी	,,	७५
४५	,, श्री अग्रदासजी	,,	१५४=	,, स्वामी श्री अग्रदासजी	,,	७७

	(भ०म०)		(हि०म०)	
४६	श्री शंकराचार्य	पृ० १५५=	श्री स्वामी शंकराचार्यजी	पृ० ७८
४७	" नामदेवजी	१५७=	" " नामदेवजी	७९
द्वादश माला —				
४८ '	" जयदेव गोस्वामी	१६४=	, जयदेवजी	, ८६
४९ "	श्रीधर स्वामी	१७२=	, श्रीधीर स्वामीजी	९२
५०	बिल्वमंगल महाराज	१७४=	" बिल्वमंगलजी	९५
त्रयोदश माला :—				
५१ "	विष्णुपुरी गोस्वामी	" १८४=	विष्णुपुरीजी	" १००
५२ " "	ज्ञानदेवजी	१८५=	" ज्ञानदेवजी	१०१
५३ " ,	लोचनजी	, १८५=	त्रिलोचनजी	" १०२
५४ " "	वल्लभाचार्य	" १८६=	वल्लभाचार्यजी	१०५
५५ ,	भक्तदास राजा	, १८७=	' भक्तदासजी	' १०६
५६ " "	लीला अनुकरण	१८८=	" लीलानुकरण भक्त	१०७
५७ " ,	रतिवतबाई	" १८९=	" रतिवन्तीजी	१०७
५८	पुरुषोत्तमवासी महाराज	" १८९=	प्रसादनिष्ठ राजा	१०८
५९ " "	करमाबाई	१९०=	" कर्माबाई जी	" १०९
चतुर्दश माला —				
६०	श्रीसिल्ला पिल्ला देवि कन्याद्वय	, १९२=	सिल्ले पिल्ले भक्त उभय बाई	" ११२
६१	" अन्य भक्तनिष्ठ राजा	१९४=	भक्तों के हित हेतु जिन्होंने सुत को विष दिया वे दो बाई	११२
६२	श्री मामा माधिमाहय	१९६=	' साधु सालजा की	" ११५
६३ "	महाराज हंस प्रसंग	" १९७=	" हंस भक्तों का आख्यान	" ११६
६४	" महाजन सदावती	" १९९=	महाजन सदाव्रतीजी	११८
६५ , "	भुवन चौहान	" २००=	श्री भुवनजी चौहान	' ११९
६६ "	रूप चतुर्भुज ठाकुर पुजारी	२०१=	' पडादेवा जी	१२२
६७ " "	कमधुज	" २०३=	" श्री कामध्वजजी	" १२३
६८ "	महाराज जयमल	२०३=	श्री जयमलजी	" १२४
६९	" गोपाल भक्त	२०४=	" एक ग्वाल भक्तजी	, १२५

	(बं०म०)		(हि०म०)	
७०	श्री निष्किंचन ब्राह्मण	पृ० १६४=	श्री विप्र हरिदासजी	पृ० १२६
पंचदश माला —				
७१	" " छोटे विप्र और बड़ विप्र	" २०५=	" " छोटे विप्र और बड़ विप्र	" १२७
७२	" " क्षेमराज रानी	" २०९=	" " साखी गोपालजी	" १२९
७३	" " रामदास साधु	" २१०=	" " रामदासजी	" १२९
७४	वसु स्वामी	२११=	" " वसु स्वामीजी	" १३१
७५	" " नन्ददास साधु	२१२=	" " नन्ददासजी	" १३२
७६	मलूकी	" २१३=	" मलूकजी	१३२
७७	" वारमुखी	" २१३=	" वारमुखीजी	१३२
७८	" राजा भक्तप्रिय	२१४=	" " एक वेषनिष्ठ राजा	१३६
७९	" हरिभक्त रानी	" २१५=	" एक भक्तनिष्ठ राजा तथा उनकी रानी	१३९
८०	" गुरुनिष्ठ साधु	" २१६=	" " गुरु शिष्य	"
८१	" कबीरजी	" २१७=	" " कबीरदासजी	१४१
षोडश माला —				
८२	" रुईदास	" २२१=	रैदास	" १४७
८३	पिपाजी	" २२०=	" पीपाजी	" १४९
सप्तदश माला —				
८४	" जगन्नाथ माधवदास	२६८=	" " माधवदासजी	१६४
८५	" " सूरदास	" २७६=	" " सूरदासजी	१७४
८६	" केशव भट्ट	" २७७=	" " केशव भट्टजी	" १७६
८७	" हरिव्यासजी	" २७७=	" हरिव्यासजी	" १७८
विंश माला —				
८८	" " त्रिपुरदास	" २८०=	" त्रिपुरदासजी	" १७९
८९	" कृष्णदास महानुभाव	" २८१=	" " कृष्णदासजी	" १८२
९०	" " विट्ठलदास	" २८२=	" " विट्ठलदासजी	" १८४
९१	" " नारायण भट्ट	" २८३=	" नारायण भट्टजी	" १८८
९२	" " सनातन रूप	" २८४=	" " रूपजी सनातनजी	" १८९
९३	" " हरिवंश गोस्वामी	" २८६=	" हित हरिवंशजी	१९२
९४	" " हरिदास स्वामी	" २८७=	" " हरिदासजी रसिक	१९६
९५	" " हरिराम व्यासजी	" २८८=	" व्यासजी	" १९९

	(सं०भ०)		(हि०भ०)	
९६	,, श्री प्रथि भगवान	पृ० २६०=	,, श्री प्रति भगवानजी	पृ० २०५
९७	,, ,, रसिक मुरारीजी	,, २६१=	,, रसिक मुरारीजी	,, २०८
९८	,, ,, सधना	,, २६२=	,, ,, सदन श्री कसाई	,, २१२
९९	,, ,, काशीश्वर गोसाई	,, २६४=	,,गोसाई श्रीकाशीश्वरजी	,,२१३
१००	,, ,, सोजेजी	,, २६५=	,, ,, सोजेजी	,, २१४
एकविंश माला —				
१०१	,, रांकापति बांकाख्यौ	,, २६६=	,, ,, रांकाजी श्री बांकाजी	,, २१५
१०२	,, ,, सदु भक्त	,, २६७=	,, ,, सदु भक्तजी	,, २१६
१०३	,, संत भक्त	,, २६७=	,, ,, सन्तजी	,, २१७
१०४	,, ,, त्रिलोक सोनार	,, २६७=	,, ,, त्रिलोकजी	,, २१७
१०५	,, प्रताप रुद्र राजा	,, २६६=	,, ,, रामप्रताप गजपतिजी	, २१९
१०६	,, ,, गोविन्ददास गोस्वामी	, ३०२=	,, , गोविन्ददास स्वामीजी	,, २२०
१०७	,, ,, कृष्णदास गु आमाखी	,, ३०५=	, ,, गु आमाणीजी	,, २२२
१०८	,, ,, पयोस दे रानी	,, ३०७=	,, ,, पयोस दे रानी	,, २२३
१०९	,, ,, लालाजी	,, ३०८=	,, ,, लालाजी	,, २२३
द्वाविंश माला —				
११०	,, ,, नरसी भक्त	,, ३१०=	,, , नरसी मेहताजी	,, २२९
१११	,, ,, मंगल भक्त	,, ३१४=	,, भक्त श्री मंगलजी	२४२
११२	,, ,, कलविर राजा चतुर्भुज	,, ३१८=	,, राजा चतुर्भुजजी	२४४
११३	,, ,, मीराबाई	,, ३२०=	,, ,, मीराबाईजी	,, २४७
११४	,, , पृथ्वीनाथ राजा	,, ३२१=	,, ,, पृथ्वीराजजी	,, २५२
११५	,, ,, मधुकर शाहा	,, ३२२=	,, ,, मधुकर शाहजी	,, २५५
त्रयोविंश माला —				
११६	, ,, मन्य सूरदास	,, ३२७=	,, ,, सूरदास मदनमोहनजी	२६३
११७	,, ,, मुरारिदास भक्त	,, ३२८=	,, ,, मुरारिदासजी	,, २६६
११८	, ,, तुलसीदास महात्मा	,, ३२९=	,, ,, तुलसीदासजी	,, २६८
११९	,, करमानन्द	,, ३३१=	,, ,, करमानन्द जी	,, ८४०
१२०	,, परशुराम रामगुरु	,, ३३८=	,, ,, परशराम जी	,, २७८
१२१	,, ,, गदाधर भट्ट	,, ३३९=	,, ,, गदाधर भट्ट जी	,, २८०
चतुर्विंश माला —				
१२२	,, ,, माधवविहेर रानी	,, ३६४=	, ,, रत्नावती जी	,, २८९
१२३	,, , विदुरनाम भक्त	,, ३६९=	, ,, जयतारन विदुरजी	,, ३००

	(बँ०भ०)		(हि०भ०)	
१२४	,, श्री चतुर स्वामी	पृ० १६७=	श्री स्वामी चतुरशेनमन नागा (चतुरदासजी)	पृ० १००
१२५	,, केवल कूबा	,, १६८=	,, कूबाजी (केवलदास)	,, १ २
१२६	हरिदास वणिक	१७१=	हरिदासजी (वणिक)	,, १०८
१२७	करमेतिबाई	१७१=	,, करमैतीजी	, ३११
१२८	,, ,, खड्गसेनजी	,, १७४=	,, ,, खड्गसेनजी (कायस्थ)	११७
१२९	,, प्रेमनिधि	१७४=	,, , प्रेमनिधिजी	१२१
१३०	,, केशवराम भक्त	,, १७५=	,, केशव भटेराजी	, १२५
१३१	नरवरेर राजा	,, १७६=	राजा नरवर गढ़का	,, १२६
१३२	,, ,, जयदेव पमार	,, १७६=	,, ,, जयदेव	१२९
पंचविंश माला —				
१३३	,, कृष्णदास सोनार	१७९=	कृष्णदासजी	१३१
१३४	,, कृष्णदास साधु	,, १७९=	स्वामी कृष्णदास पयहारी	१३४
१३५	,, गदाधर भक्त	१८०=	,, गदाधरदासजी	१३२
१३६	,, भगवानदास	,, १८०=	,, भगवानदासजी	,, १३७
१३७	कुमार विधान	,, १८१=	,, ,, नृपमणि जगतसिंह	,, १४०
१३८	,, लालमतिबाई	,, १८२=	लालमतिजी	,, १४५

बँगला भक्तमालकार ने इस प्रकार हिन्दी भक्तमाल और प्रियदासजी की टीका का अवलंबन कर अनेक चरित्रों को अपनाया है और उन्हीं के आधार पर अपने अद्भुत ग्रन्थ बँगला भक्तमाल का निर्माण किया है।

बँगला भक्तमाल की अधिकांश मालाओं का आधार हिन्दी भक्तमाल है। अतः मालागत प्रभाव पर विहंगम दृष्टि डालना उपयुक्त है। प्रथम द्वितीय और तृतीय मालाएँ हिन्दी भक्तमाल की अनुवाद मात्र हैं। द्वितीय माला में चैतन्य पार्षद गुण-वर्णन तीसरी माला में श्री गौरांग यशोदा स्य आदि बँगला के अपने हैं। चौथी और पाँचवीं माला का आधार भी हिन्दी भक्तमाल है। छठी माला में चरित्र श्री गुरुराजा श्री परीक्षित महाराज और चरित्र श्री शुकदेव गोस्वामी आदि सब हिन्दी भक्तमाल के अनुसार हैं। सातवीं माला में लालदासजी स्वयं स्वीकार करते हैं —

नामजीर वर्णन आर प्रियाजीर टीका।
संक्षेप कहिला किन्तु अमृत अधिका।

किंचित विस्तार करि कहिबारे चाहि।
चाँद धरबारे मति कीटसम ताहि ॥
(बं० भ० पृ० ६६)

अर्थात् 'नाभाजी का वर्णन और प्रियादास जी की टीका संक्षेप से वर्णित हैं किन्तु अमृत से भी अधिक है। मैं किंचित विस्तार के साथ कहना चाहता हूँ किन्तु मेरी मति बहुत छोटी है। आठवीं माला में चरित्र अक्रूर भक्तराज चरित्र श्री बलि महाराज आदि प्रसंग हिन्दी भक्तमाल के अनुसार हैं। नवम माला में हिन्दी का केवल निम्न पद है —

बाल वृद्ध नर-नारी जिते हों अर्थो उन पाव रज
गोपनंद उपनंद ध्रुव धरानंद महरि जसोदा।
(बं० भ० पृ० १२१)

दसवीं माला में श्री सम्प्रदाय प्रणाली श्री निम्बादित्य स्वामी, श्री रामानुजाचार्य आदि प्रसंग हिन्दी भक्तमाल के अनुसार गुम्फित हैं। एकादस समस्त माला के प्रसंग हिन्दी भक्तमाल से गृहीत हैं। बारहवीं माला में चरित्र श्री जयदेव गोस्वामी चरित्र श्रीधर स्वामी एवं चरित्र श्री बिल्वमंगल महाशय आदि का आधार हिन्दी भक्तमाल है। तेरहवीं माला में सीतानुकरण चरित्र के अतिरिक्त सब बंगला भक्तमाल का मौलिक है। चौदहवीं माला में मीननाथ गोरखनाथ के प्रसंग के अतिरिक्त समस्त प्रसंग हिन्दी भक्तमाल के हैं। पन्द्रहवीं माला में चरित्र छोटे विप्र और बड़े विप्र हरिभक्त यवन श्री श्रेष्ठता आदि प्रसंगों के अतिरिक्त समस्त हिन्दी भक्तमाल के अनुसार हैं। सोलहवीं माला में रविदास एवं पिपाजी के चरित्र हिन्दी भक्तमाल के आधार पर हैं। सत्रहवीं माला में हिन्दी का केवल निम्न पद है —

'सबहूँ रे मन श्रीनन्दनन्दन अभय चरणारविंद रे' '
(बं० भ० पृ० २१८)

अठारहवीं माला पूर्णतया बंगला भक्तमाल की है। उन्नीसवीं माला में श्री जगन्नाथ माधवदास श्री सूरदास श्री केशव भट्ट तथा श्री हरिव्यासजी आदि चरित्र हिन्दी भक्तमाला से लिए गए हैं। बीसवी माला पूर्णरूपेण हिन्दी भक्तमाल के अनुकरण पर विरचित है। इक्कीसवी माला में एक दो प्रसंग के अतिरिक्त सब हिन्दी भक्तमाल का अवलंबन है। बाइसवी माला में श्री प्रकाशानंद सरस्वती के प्रसंग के अतिरिक्त समस्त प्रसंग हिन्दी भक्तमाल के हैं। तेइसवीं माला में श्री मुरारीदास भक्त श्री तुलसीदास श्री करमानंद श्री परशुराम राजपुत्र और श्री गदाधर भट्ट आदि चरित्र हिन्दी भक्तमाल से उद्धृत हैं। इस प्रकरण बंगला भक्तमाल का मौलिक विषय है। ग्रंथकार स्वयं लिखते हैं —

नाभाजीर रसतत्त्व स्पष्ट ना वर्णिला।
केवल कहिला नाम भट्टे शुनाइला॥
अतएव नाभाजीर आशय अमृत।
बुझिया ये लिखि किछु शुद्ध रसरीत॥
कर्णे रसायन राधाकृष्णेर चरित।
श्रीव जीव गोस्वामीर श्रीमुख वर्णित॥
रस-प्रकरण ग्रन्थ साधुर चरित।
दोहा आदि लिखिलाम वर्णिब मनोनीत॥

(बँ० भ० पृ० ११६)

अर्थात् नाभाजी ने रसतत्त्व का स्पष्ट वर्णन नहीं किया, केवल कथन मात्र भट्ट को सुनाया था। अतएव नाभाजी के आशय-अमृत को समझकर कुछ शुद्ध रसरीत लिखता हूँ। कर्ण रसायन राधाकृष्ण का चरित है जो श्री जीव गोस्वामी के मुखार विन्द से निकला है। रस-प्रकरण ग्रन्थ साधु का चरित है। दोहा आदि लिखकर अपना मन्तव्य प्रकट करता हूँ।[1] चौबीसवीं और पच्चीसवीं दोनों मालाएँ हिन्दी भक्तमाल के अनुकरण पर विरचित हैं। शेष छब्बीसवीं और सत्ताईसवीं दोनों मालाएँ बँगला भक्तमाल की मौलिक विषय हैं।

---

१ देखिये—लालदास जी का हिन्दी दोहा रस-प्रकरण के सम्बन्ध में—

रसमय मूर्ति श्री गोकुल नित्य विहार।
मन में उपजि वासना और भव व्यवहार॥
राधा प्रेम निज माधुरी और आपने हि रीत।
बहु आस्वादन-हेतवे मन में उपजी प्रीत॥
निधि निज राधानाथ करि श्याम भेष मुनि धीर।
मन और नागर वचन में राधा बिनु नहीं और॥
मन में राधानाथ करि आस्वादन निज प्रीत।
हिय बसि रूप गोसाईं के प्रकटिये रसरीत॥
तिनि करि उज्ज्वलनीलमणि निजमय के हिय-हार।
बरसाये जन रसिकनी रससागर के पार॥
सो अनुमति मम भागवत लिहि चरणंकज आश।
युगलप्रेमरसबोधिका रचनु है हरिदास॥

(बँ० भ०, पृ० ११६)

पहले कहा जा चुका है लगभग ४२ हिन्दी पद बँगला भक्तमाल में उद्धृत हैं। वे ज्यों के त्यों बँगला-भक्तमाल में अपना लिए गए हैं। बँगला और हिन्दी के उच्चारण भेद के कारण कुछ पाठान्तर अवश्य हो गया है। निम्न उदाहरण से स्पष्ट होता है,—

बँगला भक्तमाल—

रतन अपार सार सागर उधार किये।
लिये हित चायके बनाये माल करी है॥
सब सुख साज रघुनाथ महाराजजु को।
भक्तसों विभीषणजु आनि भेंट धरी है॥
सभाही की चाह अवगाह हनुमान गरे।
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है॥
राम बिन काम कौन फोरि मनि दीने डारि।
खोलि त्वचा नामहि दिखायो बुद्धि हरी है॥

(बँ० भ०, पृ० ४४)

हिन्दी भक्तमाल—

रतन अपार क्षीरसागर उधार किये,
लिये हित चायकै बनाई माला करी है।
सब सुख साज रघुनाथ महाराजजू के
भक्तसों विभीषण जू आनि भेंट धरी है॥
सभाही की चाह अवगाह हनुमान गरे,
डारि दई सुधि भई मति अरबरी है।
रामबिन काम कौन फोरि मणि दीनो डारि,
खोलित्वचा नाम ही दिखायो बुद्धि हरी है॥ छंद २१॥

(हि० भ०, पृ० २१)

अनेक हिन्दी पदों का अनुवाद भी हुआ है और अनुकरण व विस्तार भी हुआ है। निम्न उदाहरण से स्पष्ट है:—

बँगला भक्तमाल —

श्रील सुरदास साधु जगते विख्यात।
परम रसिक कृष्ण निष्ठ सदाव्रत॥
ताहार कवित्त शुनि हय के आह्लाद।
अम्बर-पुलक-भावे शिर ना धारय॥
महा-अनुभव हय विरक्त महा प्रेमी।
श्रीकृष्ण-साक्षात वास वृन्दावन भूमि॥

अष्टोत्तर सिद्धि येहु अपेक्षा करिल।
चारि मुक्ति आदि चतुर वर्ग तेयागिल।
शिष्यप्रशिष्य क्रमे जगत तारिल।
यार नाम-भेला लोके आश्रय करिल॥
श्रीमान सूरदास साधु विजयत-सूर।
जगतेर आराध्य मानुष्य-सुरासुर॥

(बँ० भ० पृ० २७६)

हिन्दी भक्तमाल—

सूर कवित सुनि कौन कवि जो नहिं सिर चालन करै॥
उक्ति चोज अनुप्रास बरन अस्थिति अति भारी।
बचन प्रीति निर्बाह अर्थ अद्भुत तुकधारी॥
प्रतिबिंबित दिवि दिष्टि हृदय हरिलीला भासी।
जनम करम गुन रूप सबै रसना परकासी॥
बिमल बुद्धि गुन और की जो यह गुन श्रवननि धरै।
सूर कवित सुनि कौन कवि जो नहिं सिर चालन करै॥७३॥

(हि० भ० पृ० १४७)

बँगला भक्तमाल में अनेक प्रसंगों का प्रसार हिन्दी भक्तमाल के लघु वर्णनात्मक पदों के अनुसार हुआ है। अर्थात् हिन्दी भक्तमाल में जिस चरित्र का छोटे से छोटे पद में वर्णन किया है बँगला भक्तमाल में उसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। निम्न उदाहरण से स्पष्ट है —

बँगला भक्तमाल—

निम्बादित्य एक दण्डी गृहे निमंत्रिया।
द्रव्य-आयोजन-पाके सन्ध्या आसि हैला॥
यति शास्त्र-वचन पड़िया कहे तबे।
रात्रे भिक्षा कभीर निषेध विधि रवे॥
इहा शुनि चिन्तित निम्बादित्य महाशय।
निज शक्ति करे साधु सृजिला उपाय॥
श्रीविनाथ आज्ञाये सुहृत निम्बवृक्ष।
उदय करिला आसि वृक्षोपरि अर्क॥
कृष्ण भक्त अनुरोधे सूर्यदेव आसि।
प्रहरेक दिवा आर्थी एमत प्रकाशि॥
भोजन करिया तथा बैसे जबे यति।
सूर्य निजस्थाने गेला लइया सम्मति॥

तखन प्रहर निशि प्रतीत हइला ।
मंदिर आश्चर्यम बोध तखन जन्मिला ।
कृष्ण भक्त जिष्णादित्य प्रभाव देखिया ॥
चरणे पड़िला मति हरष लइया ।
साधुसम महिमा देखये अद्भुत ॥
कृष्णभक्त हैला अति छाड़ि ज्ञानमति ।
तांहार चरण रज मस्तके धारय ॥
करिया इतोय हइ पाई एक कथा ॥

(बं० भ०, पृ० १४८ १४६)

हिन्दी भक्तमाल—

जिष्णादित्य नाम जाते भयो अभिराम कथा
आयो एक वह ग्राम ज्योंतो करि आयो है ।
नाम को प्रचार भई सन्ध्या भाम भई यती
रतीहू न पाऊ देववचन सुनायो है ॥
भोजन में भोग तापै आदित्य दिखायो ताहि
भोजन करायो पाछे निशिदिशि पायो है ।
प्रकट प्रभाव देखि जान्यो भक्ति भाव जप
राग भाव नाम परयो हृदयो मन भायो है ॥१०२॥

(हि० भ०, पृ० ६७)

माधवदास बाबाजी ने भी अपने समय में कुछ हिन्दी पदों की रचना की है[1] । हरीराम व्यासजी के भी एक-दो हिन्दी पद बंगला भक्तमाल में उद्धृत हैं[2] ।

---

१ देखिये—बंगला भक्तमाल में पृष्ठ संख्या ६१ १२१, १४५, १४६ १४७, १२७ ११६, १४२ व ११० ।

जल सरोवर मीन रमे जाति बूझके बुद्धि ।
जाको जैसे गुरु मिले ताको तैसे सिद्धि ॥ (बं० भ० पृ० ६१)

२ हरिराम व्यासजी का पद इस प्रकार है —

नन्दकुमार अजकुआ नृपति सांवरो
श्री राधिका तरुण मन पटरानी ।
× × ×
चरण हिरदे धोई जहां ना पौंहुचे कोउ ।
श्री व्यास महलन लिया पीकदानि ॥
(बं० भ० पृ० ९६०)

देखिये हिन्दी पाठान्तर नन्दकुमार बोऊ व्यास महलन लिए पीकदानि
(भ० क० पृ० ९६०)

अन्त में श्री अविनाशचन्द्र मुखोपाध्याय के शब्दों में हिन्दी भक्तमाल की महिमा और बंगला भक्तमाल पर उसका प्रभाव निम्न प्रकार है। वे लिखते हैं —"भगवत भक्त महाप्राण नाभाजी ने मानवों के कल्याण साधनोद्देश्य से जाति-धर्म निर्विशेष प्रकृत भगवद् भक्त गणों के चरित्रों को संग्रह करके जन-साधारण के हृदय क्षेत्र में भगवत भक्ति बीज वपन करने के लिए, इस परमोपादेय ग्रंथ की रचना की थी। चरित्र-माधुर्य में इसका एक-एक भक्त एक-एक स्वर्गीय मन्दार कुसुम है। देवभोग्य कुसुमराशि को भक्तिसूत्र में गुम्फन कर उन्होंने जिस माला की रचना की वह इस भूलोक में एकान्त दुर्लभ है। उन महोदय प्रणीत हिन्दी-भक्तमाल और प्रिया दास कृत टीका का अवलम्बन लेकर एवं श्री चैतन्य चरितामृत षट्संदर्भ, लघु भागवतामृत प्रभृति लोकमान्य ग्रंथराशि से लेकर व विविध तत्व संकलन कर भक्त प्रवर श्री लालदासजी ने इस भक्तमाल ग्रंथ की रचना की थी[1]।"

७ :
उपसंहार

प्रारम्भिक भक्ति आन्दोलन तथा भारत में भक्ति-विकास का संक्षिप्त परिचय देकर प्रस्तुत अध्याय में मध्यकालीन गौड़ीय-वैष्णव बंगला पदावलियों में हिन्दी के प्रभाव का प्रतिपादन किया गया है। भक्ति-आन्दोलन के प्रसिद्ध प्रवर्तकों एवं आचार्यों में चैतन्यदेव का प्रमुख स्थान है। बंगला एवं ब्रजमण्डल के घनिष्ठ सम्पर्क का एक प्रमुख कारण चैतन्य महाप्रभु हैं।

उस समय बंगाली वैष्णव और ब्रजमण्डल के वैष्णव लगभग एक जैसे वातावरण में सांस ले रहे थे। कृष्ण-भक्ति एवं उसके साथ-साथ ब्रजभाषा का प्रचार एवं प्रभाव देशव्यापी हो रहा था। अतः बंगाली वैष्णव ब्रजभाषा के सम्पर्क में आकर

---

१ भगवद् भक्त महाप्राण नाभाजी मानवेर कल्याण साधनोद्देशे जाति धर्म निर्विशेषे प्रकृत भगवद्भक्तगणेर चरित्र संग्रह करिया जन-साधारणेर हृदय क्षेत्रे भगवद्भक्ति बीज वपन करिबार प्रयासे एइ परमोपादेय ग्रंथ प्रणयन करेन। चरित्र-माधुर्ये इहार एक एकटि भक्त एक एकटि स्वर्गीय मन्दार कुसुम। एइ देवभोग्य कुसुमराशि भक्तिसूत्रे गांथिया तिनि जे माल्य रचना करियाछेन ताहा भूलोके एकान्त दुर्लभम्। सेइ महोदय-प्रणीत हिन्दी भक्तमाल प्रियादास कृत टीका अवलम्बन करिया एवं श्री चैतन्य चरितामृत षट्संदर्भ लघु भागवतामृत प्रभृति लोकमान्य ग्रंथराशि हइते-विविध तत्त्व-संकलन करिया भक्तप्रवर श्री लालदासजी एइ भक्तमाल ग्रंथ प्रणयन करियाछेन।

(बं० भा० भू० पृ० २)

उससे प्रभावित हुये। गौड़ीय-वैष्णव-पदावलियाँ इसकी साक्षी हैं। इस समय ब्रज भाषा का प्रभाव बंगला भाषा और साहित्य पर पड़ा। यह प्रभाव विशेषकर शब्दावली में अधिक है। इस प्रभाव का विवेचन इस प्रकार हुआ है —

(१) बंगला-वैष्णव पदावलियों में शब्दगत हिन्दी प्रभाव।
(२) „ „ वाक्य विन्यासगत हिंदी प्रभाव।
(३) „ „ पदगत (व्याकरणगत) हिंदी प्रभाव।
(४) भाषा रूपगत हिंदी प्रभाव (मिश्रित भाषा ब्रजबुलि)।
(५) अनुवादावतरणगत हिंदी प्रभाव (श्री भक्तमाल ग्रंथ)।

हिन्दी भक्तमाल के अवलम्बन एवं आधार पर बंगला भक्तमाल और भक्ति-रसामृत सिन्धु का सृजन हुआ था।

अतः उपर्युक्त पंचमुखी प्रभाव विशेषतया १५वीं शताब्दी ई० से लेकर अठारहवीं शताब्दी ई० तक और सामान्यतया आधुनिक काल तक आता है।

१ बंगला वैष्णव-पदावलियों में शब्दगत हिन्दी प्रभाव*

शब्द (अ)	अर्थ	प्रयोग एवं उद्धरण बंगला और हिन्दी
अगोच	ओंछा	बं० अगोच आनन, हृठ न मानये (भूपति प० क० त० पद १६१८)
अगोर	रखवाली करना	बं० पामचरण भुज पुन पुन अगोरइ (प० क० त०, पद २७४२)
अगोरइ	रखवाली या प्रतीक्षा करना	
अचाहे	बेचाह	बं० श्यामर-काय अचाहे हिलायत (कृष्णकान्त प० क० त० पद २८८१) हि० हरिपद विमुख परम गति चाहा (तुलसी रा०च०मा० बा०२६७ पृ० ११२)
अघु	अघ	बं० की अघु मेटल चाहइ (गोविन्ददास, प० क० त०, पद १७४) हि० अघ बिचारि जिये आवहु ताता (तुलसी रा०च० मा० अं० ११ पृ०४१८)

*मूलत अधिकांश शब्द इस शब्दावली में हिन्दी के हैं कुछ बंगला के भी हो सकते हैं कुछ सामान्य भी हैं अतः इस शब्दावली में हिन्दी और बंगला के कुछ शब्द इतने सामान्य और घुलेमिले हैं कि उनमें भेद करना सरल कार्य नहीं है।

अभिसार	अभिसरण	बं० कानु अनुराग बाढ़ये अभिसार (प० क० त० पद २११) इकटक नैन हत सखि को अभिसार (पृ ११८)
अनगनि	असंख्य (अगणित)	बं० मोरबस अनगनि (प० क० त० पद ११५७) हि० मुक्ति मुक्ता अनगने फल (१ ११८)
अनत	अन्यत्र	बं० से तुमि अनत गिया (चैतन्यदास प० क० त० पद ११६०) हि मेरो मन अनत कहाँ सुख पावै । (सूरदास सू सा १।१६८)
अनुमानसु	अनुमान कर	बं० जो हाम हेरलु तें अनुमानसु (प क० त० पद ११९६) करत कोटि बिधि उर अनुमाना (मा २।१९१।२)
अनुमोदइ	समर्थन करता है	बं० कत विदगधजन रस अनुमोदइ (प० क० त० पद ६१७) हि० कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं (मा ७।१२९।१)
अनुरोधइ	अनुरोध करता है	बं० नीलज चीत पिरिति अनुरोधई (प० क० त० पद १९१) हि० राखहुँ सुत करउँ अनुरोधू (मा० २।५१।२)
अनुसरइ	अनुसरण करता है	बं० जेने जेने नयन कोने अनुसरइ (प क० त० पद ९११) हि० नहि कर भ्रकुटि घुमवि बदसंपति जिहि भावार अनुसरइ (१।४८)
अपसोसइ	अफसोस करता है	बं० राधा-कानु एक सग विलसत मनही मन आसोसो (प० क त पद १२२७)
अब	अब	बं अब किहि सो सब केवल कयल सखि— (ज्ञानदास प० क० त पद २१०) हि० अब कैसें बन जात बस्यौ— (सूरदास सू १०।१८५)
अवगाइ	अवगाहन करता है	बं० प्रेम तरंगे अग अवगाई (प० क त० पद ५१) हि० प्रेमबारि अवगाहु सुहावन (मा० बा० २९२१ १)

अवगाहइ	अवगाहन करता है	ब॰ निरिखिक पीत कीन अवगाहइ
		(प॰ क॰ त॰ पद ९४०)
		हि॰ अमय, अपार उदधि अवगाहा
		(मा॰ १६।१)
अवगाहि	डूब कर के	ब॰ माधव कुसुम तोहे अवगाहि
		(प॰ क॰ त॰, पद १७६)
		हि॰ बदन हरि मुखो, माता मन अवगाहि
		(सू॰ सा॰ १०।२२१)
अवगुण	अपगुण	ब॰ छो सब अगुन एकचित बोलत
		मधुरिम वाणी (प॰ क॰ त॰ पद ४८१)
		हि॰ प्रभु मेरे अवगुण चित न धरो (सू॰सा॰)
अवतरि	अवतार लिया	ब॰ ऐसे अवतरी रंगे (प॰ क॰ त॰, पद ११)
		हि॰ धम्य सो हिम गिरिहिं अवतरि। (१८६)
अवधारनुं	धारण करूं	ब॰ मम अवधारि कह सुसम्वाद
		(प॰ क॰ त॰ पद ११८)
अवधारि	धारण करके	ब॰ सुन हे कानूक इह अवधारि
		(प॰ क॰ त॰, पद २११)
अवलम्बई	अवलम्बन करता है	ब॰ दुहुँ रसे माथि दुहुँ अवलम्बई
		(प॰ क॰ त॰ पद २०५)
		हि॰ राम नाम अवलम्बन एकु (मा॰ १।२७।४)
अवलोकई	देखता है	ब॰ अवलोकइ तहिं चलचित नयने
		(प॰ क॰ त॰ पद २१२१)
		हि॰ निशिदिन नहिं अवलोकहिं कोका
		(मा॰ १।८५।१)
अवहुन	मै॰, ऐसे	ब॰ अवहुन अवहुँ मोहे परि होयत
		(प॰ क॰ त॰ पद ११९६)
अवहि	अब	ब॰ अवहि कानु से करवि प्रेम मोमे
		(प॰ क॰ त॰, पद ६७१)
अवहुँ	इस समय	ब॰ अवहुँ राजपथे पुरजन जागि
		(प॰ क॰ त॰ पद १०१२)
आवाने	अज्ञात भाव से	ब॰ आवाने सुमलित बाहु पायाने
		(प॰ क॰ त॰ पद १४६४)

		हिं० विपति विषय न तजहीं, दोनें अधिक आभाव्यौं (वि० प० ६२)
अभाविया	दुर्भाग्य-व्यथित	बँ० मुञि अभाविया विप विषये भाविमा (प० क० त० पद २६८१) हिं० दै अभागहि माय को को राखे सरन समीत (वि० १११)
अभिसापइ	अभिशापा करना	बँ० राधामोहनदास अभिसापइ (प० क० त०, पद २११९) हिं० अस सुकृति नर जाइ जो मन अभिसापहि (मा० ७९)
अभिसारइ	अभिसार करता है	बँ० चलि हइ पावन भूमि जहाँ गोविंद अभिसारि (प० क० त० पद १४७३)
अभिसिंचइ	अभिषेक करता है	बँ० को आगे काहे जानि अभिसिंचई (प० क० त० पद ११७६)
अरु	और	बँ० स्तम्भ काहु अरु आगे पतक अरु (प० क० त० पद १११) हिं० जाति कहावत अरु कृपनाई (मा० २।११।१)
अलकारि	अलकार के	बँ० मीरि दोसत नाहु पनि अलकारि (प० क० त० पद २१०१)
अलसाइ	आलस्य करता है	बँ० जागि जोल अलसाइ (प० क० त० पद २८१८) हिं० जपत जीह रघुनाथ को नाम नहिं अलसातो (वि० १५१)
अहिरिनि	अहीरी	बँ० मैं कहुँ न पकड़े पानि फिरइ अहीरि (प० क० त० पद १४८) हिं० अहिरिन हाथ दहेडि सगुन लेई आवइ हो (रा० ५)
(आ)		
आखर	अक्षर	बँ० गावौं हरि को सोहिलों ही मन आखर दे मोहि (१०।४०) हिं० ढाई आखर प्रेम के पढ़े सो पंडित होय (कबीर)

आँखि	आँख	बँ० भरे कमल दल आँखि (प० क० त० १८११) हिं० अब न आँखि तर आवत कोऊ (मा० १।२९।१)
आँटि	गुड़ करके	बँ० कटि आँटि परिपाटि परे निम आटिया (प० क० त० पद २७८)
आइसुँ	आऊँ	बँ० आइ आज अनु असु किरूप देखिया आइसु (प० क० त० पद २७९)
आओमुँ	आजाऊँ	हिं० बरसा बिगत सरद रितु आई (मा० ४।१६।१)
आग	अग्नि	हिं० आगि अग्नि सहना सुगम सुगम खड्ग की धार (कबीर)
आगरि	आगर	बँ० अमृत गुनि रूपेर आगरि (प० क० त० पद १८७) हिं० मोहन ते रस रूप आगरी कहतिन आगि निकाइ (सू० सा० १२१५)
आगि	आगे	बँ० सहज अवस आगे अनुसरे (प० क० त० पद ११८) हिं० पाछिले करम समारत नाहिं कछु आगे
आगिला	अगला	बँ० कर जोड़ आगे दाँड़ाइयाँ (प० क० त०, पद २२११) हिं० श्रीदामा असे रोइ आइ कहियो नंद आगे (सू० सा० ९८९)
आगु	आगे	बँ० मो यदि सिमाड़ आगिला आटे (प० क० त० पद १७९)
आगुबाढ़ि	आगे बढ़ के	बँ० आगुबाढ़ि देखिला गोविन्द (प० क० त० पद २८१७)
आगुयोनि	अगवानी	बँ० हाम आगुवानी आगुनि पठन (प० क० त० पद ७१) हिं० सेवक सदन स्वामि आगमनु (मा० २।९।१)

आगुयान	अगला	बं० आगरे एकसि चलसि धनि आगुयान (प० क० त० पद २११)
आगे	आगे	हि० चरनि सिधारिय सुधारिय आगिलो काज (वि० १।८२)
आमोर	अधीर स्नान	बं० हेर देखे प्रति अंग अनंग आमोर (प० क० त पद ७१)
आमोरि	स्नान करके	बं० तब हाम करे आमोरि (प० क त० पद २६१)
आवन	आगमन	बं० आवन माझे आय बहु आकिल (प० क० त पद १७४८)
आँगुटि	अँगूठी	बं० अंगुलक आँगुटि सोभस बाहुटि (प० क त पद १७०)
आजु	आज	बं० आजु मझु शुभ दिन भेला (प० क त० पद २ १) हि० आज विराजत राज है दसकंठ जहाँ को (वि० प० १६२)
आतुर	आतुरता	हि० मुनि पद बंदि करिय आतु (मा० २।२१७।२)
आनत	अन्यत्र	हि० हरि चरणारविंद तजि लागत अनत कहूँ तिनकी मति काँची (१।१६८)
आनमन	अनमना	हि० करै धीर अनमने करन बल सो हठ करनि परे (पृष्ठ १११)
आँधियारि	अँधेरी	बं० मुख अधिक भर किये रोये आँधियार (प० क० त० पद २ ७) हि० भय उदधि यमलोक बरसे तिमिर ही आँधियार (रामचरित मा० १।८८)
आप	स्वयम्	बं० ताक गौरव कछु आप (प० क० त पद ११५८) हि० जाके हृदय साँच है ताके हृदय आप (कबीर)

आपना	अपना	बं॰ अपना सजायम दिवासी (प॰ क॰ त॰ पद २७९)
आपनाहि	अपनाहि	बं॰ आपनक बात आपनाहि समुझबि (प॰ क॰ त॰ पद ४५४) हि॰ भजि रघुपति करु हित आपना (मा॰ ६।२६।१)
आबिर	अबीर	बं॰ आबिर अरुण सब (प॰ क॰ त॰ पद १४२८) हि॰ चोवा चंदन अबिर, गलिनि छिरकावन रे (सू॰ सा॰ १०।१८)
आयनु	आऊँ	बं॰ कहइते आयनु (प॰ क॰ त॰, पद १८८) हि॰ तिहि घर देव, पितर काहे आयो
आमानी	आसमभ	हि॰ सो आमी वस राखि मयानि (मा॰ २।२०७।१)
आये	आये	बं॰ मिले वनि आये हो नंददुलाल (गोविंददास प॰ क॰ त॰, पद २४२५) हि॰ आनंद सहित सबै ब्रज आये सूरदास (सू॰ सा॰ ११५०८)
आराधिनु	आराधना कर	हि॰ कैसे परताप घटैं रघुपति, आराध्यौ (रा॰ म॰ च॰ ६।९७)
आलस	आलस्य	हि॰ आयें गुमायें सकल आलस हूँ (मा॰ १।२८।१)
आलाई (बालाई)	अलाय-बलाय	बं॰ आलाइ-बालाइ तारनिये (प॰ क॰ त॰ पद २२२९)
अलापई	अलाप करना	बं॰ ना जानिये को ऐसे मुरलि आलापइ (प॰ क॰ त॰, पद ११) हि॰ अलापति सुर गावति पिय-संग (वि॰ १६१ [७६])
आलिंगई	आलिंगन करता है	बं॰ दुहुँ आलिंगइ कतबार (प॰क॰ त॰, पद ७५८)
आसु	आँसु	बं॰ कटिला आसु आसु भरि रोवइ (बलराम प॰ क॰ त॰, पद २४८९)

		हि० मुख माँसु मय मारुत-कमुका निरखि थेत छवि देत ॥ (सूरदास सू० सा० १०।३४६)
माहीर	माहीर	हि० मैंकहुँ ना काकदी पासि निरबह माहीरी (सू० ब० मा० ए कौ० १४८) (प० क० त० पद १४८)
(इ)		
इतिउति	यहाँ वहाँ	बँ० उचये चकित मुखे इतिउति पेखमु (प० क० त० पद २४४) हि० पद न इतउत घरत पावत उरनि मोह सिचार (सू सा० ११६६)
इनके	इनके	बँ० इनके लीएए उनहीं प्रवलम्ब (प० क० त० पद १०६) हि० इन्हके दसा न कहेउं बखानी (मा० ११८३।४)
इनहि	इन्होंने	(बँ० तुँहि पुराह इनके साच (प० क० त० पद २८८४) हि० इन्हीं हृदयम्ब बरसा एका (मा० ३।४४।२)
इह	यह	बँ० तुँहुँ एक मोप इहके कहे (प क० त० पद ८२) हि० तासो मिरहु तुमहिं यों लायक इह ईपानि (वि० २४२)
इहाँ	यहाँ	बँ० मधु चीत गैलो तहाँ मेह पहुँ इहाँ (प० क त० पद २०२६) हि इहाँ लागिहि राउर माया (मा० २।११।१)
(उ)		
उपइठे	उगता है	बँ० हिमकर उगइते दिनकर तेज (प० क० त० पद १०२७) हि० मैं हैं सु यों मोहतम उगो भाय मानु (च० ११)

उगये	उदय होकर	बं० उगये उगये कत तारा (प० क० त० पद ५४१) हि० जिहि सरूप मोहे ब्रह्मादिक, रवि ससि कोटि उगैया
उमगइ	उमगते हुए	बं० बारि निवास मधुर विष उमगइ (प० क० त० पद ७०८) हि० मनों कोप बस उमगित नाहीं (मा० १२६।१)
उपट	उखाड़	बं० उपट पट पारे दिग दिग (प० क० त०, पद १११७) हि० कोउ सिरत्रकोउ उपाटित रहे (सू० सा० ४४८)
उपाड़िया	उखाड़ कर	बं० भाति पवन जनि उपाड़िया प्रेम मनी (प० क० त०, पद २११०) हि० नयन उघारि सकल दिसि देखी (मा० १।८७।२)
उमसइ	उमसते हुए	बं० ताहाँ ताहाँ उमसइ (प०क०त० पद ८९) हि० उपरत उतरात हहरात बरि जात
उछाह	उत्साह	हि० ताकत सराध के विवाह के उछाह कछु (क० ७।१४८)
उजागर	जागरण	बं० रजनि उजागर माह पंजागर (प० क० त० पद १६९) हि० पंडित मूढ़ मलीन उजागर (मा० १।२८।१)
उजारइ	उज्ज्वल करते हुए	हि० मानहुँ पयनिधि मथत, फेन फटिकंद उजारयो।
उजारसुँ	उज्ज्वल करूँ	बं० ताम्बूल साजासूँ दीप उजारसुँ (प० क० त० पद २८२) हि० हरि के मर्मवास जननी को बदने उजारो लाग्यो (सू० सा० १०।४)
उजारा	उजाला	बं० गोरा रूप हिये उजियाला (प० क० त०, पद ६७४)
उजियाला	प्रकाश	हि० तुलसी भीतर बाहिरौ जौ चाहसि उजियार (दो० ६)

उठइ	उठते हुए	बँ० स्वामिक सयन मंदिरे गहि उठइ (प० क० त० पद ११) हि० उठइ न कोटि भाँति (मा० १।२२०।४)
उड़न	उड़ान	बँ० माहसि कुकार ठाम छिलि पुछेर उड़ान (प० क० त पद ११५१) हि० ससि मिसि प्रभि उड़न न पावै (सू० सा० १०।६५)
उड़नी	ओढ़नी	बँ० छिपिल राइ कुच कचुक उड़नी (प क० त पद २१२३) हि पीत उड़नियाँ कहा बिसारी (सू० सा० ६६४)
उतरनु	उतर आई	हि० जदपि अपार करत नहि थामी बार (क० ११४)
उतारनु	उतारनुँ	बँ० मैनन सर्पे जब बसन उतारनुँ (प० क० त० पद २६१) हि० जदपि अपार उतरत नहीं लावी कपिदल विलक बिलंब (मा० ल० ६।१०६)
उदयत	उदय होते हुए	बँ० मिति मिति उदयते चपलहिं चंद (प० क० त० पद १७२२) हि० अरुणोदय सकुचे कुमुद उड़गन जोति मलीन (मा० १।२३८)
उनहि	उन्होंने	बँ उनके सीम उन्हीं अवलम्ब (प० क० त० पद १०६) धनु फल उन्हीं [illegible] कर सामा (मा० ११।४)
उपजे	उत्पन्न हो	बँ० रहि रहि बनि हिये उपजे तराप (प० क० त० पद २२१) हि० प्रेम नाबाड़ी ऊपजै नाहि हाट बिकाय
उपेखनुँ	देखनू	बँ सखि है कोई उपेखनु मान (प० क० त० पद ४७१)
उबटन	उबटना	बँ० उबटने सुखि मला (प० क० त० पद ११५५) हि मातन्ह सहित अन्हावाए (मा० ११।६।२)

उबरे	फिरे	बं० परबस जीउमा उबरे पभु माम (प० क० त०, पद १४७) हि० जे राखे रघुबीर ते उबरे तेहि काल महुँ (मा० १।७५)
उभारि	उत्साहित किया	बं० ताहि पत्र कथे उभारिला बीरवर (कवि कंक०)
उमगु	उमंग	बं० उमगि मदह सखि करह पयाण (मी० की०)
उमड़इ	उमड़ते हुए	हि० तबहुँ धीर उमड़ि पड़ ताये बिरह बियोग याये देई काँपे (वि० प० १४६१)
उरम्फाइ	उलझाकर	बं० बसहल राजपथे दुहुँ उरम्फाइ (शेखर प० क० त० पद २५१५) हि० छुट न अधिक अधिक अरुझाई (तु० रा० च० मा० उ० ११७ पृष्ठ ५५७)
उलट	उल्टा	बं० उलट पालट करे बार पाँच सय (प० क० त० पद ९४)
उलटि	उलटकर	बं० उलटि वरिखेक हाथ (मी० की प० क० त० पद ४१)
उलसइ	उल्लसित हो	ब० उलसित दुहुँ दोहाँ हेरि, उलसित मेल गोरि (प० क० त० पद २११५)
उह	वह	बं० सखि काहे कहसि उह नाम (प० क० त० पद ७८) हि० उहे काछनि कटि पीताम्बर सीस मुकुट अति सोहत (सू० सा० ६६५)
उम्हुके	उनके	बं० परम प्रबन्ध फेर उम्हुके गेल (प० क० त० पद १०१) तसु फलु उम्हहि देउँ करि सामा (मा० २।११।४)
(ऊ) ऊड़त	उड़ते हुए	बं० पवमक अंग संग करि ऊड़त (प० क० त०, पद १७११) हि० उड़त उड़त शुक पहुँच्यो (१।२२६ सू० सा०)

ऊपर	ऊपर	बँ० हृदय ऊपर सोहे कुच युग (प० क० त०, पद २१) हि० लंका सिखर ऊपर आगारा (मा० ६।१०।४)
(ए)		
एकतान	एक स्वर	बँ० एक तान हृदया कसुर करिया (प० क० त० पद २११७)
एकला	अकेला	बँ० वसिया विरले थाकये अकेले (प० क० त० पद १०) हि० एकला संग कमाह चौपहि छाड़यो निपट अनाथ अकेलो (सू० सा० १।१७२)
एकलि	अकेली	बँ० एकलि तोहारि नाम (प० क० त० पद २१७) हि० विपिन अकेली फिरहु केहि हेतु (मा० ३।५।१४)
एतहुँ	इतनो	बँ० गोविन्ददास कह एतहु ना जानह (प० क० त० पद ११०४) हि० एतहुँ मुनु मनहुँ सिखावन एह (रा० च० मा०)
एता	इतना	बँ० बलि ऐ मधस्य एता (प० क० त० पद ११६८) हि० एतो बड़ो अपराध (वि० ७२)
एतनि	इतना	बँ० नाह आमोल एतनि भाषण (कमलाभाव प० क० त० पद ११७५) हि० नंदनंदन सौ इतनी कहियो सूरदास (सू० सा० १०।४०११)
एतेने	इतना	बँ० भनहुँ विद्यापति एतेनि (प० क० त० पद १११) हि० राम परम सरवसु एतनीइ (मा० २।११९।१)
एबे	अब	बँ० पूर्बेर पापी तपाइबे एबे ना तपामो (प० क० त० पद ११६) हि० हो रघुनाथ निशाचर कइ सब मनी बाचहीं बेगि (मा० प० ६।६४)

एह	यह	बं० एसखि बिहरये को पुन एह। (घनश्याम प० क० त०, पद १२०) हि० सुनु मनहुँ सिखावन एह (तु० वि० प०, पद १६०)
एहेन	ऐसे	बं० ऐहेन रजनि किनमे गँवाँर (प० क० त० पद १४५) हि० पाईं मिस देखी पद बाट (मा० १।२०।१४)
(ऐ)		
ऐछन	ऐसा	बं० ऐछन मधुरिम नाम (प० क० त० पद १०) हि० साधु अवज्ञा कर फलु ऐसा (मा० ३।२११)
ऐछे	ऐसे	बं० पाइव ऐछे बसा हेर एक सखि (प० क० त०, पद १७) हि० ऐसे को ऐसो भयो कबहुँ न भजे बिन वानर के बरदाई (क० ७।१६)
(ओ)		
ओ	वह	बं० भावना ओ तुया अन्तरे अन्तर (प० क० त० पद १७१) हि० यदपि मीन पतंग हीन मति मोहि नहिं पूजहिं ओक (वि० ९२)
ओझा	उपाध्याय	बं० केह कहे माई ओझा ए (प० क० त०, पद ११५) हि० तुलसि रामहिं परिहरे निपट हानि सुनु ओझ (दोहा ९८)
ओभारों	वारों	बं० भवन कोटि उवारी (ओभारों) (प० क० त०, पद १०८६) हि० वारों हौं वे करजिन सूरदास (सू० सा० १०।३६२)
ओर	तरफ	हि० होउ नाथ यह ओर निबाहू (तुलसी मा० २।२४।३)

(क)

कइन	कौन	बँ० भावे गिराय कइन पातियायव (गोविन्ददास प० क० त० पद १८१४) हि० कौन सुने यह बात हमारी (सूरदास सू० सा पद ११९६०)
कछु	कुछ	बँ० कछुइ नाहि मनभाय (भूपति प० क० त० पद ११४) हि० नाथ न कछु मोरि प्रभुताई (तु० रा० च० म० सु ११ पृ० ३८८)
कतवे	कितना	बँ० तोहारि गिराम हाम कतवे बुझायबु (परमानन्द प० क० त० पद १५१) हि० यह लघु जलधि तरत कति बारा (तु० रा० च० मा० लं १ पृ० ४०१)
कतहुँ	कहीं	बँ० कतहुँ प्रेमधन हिय माझा राखि, (गोविन्ददास प० क० त० पद ११२) हि० मू दे आँखि कतहुँ कोउ नाहीं (तुलसी रा० च० मा० बा २७०)
कतिहुँ	कहीं	बँ० रमणिक हँसति कतिहुँगा पेखनु (प० क त० पद १७१)
कतेक	कितने	बँ० ना जानि कतेक—मधु श्याम नामे आछे गो (प० क० त० पद १४१)
कनेठ	छोटा	बँ० लखइ ना पारिये जेठ कनेठ (प० क० त० पद ८१)
कब	कब	बँ० कबहि गेयान मुख होइ बाहर (प० क० त० पद १७१) हि० सकल कहहिं कब होइहि काली (मा २।११।१)
कबरि	कबरी	बँ० कुसुम कबरी—उपरहि लोटायत (प० क० त० पद १५)
कबलइ	ग्रास करता है	बँ० सुधा मुख चाँद कमल याहि कबलइ (प० क० त० पद १०४१)
कबहुँ	कब	बँ० जल बिनु मीन जैसे कबहुँ ना जिये (प० क० त० पद ११२)

		हि॰ को नाम कबहुँ मुनि कोइ (मा॰ २।१२४।४)
कपनुँ	कहँ	बँ॰ हार्म कयनुँ परिहार (प॰ क॰ त॰ पद ४८)
		हि॰ नीर छीर ज्यों दोउँ मिलि गये। प्यारे होत न न्यारे कये (११ ६)
कर	करना	बँ॰ कुच-कटि कर अवगाह (प॰ क॰ त॰ पद ७०६)
		हि॰ कर मुनि मनुज सुरासुर सेवा (क॰२)
करई	करता है	बँ॰ मनहि करये अनुताप (प॰ क॰ त॰, पद १)
		हि॰ सुन्दरता कहुँ सुन्दर करइ (मा॰ १।२३०।४)
करत	करता है	बँ॰ ताहे करत उपदेश (प॰ क॰ त॰ पद १)
		हि॰ बिनु बरसे उपकार करत
करतारि	करताल-ध्वनि	बँ॰ योगिनी सखिगन देइ करतारि (प॰ क॰ त॰ पद २८७०)
		हि॰ रामकथा सुन्दर करतारी (मा॰ १।११४।१)
करतुँ	करूँ	बँ॰ कुसुमक हार कयनु करतापे (प॰क॰त॰ पद ४०४)
करौं	करूँ	बँ॰ ताहार चरनँ करौं सेवा (प॰ क॰ त॰ पद ११८)
		हि॰ रसना एक अनेक स्याम गुन कहँ लगी करौं बखानो (सू॰ सा॰ १।११)
कलिसा	कलेजा	बँ॰ कलिजा कागज करि लिखि चाँद—मुखे (प॰ क॰ त॰ पद १७१७)
		हि॰ करेजो कसकतु है (क॰ ६।१६)
कहइ	कहता है	हि॰ यदि धीरजु तब कहइ निषादु (मा॰ ९।१४३।१)
		बँ॰ विरसे बसिया सखीरे कहइ (प क॰त॰ पद ११)
कहि	कहाँ	बँ॰ हृदय आनंद सुख कहि ना जाय (प॰ क॰ त॰ पद २२१६)
		हि॰ काहुक कहि मानोय

केहों	कहाँ	बँ० तोहे केहों सुषम डौवाति (प०क०त० पद ३६) हिं० कहा कहौं हरि केतिक तारे पावन पद परसंगी (सू० सा० १०२१)
(का)		
का	क्या	बँ० का वेद कहब सम्बाद (गोविन्ददास, प०क०त० पद १७४) हिं० का छवि सामु थुथु मनु तोरे (रा० च० मा० बा० २०२)
काढ़िया	बाहर किया	बँ० रतन काढ़िया यदि यतन करिया थी (प० क० त० पद ७९०)
काढ़ई	बाहिर करती है	बँ० सो पुण पाह स्वास जैसे काढ़ई (प० क० त० पद ७७०)
कानया	कन्हैया	बँ० व्याकुल भए बहु कानया (प०क०त० पद ११६८)
काहाँ	कहाँ	बँ० सो हेन रसिक पिया काहाँ गेहु (गोविन्ददास प० क० त०, पद ४२१) हिं० कहु केहि तात कहाँ सब माता (रा० च० मा० अ० १६६)
काहि	किसको	बँ० कि कहब ए सखि आनवि काहि (प० क० त० पद ४२८)
काहुँक	किसको	बँ० सोंपवि काहुँक संग (प० क० त० पद ४९१)
काहा	क्या	बँ० से हेन रसिक पिया काहाँ गेहुँ काहा कब (गोविन्ददास प० क० त० पद ४२१)
काहि	किसको	बँ० दोख देयब अब काहि (प० क० त० पद ६११)
काहु	किसको	बँ० अनुभव काहु न पेखि (प० क० त० कविकुसुम पद ६१७)
काहुक	किसको	बँ० हरि अब हाथि रखबे पुन काहुके (गोविन्ददास प० क० त० पद १२)
(कि)	की	षष्ठी-विभक्ति का चिह्न
किजे	कीजै	बँ० कृष्णदास प्रभु एह कृपा किजे (प० क० त० पद २८६०)

किया	क्रिया	हि० मैं मेरी कबहुँ नहि कीजै कीजै पंच-सुहावे (सू० सा० १।१०२) बं० मिटल तसप मम कामकि, आरति किये मदन गोपाल कि (रघुनाथदास प० क० त०, पद २८९६)
,		हिं० पंडर-शाह जु मिटयो ब्यासको इकचित हो भागवत किये (सूरदास सू० सा० १।८९) बं० प दुहुँ मंगल आरति कीजै रामराय (प० क० त० पद २८७४)
कीजै	कीजिए	हि० अति व्याकुल अकुलाति बिरहिनी सुरति हमारी कीजै (सूरदास सू० सा० १०।४०९४) बं० कुन्तल मनया विनि पंप सममति (प० क० त० पद १०२)
कुन्तल	कुन्तल, सोभा	हिं० मीसम एक दुतासन बैठी ज्यों कुन्तल मरू माइ (सू० सा० ६।१९२) बं० कूजये कोकिला होइ, आकुल (प० क० त० पद २४७१)
कूजई	कूजती है	हि० कूजहि कोकिल गुंजहि भृंगा (मा० १।१२६।१) बं० मथुरा में केशवराय विराजै (प० क० त०, पद २११८)
केशो	केशव	हिं० करि मति धीर पियावत अपनो, जानति केशवराई (सू० सा० १०।१५२) बं० मत परबोधव केहु (प० क० त० पद १८३१)
केहु	कौन	हि० सो मैं बरनि कहौं बिधि केही (मा० २।११३।४) बं० एमत ना हुउ केहु (प० क० त पद ८१६)
केही	किसको	हि० कहई काहुहि नाउ चपेटन्हि मेहु (मा० १।४४।४) बं० कैसन ऐसन साहस होय (प० क० त०, पद ४३)
कैसन	कैसे	

		हि॰ काहि जाको ऐसो सुत बिछुरे, सो कैसे जीवे महतारी (सू॰ सा॰ १०।१११)
?	निमित्त कौन	बँ॰ रूप लिम गुण ताहे सुन्दर कोहे (गोपालदास प॰ क॰ त॰ पद २१११)
		हि॰ तुमहि समत को बरने पारा (रा॰ च॰ मा॰ बा॰ २७४)
कोई	कोही	बँ॰ चित निकसव यव राखव कोई (प॰ क॰ त॰ पद १४)
		हि॰ हरि सों मीत न देख्यो कोइ (१।१०)
कोन्न	कौन	बँ॰ कौन बिहि मक्कु नाह मे गेयो (गोविन्ददास प॰ क॰ त॰ पद १८१०)
		हि॰ कौन बात यह कहत कन्हाई (सूरदास सू॰ सा॰ १०।१५३६)
कोंवर	कुमार	बँ॰ कालिया कोंवर नावे काँपि काँपि उठे (प॰ क॰ त॰ पद ११८)
		हि॰ ये उपहि कौन कुंवर महेरी (गी॰ २।४९)
कौन	कौन	बँ॰ कौन गेआम बस मरिबारे (प॰ क॰ त॰ पद १२४)
		हि॰ मैन कौन की भंजन रसा विरह कहूँ सोवे (सू॰ सा॰ २११७)
कोय	कोई	बँ॰ ए बाद छाबिल बालि कोय (प॰ क॰ त॰ पद १११)
		हि॰ निश्चय किए मुक्त सब माधव तातें भिन्न न कोय (सारा॰ २६६)
कोकिल	कोयल	बँ॰ सकल कठे गहि कोकिलयमा वानी (प॰ क॰ त॰ पद १०६)
		हि॰ तुलसी पावस के समयमरी कोकिलन मौन (दो॰ ५६४)
कोहे	कोही	बँ॰ रूप लिम गुन ताहे सुन्दर कोहे (प॰ क॰ त॰ पद २१११)
कौन	कौन	बँ॰ कौन बिहि मक्कु नाहमे मेयो (प॰ क॰ त॰ पद १८१०)

		हि० तहँ तुलसी के कौन को काको तकियारे (वि० ११)
(ख)		
खमक	वाद्य-यंत्र विशेष	बँ० धमक डफ रबाब खमक सर-मण्डल (प० क० त० पद २७१६)
खरग	खड्ग	बँ० कंकण खरग्रहि तीपठ तीकि सबहुँ तनु (प० क० त०, पद २४६१)
		हि० कुसुम धति खाइन खाहे (मा० २।१६।१३)
खाइनु	खाया	बँ० बहुत भखनि खल होइ तुम्हारे (प० क० त० पद ११७)
		हि० पान खायेत पिक धीमत करकत (मा० २।२२२)
		हि० चलत पयादे खात फल पिता दीन्ह तजिराजु (मा० २।२२२)
खाअत	खाया	बँ० उपसिल आपुनेर गुन (ज्ञानदास प० क० त० पद ६६०)
खुनि	खान	हि० उघरि आए कान्ह कपट की खानि (सूरदास सू० सा० १०।३८२७)
		बँ० आचार्य ठाकुर खेयाति बाहार (प० क० त० पद १७)
खेयाति	ख्याति	बँ० सौ भाग धन सबे कर मान खेमि (प० क० त० पद ७६)
खेल	खेल क्रीड़ा	बँ० खेलत ना खेलत लोक देखि लाज (प० क० त०, पद ८०)
खेलत	"	बँ० ना खोअमुँ कुलि ना खोअमुँ मान (रामानंद प० क० त० पद २७६)
खोअमुँ	खोया	बँ० सखिक संपहि खोइरि (प० क० त० पद १८११)
खोइ	खोकर	
(ग)		हि० गाँड गँवार नृपाल महि
गँवार	ग्रामीण	(दो० ५२६)

गढ़ई	गढ़ता है	बं० गोविन्द गढ़ई मदन परताप (प० क० त० पद ११९) हि० हौं दीन वित्त हीन कैसे दूसरी गढ़ायौं (क० २।८)
गदगद	गदगद	बं० गदगद वचन नयन जल (सा० १४६) बं० कहइत कहु गदगद (प० क० त० पद ११६)
गरजत	गर्जना	बं० चमकत चमकत पुनपुन उठि गरजत (प० क० त० पद ११९) हि० गरजत गगन घनघोरा प्रियाहीन तरपत मन मोरा (रा० म० च०)
गरजई	गरजता है	हि० गरजई मेघ भूमि नियराये (रा० म० च० कि०)
गलई	गलता है	बं० जाहाँ जाहाँ तनु अंचल चमकसे गलइ (प० क० त० पद, २११) हि० गई-गलानि कुटिल कैकेई (रा० म० च० अ०)
गहना	ग्रहण	हि० गगन हेतु सीता तनु गहइ (मा० १।१४७।४)
गहि	पकड़ कर	बं० प्रेम हेम गहि चापत रंग वह (प० क० त० पद १०९) हि० गहि पद लगत मातु सब राखी (मा० २।१७०।११)
गाँठि	गाँठ	बं० गाँठिक हेम बदनमई घसकइ (प० क० त० पद २२७) हि० गनि गिरि गहि कुटि जनु गाँठी (मा० १।११३।१)
गाथिनु	गूँथन कर	हि० गंगमय मुकुता मनि गाथें (मा० १।५७।२)
गाइ	गा-कर	हि० गावत-गावत नाम निगम गाइ पये है (सु० सा० ११९१)

गागर	कलसी	बँ० कुच युग गिरि कनक गागरि (प० क० त० पद २०६)
		हि० ज्यों जल मौहु तेल की गागरि सिरहैं पत्र ऐसी बूंदन (सू० सा० १३३५)
माड़ा	गंभीर	हि० कहुलीता मरि बीरजु माड़ा (मा० ३।२८।७)
गिरहु	गिरना	हि० गिरहि न तब रसना अभिमानी (मा० ६।३३।४)
गेडुवा	गेंद	बँ० फुलेर गेडुवा लुफिया धूरये (प० क० त० पद २०५)
		हि० करत गगन को गेंडुवा सो सठ (तुलसीदास-दो० ७।४६१)
		हि० नाथ कृपामति भावेउँ रावउँ नहिंकछु गोइ (मा० ७।१२१)
गोइ	छिपाई	
गो	गाय	हि० गोखग केवय, वारि खग तीनों माहि विवेक (दो० ५५८)
(घ)		
घूंघट	पर्दा	हि० घूंघट के पट खोलरे तोहे पिय मिलेंगे। (कबीर)
घूंघुरमोति	घुंघ रवाली	बँ० घूंघुरमोति अलके झलके (कृष्णदास प० क० त० पद २८६०)
		हि० घुंघराली लटें लटकें मुख ऊपर (तु० क० ब० का० ५)
घोरि	घोलकर	बँ० कुंकुमघोरि चीत वेस आकुल (गोविंददास, प० क० त० पद २२७८)
		हि० देउ आपने हाथ जल मीनहि माहुर घोरि (तु० दो० ३।१७)
(च)		
चौंड़क	चौंक	बँ० वरस मुत कामिनि चौंड़क पड़त अग मरिया (रायशेखर प० क० त० पद १०६४)
		हि० चौंके बिरंचि संकर सहित (क० ब० का० ११)

चमके	चमका	बँ० पाल पायोये चमकि मिलि (प० क० त०, पद २८१४)
चटकिनि	चिड़िया	बँ० मेघ चटकिनि (प० क० त० पद २१)
चड़ायई	चढ़ाकर	बँ० चमकल ममरम मने चड़ायइ (प० क० त० पद ११८) हि० रथ चढ़ाइ देखराइ बनु फिरहु गएँ दिन चारि (मा० २।८१)
चतुरपन	चातुर्य	बँ० मापम चतुरपन परखाते छोपसु (प० क० त० पद ६११) हि० सकहिं न मूप कपट चतुराइ (मा० ११२७।१)
चतुराई	चातुर्य	बँ० ना कहु मुखा मुखि देखी चतुराइ (प० क० त० पद २६६) हि० ताहु के सबै सीखें को कहा कपटि चतुराइ (सू सा पद १०।३१५)
चमक	प्रकाश	बँ० दामिनि चमक मेहारिनि रे (प क० त० पद २०) हि० रिपि दुख चमकत देखत गई (६।१)
चम्पा	चंपाफूल	बँ० संपायत कम्या कम्पित चम्पा (प क त० पद १६१८)
चरचा	प्रसंग	बँ लोक-चरचाते मायुर आमोद (प क०-त० पद ७६७) हि० हरिजन हरि चरचा जो करे (सू० सा० ७।८)
चरायोत	चराता है	बँ० धेनु चरायोत बेन बाजायोत (प० क० त० पद १२०४) हि ढीठ गोप की चाह चराई (सू० सा० १०।३)
चलई	चलता है	बँ० पथ बुझ चारि चलइ पुन (प० क० त० पद ६५७) हि० चलइ पींक जस चक्रवति चलति सरिसु समान (मा० २।४२)

चाखत	चखता है	हि॰ यह मन प्रीति सुवा-सेमर ज्यों, चाखत ही उड़ि जात (सू॰ सा॰ १।३११)
चीनसु	पहिचानसूँ	बं॰ मन तोहे चीनसु हाम (प॰ क॰ त॰, पद ८३८) हि॰ मैं इन मोकों कबहुँ न चीन्हौं (सू॰ सा॰ ४।१२)
चुनि	चयन कर	बं॰ सब मन एक एक चुनि सँचक (प॰ क॰ त॰, पद ७९१) हि॰ एक बार चुनि कुसुम सुहाए (मा॰ ३।१।२)
चौंक	चौंकि	बं॰ चौंक पड़ल मन सखिया (प॰ क॰ त॰ पद १०६४) हि॰ चौंकि परी तन की सुधि आइ (मा॰ ५४८)
चोलि	चोली	बं॰ कसव वसन रसन चोलि (गोविंददास, प॰ क॰ त॰ पद १२६५) हि॰ नील लहँगा लाल चोली कसि (सूरदास सू॰ १०।२८३२)
चौतरा	उच्च वेदी	बं॰ वृन्दावने चौतरा ताहे मोर मन भोरा (प॰ क॰ त॰, पद १०४२)
चौयानपना[1]	चतुरपना	बं॰ जुग सोभाछिनि नागर चौयानपना (प॰ क॰ त॰, पद १०१)
(छ)		
छटपटि	छटपटाकर	बं॰ अंग छटपटि केवे मीटब (प॰ क॰ त, पद १७२०)
छबीले	सुंदर	बं॰ कुसम छबील रसवरछबीले (गोपालदास प॰ क॰ त॰ पद २१६६) हि॰ छबीले मुरली नेंकु बजाउ (सूरदास सू॰ सा॰ १०।१२१६)
छैल	चतुर	बं॰ सजनी कानु से छैल छीनार (प॰ क॰ त॰ पद ७०७)

१ चौयान शब्द कि हिन्दी बोल समार्थक ताम पादेर धौंगे विस्मय ! श्री सतीशचन्द्र राय।

		हि० तैरम केहरि केहरि के बिरसे परि-छुअन छैन-छपाये
छलछल	आँसूपूर्ण नैन	बं० पंच घटित पुन लोचन छल-छल (प० क० त० पद १८३)
छलिया	प्रवंचक	बं० कि पैसनु सह छलिया नागरकाम (मौनिदास प० क० त० पद १४६) हि० छली मलीन हीन सब अंग (सु० वि० प० पद ६६)
छाति	वक्षस्थल	बं० तुया मुख हेरि ज्वलत मुझ छाती (घनश्यामदास प० क० त० पद ६५) हि० कुलिस कठोर निठुर सोई छाति (रा० च० मा० बा० १११)
छापायनु	छिपाना	बं० अनेक यतन करि प्रेम छापायनु (प० क० त० पद ६६२) हि० तुम सों कहा छिपी करुनामय (सू० सा० ३४६६)
छिरकत	छिड़कते हैं	बं० कोइ मधुकुसुम सुगंधि छिरकत (उद्धवदास प० क० त०, पद १६६१) हि० छिरकति बाल अपनें अपनें रंग (सूरदास सू० सा० १।२८८०)
छीकने	छींकना	बं० छीकने कोई रहई मम बाम (प० क० त० पद १६११) हि० छींक सुनत कुसगुन कह्यो (क० ६८६)
छूटत	छूटता है	बं० लालस [illegible] नाहि छूटई (प० क० त० पद १७४) मेरी देह छुटत जम पठए दूत(सू० सा० १।१२१)
छैन	धूर्त	हि० है रन केहरि के निरसे परि दूँसर छैन-छपाई (ह० १८)
छोड़नु	छोड़ूँ	बं० छोड़त दीप निश्वास (प० क० त० पद १७२) हि० उतर देत छोड़उँ बिनु मारे (मा० १।२७।४)

(ज)

जमाइ	जमाकर	बँ० आपाइ पान—पियारि (प० क० त० पद २४८१) हि० तेहि समाज रघुराज के मृगराज जमाइ (गी० १।१०१)
जनि	मत	बँ० तुम्बल बेरि जनि मुख मोड़वि (गोविन्ददास प० क० त० पद २११) हि० जनि तेहि जानि बिदुरहि केहुँ (वि० प० पद १२६)
जपइ	जप करता है	बँ० जपतहि सुधा गुनमाला (प० क० त० पद १९९)
जाग	यज्ञ	बँ० पयसि जाग सत जायइ (प० क० त० पद १९९) हि० सती जाइ देखेउ तब जागा (मा० ६।६१।४)
जागसु	जागूँ	बँ० उठि परसये निसि जागसु हाम (प० क० त० पद २८७) हि० महामोह निसि सूतत जागा (मा० ६।२६।४)
जात	जाता	बँ० जम की त्रास सब मिटी जातो (प० क० त० १९१२)
जानत	जानता है	बँ० दिन रजनी किये कछु नाहि जानत (प० क० त० पद ११४) हि० जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाइ (मा० २।१२७।२)
जानन	जानना	बँ० जानमु रे हरि तोहारि सोहाग (प० क० त०, पद २४११)
जानमुँ	जानूँ	हि० जानूँ जानतहूँ प्रभु स्वामि बिसारी (मा० ३।८)
जामि	जिमि	बँ० चाँद कीति जामि जसे (प० क० त०, पद २४११) हि० अंजलि गत शुभ सुमन जिमि सम सुगंध करहोइ (मा० १।३)

जार	जलाना	बं० करई विलास दीप लई जार (विद्यापति)
		जारत गगन कस न करि साहू (मा० १।८
जारई (स)	जलाता है	बं० मनमथ पाप बहुवे तनु जारत (प० क० त० पद २०४)
जिउ	जीव	बं० जिउ निकसय तब राखब कोइ (प० क० त० पद १४)
		हि० सकल समय जिउ जीवहु तुलसिदास के ईस (मा० १।११६)
जीयसुँ	जीवित रहूँ	बं० रस पहुँ जीते जिसू (प० क० त० पद ६८१)
		हि० जब लगि जियौं कहउँ कर जोरी
जैछ	जैसे जनु	बं० मेहठे जैछ बिजुरि सोप्यो (गोपाल भट्ट, प० क० त० पद २८११)
		हि० क्यों करि कृपा पावैं बारत हो (सूरदास पु सा० १०।४०२१)
जोह	प्रतीक्षा करता है	बं० कर जुड़ि ठाड़ि वचन शुभ जोय (प० क० त० पद ११२)
		हि० बिरची चितमम पासमय शुमि मुख जोहु हो (रा० १४)
जोय	प्रतीक्षा करके	बं० जलधार बितिया जोवि पहु जोहित (प० क० त० पद २४२८)
		हि० सब हमार प्रभु पथ पथ जोहा (मा० ११६१)
जो रहि	जोड़ करके	बं० करे कर जोरहि मोरा (प० क० त० पद ११)
		हि मिरे सकल जोरिहि सम जोरी (मा० १।२३।२)
जोहि	प्रतीक्षा करके	बं० कुल्माम पहु पथ जोहि (प० क० त० पद ४८५)

(झ)

झकोर	झोंका	बं० दुहु दिशे दुहु सखि देइ झकोरे (यदुनन्दनदास प० क० त० पद, १२२६)
		हि० मारी सीचे की झकोरे (सूरदास सू० सा० १०।२८३६)
झमकत	झमकता है	बं० झमकत गोविन्ददास (गोविन्ददास, प० क० त० पद १७४१)
		हि० चम उझुक झमकत चए (तु० रा० प्र० ६।६।२)
झक	झंकार	बं० कर कंकन मंजु झक (प० क० त० पद १११)
		हि० सज्जन चक-झक निकेत (गी० ७।४)
झकम	झंक	बं० कंकन झंकन किंकिणि रणिनी (प० क० त०, १८६१)
		हि० नूपुर धुनि मंजीर मनोहर कर कंकन झनकार (गी० १।२)
झकर	झंकार करना	बं० चचल चरण कमलतल झंकर (प० क० त० पद ६७)
झपटाई	बलपूर्वक आकर्षित करना	बं० झटकत कर कंकन झनझान (प० क० त० पद १७७)
झमकित	झमक कर	बं० चमकि झमकित चौदिशा (प० क० त० पद १७७१)
झरक	झरोखा	बं० सखिगण हेरइ झरकहि झांकि (प० क० त० पद १६४)
		हि० लागि झरोखन्ह झाँकहि भूपति भामिनि (मा० ८०)
झरझर	सदा बरसने वाला	बं० झरझर बरखन ए दुहु नयान (प० क० त०, पद ५०)
		हि० झरझर सुन्दर गिरि निर्झर झर (गी० २।४४)

बार	बसाना	बँ० करई बिलास दीप लई बार (विद्यापति) बारत मदन कस न धरि साहु (मा० १।१।२)
बारई (त)	बसाता है	बँ० मनमथ पाप बहुते तनु बारत (प० क० त० पद २०४)
जिउ	जीव	बँ० जिउ निकसब तब राखब कोइ (प० क० त० पद ६४) हि० सकल जनम फिर जीवहु तुलसिदास के ईस (मा० १।१६१)
जीयतुँ	जीवित रहूँ	बँ० रस पहुँ जीउे जिसू (प० क० त० पद १८१) हि० जब लगि जियौं कहउँ कर जोरी
जैह	जैसे तनु	बँ० मेहते जैह बिजुरि पोप्यो (गोपाल भट्ट, प० क० त० पद २८११) हि० ज्यों करि कृपा पाउँ बारत हो (सूरदास सू० सा० १०।४०२१)
जोइ	प्रतीक्षा करता है	बँ० कर जुरि ठाढ़ि वचन शुभ जोय (प क० त० पद ११२) हि० सिरसी चितवत आगम्य मुनि मुख जोहत हो (रा० १४)
जोय	प्रतीक्षा करके	बँ० बनमाल जिलिया जोति मह जोहिउ (प० क० त० पद २४२८) हि० सब हमार प्रभु पग पग जोहा (मा० ११६१)
जो रहि	जोह करके	बँ० करे कर जोरहि मोरा (प० क० त० पद ६१) हि० फिरे सकल जोरिहि सम जोरी (मा० १।२३।२)
जोहि	प्रतीक्षा करती	बँ० सुन्दरम पहु पथ जोहि (प० क० त० पद ४८१)

(झ)

झकोर	झोंका	बँ० बुह दिये बुह सखि देइ झकोरे (यदुनंदनदास प० क० त० पद, १२९९) हि० भावें सोंधे की झकोरे (सूरदास, सू० सा० १०।२८३१)
झझकत	झझकता है	बँ० झझकत गोविन्ददास, (गोविन्ददास, प० क० त० पद १७४१) हि० मन उसुक झगरत भए (सू० सा० ६।५।२)
झक	संताप	बँ० कर कंकन सेस झक (प० क० त० पद १११) हि० सज्जन चख-झख निकेत (गी० ७।४)
झंकन	झंक	बँ० कंकन झंकन किंकिणि रंकिनी (प० क० त०, १८६१) हि० नूपुर, धुनि, मंजीर मनोहर कर कंगन झनकार (गी० १।२)
झंकर	झंकार करना	बँ० कंकन चरण कमलदल झंकर (प० क० त०, पद ६७)
झटकई	बलपूर्वक आकर्षित करना	बँ० झटकत कर कंकन झनझान (प० क० त०, पद ३०७)
झमकित	झमक कर	बँ० चमकि झमकित चलिया (प० क० त० पद १७७१)
झरक	झरोखा	बँ० रविकिरण हेराइ झरकहि झाँकि (प० क० त०, पद २९४) हि० झाँकि झरोखन्ह झाँकहि सुरति भामिनि (मा० ८०)
झरझर	सदा बरसने वाले	बँ० झरझर घनघन ए बुह बयान (प० क० त०, पद ८०) हि० झरझर सुन्दर गिरि निर्झर झर (गी० २।४४)

झरए	झरना	बँ० प्रबर मरूए अमिया झरए (प० क० त० पद १८२)
		हि० झरना झरहिं मत्त गज गाजहिं (मा० २।२३१।४)
झरत	झरता है	हि० बाजत बजन झरत जनु फूला (मा० १।२८०।२)
झलक	प्रकाश	बँ० झलके दामिनि कीर्ति (प० क० त० पद २१)
		हि० घुघुरा झालरि झलक जनु रामसुयस (सू० सा० १६०)
झलकई	झलमल करता है	बँ० दशन कांति कत दामिनि झलकइ (प० क० त० पद १११)
		हि० भाल बिसाल तिलक झलकाहिं (मा० १।२४३।१)
झाँकि	झाँक कर	बँ० सखिगण हेरइ झरकहि झाँकि (प० क० त० पद ११४)
		हि० बिकल बिधि बधिर दिसि बिदिसि झाँकी (क० १।४४)
झाँपलु झाँपू	एक नजर देखना	बँ० हेरइते रूप नयन जनु झाँपलु (प० क० त०, पद ४११)
		हि० झलकत भानु कहहि कुलचारी (मा० २।११७।१)
झाइँ	प्रकाश द्युति	बँ० पहिर भूषण झलके झाइरि झलमलन (शिवराम, प० क० त० पद ११६७)
		हि० छवि मँह प्रगट मुनि के झाँई (तुलसी रा० च० मा० सं०१२)
झाकत	प्रलाप करता है	बँ० झाकत कीकिए झर झर लोचने (गोविन्ददास प० क० त० पद १८८७)
		हि० एहि बिधि राउ मनहिं मन झाँखा (तुलसी रा० च० म० घ १०)
झाकए	झींक करके	बँ० झकए झर झर लोचने (प० क० त० पद १८८७)
झुंड	समूह	हि० कुसुम कोमल बीच तुम्हरि चलि झुंड अलि झारि (गी० ७।१७)

झूमत	झूमता हुआ	हि० झूमत द्वार अनेक मतंग जंजीर जरे (क० ७।१४१)
झूलन	झूलना	हि० झूलत राम पालनें सोहैं (गी० १।२१)
झुलावति	झुलाता हुआ	हि० पट उघटत भूषण खसत हँसि-हँसि अपर सखी झुलावती (गी० ७।१९)
झँपसि	झपकर	बँ० पान पायीये चाखहि झँपसि (प० क० त० पद २८१४)
झोंक	हिल्लोल	बँ० मृदुमार झोंके चलि झाके झाके (प० क० त० पद २११६)
(ट)		
टंकारि	टंकार करके	बँ० टंकारि काम्मुकि छाड़ि मनसिज (प० क० त० पद १८२०)
		हि० प्रथम कीन्हीं प्रभु धनुष टंकारा (मा० ६।१४।६)
टलमल	चंचल	बँ० टलमल कुण्डल झलमल मधु (प० क० त० पद ११)
टारल	हटाया, बिताया	बँ० टारल है मन सिसिरक अन्त (गोविन्ददास प० क० त० पद १७१८)
		हि० सम्भु सरासन काहुँ न टारा (तुलसी, रा० च० मा० बा० २१२)
टूटइ	टूटता है	हि० टूट न द्वार परम कठिनाइ (मा० ६।४१।२)
टिके	टिक कर	बँ० चल कि चाहने टिक बीम त्यागे (प० क० त० पद ८०३)
टूटई	टूटता है	हि० जनक मुदित मन टूटत पिनाकके (गी० १।९२)
टैटि	टैट	बँ० टैटि मिठि करकटि (प० क० त०, पद २१२१)
टेढ़ा	बाँका	बँ० पैच सलि टेढ़ा करि बाँधा (प० क० त०, पद ११६०)
		हि० टेढ़ जानि सब बंदइ काहु (मा० २८१।१)

टेढ़ि	बाँकी	बं० सुरंग पाय फिरे टेढ़ि छोमे (प० क० त० पद १६६०)
टेरि	पुकार कर	बं० रा० सर्वे कहतहि बेरि (प० क० त० पद १८७६) हि० बरसे सुमन जय-जय कहैं टेरि-टेरि (कं० २।१०)
टोयत	खोज करता है	बं० टोयत पथ चनि समय बसंत (प० क० त० पद १७१८)
(ठ)		
ठटा	ठाठ	बं० बरमोति ठटा भंवर भमर हरपत बरपत फूल (प० क० त० पद १२१८) हि० पोप गोपचन्द्र के ठट ह्वैं (क० १।२०)
ठमक	भंगभंगी	ठमके चाय रहिया चाय (प० क० त० पद ७६०)
ठमकि	ठमक कर	बं० ठमकि चाँपये मुख पटांचल दिया (प० क० त० पद ६११)
ठाँइ	स्थान	बं० पुकारि कांदिते चाहि ठाँई (प० क० त० पद ११७) हि० ते सब सुमधिवास प्रभु ही छोहोवहि मिटि एक ठाँइ (वि० १०१)
ठाकुरास	ठकुरायत	बं० बसाई मायाइ नाचे बड़ ठाकुरास (प० क० त० पद ६६५)
ठाढ़	खड़े होकर	बं० ठाढ़ह पछरि कांपि (उदयदास प० क० त० पद २०१६) हि० सुनि सुर बिनय ठाढ़ि पछताती (तुलसी रा० च० मा०, प० १२)
ठाढ़ि	खड़ी	बं० भूपहि एकसि ठाढ़ि (भूपति प० क० त० पद ४८१) हि० ठाढ़ी अजिर बसोदा अपने (सूरदास सू० सा० १०।१८८)
ठाढ़े	खड़े होकर	हि० ठाढ़ भए उठी सहस सुभाएं (मा० १२४।४)

ठाम	स्थान	बं० आइ मिलल सोइ ठाम (प० क० त०, पद १०) हि० जिन्ह लगि निज परलोक बिगारियो ठा ठामें (वि०)
ठिकन	ठिकाना	हि० तुलसिदास सीतल नितएहि बल बड़े ठिका ठौर कहाँ (वि० २२१)
ठेलइ	ठेलता है	बं० परसिते तरासि करहि कर ठेलइ (प० क० त० पद १००) हि० हुलनि हुकेलि पेलि सचिव चलते ठेलि (मा० २।८)
ठौर	स्थान	बं० तुलना विचार नाहि ठौर (जगदानंद, प० क० त० पद १०३२) हि० बड़े ठेकाने ठौर की हौं (तुलसी, वि० प० पद २२१)
(ड)		
डगमग	अस्थिर	बं० डगमग जौवन कमल तुलायत (प० क० त० पद ४) हि० क्षुभित सिंधु डगमगत महीधर (गी० १।२१)
डारइ	फेंकता है	बं० दूरहि डारसु (प० क० त० पद २७३) हि० भीम कमल सर भौंहि मदन जनु डारइ (मा० ६२)
डारसु	डाल डालूँ	बं० गुनगन गौरव दूरहि डारसु (प० क० त०, पद ११५) हि० बैधि सी मैं डारि हरू पसारी (मा० १।१२६।१)
डाला	उपहार	बं० धापना साजा धालिय डालि (प० क० त०, पद २७६)
डूबसु	डूब जाऊँ	बं० डूबसु गंग प्रपाते (प० क० त० पद ११६०)
डोलत	हिलता हुआ	हि० डोलत धरनि सचराचर लसे (मा० ६।१३।२)

तलपाय	तलफता	हि० तलफत बिषम मोह मन मापा (त० रा० च० मा० म० १२१)
		बं० पसके पसके तलपाय (प० क० त० पद २१८२)
		हि० तलफत मीन मलीन जनु सींचत सीतल बारि (मा० २।११४)
तलोयार	तलवार	बं० मदन सेइ तलोयार (प० क० त०, पद १८२१)
तहिं	उनसे	बं० तहिए पाइ परिहास तहिं करइ (प० क० त० पद १०५)
		हि० तेहि मिले महेस दियो हित उपदेस (गी० १।२७)
ताहि	ताड़ करके	बं० ताहि तजित अभिसार (प० क० त०)
		हि० ढोल गंवार शूद्र पशु नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी (तु० रा० च० म०)
तावत	तब	बं० तावत तम नाहि छुटइ (प० क० त० पद १७४)
		हि० तुलसी रामप्रसाद सौं तिहुँ ताप नसाती (वि० १५१)
ताहां	वहाँ	बं० जाहां नाहि ऐसन रस निरखइए ताहां परिचाय (गोविन्ददास, प० क० त० पद २१५)
		हि० जाय तहाँ कछु जाने (तु० वि० प० पद ६४)
तितल	भिगना	बं० तितल बसन तनु लागी (प० क० त० पद २०७)
तिहों	वे	बं० तिहों जगन्नाथ आपनि साखात (प० क० त० पद १८१२)
तु	तू तेरे	बं० तु बिनु सुखमय पेख दैवास (गोविंद प० क० त० पद ५११)
		हि० हौ तो तुव निदेश तें न्यारो (तु० वि० प पद ६४)

तुहि	तुम	बँ॰ सुन्दरि तुहुँ बड़ि हृदय पाषाण (बल्लभदास प॰ क॰ त॰ पद १७) हि॰ तुहि सराहति करति सनेहु (तु॰ रा॰ च॰ मा॰ अ॰ ३२)
तेरा	तेरा	बँ॰ पंथ नेहारत तेरा (गोविन्ददास प॰ क॰ त॰ पद ११८) हि॰ तुलसी पर तेरी कृपा (तु॰ वि॰ प॰ पद १४)
तेरि	तेरी	बँ॰ कहतहि हासि सरस तनु तेरि (प॰ क॰ त॰ पद २८८१) हि॰ नीको तुलसीदास को तेरि ही निकाइ (वि॰ १५)
तैहार	त्यौहार	बँ॰ यह सब बहद तैहार (प॰ क॰ त॰ पद १४७५)
तैछन	तैसे	बँ॰ तैछन नूपुर बरखी (प॰ क॰ त॰ पद २७२) हि॰ तैसइ सील रूप सुविनीता (मा॰ १।२४।२)
तो	तुम्हारे	बँ॰ तो तुम्हारे बिनु आकुल कानाई (ज्ञानदास प॰ क॰ त॰ पद १५) हि॰ मो समान आरत नहिं आरतिहर तोसों (तु॰ वि॰ प॰ पद १७)
तोसों	तोस कर	बँ॰ लाजे मुख नाहि तोसों सधीर समुखे (प॰ क॰ त॰ पद ८१२) हि॰ देव पितर सेइ पूजिये तुसा तोनिए भीम (वी॰ १११०)
तोहि	तुम	बँ॰ दहम मनोभवे तोहि जिया यदि (प॰ क॰ त॰ पद ४०६)
तोहे	तुमको	बँ॰ तोहे अनुखन हेरिये तोहि प्राणचीत (प॰ क॰ त॰ पद १६)
तोमारसुँ	तुमसासुँ	बँ॰ पिरिति पिरिति तुमे तोमारसुँ (प॰ क॰ त॰ पद ११६)
(प)		
परकये	भिरकना	बँ॰ परकए मोरक पाप (प॰ क॰ त॰, पद २०१०)

थरहरि	थरथर काँप कर	बँ० थरहरि थरहरि काँपये थरथर् माप (प० क० त पद ११)
		हि० कोसि फिरि भिंसि सखि हि काँपु तन थरथर (मा० ६६)
ठारि	खड़ी	बँ० कानु हार माहा ठारि (शेखर प० क० त० पद २४०)
		हि० ठाढ़ी अजिर जसोदा अपनें (सूरदास सू० सा० १०।१८८)
थिर	स्थिर	बँ० सखिर बचने थाति थिर कर चीत (यदुनन्दनदास प० क० त० पद २२१)
		हि० चपल कहू सो थिर होइ बरनि (दु० पी० व० १।८८।४)
(द)		
दारि	स्त्री	हि० दारिका परिचारिका करि पालिबी करना मय (मा० १।३५१।२)
दिये	दिया	बँ० तनु नाहि दिये ओर (प० क० त० पद ११११)
		हि० मनहुँ वारि मनसिज पुरारि दिय सखिही (पी० ७।११)
दीजै	दीजिए	बँ० तन मन मनहुँ निछावरि दीजै (ब्रजवास प० क त० पद २८३८)
		हि० दीजै कान्ह काँधे को कंवर (सूरदास सू० सा० १०।११११)
दुखति	दुखियारी	बँ० सखसि भुखसि दुखसि दैवसि (प० क० त० पद ११९८)
		हि० पति भारत पति स्वारथी पतिहीन दुखारी (वि० १४)
दुन	दोनों	बँ० गजराज जिनी दुन पाई चले (प० क० त० पद ११३३)
		हि० भिन्न भाप तें दुगउ भाइ (मा० १।१२२।३)

दुबर	दुर्बल	बं० परम दुबर देह (प० क० त० पद १६२) हिं० देह दिनहु दिनदूबरि होइ (मा० २।३२४।१)
दुलह	दूलह	बं० परिचय दुलह दुल्हे पहु भेलि (प० क० त० पद ५२) हिं० नहि बरात दुलह अनुरूपा (मा० १।६२।४)
दुलहिनि	दुलहिन	हिं० दुलहिन कहत दौरि सी बहु छिन पाती नद के (१०।३।२०)
दुलारी	दुलारी	बं० दुलारी नंद-नंदन वृष भानु दुलारि (प० क० त० पद २८११) हिं० यह सुनिकै वृषभानु मुदित चित हँसि हँसिकात दुलारी। (सू० सा० ७०६)
दुलाल	दुलारा	बं० सघोर दुलाल दुफाति देखिनु (प० क० त० पद २७७) हिं० मिटि जु गयो संताप जनम को देख्यो नंद-दुलारो (सू० सा० १०।१५)
दुहाई	दोहाई	हिं० देत मदन मारुत मिलि दसौं दिसि दुहाई (सू० सा० ६५०)
दुहुँ	दोनों	बं० दुहुँ रूप निति दुहुँ हिये जाय (गोविन्ददास प० क० त पद २८७) हिं० देत बिहित कुलरीति कीन्हीं दुहुँ कुलगुर (तु० जा० म० छंद १४२)
दुख	दुःख	बं० दुखक पराधे पँवार धरत मेम (प० क० त, पद २४५) हिं० ताक सो दुख देंतुनिया (सू० सा० १०।८२)
दे	देह	बं० स्वपन देखिनु ये श्यामक वरण दे (ज्ञानदास प० क० त पद १५४) हिं० सेन्य रहित सनेह देह भरि (तु० वि० प० पद २२)

दोन	दोनों	बं॰ यमुना तीरेर धाप खेले दोन भाई (प॰ क॰ त, पद ११६५) हि॰ यदपि मोचन भरि दोनों देहें मह भंजन की (सू॰ सा॰ २६४८)
दोसर	दूसरा	बं॰ दोसर मनमथ करे फूलबान पाप (प॰ क॰ त॰ पद ७२८) हि॰ आदि निरंजन निराकार कोउ हुतो न दूसर
(ध)		
धक धक	धकराहट	बं॰ पराण मा करे धकधक करे (प॰ क॰ त॰ पद १२) हि॰ धकधकात तन बक धकात उर मकमक सब (सू॰ सा॰ २६६६)
(न)		
न	बहुवचन	बं॰ तेजमन हरि-विमुखन के संग, (माधो प॰ क॰ त॰, पद १०१५) हि॰ तजो मन हरि विमुखनि को संग (सू॰ सा॰)
नवोल	नवीन	बं॰ नवोल नवोल नवी रंग में (शिवराम प॰ क॰ त॰ पद १२२०) हि॰ नवल नेह—नव पिया नयो-नयो (सूरदास सू॰ सा॰ १०।६६१)
नचहि	नाच करते हैं	बं॰ नचहि विहंग-पातिया (बलराम प॰ क॰ त॰, पद २४६७) हि॰ नचायरे-बन नित नए, नाचत नाइत सब (सू॰ क॰ वी॰ पद १६)
ननदी	ननद	बं॰ एक दिन आइते ननदिनी सने (प॰ क॰ त॰ पद ७१६) हि॰ ननदी तो न पिया विनुपारी मोंकहू रहति (सू॰ सा॰ १४६२)
नयना	नयन	बं॰ अंजने रँजनु ए दुइ नयना (गोविन्ददास प॰ क॰ त॰ पद २७१७) हि॰ प्रभु सोभा सुख पावहि नयना (तु॰ रा॰ च॰ मा॰ पृ॰ ८८)

मञ्हि	मन्ही छाटी	बं० मुंद सुन्दर मञ्हि मञ्हि (शिवराम प० क० त० पद ११५७) हि० ठाढ़े हरि हँसत नान्हि दँतियन छवि छोत (सूरदास सू० सा० १०।१४६)
नागरपना	चातुर्य नागरिकता	बं० कतना नागरपना जाने (प० क० त० पद ७८२) हि० मथुराबको नगर जन हिन्दुवातहि जदुनाथ पठाये (इ० ५०)
नाचइ	नाचता है	बं० नाचत गौरांगराय (प० क० त० पद २६६) हि० तहँ तहँ नाचइ परि हरि माया (मा० ६।२४।१)
नाचन	नृत्य क्रिया	बं० पुरुष नाचनि करे किबा से अंतर (प० क० त० पद १०२) हि० जो कछु कुबिजाके मन भावै सोइ नाच नचावै (सू० सा० १४८१)
नाशइ	नाश करता है	बं० देई देखिमि नाशइ (प० क० त० पद ५०१) हि० नासहि बेगि नीति अस सुनी (मा० ३।२१।६)
नाह	नाथ	बं० काहु काहुक कछु नाहि कहई (प० क० त० पद १०४) हि० तब नर नाहँ वसिष्ठु बोलाए (मा० २।८।१)
निकसइ	बाहर निकलना	बं० सब जन निकसमि बाहिरे बैठल पुरम मम धाम (प० क० त० १७४) हि० धाम निकट जब निकसहि धाई (मा ०।१०८।४)
निके	सुन्दर	बं० निके बनि थाये हा मदु-सुभास (प० क० त० पद २४२५) हि० सुन्दर तनु सिसु बसन-बिभूषन नख सिख निरखि निकैया (गी० ११८)

निछोरि	निचोड़कर	बँ० का रस मैस निछोरि (रायशेखर, प० क० त० पद २२१२) हि० बरनहु रघुबर बिसद जसु श्रुति सिद्धान्त निचोरि (तु० रा० च० मा, बा० १०९)
निछोरि	निछावर	बँ० श्री पद पाथुक मझ भरतामृजचा भरसन निछोरि (प० क० त० पद २४०७) हि० करि आरती निछावरि करहिं निहारहिं (मा० १५२)
निन्द	नींद	बँ० बिगलित लोचन निन्द (प० क त० पद ४०) हि० सुरत आइ पीड़े सोउ सैमा, लोचनमाह निन्द (सु० सा० १०।२१०)
निपट	नितांत	बँ माधव निपट कठिन मन तोर (मू० प० क० त० पद ४७८) हि० बिबरन भयउ निपट नरपालु (तु० रा० च० मा० प० २९)
निरखह	निरीक्षण करता है	बँ० भमिभिन्न नयनहि निरखह दश दिश (प० क० त० पद १७१) हि० निरखहि-छवि जननी तृनतोरी (मा० १।१९८।१)
नेह	प्रेम	बँ० कि पूछसि रे सखि कानुक नेह (प० क० त० पद १८०) हि० बिपति-काल कर सतगुन नेहा (मा० ४।७।१)
नेहारइ	देखता है	बँ सचित नयने नेहारइ बध-बिम्ब (प० क० त० पद ९८१) हि० मानहुँ सरोष भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारइ (मा० २।२५।६)
नौतुन	नूतन	बँ० निबुइ नौतुन रंग (ज्ञानदास प० क० त० पद ११९) हि० जिमि नूतन पट पहिरइ नर (तु० रा० च मा० प० १०९)

ग्यामसी	नयन मयँसी	मैं० कौन पुरुष ग्यायसि मेहा
		(प० क० त० पद २५१)
		हि० का घूँघट मुख मुँ बहु नयनानारि
		(न० १६)
(प)		
पयोरब	पार करके	मैं० विरह बसथि कत पयोरब हाम
		(प० क० त० पद ७६७)
		हि० तुलसीदास बस पद परसि भवसागर पी
पकान	पकवान	मैं० कपूँर चन्दन विविध पकवान
		(प० क० त० पद २५८९)
		हि० विविध भाँति मेवा पकवाना
		(मा० २।३३१।२)
पग	पैर	मैं० विठिम बर्स कलपीत करि
		(प० क० त० पद ११७५)
		हि० ताके पग की पगतरी मेरे तनको चाम
		(बै० १७)
पड़रमुँ	पार हो जाऊँ	मैं० निज मरियाद सिंधु सम पड़रमु
		(प० क० त० पद ६८८)
		हि० पावत न पैरि पार पैरि पैरि थाके हैं
		(गी० १।६२)
पड़रि	पार होना	मैं० पड़रि उतारब पार
		(प० क० त०, पद ४११)
पटकउ	पटक कर	मैं० स्याम चिकुर हेरि मुकुर करै पटकउ
		(प० क० त० पद ४८२)
		हि० महि पद पटकेउ भूमि भँवाइ
		(मा० ६।१८।१)
पटकिठे		मैं० पटकिठे पंजर झम्कि पटकि कर पटकिठे
		(प० क० त० ४८२)
		हि० महि पटकत भजे भुजा मरोरी
		(मा० ६।६८।५)
पढ़इ	पाठ करता है	मैं० पढ़इ ऐइन धमिया गीर चल
		(प० क० त० पद २४१७)

निचोरि	निचोड़कर	बं० को रस मेम निचोरि (रायशेखर प० क० त०, पद २५१२) हि० बरसहु रघुबर बिसद बसु सुधि सिचाउ निचोरि (तु० रा० प० मा, बा० १०६)
निछोरि	निछावर	बं० श्री पद पावुक बच भरतानुबचा भरघन निछोरि (प० क० त० पद २४०७) हि० करि आरती निछावरि करहिं निहारहिं (मा० १५२)
निन्द	नीर	बं० विगलित लोचन निन्द (प० क० त० पद ४०) हि० तुरत जाइ पीछे चोठ मैना लोचनमाह निन्द (सू० सा० १०।२३०)
निपट	नितांत	बं० माधव निपट कठिन मन तोर (भु० प० क० त० पद ४७८) हि० बिबरन भयउ निपट नरपालू (तु० रा० च० मा० अ० २९)
निरखइ	निरीक्षण करता है	बं० अनिमिख नयनहि निरखइ दस दिश (प० क० त० पद १०१) हि० निरखहि-छबि जननी तृनतोरी (मा० १।१९८।१)
नेह	प्रेम	बं० कि पुछसि रे सखि कानुक नेह (प० क० त० पद १८०) हि० बिपति-काम कर सतगुन नेहा (मा० ४।७।३)
नेहारइ	देखता है	बं० सचित नयने नेहारइ दस-दिश (प० क० त० पद २८१) हि० मानहुँ सरोप भुअंग भामिनि बिषम भाँति निहारइ (मा० २।२५।६)
नौतुन	नूतन	बं० निठुर नौतुन रंग (ज्ञानदास प० क० त० पद ११६) हि० जिमि नूतन पट पहिरइ नर (तु० रा० च० मा० उ० १०६)

न्यायसी	मनस नवीसी	बं० कोन पुरुष न्यायसि मेहा
		(प० क० त० पद २३१)
		हिं० का पुँछेट पुछ पुँछहु नवसातारि
		(न० ११)
(प)		
पमोरब	पार करके	बं० विरह बलमि कत पमोरब हाम
		(प० क० त० पद ७६७)
		हिं० तुलसीदास बस पद परसि भवसागर पौ
पकान	पकवान	बं० कपुर संदम विविध पकवान
		(प० क० त० पद २६८८)
		हिं० विविध भाँति मेवा पकवाना
		(मा० १।३३३।२)
पग	पैर	बं० विठिध बसे कसमीत करि
		(प० क० त० पद १६७३)
		हिं० ताके पग की पगतरी मेर तनको चाम
		(बं० ३७)
पङरमु	पार हो जाऊँ	बं० निज मरियाद सिधु सम पङरमुँ
		(प० क० त० पद १८८)
		हिं० पावत न पेरि पार पेरि पेरि थाके हैं
		(गी० १।१२)
पङरि	पार होना	बं० पङरि उतारब पार
		(प० क० त० पद ४१६)
पटकत	पटक कर	बं० श्याम चिकुर हेरि मुकुर करै पटकत
		(प० क० त० पद ४८२)
		हिं० महि पर पटकेउ भूमि भँधाइ
		(मा० ६।१८।१)
पटकिते		बं० पटकिते पंजर झम्कि पटकि कर पटकिते
		(प० क० त० ४८२)
		हिं० महि पटकत भजी भुजा मरोरी
		(मा० ६।६८।५)
पढ़इ	पाठ करता है	बं० पढ़इ ऐसन प्रमिया मीर वस
		(प० क० त० पद २४६७)

पड़ाइ	पड़ाकर	हि० चलीं पढ़त गावत गुन-गाथा (मा० १।११७।४) बँ० पंचम बर पड़ाइ (प० क० त० पद १४९२)
		हि० हारेउ पिता पढ़ाइ-पढ़ाइ (मा० ७।११०।४)
पन	प्रत्यय विशेष	बँ० गुन सांगीतिक नागर बोयारपना (प० क० त० पद १०९)
पंथ	पथ	बँ० धाम छले धमल धाम छर्ई पंथ (प० क० त० पद ७०) हि० तेहि परिहरिहि बिमोहबस कल्पहि पंथ अनेक (दो० ६६९)
पंथिक	पथिक	बँ० राधानाम कहई बर पथिक (प क० त० पद ४८९)
पम्मारि	पौमारी	बँ० मधु पम्मारि बर गेह बहायल (प० क० त० पद २१९)
पपिहा	चातक	बँ० बाक्य पपिहा पिउ पिउ छोकरए (प० क० त० पद १०१०) हि० मोहि भए प्रेम मह नेमि निधि रामनाम श्याम तुलसी पपिहा (वि० ६९)
परकाशह	प्रकाश करता है	बँ० बसते करल परकाश (प० क० त० पद १५) हि० मदमत्त मुख बानी प्रकाशतइ यथा बिचारि (सू० सा० १७०८)
रदेशिया	प्रवासी	बँ० प्राण प्रिया परदेशिया (प० क त० पद १८१५) हि० कहा परदेशी को पतियारी (सू० सा० २७११)
शइ	प्रवेश करके	बँ० कर गहि सकेत सेइ परवेशइ (प० क० त० पद १०४२) हि० भरत नमनि यूँद ज्यों बस बचन नहिं परसत (सू० सा० १७७९)

परसइ	स्पर्श करके	बँ० गिरिवर गुरुया पयोधर परसत (प० क० त०, पद १४४२) हिं० सजे सुमय तब परसत बरनी (मा० क० १।१४४।४)
परिखत	परख करता है	बँ० परिखत गोविन्ददास (प० क० त० पद ११३४) हिं० तबलगि मोहि परिखेहु भाई (मा० ३।१।१)
परिपालइ	परिपालन करके	बँ० प्रानपियारि पदवि परिपालइ (प० क० त० पद ३३३) हिं० बसीस सबाहुम कहुँ परिपालय (मा० ७।१४।४)
परिहर	परित्यागकर	बँ० पामि परसितेप्राएण परिहार (प० क० त० पद ११४) हिं० कारेहु सहजु न परिहर सोइ (मा० १।८०।१)
पलकना	पलक मारना	बँ० पलकम मारे आँखि (प० क० त० पद २८१३) हिं० पलकन्हि हूँ परिहरी निमेषे (मा० १।२३२।३)
पहिरइ	पहनता है	बँ० पहिरत तेमत वाहि (प० क० त० पद २८१) हिं० पहिरहि सज्जन बिमल उर सोमा मति अनुराग (मा० १।११)
पहिरण	परिधान	बँ० पहिरण बसन बसत सब हाते (प० क० त० पद २२३) हिं० पहिरावन को पाइहिहैं सो तुम्हहुँ बद
पहिरनु	पहनमु	बँ० हिया पमसार हार नाहि पहिरनु (प० क० त० २२७२) हिं० पहिरहिं सज्जन बिमल उर सोमा मति अनुराग (मा० १।११)
पहिरामोये	पहनाओ	बँ० पहिरामोये सब गोपाल (प० क० त० पद २११६)

		हि॰ पाटम्बर अम्बर तजि गूदरि पहिराऊ (सू॰ सा॰ १।१६६)
पहिल	पहला प्रथम	बँ॰ देख देख पहिल समागमसीता पाइ (प॰ क॰ त॰ पद २२०) हि॰ मन ममता रुचिसों रखवारि पहिलै लेहु लिरि (सू॰ सा॰ १।५१)
पाइ	प्राप्त करके	बँ॰ देख देख पहिल समागमसीता पाइ (प॰ क॰ त॰ पद २२०) हि॰ किरिति विरोध लेपई नाहि पाई
पाओलु	प्राप्त कर	बँ॰ राधा मोहन बिन्दु ना पाओल (प॰ क॰ त॰ पद १८)
पाकड़ि	पकड़ कर	बँ॰ बाहु पाकड़ि कत साधत मान (प॰ क॰ त॰ पद १११) हि॰ मन कम बचन नंद नंदन उर यह दृढ़ करी पकरी (सू॰ सा॰ १।१५०)
पाखालइ	धोकर	बँ॰ चरण पाखालइ धेवर उड़चरि (प॰ क॰ त॰ पद ११५) हि॰ उत्तम विधि सो मुख पखरायो
पाग पागड़ि	पगड़ी	बँ॰ नरपति पाग छारे (प॰ क॰ त॰ पद १४५) हि॰ एते पर अखियाँ रहसानी मुख पगिया लपटानी (सू॰ सा॰ १६६७)
पाछु	पीछे	बँ॰ मझु अभागिनी पाछु ना गनिलाम (प॰ क॰ त॰ पद ८०२) हि॰ ब्रह्मलोक लगि पगक मैं एक मट्टू पाछ उड़ाव (मा॰ ७।७६)
पातल	पतला	बँ॰ ओंबहि लायल पातल चीर (प॰ क॰ त॰ पद ७९७) हि॰ पचमा भकम भूम पातर लाठ
पतियाइ	विश्वास करके	बँ॰ करम कि मम पतियाय (प॰ क॰ त॰ पद १७९१)

		हि० सुर माया बस बैरिनिहि सुहृद जानि पतिआनि (मा० २।१६)
पानी	जल	बं० नाहे जानि बूझह पानि (प० क० त० पद ५०८)
		हि० राम प्रेमहि पोषत पानी (मा० १।४३।१)
पापिया	पापी	बं० पापिया पाकार सोक करे ठायठारि (प० क० त० पद ८५०)
		हि० पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं (मा० ४।२९।२)
पावइ	प्राप्त करके	बं० पुलकति पावइ कोइ (प० क० त० पद १११)
		हि० सुरसारस से करम, विचारा मारग से नहिं पावहिं पारा (रा० च० मा०)
पालटि	पलट कर	बं० सरबस लेइ पालटि पुन (प० क० त० पद २००)
		हि० उलटि पलटि लंका जारी (मा० ५।२६।४)
पालना	पालन	बं० पूरब प्रेमक पालना (प० क० त० पद १२७७)
		हि० रतन म बैठे ठाढ़े पालने भुलावत हँसी (सू० सा० १।१२)
पाश	पास	बं० अपने देखराम पाश (प० क० त० पद २०१)
पाशेपाश	पासापासी	बं० बासिरे बासिरे पाशेपाश (प० क० त० पद २०८४)
पाहुन	पाहुना-पाथर	बं० शीत पाहुन काम दारुण (प० क० त० पद १७१२)
		हि० पाहन बीच कमल बिकसावै जल में अगिनि जरै (सू० सा० १।१०१)
पिउ	पपीहे की आवाज	बं० पपिया दारुन पिउ पिउ सोहरग (प० क० त० पद १७१०)

पिओलि	पीसी भाय	बं० खाइलि पिओलि बसिया (प० क० त० पद १७१०)
पिचका	पिचकारी	बं० कुकुम पिचका सेह केह देइ थाय (प० क० त पद १४९५) हि० राधा सखि अबाइए कुमकुमा छिरकत भरि केसरि पिचकारी (सू० सा २९११)
पिछिला	पीछे भागा	बं० पिछला बाटे से भाग (प० क० त० पद ६७८) हि मधुकि परहिं फिरि हरहिं पीछे (मा० २।१४३।१)
पियइ	पान करता है	बं० जब सुधा रूप नयन भरि पियई (प० क० त० पद ११८३) हि० चरित सुरसरित करि सुमन पिरितिसिउरित पियत (वि० ४०)
पिय	प्रियतम	बं० पिय अधर सुधा प्रिय प्रेम लखमि हिम (प० क० त० पद ७०५)
पियारि	प्रिया प्यारी	बं० प्राण-पियारि पदमि परिवालइ (गोविन्ददास प० क० त० पद ३११) हि० ससुरारि पियारि लगी जब तें (तु० रा० च० मा० उ० १०१)
पियासा	पिपासा-युक्त	बं० भुखमि मिलनाख पियासा (प० क० त० पद १०५८) हि० परम मंथ को छाँड़ि पियासो दुरमति कूप खनावै (सू० सा० १।१६८)
पिय	पान करे	बं० ना खाए आहार ना पीये नीर (प० क० त० पद ६८) हि० सावन मास पपीहा बोलत पिय पिय करि जो पुकारत (सू० सा० २८१०)
पिरीत	प्रेम	बं० ताहार प्रीति हइया तुरी ये (प० क० त० पद १) हि० हा रघुनन्दन प्रान पिरीते (मा० २।१५५।४)

पीक	रसपान या पान का रस	बँ० पीअए पटु पीत पीक (प० क० त० पद २८१४) हिं० कबहुक बैठि मग भुजनि करि पीक कपोलनि पागे (सू० सा० ६८६)
पीअ (अइ)	पान करता है	बँ० भुके भमर मधु दुहुँ जन पीअइ (प० क० त० पद १२१) हिं० पीवत छाँछ अघाइ कहू कबके रंवारे (सू० सा० २।२३८)
पीअनु	पान करो	बँ० अमृत तेजि किये हलाहल पीअनु (प० क० त० पद १०१८) हिं० मज्जत पय पावन पीवत वसु (वि० २४)
पुछइ	पूछता है	बँ० पुछए मु बल हेरिया भुख जाति पाति (प० क० त० पद २१७) हिं० मुस बात पात कोइ पुछत नाहिं श्रीपति के दरबार (सू० सा० १।२३१)
पुतली	पुतली	बँ० जीव पुतली सम्बेह (प० क० त पद ६५) हिं० रसन भइ बिन भी पुतरी मुन मरीरहि ठाढ़त (सू० सा० १०६१)
पूर	पूरा	बँ० वेप भूपन तीर सव दिस पुर (प क० त० पद २२०) हिं० देखि पूर बिपु बाढइ मोद (मा० १।८।७)
पेखनु	देखनु	हिं भूमि बिबर एक कौतुक पेखा (मा० ४।२४।१)
पेड़ा	मिठाई विशेष	बँ० पुरिपुआ खाजा पेड़ा सरमाजा (पैतर प० क० त० पद २२६५)
पैठ	प्रवेश	बँ० प्राइ कुंज माहा पैठ (प० क० त० पद २५०५) हिं० पठि मवन रघु रानि दुआरे (मा० २।१४७।१)

पैठमु	पैठ	बं० मन्दिर हेरि कानन माझ पैठमु
		(प० क० त० पद ११८)
		हि० पैठा नगर सुमरि भगवाना
		(रा० च० म०)
प्यारी	प्रिया	बं० प्यारि पाकहि पिरिति पावके
		(प० क० त० पद १७४०)
		हि० मैं बरजि कई बार तू प्यारि
		(सू० सा० ७४४)
प्रकटई	प्रकट करके	बं० श्याम निरखइ गोरस प्रकटइ
		(प० क० त० पद ५७१)
		हि० प्रकटहिं दुरहिं अटन्ह पर भामिनि
		(मा० १।१४७।२)
(फ)		
फन्द	फाँसा	बं० दुरजन नयन पवहि पद फंद
		(प० क० त० पद १०१४)
		हि० काटो न फंद मो अंध के मद विलंब कारण
		कवन (सू० सा० ११५०)
फाटि	फटकर	बं० सहचर मेलि मरत हिय फाटि
		(प० क० त० पद ६०)
		हि० सरिता कूल फाटि जैसे क्यों क्यों कांची
		भीत स्वाद करि जाइ (सू० सा० ११६४)
फारसु	फाड़	बं० फारसु काँचलि (प० क० त० पद १४२२)
		हि० फारसु हार चरिमला फारहिं उर बिदारहिं
		(मा० ६।८२।६६)
फीरत	घूमता है	बं० मनमथ राज साथ भेद फीरये
		(प० क० त० पद १४२२)
		हि० कोमलता मन मिलित घरनु पति मानो
		फिरत पुहाइ (सू० सा० ९८१६)
फुकरत	आवाज करता है	बं० बानहि धारल धारि मुक फुकरव
		(प० क० त० १४८१)
		हि० तब चले बान कराल फुकरत जनु बहु व्याल
		(मा० ३।२०।१)

फूटत	फूटता है	बँ० जिन सौंकरि फुटत खाति सौं मुख (प० क० त० पद १७६६) हि० उमटत प्रति धमार, फूटत फर, झटपट लपट कराल (सू० सा० ६१२)
फुतकार	ऊँची आवाज	बँ० फुतकारहि धनि वेगव देहा (प० क० त० पद १०२१) हि० कसकोटि करि जाहिमे, विष की एक फुकार (सू० सा०)
फुरमो	फुरना	बँ० बलराम चिते फुरउ चीत (प० क० त० पद २४१७)
फुलि	पुष्पित फूलकर	बँ० फूलि बयनि दोहनि (प० क० त० पद १७१२) हि० कबहुंक फूलि सभा में बैठ्यो मूछनि ताप दिखायो
फेनि	खाद्य पदार्थ विशेष	बँ० मछुरी मारिया फेनि (प० क० त० पद २११७) हि० घेवर फेनी और सुहारी खोवा सहित खाहु बलिहारि (सू० सा १०।११४)
फेर	फिर	बँ० बरण प्रकट फेर उन्हुके नैन (प० क० त० पद १०६) हि० प्रभु आगमन जनाव जनु नगर राम बहु फेर (मा० ७।१ दो० २)
फोरि	फोड़कर	बँ० नरवर खाण्डि हिया फोरि (प० क० त० पद २४६३) हि फोरि फारि तारि तोरि पपन होत यावै (८।१३)
(ब)		
बजायत	बजाता है	बँ० श्यामानन्द आनन्दे बजायत तोर (प० क० त० पद २८८३) हि० इत अन्याय अधर्म सूर नित नौबत द्वार बजायत (१।१४१)
बटोरनु	बटोर	बँ० मदन मदक मन पाये बटोरनु (प० क० त०, पद १०१८)

		हि० कबहुक मग मग भूरि बटोरत (१।२२)
बड़ि	वृद्धा स्त्री	बँ० तुमि एखन कीम ना बोल बुझना मो बड़ि माइ (प० क० त० पद १८२)
बनई	बनी हुई	बँ० भवन विभूषण अम्बर बनई (प० क० त० पद १०१)
		हि० चतुर्भुज बनइ न जाइ बखानी (मा० ७।११)
बनओयारि	बनविहारी बनवारी	बँ० धीर हुरण मायर बनओयारि (गोपालदास प० क० त पद २९६६)
		हि० मथुरा जन्म लियो बनवारी (गोविन्द कवि० र० भाग तीसरी पृष्ठ ८६)
बनाइया	बनाया	बँ० यतन हि पैरा बनाइ (प० क० त० पद २२०)
		हि० तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै (सू० सा० १।२९)
बनयालु	बनायु	बँ० सखनि माहे बनायलु वेश (प० क० ह पद १६१)
		हि० तुमरे भूषण मोहीं दीजै अपने तुमहिं बनाऊ
बरके	बल्कि	बँ० बरके जीवन कमल पराधीन (प० क० त० पद ८११)
बरखत	बरसता है	बँ० बरखत [illegible] दिठि नैह सपन बरखनिमा (प० क० त० पद २१४१)
		हि० कबहुँ बिटप भूधर उपारि परसेन बरखत (क० ६।४०)
बरखाय	बरसता	बँ० एहि एहि बरखाय (प० क० त० पद २८८०)
		हि० नामदेव सन काम नाम छोड बरबैन (पा० २९)
बलिहारि	बलिहार होना	बँ० उद्धवदास बलिहारि (प क त० पद २६७)
		हि० बेर बेरे मयों दीन दीन्ही सूरज बिहारी (सू० सा० १।१७६)

बहार	आनन्द	बँ० बाहर कुच से निकसे बहार (प० क० त० पद २५०४)
बहि	बही	बँ० विहि बहि तोहे देय (प० क० त० पद १३३६) हिं० ज्यों ज्यों सुकृत सुमेर चढ़ति भूपहि मिटति लगी बहि गाढ़न
बहुत	अनेक अधिक	बँ० कटिला बहुत भगति करि हरषित (प० क० त० पद २४०) हिं० बहुत लाभ लोगन्ह लघु हानि (मा० २।२६८।१)
बाँका	वक्र	बँ० बाहुनि चंचल बाँका (प० क० त० पद १२०) हिं० सकल सगुन मंगल कुसल होइहि बाल न बाँक (मा० ६।३।४)
बाउरि	पगली	बँ० हृदय बाउरि पारा (प० क० त० पद ११४) हिं० बावरि न होइ बानि कपिनाह की (क० ७।२६)
बाटोयार	बटमार	बँ० मुहुंसति वृन्दावन बटमार (प० क० त० पद २४६२) हिं० मैं एक अमित बटमार (वि० १२५)
बाढ़ई	बढ़ई	बँ० रूपसनातन ताहे रहेर बाढ़ई (प० क० त० पद २२००)
बात	बातचीत	बँ० शुनिते तोहारि बात (प० क० त०, पद ६४) हिं० भए बिकल मुख आव न बाता (मा० १।७३।४)
बाधाइ	बधाई	बँ० सबहुँ आनंदे बाधाइ (प० क० त० पद २०८०) हिं० भूपति पुण्य-पयोधि उमंग घर घर आनंद बधाई (गो० १।६)

बांधइ	बाँधता है	बँ० नयनक नीर थिर नाहि बान्धइ (प० क० त० पद ११८) हि० मा मम पट मनहिं बरिजोरि बाँधई (मा० १।४७।१)
बालाइ	बलाय प्रसंगत बलिहारी	बँ० विकल श्यामेर बालाइ लया (प० क० त० पद १२४) हि० कहहुँ तात जननी बलिहारी (मा० २।६२।छ०१)
बाहु	भुजा	बँ० मनि मने बाहु पीड़ बैठारे (प क० त० पद १०८८) हि० रघुपति यहि बाहीं (म० २।७०।१)
बाहुड़	फिरना लौटना	बँ बारेक बाहुड़ तोमार चाँद मुख देखि (प० क० त० पद १८६६)
बिथारइ	बिथारना	बँ० बिरचित बसन बिथारइ बाजरि (प० क त० पद ११९०) हि० सुर नसुर मुनि कर कान लीहे सकल बिकल बिचारि।
बिथारौं	छोड़ू	बँ० निरख मन बिथारौं (प० क० त० पद १०८६) हि० माथ रावरोषे बास रावरी बिचारि (हु० २१)
बिछाइ	बिछा कर	बँ० बिलसय सेज बिछायइ पुन पुन (प० क० त० पद २८२)
बिछुरल	बिछुड़ते हैं	बँ बिछुरल भरमे भरम माहा पैठल (प० क० त० पद ११०) हि० बिछुरत एक प्राण हरि लेहीं (मा० १।५।२)
बिछुरि	बिछुड़कर	बँ० ताहा कि बिछुरि पार (प० क० त पद २६०) हि० बिछुरे ससि रवि मन नयनि ते पावत दुख बहुतेरो (वि० ८७)

बिन	बिना	बं० बिन परिचय मोर प्रान केमन करे (प० क० त० पद १२५) हि० गुरु बिन ज्ञान नाहीं (संतों की कहाव
बिनोदिया	मनोहर	बं० गले दोले बिनोदिया माला (प० क० त०, पद २६१)
बिभोर	विह्वल	बं० हेरसु गोराम चन्द्र बिभोर (प० क० त० पद ११२)
बिरचइ	रचता है	बं० निरजने बिरचइ मूरति तोहारि (प० क० त० पद ११५) हि० बिसइ रचइ परपंच बिधाता (मा० २।२१२।१)
बिरसइ	निवृत्त होता है	बं० बिरसइ रति नियन भय लाजे (प० क० त० पद २११५)
बिराजइ	विराजता है	बं० धंम हि धंम बिराज (प० क० त० पद ११)
बिलपइ	विलाप करता है	बं० बिलपइ तापे तापायत अन्तर (प० क० त० पद ७००)
बिलसइ	विलास करता है	बं० कुसुम सेज माहा बिलसइ दुहुँजन (प० क० त० पद १५१)
बिसारे	भुलाकर, बिसरना	बं० शिव शुक नारद व्यास बिसारे (प० क० त० पद २८६८) हि० मतिमन्द तुलसीदास सो प्रभु मोह बस बिसरायो (मा० ६।१२१)
बिहरइ	विहार करता है	बं० करे सखि बिहरये कों पुन एह (प० क० त० पद १२०) हि० अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी मन-मन्दिर में बिहरे (क० १।४)
बिहान	प्रात काल	बं० यामिनि राति बिहान (प० क० त० पद ३१६) हि० भयो मिथिलेश मानों दीपक बिहान को (गी० १।८६)
बिख	बिष	बं० मृगमद चन्दन लेपन बिख (प० क० त० पद १०२७)

बीच	मध्य	बँ० बीच हि सुरधुनि भुक्ता हिलोल (प० क० त० पद १०२१) हि० सुम बीच धसकापर देखा (मा० १।२१
बीजइ	पखा करता है बोता है	बँ० बीजइ बने बने भ्रमइ दुइ (प० क० त० पद ६४६) हि० तुम्ह कहुँ विपति बीजु विधि बयउ (मा० २।२११।३)
बीड़	बीड़ा	बँ० ललिता ताम्बूल बीड़ बनाइ (प० क० त० पद १२६०)
बीत	बिना बीता	बँ० तोहारि परस रस बीते (प० क त० पद ६०७) हि० तेहि अवसर मुनि नारद आइ करतल बीन (मा० १।६०)
बीतलो	बीत गया	बँ० लाखे लाखे किंकिनी मुख पर बीतल (प० क० त० पद १६६६) हि० देखत रघुबीर प्रताप बीते संताप पाप (रा० च० मा०)
बुझनु	समझनु	बँ० तबे से बुझिनु सोपान माझे (प० क० प० पद ६८) हि० नाग बूझ्य बूझ्य बूझे
बुड़ा	बूढ़ा	बँ० बुड़ा बुमि कि धीर (प० क० त० पद १०१७) हि० जामवन्त मन्त्री अति बुढ़ा (मा० १।२१)
बुड़िया	बुढ़िया औरत	बँ० नन्दरेर जननी माझे धरमसी बुड़ियारे (प० क० त० पद १११२)
बुन्द	बूँद	बँ० बुँदे बुँद कमल पात (प० क त० पद १६२१) हि० बरषहि पर्वत मोह बस भार बहहिं जर बुँद (मा० १।२६)
बुड़न	डूबना	बँ० बुड़न सागर माझे (प० क० त० पद ७१)
बेयनु	बेनु	बँ० बेयनुं तनमन बाति (प० क० त० पद ३१०)

		हि० देखहि लेहु परखु बुहि लेहीं (मा० २।११८।१)
बोलत	बोलता है	बं० बोलत मुखल पोती (प० क० त० पद २७२४) हि० सीस परे महि जय जय बोलहि (मा० ६।८८।५)
बोलि	बोल कर	बं० महि महि बोलि बुलायल माय (प० क० त०, पद ६१) हि० गुरु बोलाइ पठयउ दोउ भाई (मा० २।१५७।२)
(भ)		
भई	हुआ	बं० सो तनु ताप भसम भइ जाय (प० क० त०, पद १०) हि० उमाविक सुरतिय सुनि प्रेमुदित भइ (जा० १२७)
भइसा	भैंसा	बं० कोसेर कुमार तार पाइ भइसा मार (प० क० त०) हि० आहुति देत रुधिर अरु भैंसा (मा० ७।७१।१)
भरइ	भरता है	बं० होने होने बसन भूमि तनु भरइ (प० क० त०, पद २१) हि० तब तब बारि बिलोचन भरहिं (मा० ७।१०।१६)
भरमइ	घूमता है	बं० आहा पहु भरमई असमर श्याम (प० क० त० पद ११५१) हि० हाय हाय राम बाम विधि भरमाए (गी० २।३१)
भक भक	भौंचक	बं० झलकत बिजुरि नयन भकभक (प० क० त० पद १००१)
भरोसा (भरसा)	विश्वास	बं० दास मनोहर करत भरोसा (प० क० त० पद २५७०) हि० नाम देव कर कवन भरोसा (गु० रा० च० मा०, गु० ५१)

भाँड़िया	भाँड़िया बताकर	बँ० भाड़ ्भिभंगि भिसास (प० क० त० पद ११)
भामोत	मच्छा मगता है	बँ० लोक परमाते मासुर भामोह (प० क० त० पद ७१७)
		हि० रघुपति हि मह मत मायस (मा० २।६०।छं० १)
माबत	कहता है	बँ० चाँदक हेरि सुरज करि माबये (प० क० त० पद ७७०)
		हि० बेद पुराण संत मत भापक (मा० ७।११६।१)
भाँड़॰	भी	बँ० भाड़ु भिभंगि भिसास (प० क० त० पद ११)
भाट	चारण	बँ० तार पर सिखे भाटेर बनिते (प० क० त० पद ११)
		हि० चले भाट हियँ हरषुन थोरा (मा० १।२४)
भाड़िया	भड़ुआ	बँ० से भाड़िया भाड़्या भुकर (प० क० त० पद २२०१)
भावो	भाव	बँ० पायोम भावको वैसब भाषी (प क० त० पद १०११)
		हि० राम राम नाम वर बरन जुग सावन भावन मास (मा० १।११)
...मत	मच्छा लगे	बँ० धीतस पवन मोहि भाहि भायत (प क त० पद १८१४)
		हि मनु भावतो पेमु पथ स्वबही (मा० ७।२३।३)
...मद	भिपाकर	बँ० नयनक नीरहि बसन भिगाम (प० क० त० पद २१०१)
		हि० करुणा वारि भूमि भिजाइ है (वि० १३६)
	भिजता है	बँ० नयनक नीरहि घमम भिगायइ (प० क० त० पद २४६१)

भेंआइ	भेंजकर	बं० मानस भेंआई घरे (प० क० त०, पद ७१५)
भेंटनु	भेंट करूँ	बं० ए सखि काहे भेंटनु मंद-महमा (प० क० त० पद ७५) हि० भेंटेउ लखन ललकि लघु भाई (मा० २।८४।१)
भइया भैया	भाई	बं० भैया अभिराम बलम घन श्रामोद (प० क० त० पद १२१९) हि० भैया भरत भावते के संग (गी० २।९३।४)
मति	निषेधार्थक अव्यय	बं० पुकाय उड़ये मत मयोर शिखंड (प० क० त० पद १९)
ममोर	मोर	हि० कनक रतन मनि मोर लिहे मुसुकातहि हो
मझु	मुझे	बं० संधु मझु मानस मावस मधुकर (प० क० त० पद १२)
मथ	मथकर	बं० मनमथ मनमथ मारि (प० क० त० पद २४२९) हि० तब मथि काढ़ि लेइ नवनीता (मा० ७।११७।८)
मनई	मानता है	बं० मनइ मनसिज शांति (प० क० त० पद १७१२) हि० हँसि मरि है पतीत भगत सिरामनि मनि है (वि० ११)
मनहि मन	मन ही मन	बं० भाविनि-भाव मनहिं मन मणइवे (गोरसुन्दरदास प० क० त०, पद १८८) हि० मन हि मन मधुर सोच भारी (सूरदास मू० सा० १०।१०।१२)
मनाइ	मनाकर	बं० माधुन मागर कतहुँ मनाइ (प० क० त० पद २७२९) हि० इस मनाइ मसीसहिं भय वस भावहु (मा० १२)

मरमि	मर्मज्ञ	बँ० मरमी धमार मरमे बाजे (विद्यापति प० क० त० पद २२६) हिं० पुरइनि सघन ओट बस देखि न पाइय मर्म (मा० ३।३६।क)
मरी	मर कर	बँ० बासाइ महया यो मरी बनिया (बलराम, प० क० त० पद ६८३) हिं० गुरु मरत मर्रहिं सकल (दो० २०४)
महा	मध्ये बड़ा	बँ० साथि साथि परमि परमि महामोहन (वृन्दावनदास प० क० त० पद ४६८) हिं० प्रकटे नर केहरि खँभ महा (क० ७।८)
माइ	माता	बँ० तुमि एकन केन बन बोस सुन मो बहि माइ (वंशीदास प० क० त० पद १२२) हिं० सत्य कहउँ मोहि जानकी माइ (मा० ५।३।२६१)
मांगी	मांग को	बँ० एइ मांगाछुया ठाय (प० क० त० पद १६) हिं० देखि मांगी बर को रुचि थोरे (मा० १।१६०।२)
माधाइ	माधव	बँ० इसि मुख मोड़ल छील माधाइ (विद्यापति प० क० त० पद ७२७)
माधौ	माधव	बँ० माधोये माधौ बैपर माधौ (प० क० त० पद १७११)
मानमु	मान लिया, मानू	बँ० निज कुल-दूषन भूषन करि मानमु (गोविन्ददास प० क० त० पद ३११) हिं० माम्यो मैं न दूसरो न मानत न मानिहैं (क० ७।६३)
माह	महीना	बँ० एभर बादर माह भादर (विद्यापति प० क० त० पद १७१५)
मिटायत	दूर करता है	बँ० बापत मिटायत बयना (बलरामदास प० क० त० पद ११५२) हिं० मिट्यो महामोह जी को छूट्यो पीच (वी० ११८६)

मिठाइ	मिष्ठान	बँ० रूपे भरल दिठि सोङरि परश मिठि (गोविन्ददास प० क० त०, पद ७१४) हिं० मीठी मधु कठनात मरो रोमाइ भइ छेम (दो० १६)
मिनति	विनति	बँ० यौतिक मिनति तुया पाये (प० क० त०, पद २२०)
मिसाम्रो	मिलाया	बँ० के मोरे मिसायों दिबे चाँद-बयान (प० क० त० पद १६४६) हिं० पस बक तुम्ह हि मिलाउब आजी (मा० १।८०।२)
मीसइ	सम्मिलित हुआ	बँ० कँधेने मीसय माधव साथ (प० क० त० पद १११) हिं० गगन मगन मधु मेघहि मिसइ
मु	मैं	बँ० पर मु आइवेनारिसु देह (गोविन्ददास प० क० त०, पद १४६)
मूचकि	मुसकाना	बँ० मुचकि मुचकि हास (बलीदास प० क० त०, पद २०६) हिं० बाय बसिक बोले मुसुकाइ (मा० १।४७।४)
मुचुकायनि	मुसुकानि	बँ० मानिनि—मान—भवन मुचुकायनि (गो० प० क० त० पद २४२६) हिं० भमिनी मिली बहुत मुसुकाता (मा० १।९३)
मुझे	मुझको	बँ० तोहारि मिपके मुझे मेजम काम (प० क० त० पद १२९) हिं० तोहि मोहि नाते अनेक मानिए जो भावे (वि० ७६)
मुटकि	मटकी	बँ० रंग मुटकी भर साज (उद्धवदास प० क० त०, पद १४४४)
मुड़ायनु	मुड़ाए	बँ० आपन करे हाम मूड़ मुड़ायनु (विद्यापति प० क० त०, पद १९८)

मुह	मुख	बँ० तमालक रोधे आपन तनु झापिनि ध्रुमहि मुहे आपाइ (प० क० त० पद २१४) हि० बोसों बात मुह भरि (मी० ७।१७)
मुम मैं	मोम मैं	हि० पचगुण मोम प्रहार वम (वो० १८४) बँ० मो मैन मोराभाम्बेर देखिमा (नरहरि प० क० त० पद १०१) हि० मैं मोर तोरे तैं माया (मा० १।१२।१)
मैन मेना	मामो मामम	हि० मैन के दसन कुमिस के मोदक (कु० ११) हि० तुरत बिभिपन पार्यो मेना (मा० ६।१४७।१)
मेह	मेघ वर्षा	बँ० मेह बरिखे घन मोतिममाला (विद्यापति प० क त० पद ९०१) हि० मोर सिखा बिनु मूरिहु पमुहरा भरजत (बो० ११६)
मोतियन	मोती	बँ० उरे मोतियन कि मास (कृष्णदास प० क० त० पद २८१०) हि० मोतिनि सहित नासिका (सूरदास सू० सा० १ ।१०१)
मोय	मुझे	बँ० किशोर पुछसि मोय (प० क० त० पद १२४) हि० मोको मीर ठोर न सुटेक एक तोरिए (वि० १८१)
मोर	मार	बँ० ऐछन होयब मोरि (राधामोहन प० क० त० पद ११९) हि० प्रभु मति मोरि चरित भवपाहा (मा० १।८।१)
ोरा	मेरा	बँ० आप पापि नाहि मोरा हापतीर पद तोरा (प० क० त० पद ९१६१) हि० राम परिहास होइ हित मोरा (मा० १।९।१)
र	मोइकर	बँ० चोरि भुजयुग मोरि बैठम (विद्यापति प० क० त० पद ५७)

		हि॰ मोसि बिहसि नयन मुँह मोरी (मा॰ २।२७।४)
मोरे	मुझे	बं॰ मोरे उपेखिस श्याम सुनायर (यदुनंदनदास प॰ क॰ त॰ पद १८४) हि॰ मुनि मन हरण रूप मति मोरें (मा॰ १।१३३।१)
(य)		
यक	जो	बं॰ यक कलि-रूप मायारत (माधो, प॰ क॰ त॰ पद २११४) हि॰ याते सबै सुधि भूलि गई (क॰ १।१।१७)
यसु	जसु	बं॰ यसु लागि कलियुग प्रकट यशोसुतसोई भाव प्रकाश (प॰ क॰ त॰ पद ७६) हि॰ यदि कहा भया मुह सखि (इ॰ १२)
यतहुँ	यहाँ से	बं॰ ऐछन यतहुँ परम अभिलाष (गोविन्ददास प॰ क॰ त॰ पद १६) हि॰ राम लखन मेरी यहै भेंट, बलि जाऊँ जहाँ मोंहि मिलि लीजै (गी॰ २।१२)
यब	जब	बं॰ यब-गोधूलि समय बेलि (विद्यापति प॰ क॰ त॰ पद २०१) हि॰ तुलसीदास भव त्रास मिटै तब जब मति यहि स्वरूप अटके (वि॰ ६१)
यबहुँ	जब से	बं॰ यबहुँ मे भाव उदय कर अन्तरे (प॰ क॰ त॰ पद १६) हि॰ सुमिरि कह्यो सोइ सत्य, तव मति पवन बचन यबहुँ (वि॰ ६१)
यहि	यहाँ	बं॰ घर घर जाहा विपिन अन्तर (प॰ क॰ त॰ पद ४८) हि॰ जिवसी उदर जीवन अति भय यहँ तहँ फिरे मसानी (वि॰ ६१)
यौक	जिसका	हि॰ जेहि कि [illegible] (मा॰ ७।११३।१)

माइ	आयो	बँ॰ घर घर नगर मा आये पराण (प॰ क॰ त॰ पद ८०)
माहाँ	वहाँ	हि॰ से तुम्ह कहु मातु न बन जाऊँ (मा॰ २।२६।४)
मेछ तेछ	ज्यों त्यों	हि॰ मन मेछ तेछ परतोष जहाँ तहाँ ते सब पावेंगे (सू॰ सा॰ ११११)
ऐसा	ऐसा	बँ॰ मम माहा बचन करि बैसन (प॰ क॰ त॰ १०८) हि॰ निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसा (मा॰ ५।१३।१)
मे	ऐसे	बँ॰ बंशि विसम्बित मेसे कसिमसि (प॰ क॰ त॰ पद ११) हि॰ धौंक बलित मनि गुन गन जैसे (मा॰ १।१।६)
यो	जो	बँ॰ सुरपति पति सतमति जो जन (प॰ क॰ त॰ पद १) हि॰ जो लौंवो होती फिरो मेरी हेतु हिमा (वि॰ ११६)
योइ	जो	हि॰ तुलसीदास यहि जीव मोह रजु जोइ बाम्यो सोइ छोरे (वि॰ १०२)
(२) रंगिया	रसिक	बँ॰ हासिया रंगिया सोभिया संगे (प॰ क॰ त॰ पद २७७) हि॰ तिहु काल बिमको भसे कै राम रंगीले (वि॰ १०२)
रंगिया	रसिक	बँ॰ रंग रंगिले रंग बिहरे (रायबसंत प॰ क॰ त॰ पद २८२१) हि॰ तिहुँ काल तिमको भमो कै राम रंगीले (तुलसी वि॰ १२)
रचइ	रचता है	बँ॰ पिमहते प्रवर रचइ सितकार (प॰ क॰ त॰ पद ११) हि॰ मिसद रचइ प्रपंच बिधाता (मा॰ २।२१२।१)

रंजमु	आनन्द करूँ	बँ० चाहे लागि गुरू गंजने मन रंजमु (प० क० त० पद १६०४) हिं० बुध बिसराम सकल जन रंजनि (मा० १।३१।३)
रटइ	रटता है	बँ० रंगि निपन रस रंगहि रटइ (प० क० त० पद १६०१) हिं० राम राम रट बिकल भुआलु (मा० २।३७।१)
रणरणि	रुनझुन	बँ० किंकिणि रणरणि रंगा रंकराज भनि (प० क० त० पद २६७)
रयना, रात रयनी रैन		हिं० कहत कथा सिय रामसखन की बैठहि रैनि बिहानी (गी० २।६८)
रसिकपन	रसिकता	बँ० दोहार रसिकपन गुनि गुनि दुहुँ मन (प० क० त० पद २१८८)
रह	रहकर	बँ० जीवन रहे रहि किये आयत (प० क० त० पद ११८) हिं० लोचन लसु रह लोचन कौन (मा० १।२२८।१)
राजत	सुशोभित होता है	बँ० परिहरि मोरचन्द्र कौंहों राजत (प० क० त, पद १७११) हिं० कहीं है बनाइ नीके राजत निषंग हैं (क० २।१५)
रि	सम्बोधन का चिह्न	बँ० सखि रि झामरा तोहारि किये नाहिये (प० क० त०, पद १) हिं० चरी चरी सुन्दर नारि सुहागिनि (सू० सा० ६।४४)
रिझत	प्रसन्न होता है	बँ० चम्पक बरनी रीझत रिझमोन (प० क० त० पद २१६६) हिं० तुलसी जैहि रघुनाथ से नाथ समर्थ सुसेवत रीझत थोरे (क० ७।४१)
रिमि-झिमि	धमे धूमे झुम झुम ध्वनि	बँ० रिमझिम बरखे बरिये (प० क० त०, पद १४४)

रुह	मथ	बँ० छो मध्र हृदय धंयम कहे सायन (प० क० त० पद ७०८) हि० रूप कलपरू सागर वारी नीरै (वि० २१४)
रेमोहि	रेमड़ी	हि० डीकसा करम्य रेमोहि पथमा (मा० २।११६।२)
रोकसु	रोकूँ	हि० रोकिहों नयन बिलोकम पौरहि
रोम	रोककर	बँ० महुमिति दुया मषि रोम (प० क० त० पद १०) हि० तुम्हु दसकंठ कहकंपन रोपी (मा० ३।१।३)
(ल)		
लखइ	देखता है	बँ० चलित मुखे लखइ नाहिनाहि कोइ (प० क० त० पद १२६)
लछिमि	लक्ष्मी	बँ० हातक लछिमि चरण पर लारमु (प० क० त० पद ४१६) हि० एहि बिधि उपजै लच्छि जब सुंदर तासुख मूल (मा० १।२४७)
लटकत	लटकता है	बँ० कुसुम पंप कर हार लटकत (प० क० त० पद १२११) हि० मधुमारी पसकावली लसे लटकन ललित ललाट (बी० १।१६)
लपटाइ	लपेटकर	बँ० सामा साप लपटाइ (प० क० त० पद १८६१) हि० बमम बमम मायाघ बिरच बित लकि लपटाइ (बि० ८२)
लमकाय	लमक कर	हि० लमकात ललित ज्यों कंघाल पातरी सुनाव की (क० ६।१०)
लजाइ	लज्जाकर	बँ० हेमलिया लाज मन ममम्मान (प० क० त० पद १२१) हि उपमा कहति लजाइ भारती भाजइ (जा० १२८)

लाइसि	आचरणीया	बं० लामा लाइसि रूप रसायण (प० क० त० पद २९६६) हि० लाहिसे सपन हितु हो जनके (वि० १७)
सिये	निमित्त	बं० केसि—कला सिये करत संधान (प० क० त० पद २८१५) हि० जौ जनमाशहि कौशिक राम सपन लिए (मा० १३६)
लियो	लिया	बं० बंकिम नयने चित्त हर लियो मोर (प० क० त० पद ११०) हि० लियो सकल सुख हरि संगसंग में (सू० २५)
सीखत	सिखता है	बं० कामिनी मानिनि सचनत-नयनहि सीखत (प० क० त पद ११९) हि० सिखत सुधाकर मानिनि राहु (मा० ७।१५।१)
सीजै	सीजिये	बं० अमल-कमले सिरजि सुख सीजै (प० क० त० पद २८५४) हि० प्रसमब्रत में मगन हों सीजै नहि जाही (वि० १८७)
सुकायनु	छिपासु	बं० पाद मोहि हाय सुकायनु हास (प० क० त० पद ७२८) हि० सदा ज्यों सुकात तुमसी झपेटे बाज के (क० ६।१६)
सूठइ	लोटता है	बं० एकसि महल सु भ माह सूठइ (प० क० त० पद १६)
सुबधाइ	सुटकर मोहित होता है	बं० पापन गुन सुबधाइ (प० क० त० पद ११८७)
सेपइ	सेप करता है	बं० आगरे सेपइ संग(प० क० त० पद१२८)
सेह	स्नेह	बं० करना करिया सह सधारिया (प० क० त० पद १७)
(ह)		
हतपरिया	आर	बं० मा करइ चातुरासि सुई हतपरिया (प० क० त० पद ४११)

साकर	सक्कर	बँ० सुवासित बारि सीरि साकर (प० क० त० पद १८६४)
सिंगार	शृंगार	बँ० मुकुर मेरि सब करत सिंगार (प० क० त०, पद ८९)
सुगइ	सुनकर	बँ० सुगइते चमकत गृहपति पार (प० क० त० पद ३१)
सुनायसु	सुनाऊँ	तोहारि मिलन लाग कहये सुनायसु (प० क० त० पद १८१)
सोहइ	सुशोभित हो	बँ० का वीर बरस तनु सोहन मोहन (प० क० त० पद ११२)
(ष)		
षंड	षोड	बँ० विधुरस मुकुट षंड (प०क०त० पद २११२)
(स)		
सड़े	सहित	बँ० कनक केलि विलासनि कानू सड़े (प० क० त० पद ८१)
संपाति	संपत्ति	बँ० भरम गा कहु काहे मान संपाति (प० क० त० पद ११)
संत	सज्जन	बँ० संत बसंत पुकायल बरे परे (ज्ञानदास प० क० त०, पद १४१२) हि० संत समाज पयोधि रमासी (तुलसी रा० च० मा० बा० ११)
सबकोइ	सबलोग	सबहिं समरपहिं सुमन प्रिय (दो० ७४)
सबहुँ	सबको	बँ० हिममसि किरण सबहुँ पहु ब्यापि (प० क त० पद ११७) हि० सबहिं समरपहिं सुमन प्रिय (दो० ७४)
समझायसु	समझाऊँ	बँ० सहचरि मोह सयम समुझायल (प० क० त०, पद ४१४) हि० एहिबिधि राम सबहिं समुझावा (मा० ११८१)
समापि	समझकर	बँ० सो मुख कर रैयत समापि (प० क० त० पद २११७) हि० सो मुख करि गुप नाति कुँवरि ... बोमि मुख-परिमल ...

धरे	चले	बं० आमा समाकार मा धरे साथि (प० क० त० पद २७००)
साँच	सत्य	बं० साँचकि मिश्र बहुमान (प० क० त० पद १७१)
		हि० साँची कहौं कलिकाल (क० ७।१०१)
साँझ	साँझ	बं० अनेक साथेर दीप मिमाइल साँझेर बेल (प० क० त०, पद १७१)
		हि० मनहुँ साँझ सरसीरुह सोना (मा० १।३६८।१)
सामारि	सँभाल करके	बं० ऐसे पुलकित तनु कहयि सामारि (प० क० त० पद २२८)
सायामगु	सायगु	बं० एत दिन तनु मोर साध सायामगु (प० क० त० पद १७१२)
सिधारल	सिधारना	बं० मलयानिल हिम सिखरे सिधारल (प० क० त० पद १७११)
		हि० पुनि चित्रकूट सिध बचन सिधाई (मा० ५।१००।१)
सिधारि	गमन किया	हि० गौतम सिधारे गृह गौनो सो सिधाइके (क० २।६)
सियानी	बुद्धिमान	बं० चातुरी मा कर कामाइ चतुर सियान (प० क० त० पद ११८५)
सिरचि	बनाकर	बं० तबहु रसिक-राये सिरजिया मन माधे (प० क० त० पद ४११)
		हि० जगदीश युवति जिमि सिरजहिं (मा० २५)
सीधे	सीधा	बं० सीधे चिन्ध्यामह नुपुर चोर (प० क० त० पद २७१४)
		हि० लिए छुरी बँठ सीधे विमाम (गी० ७।२२)
सुघड़-सुघड़	सुन्दर	बं० राधा करि गरि सुघड़ शिरोमणि (प० क० त० १०७२)
		हि० सुघड़ पुष्ट उन्नत इकाटिका (गी० ७।१७)

सुतन	पोशाक विशेष	बं० सुकम सुतम सुम बैठम साय (प० क० त० पद २११२)
सुहाग	सौभाग्य	बं० देख देख प्रीतम प्यारिक सोहागै (प० क० त० पद २८१४) हि० अनुराग भाग सौहाग सील सकल गुन रूपभरी (बा० १८)
सुष सुष	होश हवास	बं० सुष-सुष सब सोय (प० क० त० पद ७१)
सें	से	बं० सुधा सम विष सें बढ़िए मेल मन्तर (राधामोहन प० क० त० पद ११२) हि० रघुबर के ते चरित (बि० १९)
सेंचइ	सिचन करके सींच कर	हि० सींची सींची सुगंध सुगंधत पावही (बा० २०४)
सेवइ	सेवा करता है	बं० रायबसंत-मन सेवइ अनुखन (प० क० त० पद २४४१) हि० सेवत सुरपुर बासी (बि० २२)
सों	से	बं० अनु सींचि ब्यापा बिपिन सों भूमि (भूपति प० क० त० पद ११४)
सींचि	सींचकर	बं० काहे सिर सींचि कोर पर सुविये (गोविन्ददास प० क० त०, पद १२०) हि० पतिन्ह सींचि बिमती मति कीन्ही (मा० १।११६।४)
सौ	से	बं० सौ चरणाम्बुज रति माहि होमत (वैष्णवदास प० क० त० पद १) हि० सौ मित सौ सानि सानि (क० ६।१०)
सौतनि	सपत्नी	बं० अभरण सौतिनि भाग (गोविन्ददास प० क० त० पद ३०६) हि० मैं न सखी सौति सखी भगिनी ज्यों सेइ है (क० २।१)
स्मरइ	स्मरण करता है	बं० स्मरइ यो नव रूप (प० क० त० पद १६२) हि० पद सरोज सुमिरी (बि० १४१)

(ह)

हंसिन	हंसपन	बं० जासु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु (मा० २।१२८)
हठ	बल प्रयोग	बं० हठ करि माह कमल मत काज (विद्यापति प० क० त० पद २११)
		हि० बिन बाँधे निज हठ सठ परबस परयो कीर की नाइ (बि० १२०)
हम	हम लोग	बं० समय बुझि हाम सब समाधब (प० क० त० पद ११७५)
		हि० हमजन छाप भरतु किन कहहु (बि० १।७८।२)
हमारा	हमार	बं० मृत तनु राखबि हामार (राधामोहन प० क० त० पद ४५)
		हि० पुजिहि बिधि अभिलाषु हमारा (मा० २।११।२)
हमें	हमको	बं० हामे हेरइते तनु काँप (शेखर कवि प० क० त० पद २५६)
		हि० संत सिख देह हमहिं कोउ माइ (मा० २।१४।१)
हरि	हरण करके	बं० जनु मधु मन हरि कमला-कुम भरि (प० क० त० पद २००)
		हि० करि कृपा हरि भ्रम फंद काम (बि० १४)
हासत	हँसता है	बं० जैसे मंद हासि बैसे उतरोल (नरहरि प० क० त० पद १०१)
		हि० सित सुमन हास लीला समीर (बि० १४)
हासनि	हँसी	बं० महु महु हासनि गदगद भाषनि (गोविन्ददास प० क० त० पद १)
		हि० तिन्ह महँ सुखद हासरस एहू (मा० १।९।२)
हिलोर	मूसा	बं० ताहि बनि अपरूप रतन-हिलोर (प० क० त० पद ११५२)

हिम	हृदय	हि॰ परसंत पीठ तजि मोर हिओरा (मा॰ ९।५६।१) बँ॰ हिम भयेमास तिमिर (प॰ क॰ त॰ पद १)
हिमन	हिमना	हि॰ हरपहिम समुभ्रमत उव पावे (मा॰ १।११।४) बँ॰ हिमन कम्पतरु ललित-बिभंग (प॰ क॰ त॰ पद ११)
हिमायत	हिआमा	हि॰ बार बार हिलिमिलि दुहुँ माह (मा॰ २।१२०।१) बँ॰ स्यामर काय धवाहे हिमायत (प॰ क॰ त॰ पद २८८१)
हिमोर	भूजमा	हि॰ राम प्रेम बिनु नेम जाय जैसे मृगजल जलधि हिमोरे (वि॰ १६४) बँ॰ शीतल-भवन हिलोर (प॰ क॰ त॰ पद १८)
हिलोल	तरंग	बँ॰ तहीं ताहीं उछसई कालिंदी हिलोल (प॰ क॰ त॰ पद ८६)
हुँ	हैं	बँ॰ भुम मन भाप हुँ (प॰ क॰ त॰ पद १०८८)
हेट	नीचे	हि॰ हरि पुरारि तेउ एकमारि सत-पालक (मा॰ १०४) बँ॰ लखिलि नयने अधम करू हेट (प॰ क॰ त॰, पद ११५)
हेरइ	देखकर	बँ॰ पूरे हेरइ मधुमंगल दास (प॰ क॰ त॰ पद २२१) हि॰ सीय सनेह-सकुच बस पियतम हेरइ (रा॰ च॰ मा॰ मा॰ १२१)
हेरिनु	देखनू	बँ॰ ना हेरहुँ बिम मिज नाह (प॰ क त पद १२५) बँ॰ त्रि हेरिनु करम्म उमाती (प॰ क॰ त॰ पद १९५)

हो	प्रत्यय विशेष	बँ० निके बनि आमे हो नंद-दुलाल (गोविन्ददास प० क० त० पद २४२१) हि० प्यारे नंदलाल हो (सूरदास सू० सा० १०।१८२४)
होइ	होकर	हि० होनहार सहमान सब बिमल बीच महि होत (सं० १२६)
होत	होता है	बँ० सो पुन होत सरिह (प० क० त० पद १०८) हि० जानत हो कछु मत होनिहारा (मा० १।१२१।४)
होयत	होता है	बँ० गुनइते गर्भ धर्म तब होयत (प० क० त० पद १८) हि० सिय निज मुखनि कही निज होनी (गी० २।२२)
होये	होकर	बँ० कि कहिते पुन होय ना जानि (प० क० त० पद १८११) हि० बीती है वय किसोरी जोवन होनी (गी० २।२१)
हो हो	भावसूचक अव्यय	बँ० रंगे हो होरि (प० क० त० पद १४४१)

तृतीय अध्याय

वैष्णवोत्तर (चैतन्योत्तर) काल

१

इस्लामिक-बंगला साहित्य की परम्परा

१७०० १८५० ईस्वी

भारत में मुस्लिम आक्रमण तथा मुसलमानी राज्य विस्तार ने भारतीय साहित्य को एक नया मोड़ प्रदान किया है। बंगला और हिन्दी साहित्य की धारायें प्रवृत्तियाँ भी इससे प्रभावित हुई हैं। बंगला से पहले मुसलमानी राज्य हिन्दी-प्रदेश में स्थापित हुआ था। अतः हिन्दी के माध्यम से बंगला पर भी इसका प्रभाव पड़ा है। किन्तु लोक कथायें परम्परागत रूप में पहले भी विद्यमान थीं वैसे उनका इस्लामीकरण बाद में हुआ। सतरहवीं शताब्दी के पहले बंगला में हिन्दू वैष्णव कवियों की रचना होती रही है। वैष्णवों का समस्त साहित्य धार्मिक है। लौकिक शृंगार को भी वैष्णव भक्तों ने आध्यात्मिक-दृष्टिकोण प्रदान किया है। राधा-कृष्ण की प्रेम-लीला उनके लिए साधारण नर नारी का काम कला विलास नहीं है। वैष्णवों के लिये यह भगवान की लीला है। उनके लिये पूजनीय, अर्चनीय वंदनीय है। कृष्ण यदि वैष्णवों के लिये अवतार हैं भगवान हैं तो राधा भगवती हैं। अतः समस्त वैष्णव तथाकथित शृंगारिक-साहित्य धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता से ओतप्रोत है। किन्तु इस्लामी बंगला-साहित्य पूर्णतया लौकिक प्रेम से ओतप्रोत है। दौलत काजी और आलाओल इसके थोड़े अपवाद हो सकते हैं जिनके विषय में आगे विचार किया जायेगा। हिन्दी प्रेमाख्यानक साहित्य ही बंगला-इस्लामिक सूफी और प्रेममूलक साहित्य का स्रोत है। जैसा कि समादरणीय डा० सुकुमार सेन महोदय लिखते हैं "बंगला-गीति-कविता पर यदि कुछ सूफी प्रभाव पड़ा है वह सतरहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध से पहले नहीं है, किन्तु वह हिन्दी के माध्यम से आया है"।[1]

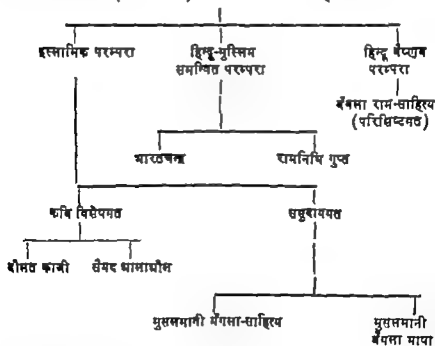
---

१ बांगला गीति-कविताय सूफी प्रभाव यदि किछु पड़िया थाके तबे ताहा सप्तदश शतकेर शेषार्धेर पूर्वे नय एवम् ताहो आसिया छिल हिन्दीर माध्यमे।

(बां० सा० इ०, प्र० खं० पृ० २८७)

बंगाल में सिलहट चटगाँव ढाका आदि प्रदेशों और लोअर बर्मा के रोसांग आराकान आदि प्रदेशों में हिन्दी की सूफी प्रेममार्गी-परम्परा के आख्यानों का बहुत प्रचार हुआ है। हिन्दी प्रभाव के कारण ही इस प्रदेश में बंगला-साहित्य के इतिहास में एक नये युग का प्रवर्तन हुआ है। जैसा कि डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल भी लिखते हैं 'इन मुसलमान कवियों को केवल धर्मात्मक काव्य-रचना की धारा परिवर्तन करने ही से शांति नहीं हुई, किन्तु फारसी और प्राचीन हिन्दी से आगत प्रभाव पूर्ण अभिनव आख्यान समूह के द्वारा बंगला-साहित्य में उन्होंने एक नये युग की सृष्टि की[1]"। अतः क्रमशः इस काल में हिन्दी प्रभाव बंगला में निम्न मानचित्र द्वारा स्पष्ट किया जाता है :

मध्ययोत्तर (चैतन्योत्तर) काल में बंगला पर हिन्दी-प्रभाव



उपर्युक्त मानचित्र को विस्तारपूर्वक विवेचन से इस प्रकार हृदयंगम किया जा सकता है।

---

१ एइ मुसलमान कविरा शुधु ये निछक धर्मात्मक काव्य रचनार धारा परिवर्तन करियाइ—तुष्ट हइलेन ताहा नहे फार्सि ओ प्राचीन हिन्दी साहित्ये हइते प्रभाव पूर्ण अभिनव-काहिनी समूह बंगला-साहित्ये एक नव-युगेर सृष्टि करिलेन।

२

दौलत काजी[१]

इस्लामिक बंगला-साहित्यकारों में सर्वप्रथम साधन विरचित हिन्दी-काव्य 'मैनासत' का अवलम्बन (Adaptation) लेकर सूफी साधक दौलत काजी ने आराकान राजसभा में सत्रहवीं शताब्दी (१६२२-१६३८ ई०) में श्रीसुधर्मा (थिरि थु-धम्मा) के राजत्व-काल में अपनी 'सतीमयना और लोर चन्द्राणी' काव्य की सृष्टि की थी। 'मैनासत' का बंगला सतीमयना और लोरचन्द्राणी का प्रभाव दिखाने के पूर्व किंचित हिन्दी प्रेमाख्यानक साहित्य पर एक विहंगम दृष्टि डालना समीचीन जान पड़ता है। क्योंकि किंचित हिन्दीमूलक प्रेमाख्यानों का उत्स गौड़-दरबार (पश्चिमी बंगाल) हुसेनशाह के राजत्वकाल में होता है। अवधी काव्य-परम्परा ही इसका मूल है जिसे डा० सेन भी इसी मत से सहमत हैं वे लिखते हैं "किन्तु पश्चिमी बंगाल (गौड़-दरबार) से उत्तरी-पूर्वी बंगाल के प्रदेशों सिलहट और चटगांव के अंचलों से स्थानीय मुसलमान जागीरदारों के दरबारों में स्थानान्तरित हुई, वहीं से आराकान रोसांग के राजाओं और मंत्रियों की सभा में इन हिन्दीमूलक कहानियों का प्रवेश हुआ।"[२] हिन्दी में यह काव्य-परम्परा अपभ्रंश काल में अब्दुर्रहमान के सन्देशरासक से शुरू होती है, मुल्ला दाऊद का चंदायन, कुतबन की मृगावती, मंझन की मुग्धावती से लेकर मलिक-मोहम्मद जायसी में परिपूर्णता और परिपक्वता को प्राप्त होती है, किन्तु अपभ्रंश प्रेमाख्यानक-काव्य और अवधि प्रेममार्गी सूफी साहित्य में एक सूक्ष्म अन्तर है। अपभ्रंश प्रेमकाव्य-पूर्णतया लौकिक-शृंगार से ओतप्रोत है किन्तु हिन्दी सूफी प्रेम-काव्य में लौकिक शृंगार की रस रंगीनी के आवरण में सूफी सिद्धान्तों की अभिव्यंजना है। हिन्दी में यह सूफी साहित्य १३वीं १४वीं और १५वीं शताब्दी तक चलता रहा है। साधन की मनासत भी इसी परम्परा की उपज है।

मुसलमानों का राज्य लगभग सारे उत्तरी भारत में जम चुका था। पहले कहा जा चुका है कि बंगला में सूफी साहित्य और शृंगारिक साहित्य की लौकिक परम्परा का श्रीगणेश मुसलमानों के द्वारा ही लौकिक प्रेम-कथाओं और प्रणय काव्यों द्वारा १७वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में होता है। हिन्दी में भी उस समय रीति कालीन शृंगारिक परम्पराएं पनपने लगी थीं। बंगाल में वैष्णव भक्तों की परा

---

१ देखिये—विशेष अध्ययन के लिये लोर चन्द्रानी ओ सतीमयना' तथा Beginning of secular Romance in Bengali Literature (I Book)

२ बां० सा० इ० प्र० खं० पृ० ५६४।

कवियों की झनकारों की गूंज कम होती जा रही थी। उस समय यह मुसलमानी प्रेमात्मक (Romantic) साहित्य बंगला भाषा एवं साहित्य के इतिहास में एक नया मोड़ उत्पन्न करता है।

आराकान राजसभा में इस समय दो महाकवि दौलत काजी और सैयद आलाओल उत्पन्न हुए।[1] जिन्होंने हिन्दी फारसी काव्यों का अवलम्बन ग्रहण अनुवाद एवं अनुवाद से बंगला-साहित्य जगत में नवयुग का सूर्योदय किया।

दौलत काजी सूफी साहित्य का ही नहीं अपितु समस्त बंगला-साहित्य का शक्तिशाली प्रकाश-स्तम्भ है। डा० सुकुमार सेन भी हमारे मत की पुष्टि करते हुए लिखते हैं 'दौलत काजी—बंगाली मुसलमान कवियों में ही नहीं बल्कि उनके पूर्ववर्ती प्राचीन बंगला-साहित्य के शक्तिशाली कवियों में वे सर्वश्रेष्ठ एवं अन्यतम हैं।[2]' दौलत काजी ने रोसांग राजसभा में राजा श्री सुधर्मा के लश्कर वजीर अशरफ खाँ के अनुरोध से साधन विरचित हिन्दी काव्य मैनासत का अवलम्बन (Adaptation) लेकर अथवा किंचित स्वतंत्र का अविकल एवं अक्षरशः अनुवाद कर अपने बंगला काव्य 'सतीमयना औ लोर चन्द्राणी' का प्रणयन किया। इसी प्रसंग में साधन का दौलत काजी पर प्रभाव दिखाने के पूर्व साधन एवं उनके काव्य पर कुछ पंक्तियों से प्रकाश डालना आवश्यक जान पड़ता है।

साधन के व्यक्तित्व के विषय में मतभेद है। श्रीहरिहर निवास द्विवेदी इनको पुरुष कवि न मान कर स्त्री कवि, (कवयित्री) मानते हैं।[3] मैनासत के साथ में मुल्ला दाऊद के चन्दायन का कथानक भी सम्पृक्त है। श्री हरिहरनिवास द्विवेदी साधन और उनके मैनासत की भाषा को अवधी न मान कर मोहारि शब्द के वजन पर ग्वालियरी भाषा[4] मानते हैं। जबकि डा० सुकुमार सेन इसकी भाषा को भी हारि-शब्द के वजन पर बंगाली प्राचीन अवधि मानते हैं।[5] भाषा विषयक प्रसंग में ग्वालियरी भाषा की तो कोई सुदृढ़-साहित्यिक परम्परा नहीं प्रतीत होती। अवधी

१ रोसांगेर हिन्दी-फारसी रोमांटिक काव्यधारार धारीरम हल्लेन रोसांग दरबारे दुइजन सभा कवि, दौलत काजी औ आलाओल। इ० म० सा० भ० भू० पृ० २।

२ दौलतकाजी बांगाली मुसलमान कविदेर मध्ये श्रेष्ठ तबटूरे पुरानो बांगला साहित्येर शक्तिशाली कविदेर अन्यतम तिनि। इ० बां० सा० पृ० १३।

३ देखिये—श्री हरिहरनिवास द्विवेदी सम्पादित 'साधन कृत' 'मैनासत' साधन का परिचय पृ० ७१-७८।

४ देखिये—मैनासत पृ० ११ ग्वालियरी∠ग्वारियरी∠ग्वादयरी∠गोहारि∠पृ० १०१ १२७ (भाषा-विवेचन)।

५. बां० सा० इ०, प्र० सं०, पृ० २६६।

की काव्य-परम्परा तो इतिहास सिद्ध तथ्य है। किन्तु इस विषय पर अधिक लिखना अप्रासंगिक है।

मैनासत बहुत छोटा काव्य है किन्तु दौलत काजी ने इसका कुछ प्रासंगिक कुछ भावानुसार किया है। इस रूपान्तर का अभिप्राय लौकिक-प्रेम की कहानियों का प्रचार तथा मन रंजन था। दौलत काजी स्वयं लिखते हैं अरबी फारसी के अनेक उत्तम उपदेश थे। विविध प्रसंग और अनेक कथाएं थी। गौहारि (गंवारि) अवधी और (खोट्टी) ठेठ ग्राम्य-हिन्दी वाली कहानियां थीं। जिनको सुनकर सभा सदस्य रसास्वादन करते थे।[1] अशरफखाँ हिन्दी-कविता अवधी के मैनासत को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए थे तब उन्होंने दौलत काजी से अनुरोध किया यदि इसकी रचना देशी भाषा, (बंगला) में हो जाये तो सबसाधारण भी इसका आनन्द ले सकेंगे। तब दौलत काजी ने मनासत का अनुवाद "सतीमयना ओ लोर चन्द्रानी" के नाम से किया क्योंकि साधन ने ठेठ दोहा चौपाई में अपनी कथा कही थी। बहुत लोग उस गौहारि भाषा को नहीं समझ सकते थे। देशी भाषा (बंगला) में पाँचाली छन्द में यदि इसकी रचना हो जाये तब सब लोग इसको सुनकर आनन्द ले सकेंगे। तब दौलत काजी ने उस प्रार्थना को सुनकर पाँचाली छन्द में मयना की भारती का वर्णन किया।[2]

अवधी काव्य मैनासत पहले अप्राप्य था किन्तु अब उसकी कई पाण्डुलिपियों का पता लगा है।[3] कई जगहों से प्रकाशित प्रतिलिपियां भी मिलती हैं।[4]

---

१ अरबी फारसी नाना उत्तम उपदेश
विविध प्रसंग-कथा आछिल-विशेष।
गुनिगन गौहारि औ खोट्टी बहुतर
शहुने महन्त सभा आनन्द लोक बहुतर।

सती० म० लो० च० पृ० ४८।

२ ठेठा चौपाइया दोहा कहिला साधने।
ना बूझे गोहारि भाषा कोन कोन जने।।
देशी भाषे कह ताके पाँचालीर छन्दे।
सकले बुनिया जेन बुझ्य सानन्दे।।
तबे काजि दौलत बुन्निया की भारति।
पाँचालीर छन्दे केहे मयनार भारती।।

(स० म० लो० च०, पृ० ४९)

३ देखिये *मैनासत* पृ० १३।

४ देखिये—आगरा विश्वविद्यालय की हिन्दी-विद्यापीठ की प्रथ-वीथिका में प्रकाशित सन् १९६९। तथा विद्यामन्दिर प्रकाशन ग्वालियर, १९६९।

दौलत काजी ने अपने-अपने काव्य 'सतीमयना श्री लोर चन्द्रानी' का आधार 'साधनकृत मैनासत' को बनाया है। दोनों के कथानकों में बहुत समानता है। मैनासत का वर्णन सीधा है किन्तु लोरचन्द्रानी तीन खण्डों में विभक्त है। इसकी कथा पर सिंहावलोकन करना प्रासंगिक हो सकता है। प्रथम खण्ड में सती मयना और गोहार देश के राजा लोरक का विवाह होता है। एक दिन एक योगी ने मोहरा देश की राजकुमारी चन्द्रानी (चन्द्रासी) का चित्र लोरक को दिखाया। चन्द्रानी विवाहिता थी किन्तु उसका पति वामन और नपुंसक था, लोरक सती मयना को छोड़कर चन्द्रानी के देश चला गया। वहाँ वामन को मार कर लोरक ने चन्द्रानी से विवाह किया। चन्द्रानी के पिता ने लोरक को राज भी दे दिया।

दूसरे खण्ड में मयना का विरह वर्णन है किन्तु पड़ोसी राज्य का राजकुमार छातन मालिनि को दूत मानकर मयना को अधर्म पथ पर ले जाना चाहता है किन्तु मयना दूती को पीट कर निकाल देती है।

तीसरे खण्ड में सखी के परामर्श से एक ब्राह्मण के हाथ में शुक पक्षी भेजकर सती मयना पति को अपनी पूर्व स्मृति याद दिलाती है। राजा लोरक अपने पुत्र के हाथ मोहरा का राज्य समर्पित कर चन्द्रानी के साथ मयना से आ मिलता है।

दौलत काजी ने केवल एक खण्ड पूरा लिखा था; दूसरे खण्ड में ग्यारहवें महीने का वर्णन लिखते ही कवि दौलत काजी का स्वर्गवास हो गया। दूसरे खण्ड का शेष और पूरा तीसरा खण्ड सैयद आलाओल ने बीस साल बाद मगनठाकुर के अनुरोध से पूर्ण किया था। पहले कहा जा चुका है कि मैनासत का अवलम्बन (Adaptation) लेकर दौलत काजी ने सतीमयना ओ लोरचन्द्रानी का सृजन किया। कुछ का शाब्दिक एवं भावानुवाद भी है। सम्पूर्ण कथानक तो साधन विरचित मैनासत से लिया गया है। साधन के मैनासत एवं दौलत काजी की सती मयना श्री लोर चन्द्रानी के तुलनात्मक अध्ययन से मैनासत के प्रभाव का सतीमयना श्री लोरचन्द्रानी के ऊपर स्पष्टीकरण हो सकेगा।

साधन का मैनासत एक छोटा काव्य है। आज के खण्ड काव्यों की श्रेणी में परिगणित किया जा सकता है। पहले लुप्तप्राय एवं अप्राप्य था। केवल कवि एवं काव्य का नाम ही शेष रह गया था। आजकल इसकी अनेक हस्तलिखित प्रतियाँ पाठान्तरों के साथ उपलब्ध होती हैं। किन्तु दौलत काजी की सतीमयना श्री लोर चन्द्रानी एक बड़ा काव्य है। यह महाकाव्य और खण्डकाव्य के मध्य में ठहरता है। इसको हम एक बृहद् प्रेमाख्यान काव्य कह सकते हैं। साधनकृत 'हिन्दी-मैनासत' का प्रभाव दौलत काजी पर भाव एवं भाषा दोनों रूपों में है। विशेष कर दौलत काजी की सतीमयना का द्वितीय खण्ड तो साधन की मैनासत का अनुकरण है।

दौलत काज़ी की भाषा का साधन की भाषा के साथ बहुत मेल है। कुछ उदाहरण देकर इस कथन की सत्यता प्रकट करते हैं।

१ दौलत काज़ी—

नरेन्द्र नृपति सुत रूपत सक्षण युत नाम तार प्रातम कुमार।

(स० म० लो० च० पृ० १११)

साधन—

सावन कँवर नगर कर भूत रूपर रूप मारव कर पूत। (मैं० स० पृ० ५)

२ दौलत काज़ी—

'सोसार कलकत्ते, माई करि त्रिल मोरे शिशु काले कुच शिशु लोके

(स० म० लो० च० पृ० ११३)

साधन—

'तोर पिता माइ हीं कीली बार पर्ने तोहि कुचो दीनीं'

(स० मैं० पृष्ठ ६)

३ दौलत काज़ी—

'भानु ना करे हेन के करिल मोरे, क्यसे विरह दुःकादिया मैल मोरे'

(स० म० लो० च०, पृ० ११५)

साधन—

'करहि न बैर बाँध जो कीन्हा बारि बैसि मोहि दुखदीन्हा'

(स० मैं० पृष्ठ ८)

दौलत काज़ी ने साधन के शब्दों का भी हू-बहू अनुकरण किया है। कुछ परिवर्तन के बाद वे पद हिन्दी के ही प्रतीत होने लगते हैं। कुछ दृष्टान्तों से सिद्ध किया जाता है :—

१ दौलत काज़ी—

तोर दुःख देखि मुइ मरि याम बोलों सद्धवय बाणी।
मालती भ्रमर जैन समागम, चाव पैसा देन प्रानि॥

(स० मैं० लो० च० पृ० ११७)

साधन—

बोल छाड़ि देहि मोहि मनु मना साची कहौं।
प्रानि मिलावौं तोहि मालति कौं भौंरा जिसे॥[1]

(स० मैं०, पृ० १०)

---

१ पाठ भेद—तैरे दुःख मरत हूँ बोल बचन दै मोहि।
जस मालति कौं भमरा, प्रानि मिलावौं तोही।
पंक्तियाँ १२४ १२८।

२ दौलत काजी—

श्रावण मासते मयना बड़ सुख मानी।
रिमझिम बरिखय मनोभव बाणी॥
परतो बहु धारा रात्रि आँधियारी।
झेमय मयुर सने प्रमेर धामारी॥
श्यामल अम्बर श्यामल सैत भाँति।
श्याम सखि बरखिय निबलक मुति॥

(स० म० लो० च० पृ० १२०)

इन पंक्तियों में मासते 'ते' मयुर में ह 'र' सने का सन और प्रेमेर के 'र' निकाल देने पर यह पद हिन्दी का बन जायेगा। जिन पदों को हम भावपक्ष के उदाहरण स्वरूप लेते हैं उनमें भाषा एवं भाव दोनों का ही प्रभाव है। जैसे—

१ दौलत काजी—

मंदिरेते से मालिनी प्रवेश करिल जानि सिंहासने वसिला कुमारी।
हास्य मुखे पुछे रानी साथ बड़ भो मालिनी कौथा हुनते आयमन तोमारि॥

(स० म० लो० च० पृ० १११)

साधन—

मालिनी आय मंदिर महि पैठी, मयना जहाँ सिंहासन बटी।
चंपक फूल चौसर हाथ दीन्हा भेंट धर कीन्ह जुहार।
हँसि करि पुछे मयना रानी कहु आवायमनु कीनि कमनारी॥

(स० म० पृष्ठ ६)

२ दौलत काजी—

ना रहे धारण मन चित्त बहे प्रमुसम दुया मात्र स्मारिते तोमार।
देखिलु वदन-चाँद पुषिल मनेर साध एतकालि आइलुं देखिबार॥

(स० म० लो० च० पृ० १११)

साधन—

मनु न रहे हियरा उठायो आपी बरे तन मोहि।
सिवरि सिवरि दुख उपजै, देखन आई तोहि॥[1]

(स० मै० पृष्ठ ६)

---

१ पाठ भेद—मन न रहे जिउ धरहिं आग धरे तन मोहि।

१ दौलत काजी—

सुन्दरी वचन सुनि चाई हेन सत्य मानि ।
मानित बोलाई ततक्षणे ॥
सुगंधि कुसुम्भ रसे मार्जन कराइल मने ।
स्नान कराइला सखी गणे ॥

(स म० सौ० च०, पृ० ११३)

साधन—

मैना बात साधु करि मानि कुटनी कै बोलै पतियानी ।
तबहीं नाईनि बेग बुलाई, कुसुम मरदन कुटनि नहवाई ॥

(स० मैं० पृष्ठ ७)

४ दौलत काजी—

जे पालय प्रेमांकुर जावत जीवन ।
तार सनि प्रीति सुख आश्रय सुजन ।
कांचा सुता प्राय जिम्भे प्रेमांकुर जार ।
कहन्त दौलत काजि से कि प्रेमसार ॥

(स० म० सौ० च० पृष्ठ ११२)

साधन—

सिह सों कीजै नेह, सिंह सों जर जीवा हीये ।
साधन ऐसे सनेह हूवे काचे सूत की ।

(स० मैं०)

इस प्रकार भावपक्ष एवं कलापक्ष के अनेक उदाहरण दौलत काजी ने साधन से लिये हैं। जैसे—

१ दौलत काजी—

मद सम मोर एइ मास । मेह बस हास्य बिलासे चोरिस ।
विरहीक लेह उपहास । पिया विहीन युत मधुरस करि कत
माधुरीहु विषसम ताहे ।

(स० म० सौ० च० पृष्ठ ११७)

साधन—

रितु बसंत मालिनि की आवे, बात कहत मोहि नैकु न भावे ।

(स० मैं० पृष्ठ २१)

अथवा—

रितु अनुरितु रस अनरसह मोहि अनहि न भाव।
रितु बसंत सबभनि, जब सोरह घरि आव।[1]

दौलत काजी का समस्त बारहमासा हिन्दी मैनासत के बारहमासा के आधार पर विरचित है।[2] दौलत काजी ने साधन के काव्य की नाटकीयता पात्रों का मनोवैज्ञानिक-विश्लेषण एवं नारी चरित्र के सूक्ष्म-निरीक्षण को आत्मसात किया है। प्रकृति वर्णन मानव एवं प्रकृति का साहचर्य प्रकृति-परिवर्तन के साथ मनोभावों का उतार चढ़ाव और विरहणी की प्रकृति के प्रति प्रतिक्रिया आदि में 'मैनासत का अनुकरण'सतीमयना ओ लोर चन्द्रानी' में है।

भाषा की दृष्टि से तो दौलत काजी साधन के शब्दगत वाक्य-विन्यास, कहीं-कहीं विद्यापति ठाकुर, ब्रजबुलि के परवर्ती वैष्णवों एवं कहीं-कहीं गीत गोविन्द के रचयिता जयदेव का भी ऋणी है। विद्यापति की शैली के अनुकरण पर दौलत काजी के एक ब्रजबुलि के पद का उदाहरण देते हैं —

एका चकीत निमि रजनी धम्पति निनि,
एकाकिनी जागि प्रेम जागेरे।
लोर बिन लोर लोर नयने चारिले लोर
तनु बहे मदन — हुताशेरे॥
अविरत लोर इति जयपति कलावती
प्राण मनें समतुल न हेरे।
(स० म० लो० च० पृष्ठ १२२ १२३)

३

"महाकवि सैयद आलाओल"[3]

बंगला के मुस्लिम साहित्यकारों में महाकवि आलाओल सर्वप्रसिद्ध एवं सर्वप्रिय कवि हैं। साहित्य-सौन्दर्य की दृष्टि से उनका स्थान मुस्लिम-बंगाली

१ पाठ भेद—

रित अनरित रस अनरस मोहि चित और न भाव।
रितु सबै रस भावहीं जब साजन घर आव॥ (स० मै० पृ० २८)

२ देखिये—स० म० लो० च० पृष्ठ ११९ १४० दौलत काजी ने साधन के मैनासत के कारण बारहमासा का अनुकरण किया है।

३ बां० सा० इ० प्र० खंड, पृ० २७४, पृ० ८४, देखिये विशेष अध्ययन के लिए डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल का डी फिल्० कलकत्ता विश्वविद्यालय का प्रबन्ध— Beginning of secular Romance in Bengali Literature (II Book).

साहित्यकारों में दौलत काजी से दूसरा है। जिस प्रकार दौलत काजी ने मसरफस्ती के अनुरोध से साधन विरचित मैनासत का अवलम्बन कर बंगला 'सतीमयना भी लोर चन्द्रानी" की रचना की थी। उसी प्रकार सैयद आलाओल ने श्रीचन्द्र सुधर्मा (साउद मंदार अर्थात् थदो-मिन्तार) के राजत्वकाल (१६४५ १६१२ ई०) में थी कुरेशी मगन ठाकुर के आग्रह से हिन्दी के सुप्रसिद्ध महाकवि मलिक मोहम्मद जायसी के महाकाव्य पद्मावत का अवलम्बन अर्थात् आधार लेकर बँगला पद्मावती का सृजन किया था। आलाओल की पद्मावती कुछ मौलिकता लिये हुए है। किन्तु वह हिन्दी महाकाव्य का अविकल अनुवाद नहीं है। सचमुच इसमें भाषा एवं भावों का ग्रहण (Adaptation) है। डा० सुकुमार सेन के शब्दों में आलाओल की प्रथम एवं श्रेष्ठ रचना पद्मावती पाँचाली काव्य जायसी की पद्मावती (पद्मावत् अथवा पद्मावती) काव्य का क्वचित-स्वाधीन क्वचित-मूलानुगत अनुवाद है।[1]

कवि ने स्वयं स्वीकार किया है, सभा में जायसी के काव्य के प्रसंग में प्रसन्न होकर मगन ठाकुर ने आलाओल को आज्ञा प्रदान की कि इसका बंगानुवाद करो जैसे "इस पद्मावती की सरस रसकथा को शेख ने (जायसी ने) हिन्दुस्तानी अर्थात् हिन्दी भाषा में लिखा था। रोसांग प्रदेश में दूसरे लोग इस भाषा को नहीं समझते थे। यदि पयार छन्द में इसकी रचना हो तो सब लोगों की आशा पूरी हो सकती है। जिस प्रकार दौलत काजी ने चन्द्रानी (लोर चन्द्रानी) की रचना लस्कर वजीर अशरफखाँ की आज्ञा से लिखी थी उसी प्रकार मेरी आज्ञा (मगन ठाकुर) के अनुसार पद्मावती की रचना करो।"[2]

बँगला पद्मावती की हस्तलिखित प्रति दुर्लभ है, डा० मोहम्मद शहिदुल्ला के पास अब्दुल करीम साहित्य विशारद द्वारा संगृहीत ४० प्रतियाँ फारसी अक्षरों में

---

१ 'आलाओलेर प्रथम एवं श्रेष्ठ रचना "पद्मावती पाँचाली काव्य जायसीर (पद्मावत पद्मावती) काव्येर क्वचित स्वाधीन, क्वचित-मूलानुगत अनुवाद"। (बाँ० सा० इ० प्र० खंड पृ० ६०४)

२
पद्‌मावतीर सरस रस कथा
हिन्दुस्थानी भाषे शेखे रचियाछे यथा।
रोसांगेते आन लोक ना बुझे ए भाष
पयार रचिले पूरे सभाकार आश।
जैहेन दौलत काजी चन्द्रानी रचिल
लस्कर वजीर आशरफे आज्ञा दिल।
तैन पद्‌मावती रच मोर आज्ञा परि। —पद्मावती पृ० २२।

लिखित पद्मावती की प्रतियाँ बतलाई जाती हैं।[1] किन्तु परस्पर प्रभाव दिखाने के लिए कुछ तुलनात्मक अध्ययन आवश्यक है। ग्रंथकार स्वयं स्वीकार करते हैं:—

'एइ सुने कवि महाम्मदे करि भक्ति
स्थाने स्थाने प्रकाशित निजमन उक्ति"

(पद्मावती पृ० १६)

अर्थात् इसी सूत्र से मोहम्मद कवि की भक्ति करता हूँ स्थान-स्थान पर अपने मन की उक्ति का भी प्रकाश डालता हूँ। अतः यह कवि की स्वीकारोक्ति है कि यह जायसी का ऋणी है। मूलतः मूलाधार जायसी ही है। आलाओल में केवल (Adaptation) है। स्वयं कवि का कथन है, जायसी के काव्य का प्रचार आराकान प्रदेश तक था मगन ठाकुर ने इसके प्रचार से प्रभावित हो आलाओल को लिखने का अनुरोध किया। डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल जी हिन्दी कवि का गम्भीर प्रभाव मानते हैं।[2] अतः किंचित तुलनात्मक दृष्टि से प्रभाव का प्रकाशन उदाहरणों के साथ वांछनीय है।

बंगला पद्मावती के दो बयान, प्रथम एवं द्वितीय तो जायसी के पद्मावत के अविकल क्रमशः अनुवाद हैं जैसे—

सिरजिस्सा प्रभुर नाम आरम्भ प्रथमे।
आद्यमूल शिर सेइ शोभित उत्तमे॥ (पद्मावती, पृ० १)

तथा आलाओल— प्रथमे प्रणाम करि एक करतार,
येइ प्रभु जीवदाने स्थापित संसार।
करिल पूर्थम आदि ज्योतिर प्रकाश
तारपरे प्रकटिल सेई कविलास। (पद्मावती, पृ० १)

---

१ सर्वप्रथम पद्मावती का प्रकाशन १८६६ में हबीबी प्रेस से हुआ तीसरा संस्करण (१३३८ बंगाब्द) में प्रकाशित हुआ, सर्वाधिक प्रामाणिक प्रति अभी तक नहीं मानी जाती है। डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल अध्यक्ष बंगला विभाग पटना विश्वविद्यालय देवनागरी अक्षरों में हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय से एक प्रति प्रकाशित करा रहे हैं। घोषाल जी के अनुसार यह सर्वाधिक प्रामाणिक प्रति है। इसका पाठ ६६ प्रतिशत वे शुद्ध मानते हैं लेखक के साथ शांति निकेतन में विचार-विमर्श करते समय उन्होंने अपना मत प्रकट किया।
देखिये—पुँथि परिचिति-बांगला विभाग-ढाका विश्वविद्यालय द्वारा १६५८ में प्रकाशित तथा बांगला पुँथि साहित्य पृ० ७१।

२ देखिये—Beginning of Secular Romance in Bengali Literature (II Book)

जायसी—

साँवरो आदि एक करतार,
जहँजिउ दीन्ह कीन्ह संसार।
कीन्हेसि प्रथम जोति परगासु
कीन्हेसि तेहि पिरीत कविलासु॥ (पद्मावत पृ० १)

आलाओल ने ईश्वर-महिमा वर्णन में जायसी की पद्धति को अपनाया है। हजरत मोहम्मद की प्रशंसा में भी हिन्दी कवि का प्रासंगिक अनुकरण है।

आलाओल —

निज सखा मोहम्मद प्रथमे सृजिला।
सेइ से ज्योतिर मूले भुवन निर्म्मिला॥
से सकल ज्ञान कथा कहिते अपार।
स्वमुखे पुस्तक कथा आदि अतिभार।

(पद्मावती पृ०११,२)

जायसी—

कीन्हेसि पुरुष एक निरमरा नाउँ मुहम्मद पुनिउँ करा।
प्रथम ज्योति विधि तेहि कै साजी औ तेहि प्रीति सिरिष्टि उपराजी॥

(पद्मावत पृ० ६)

आलाओल ने हिन्दी पद्मावत का अनुकरण किया है, यह अनुकरण कहीं शाब्दिक अनुवाद में है कहीं भावानुवाद में है। समस्त प्रेरणा तो हिन्दी काव्य की है। बंगला पद्मावती में लौकिक पदार्थों के वर्णन में एवं सूफी-दार्शनिक प्रवृत्ति की अभिव्यंजना में हिन्दी पद्मावत की झलक है। कथानक पात्रों का कथोपकथन और मानव भावनाओं का मनोवैज्ञानिक आरोह-अवरोह में अवश्य जायसी की छाया है। नागमती शुक संवाद में नारी-सुलभ रूप-सौन्दर्य मद और ईर्ष्या का चित्रण आलाओल ने जायसी की परिपाटी पर किया है —

आलाओल—

सत्य कहु शुकवर आमार योवन पद्मिनि सिंहलद्वीपे कैमन सुन्दर।
नृपति समक्ष शुक यदि कन आन संसारे किवा आछे आकार समान।
पद्मावती रूप शुक भाविया अंतरे रानीर वचन हेरि कहे धीरे धीरे॥
येइ सरोवरे नाहि हंसिर गमन तथा बक हंस तुल्य भावे से आपन॥

(पद्मावती पृ० ४१)

जायसी—

जौं न कहसि सत सुअटा तोहि राजा कै आन।
है कोई एहि जगत महँ मोर रूप समान।

१

साँवरी रूप पद्मावती केरा हँसा सुआ रानी मुख हेरा।
जेहि सरवर महँ हंस न आवा बकुली तेहि जल हंस कहावा॥

(पद्मावत पृ० ८१)

नारी-सहज ईर्षा एवं सपत्नी भाव का नमूना द्रष्टव्य है।

आलमसेन—

हुनाहुम सुम्य हँस मोर एहि पाखि
सम मुख भ्रष्ट हँस पवि तोर राखि।

अथवा

कै बन पोषय पुनि ना हँस सधार
एहि सोवे हाथे सुनि कैसे बारंबार।
मुवे जो एक कथा हुवैतार भाग,
मार सुकनिया सासी नाहिं बैठ स्याम।

(पद्मावती पृ० ४३)

जायसी—

तेहु मह सुमटा है मँदसारा भएउ न ताकर आकर पारा।
मुख कहं मान पेड बस माना तेहि पीयुन रस हाट बिकाना।
पद न राखिम होइ सुभागी तहँ ले मार कहीं न साखो॥

(पद्मावत पृ० ८३)

जायसी के मुहावरों (प्रभावों) उपमा रूपकों का भी आलमसेन ने अपने काव्य में प्रयोग किया है। जैसे—

आलमसेन—

कण टूटे हेम स्वाम की लगि परिस।

(पद्मावत पृ० ४४)

जायसी—

कान टुटै जेहि अभरन का लै करब सो सोन।

(पद्मावत पृ० ८२)

आलमसेन—

किना रानी किना दासी किना अम्य भनि
जाके स्वामी दया कर सेइ से भामिनी।

(पद्मावती पृ० १०४६)

जायसी—

का रानी का चेरी कोई। जा कहँ मया करहु भलि सोई।

१

(पद्मावत

आलाओल—

तोमारे जिनिते पारे कोन व्याध चोर
आपन करिले माथ पाय सोना चोर

(पद्मावती पृ० ४६)

जायसी—

तुम्ह सौं कोइ न जीता हारे बररुचि भोज।
पहिलें आपु जो खोवै करै तुम्हारा खोज।

(पद्मावत पृ० ८९)

इसी प्रकार अनेक उदाहरण हैं।

पुरुषोचित आचरण का विश्लेषण आलाओल ने जायसी के अनुसार किया है। राजा की शुक के प्रति जिज्ञासा में द्रष्टव्य है।

आलाओल—

सत्य कह शुकवर सत्य धर्ममूल
सत्येर कारणे तोर वचन रातुल।
सत्येते बाँधिछे सृष्टि सत्यवादी जन
सत्य हन्ते लक्ष्मी वश जानियो (ए) कारण।
यथा सत्य तथाते साहस सिद्धि पाय
सत्य सतीनारी स्वामी संगे जाय।

(पद्मावती पृ० ४६)

जायसी—

राजै कहा सत्त कहु सुआ। बिनु सत जस सेंवर कर भुआ।
होइ मुखरात सत्त की बाता। जहाँ सत्त तहँ धरम सँघाता।
बाँधी सिस्टि अहै सतकेरी। लछिमि आहि सत्त की चेरी।
सत्त जहाँ साहस सिधि पावा। औ सतवादी पुरुष कहावा।

(पद्मावत पृ० ९०)

पद्मावती के रूप-सौन्दर्य वर्णन में आलाओल ने जायसी के नख-शिख वर्णन का अनुकरण किया है। आलाओल भी जायसी की तरह सूफी साधक थे। पद्मावती के रूप सौन्दर्य वर्णन में सूफी-दर्शन (प्रेम-तत्त्व) का प्रतिबिम्ब समस्त विश्व में झलकता है। पद्मावती विश्व सौन्दर्य का मूर्तिमान स्वरूप है। प्रेम की पीर सूफीवाद का प्राण तत्त्व है। दोनों ही काव्यों में इसकी अभिव्यंजना है।

आलाओल के काव्य में जायसी की पद्मावती का काव्य-सौन्दर्य एवं भाव गाम्भीर्य स्वतः ही आ गया है। वस्तुतः यह जायसी की पद्मावती का बंगालीकरण है। भाषा तथा Local-colour भिन्न भिन्न हैं किन्तु उनका काव्यामृत एक ही

है। राजा रतनसेन (प्रियतम साधक) प्रियतमा पद्मावती (ब्रह्म) का रूप-सौन्दर्य हिरामन सुग्गा (गुरु या पीर) से सुन कर भाव विभोर हो समस्त ब्रह्माण्ड में उसके ही नूर की झलक देखता है। जैसे—

आलाओल—

> शोनिया अपार रूप गुण उल्लसित
> प्रेम भावे शरीर हइल पुलकित।
> पडिलेक वचन वाणिज अलंकार
> चित्र रूप रहिलेक हृदय मांझार।
> मोहन मुरति यदि हृदे प्रवेशिल
> सब पूर्ण हइल ज्योतिमय प्रकाशिल।
> चितेर नयन निरखिल रूप छाया
> जल मीन पुष्प मधी जैन एक काया।
>
> (पद्मावती पृ० ४७)

जायसी—

> सुनि रवि नाऊं रतन भा राता पंडित फेरि उहै कहु बाता।
> तुइँ सुरंग मूरति वह कही चित महँ लागि चित्र होइ रही।
> जनु होइ सुरुज आइ मन बसी, सब घट पूरि हिए परगसी।
> अब हौं सुरुज चांद वह छाया जल बिनु मीन रकत बिनु काया।
>
> (पद्मावत पृ० ६१)

पहले कहा जा चुका है कि बंगाली कवि ने जायसी के भाव भाषा एवं दार्शनिक पांभीय का बहुविध अनुसरण किया है। पद्मावती के रूप-सौन्दर्य का वर्णन समस्त जगत को आधार मानकर किया है। पद्मावती दिव्य सौन्दर्य दिव्य ज्योति का प्रतीक है। बंगाली कवि ने जायसी के रूपक (सृष्टि दर्शन) को आधार मान कर अपने महाकाव्य का सृजन किया है।[1]

आलाओल ने जायसी के मानव भावनाओं के सूक्ष्म पर्यवेक्षण (Minute observation) को अपनाया है। उनके काव्य में मानव-जीवन का सूक्ष्म

---

1 जायसी के रूपक 'तनचित उर मन राजा कीन्हा' को आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पद्मावत का प्रामाणिक अंश मानते हैं। (जा० ग्रं०) हि० सा० इ० पृ० १०२। डा० सुकुमार सेन महोदय भी आलाओल के काव्य में इसका ग्रहण मानते हैं। देखिये—बां० सा० इ० प्र० ख० पृ० ९८१। डा० वासुदेवशरण अग्रवाल इसको प्रक्षिप्त मानते हैं पद्मावत संजीवनी-टीका। डा० सत्येन्द्रनाथ घोषाल उनका समर्थन करते हैं।

अध्ययन है कन्याओं का तीर्थ-स्नान में स्नान इसका ज्वलंत उदाहरण है। मानव जीवन की अस्थिरता दोनों काव्यों में समान है।

आलाओल—

आपना भनेते कन्या देखह विचारि,
पितार गृहेते कन्या रहे दिन चारि।
के जिनु खेलिते योग्य पायो माय केलि
कालि श्वसुराले येन कोथा पाये रसकेलि।
निज घर ना हइब आपन इच्छामन
सखिगण संगे पुनि कोथा वा मिलन।

(पद्मावती पृ० ११ १७)

जायसी—

ऐ रानी मनु देखु बिचारी एहि नैहर रहना दिन चारी।
जौ लहि अहै पिताकर राजू, खेलि लेहु जो खेलहु आजू।
पुनि सासुर हम गोनब काली। कित हम कित यह सरवर पाली।

(पद्मावत, पृ० ११)

आलाओल ने जायसी के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं मानव-हृदय की उसके प्रति स्वाभाविक आकर्षण को भी हू-बहू अपनाया है। पद्मावती के संग लड़कियों की जल क्रीड़ा इसकी साक्षी है।

आलाओल—

एक बचन देख मनने निशाकाले विषये दोसर बन्ध प्रवेशित बाले।
हेनकाले पद्मावती सरोवर मुनि मधुर बचने कहे सुन सब सखी।
श्यामल श्यामल सपि पीरी संगे गीरी जुटे जुटे हार लइ वेवहार करि।

(पद्मावती, पृ० १२)

जायसी—

लागी केलि करै मझ नीरा। हंस लजाइ बैठ होइ तीरा।
पदुमावती कौतुक करि राखी। तुम्ह ससि होहु तराइन साखी।
बाहि मेलि कै खेल पसारा। हार देइ जो खेलत हारा।
सँवरहि साँवरि गोरिह गोरी। आपनि आपनि लीन्हि सो जोरी।

(पद्मावत पृ० ११)

जायसी के परम्परागत भाग्यवाद का ग्रहण भी बँगला पद्मावती में है।

आलाओल—

आद्य प्रभु निरंजन त्रिभुवन कर्ता।
यत जीव जन्तु सबकेर भक्ष दाता।

}

पापाचेरमध्य कीट नहि विस्मरण
यथा तथा भक्षणाने करह पालन ।

(पद्मावती, पृ० १४ १६)

जायसी—

ए गोसाईं तू ऐस विधाता । जाँवत जीउ सबक मख दाता ।
पाहन महँ न पतंग बिसारा । जहँ तोहि सँवर दीन्ह तुइ चारा ।

(पद्मावत पृ० ६६)

रत्नसेन के प्रेम एवं विरह सांहसिक कार्यों का वर्णन आलाओल ने जायसी के अनुसार ही किया है।

आलाओल—

रत्न तुल्य प्राप्ति हैव अमूल्य माणिक ।
जग सूर्य मिलने आनन्द हैव दिक ।
मालति भ्रमरा प्राय हइया वियोगी ।
राज्य पाट त्यजि जाइव हइन महायोगी ।

(पद्मावती पृ० १८)

जायसी—

पदिक पदारथ लिखी सो जोरी ।
चाँद सुरुज जसि होइ अंजोरी ।

(पद्मावत पृ० ७२)

डा० सुकुमार सेन का मत है "आलाओल ने हिन्दी पद्मावत का आधार ग्रहण (Adaptation) किया है[1] । बंगानुवाद में कवि की कुछ मौलिकता भी है। किन्तु थोड़ी गहराई से दोनों काव्यों का तुलनात्मक-दृष्टि से अध्ययन किया जाये तो आलाओल की मौलिकता नाममात्र की ही मिलेगी। हाँ [illegible] प्राकृतिक दृश्य अवश्यमेव बंगभूमि के हैं। नारी सौन्दर्य चित्रांकन में कुछ अंतर है। ऐसा होना स्वाभाविक है, क्योंकि कोई भी कवि वर्तमान तत्काल परिस्थितियों से मुँह नहीं मोड़ सकता है। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में उनका प्रभाव होना अवश्यं भावी है।

आलाओल—

जगने सुजिल विधि जपतेर ज्योति
किंचित भ्रमक पाइल हिरा रत्न मोति ।

(पद्मावती पृ० २१ २६)

---

1 लेखक की डा० सेन से इस विषय पर चर्चा हुई। उन्होंने इसको स्वीकार किया।

जायसी—

बहु जो जोति हीरा उपराही।
हीरामनिहि सो तेहि परिछाहीं।
जेहि बिनवान जोति निरमई।
बहुतन्ह जोति जोति ओहि भई।

(पद्मावत पृ० १०४)

विरह पीड़ा या प्रेम की पीर ही काव्य की आत्मा है। बँगला कवि ने हिन्दी काव्य की इस आत्मा को भली प्रकार सुरक्षित रखा है।

आलाओल—

तार वाम पाशे एक तिल मनोहर
पोतसिर छाया किवा दर्पण अंतर।
जेइ लोक तिल सेइ तिले हय बरसन
तिले तिले करि यंत्र करय दाहन।

(पद्मावती पृ० ५६, ५२)

जायसी—

तेहि कपोल बाँए तिल परा। जेइँ तिल देखसो तिल तिल जरा।

(पद्मावत पृ० १०६)

नख-शिख वर्णन में भी हिन्दी काव्य का अक्षरशः अनुकरण है। शरीर के अंगों के वर्णन की समस्त उपमाएँ जायसी ही से ली गई हैं। भुजा की उपमा कमल दंड से कुचों की कनक कटोरा से उदर की कमल पाटल से तथा कटि की सिंह से इत्यादि सब हिन्दी-काव्य परम्परा के अनुसार है। प्रेम का आदर्श भी जायसी का ही है।

आलाओल—

प्रमेर सागरे यत उठिल हिल्लोल प्रेम कप मूल प्रेम विच्छेद मूल।

(पद्मावती पृ० २७)

जायसी—

परा सो प्रेम समुद्र अपारा लहरहिं लहर होइ विसम्भरा।

(पद्मावत, पृ० ११२)

आलाओल—

गुरुर वात्सल्य शिष्य हुवे अग्नि कण मेला।
प्रज्ज्वलित करे सेइ शिष्य महाजना॥

(पद्मावती पृ० ६१)

चैतन्योत्तर-काल

जायसी— गुरु बिरह चिनगी मेला जो सुलगाइ लेइ सो चेला।
(पद्मावत पृ० १२०)

रत्नसेन के योगी भेष का वर्णन दोनों महाकवियों का एक जैसा है।

आलाओल— राज्यपाट त्येजिया नृपति हैल योगी।
कर्णे किन्नुर (किंगरी) लइ आत्माय वियोगी।
शिरे जटा कर्णे मुद्रा भस्म कलेवर।
हस्ते लिया डुम्बुर त्रिशूल लैया कर।
(पद्मावती पृ० ६१ ६२)

जायसी— तजा राज राजा भा जोगी, औ किंगरी कर गहेउ बियोगी।
(पद्मावत पृ० १२१)

शकुन-अपशकुन का विचार दोनों कवियों में है, मातृ प्रेम की झलक दोनों में समान है। माता कहती है—

आलाओल— राजा चक्रवर्ती तुमि संसार माझार।
सोमाधिक केवा सुख आछ्य संसार।

पाठ— राज चक्रवर्ती तुमि संसार माझारे।
सोमाधिक केवा सुखी आछ्य संसारे।
(पद्मावती पृ० ६१ ६६)

रत्नसेन कहता है—

आलाओल— यदि काल हरत संसार सुख भोग।
राज्य त्यजि योगीचन्द्रमा साधित योग॥
(पद्मावती पृ० ६६, ६७)

जायसी— जो मन होत राज औ भोगू।
गोपीचन्द कस साधत जोगू।
(पद्मावत पृ० १२६)

नारी हृदय का चित्रण बंगला कवि ने जायसी से ग्रहण किया है—

आलाओल—

देशान्तरे आयपति शुनि नागमति।
सजल नयने आसि करिल मिनति।
(पद्मावती, पृ० ६४)

जायसी—

रोवै नागमती रनिवासू। केइ तुम्ह कंत दीन्ह बनवासू।
(पद्मावत पृ० १२६)

राजा के साथ जलचमन उद्यत अन्य राजकुमारों का वर्णन भी आलाओल ने हिन्दी काव्य के अनुसार ही किया है।

आलाओल—

नृपति गमन शुनि हइला वियोगी।
षोलशत राजार कुमार हैल योगी।
(पद्मावती पृ० ६६)

जायसी—

राय राने सब भये वियोगी। सोरह सहस कुँवर भए जोगी।
(पद्मावत पृ० १२९)

प्रेमी राजा का चित्रण बंगला काव्य में हिन्दी काव्य के अनुसार ही है।

आलाओल—

रात्रि हैले वन मध्ये करेन्त बसति।
दिवे भिक्षा मागन्त आसेन्त नरपति।
चार हूवे प्रज्वलित प्रेम हुताशन।
भिक्षा छार भिक्षा सुख साधन भोजन।
(पद्मावती, पृ० ६८)

जायसी—

जोगिहि जोग सोवहि सब चेला।
राजा जागे आपु अकेला।
जेहि के हिए प्रेम रंग जामा।
का तेहि भूख नींद बिसरामा।
(पद्मावत पृ० १३२)

राजा गजपति का उपाख्यान दोनों महाकाव्यों में समान है।

आलाओल—

रत्नसेन हइल योगि अति सम्भाषिते आइल शुनि नृप गजपति।
(पद्मावती पृ० ६८)

जायसी— रतनसेनि भा जोगी जती। सुनि भेंटै आएउ गजपति।
(पद्मावत पृ० ११६)

रत्नसेन राजा गजपति की जिज्ञासा का उत्तर भी हिन्दी काव्य के अनुसार ही देते हैं—

आलाओल—

हिन्दुस्तानी भाषे न न बरे एहमत। संस्कृत भाषे भेद गुनह बेकत।
प्रथमे सबब हेतु सुरापूत आर दवि-गुण बलान्तर मुनि कहि सार।
ए सब समुद्र हैति सप्तम संयोग, सत मध्ये एक भाव पुष्प फल भाग।
एमन संकट मध्ये गमन तोमार आपने भाविया चाह की बलिब आर।
+ + + +
राजा बले गजपति मने चिन्त जिव आर यदि प्रमाणल किवा तार जीव।
प्रथमे जीवन हैति प्रेम पथे मम पृथुक बनर कि करिते पारे यम।
सुख संकल्पिया कैल कुबेर सम्बल तबे परदेस पन्थे नगर सिंहल।
के बन परिल प्रेमसागर गंभीरे। काल बन सम हैले एइ समुद्रे।
(पद्मावती पृ० ९६)

जायसी—

गजपति यह मन सकती सीऊ। पै जेहि प्रेम कहाँ तेहि जीऊ।
जौ पहिले सिर दै पगु धरई। मूए केर मीचुहि का करई।
सुख संकलपि दुख साँबर लीन्हेउँ तौ पै भाल सिंघल कहँ कीन्हेउँ।
भँवर जान पै कँवल पिरीती, जेहि महँ बिथा पेम कै बीती।
औ जेहि समुद पेम कर देखा, तेहि यह समुद बुन्द बर लेखा।
(पद्मावत पृ० ११८)

अधिक उदाहरण देना समीचीन नहीं जान पड़ता है। सारांश में उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट है कि आलाओल ने जायसी के कथानक, नाटकीयता व कथनोपकथन का भी समावेश अपने काव्य में किया है। लगभग सब रसों का परिपाक आलाओल के काव्य में हुआ है। क्या कलापक्ष क्या भावपक्ष क्या अलंकार विधान क्या प्रेम की पीर एवं क्या सूफियों की आध्यात्मिक व्यंजना सभी क्षेत्रों में आलाओल की कथा-कल्पना जायसी से आवृत एवं अलंकृत है। पद्मावत की महिमा डॉ० सुकुमार सेन के शब्दों में इस प्रकार है—जायसी का पद्मावत केवल अवधी साहित्य का ही नहीं अपितु समस्त नवीन भारतीय साहित्य की एक श्रेष्ठ रचना है।[1]

---

१ जायसीर पद्मावती काव्य शुधु अवधी साहित्येर नय-समग्र नवीन भारतीय साहित्येर एकटि श्रेष्ठ रचना। इ० बां० सा० पृ० १०।

४

"मुसलमानी बँगला साहित्य"

दौलत काजी और आलाओल की साहित्यिक परम्परा शैली की दृष्टि से अपने पूर्ववर्ती साहित्यकारों (वैष्णव पदकर्त्ताओं) से भिन्न नहीं थी। केवल साहित्यिक मानदण्डों में ही अन्तर आया था। वैष्णव-साहित्य धार्मिक (राधा कृष्ण प्रणय विषयक) था। किन्तु परवर्तीकालीन मुस्लिम बँगला साहित्य का विषय लौकिक (इश्क मजाजी) के आवरण में आत्मा-परमात्मा (इश्क हकीकी) प्रेम था। जायसी के आधार पर आलाओल ने अपने काव्य की रचना की थी। दोनों सूफी-साधक थे।

उनके परवर्ती जो मुसलमान लेखक आये वे अधिकतर अनुवादक थे। उनका साहित्यिक पराक्रम पूर्ववर्ती कवियों के समान ऊँचा नहीं था। फिर भी बँगला साहित्य में उनका स्थान गौरवपूर्ण है। उनका साहित्य पूर्णरूपेण लौकिक प्रेम पर ही आधारित था। उनकी भाषा में भी अन्तर आ गया था। उनकी भाषा संस्कृत गर्भित बँगला से कुछ सरल हो गयी थी। वह साधुभाषा से चलित भाषा के अधिक निकट आ गयी थी। उसका कारण मुसलमानी-साहित्य का सम्पर्क और मुसलमानी राज्य विस्तार है।

पहले कहा जा चुका है; बहुत मुसलमान उत्तरी पश्चिमी भारत पंजाब उत्तर प्रदेश तथा बिहार से आकर बंगाल के कई प्रदेशों में बस गये थे। विशेषकर चटगाँव ढाका सिलहट एवं लोअर बर्मा के रोसांग आराकान आदि प्रदेशों में बस गये थे। उनकी भाषा बोलचाल के रूप में हिन्दी ही थी। अतः उत्तर प्रदेश एवं बिहार से वे परम्परागत लोक-प्रचलित लोक-कथायें भी साथ लाए थे। मुस्लिम काल में फारसी के साथ-साथ हिन्दी को भी प्रोत्साहन मिला था। अतः अरबी, फारसी एवं हिन्दी के सम्पर्क से उस भाषा का जन्म हुआ जिसे हम मुसलमानी बँगला कहते हैं। डा० दीनेशचन्द्र सेन का मत है, "जो शैली मुसलमानी बंगला कहलाती है उसमें अरबी फारसी और उर्दू शब्दों का विकृत बँगला के साथ सम्मिश्रण है[1]।" उन्नीसवीं शताब्दी से यह परम्परागत साहित्यिक एवं चलित भाषा के रूप में अविरल रूप से चली आ रही है। जिस प्रकार हिन्दी की खड़ी बोली (कौरवी) के शैलीगत हिन्दी या उर्दू दो भेद हैं। उसी तरह बँगला का एक शैलीगत भेद

१ Style known as Musalmani Bengali which shows an admixture of Urdu, Persian and Arabic words with corrupt Bengali.

H. B. L. L. Page 083.

२. इस प्रकार का अधिकांश साहित्य बटतला ग्रंथ कलकत्ता से प्रकाशित हुआ है।

मुसलमानी बँगला कहलाता है। किन्तु साहित्यिक परम्परा एवं भाषा की दृष्टि से उर्दू हिन्दी से थोड़ी अलग मानी जाने लगी है। किन्तु व्याकरण एवं भाषातत्व की दृष्टि से दोनों एक ही भाषा के दो शैलीगत भेद हैं। उसी तरह प्रायः परम्परागत मुसलमानी बँगला में भी यह प्रवृत्ति पनपने लगी है। डा॰ सुनीतिकुमार चटर्जी लिखते हैं "हिन्दुस्तानी अपने आप ही फारसी और मुस्लिम भावना (Spirit) की उत्तराधिकारिणी और प्रचारक तथा जनक भारत में बनी सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दी में उसका प्रवेश बँगाल में हुआ, फारसी शब्दावली जो पहले बँगला में अधिकतर प्रत्यक्ष रूप में आयी थी किन्तु अब बहुत परिमाण में हिन्दुस्तानी के माध्यम से बँगला और भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओं में प्रवेश पाने लगी।[1] किन्तु मुसलमानी बँगला में तो यह प्रवृत्ति पहले से ही चली आ रही है। अरबी, फारसी एवं हिन्दी या उर्दू शब्दों का इसमें बाहुल्य है। वाक्य-विन्यास भी हिन्दीनुमा है। कई पद हिन्दी-मिश्रित बँगला के हैं। ऐतिहासिक क्रम से साहित्य एवं भाषा का विवेचन निम्न प्रकार है —

कुतबन की मृगावती का अनुकरण

कुतबन की मृगावती का अनुकरण भी बँगला में हुआ है। मुहम्मद खातर की मृगावती यामिनीभान की कहानी से परवर्तीकाल के इस्लामी बँगला साहित्य पर भी प्रभाव पड़ा है। कहानी छोटी है मालूम पड़ता है कि यह किसी हिन्दी काव्य से ली गई है। इसमें हिन्दी मिश्रित बँगला का प्रभाव है।[2]

विविध रोमाण्टिक कहानी

मनोहर मालती उपाख्यान का उल्लेख और चन्द्रानी काव्य के आलामोल विरचित ग्रंथ में है। हिन्दी में इस विषय की रचना अठारहवीं शताब्दी में मिलती है। इस समय बँगाली कवियों ने भी इसी विषय पर कलम चलाई थी। मुसलमान

---

१ Hindustani made itself inheritor and propagator of the Persian and Muslim spirit in India from the 17th and 18th century and came to Bengal Persian words which formerly were brought into Bengali mostly directly now began to be admitted in large number through Hindustani into Bengali and the Various other Vernaculars of the land

O D B L, Appendix D Page 206

२ देखिये— कहे एक लाड़का चले हाथो सियाना।
बेचिया प ोर चले हाथो सियाना।
लेह गये आएर करिले वेसे बैसे।
दुख पावे सुख ताते हावो वैसे।
(बां॰ सा॰ इ॰, प्र॰ सं॰ पृष्ठ ८६२)

कवियों में अग्रणी लोककवि मोहम्मद कबीर थे। इन्होंने किसी हिन्दी काव्य का अनुवाद और अनुसरण किया था। कवि स्वयं लिखते हैं —

एइ से मुन्दर (सोनार) केच्छा हिन्दीते आछिल
देश भाषाए मुचित पाँचाली करिल।
(इ० बाँ० सा० पृ० ४१)

नबि बंश और जंगनामा

चटगाँव और सिलहट से सत्रहवीं शताब्दी में इस्लामी पुराण पाँचाली लिखी थी। सिलहट के मुसलमान उत्तर पश्चिम के हिन्दी भाषी मुसलमानों के साथ बराबर सम्बन्ध रखते थे। किन्तु फिर भी पूर्णरूप से बंगाली होते जा रहे थे।[1] उन्नीसवीं शताब्दी तक ये कायथी अक्षरों का व्यवहार करते रहे। इन्हीं हरफों को सिलेटी या सिलहटी नागरी कहते हैं। इसके बाद सत्रहवीं शताब्दी में उत्तर बंग में एक इस्लामी लेखक गोष्ठी बनी। सिलहट में और पश्चिम राढ़ में उत्तर पश्चिम भारतीय हिन्दी इस्लामी प्रभाव प्रकट हुआ।[2] कवि नवसरवा अपनी रचना की भूमिका में लिखते हैं —

ते काजे फारसी भाँगि कैनुम हिन्दुस्थानी।
बुझिबारे बाँगाले से किताबेर बाणी। (इ० बाँ० सा०पृ०४८)

प्रणय-गाथा

सिलहट चटगाँव के मुसलमानों में हिन्दीमूलक आख्यायिकाओं का प्रचलन था। रोमांटिक आडम्बरविहीन विशुद्ध प्रणय-गाथा अनेक दिन तक चलती रही। भोजपुरी के लोकगीतों में से यह पश्चिमी बंग पूर्व बंग और आसाम में चली गई।

त्रिवेणी के पण्डा की कहानी

त्रिवेणी के पंडा की कहानी का मूल कोई हिन्दी या उर्दू किताब है। कवि स्वयं कहता है—

हिन्दी जबानेते सेइ किताब आछिल
पड़िया सकल भेद मालुम हइल। (इ० बाँ० सा० पृ० १०१)

---

१ सिलहटेर मुसलमानेरा उत्तर पश्चिमेर हिन्दी भाषी मुसलमानेदेर संगे बराबर योग रखे चले छिलेन। एरा पुरा पुरी बाँगाली हये उठते पारेछि अनेक दिन अवधि।
(इ० बाँ० सा० पृ० ४४)

२ इ० बाँ० सा० १४४।

हिन्दी प्रभाव की झलक दृष्टव्य है—

वीरेर बाहेर आस्सा करेछेन तैयार
× × ×
घाश्तार पैयारा पीर शायुकी सोलतान।
पयघा माते कलमीक करे कहा मुना
नाहि बाने कोमकप मेहात ठिकाना।
× × ×
शेख पुराइया बाग देखिया यकान
एकसेर छिले पैरा बाकमोष करिल
बहुतर बालेमेर मिकरे लाइया
पुछिलु खबर खूब बातिबि करिया
× × ×
हिन्दी बवामेते बोड़ केवाब बाधिल
पड़िया सकल भेद मालुम हइल।
पयघा केरामत दिल से पामीर मुनि
मोर्दा छिले जिन्दा हइत फुरेते रवबानि।

मुरशुट-मन्दारन लेखक

पश्चिमी बंगाल में इस्लाम की पीठ यही स्थान पाण्डुआ थी। इस्लामिक परम्परा एवं हिन्दी प्रभाव में उत्पन्न कवि भारतचन्द्र रायगुणाकर का निवास स्थान भी यही है। यहीं बड़वी पाखी को आश्रय करके मुरशुट मन्दारन में इस्लामी साहित्य का केन्द्र अठारहवीं शताब्दी में बन गया था। इस साहित्य की भाषा की विशेषता अरबी फारसी एवं हिन्दी शब्दों की प्रचुरता है। इसी प्रसंग में बंगाली कवि की इस्लामी ढंग की हिन्दी रचना का प्रथम उल्लेख करना उचित है—

माय पिया   दिया करे चौब
होया हरामजाद पाले बाबार
घोमुते हो दमिशराय ऐछा बनावाज
बाँधके मे प्यारेपि तबे हामराजी।
कानानस पेरणु तोड़ने कहे कोन
सिताब (र) देखने बाद केपाह सयताम।

(द० बी० सा० पृ० १०९)

परीबुल्ला की इसुफ जुलेखा, आमीर हामजा के जंगनामा के उदाहरण भी देखने योग्य है—

कवियों में अग्रणी लोककवि मोहम्मद फकीर थे। इन्होंने किसी हिन्दी काव्य का अनुवाद और अनुसरण किया था। कवि स्वयं लिखते हैं —

एइ ये सुन्दर (सोनार) केच्छा हिन्दीते आछिल
देश भाषाए मुकिल पाँचाली करिल।
(इ० बाँ० सा० पृ० ४१)

नवि वंश और जंगनामा

चटगाँव और सिलहट से सत्रहवीं शताब्दी में इस्लामी पुरान पाँचाली लिखी गी। सिलहट के मुसलमान उत्तर पश्चिम के हिन्दी भाषी मुसलमानों के साथ बराबर सम्बन्ध रखते थे। किन्तु फिर भी पूर्वक्रम से बंगाली होते जा रहे थे।[1] उन्नीसवीं शताब्दी तक ये कायथी अक्षरों का व्यवहार करते रहे। इन्हीं हरफों को सिलैटी या सिलहटी नागरी कहते हैं। इसके बाद सत्रहवीं शताब्दी में उत्तर बंग में एक इस्लामी लेखक गोष्ठी बनी। सिलहट में और पश्चिम राढ में उत्तर पश्चिम भारतीय हिन्दी इस्लामी प्रभाव प्रकट हुआ।[2] कवि नसरुल्ला अपनी रचना की भूमिका में लिखते हैं —

ते कारणे फारसी भांगि कैनुम हिन्दुयानी।
बुझिवारे लोयाके से किताबेर वाणी। (इ० बाँ० सा०पृ०४८)

प्रणय-गाथा

सिलहट, चटगाँव के मुसलमानों में हिन्दीमूलक आख्यायिकाओं का प्रचलन था। रोमांटिक आडम्बरविहीन विशुद्ध प्रणय-गाथा अनेक दिन तक चलती रही। भोजपुरी के लोकगीतों में से यह पश्चिमी बंग पूर्व बंग और आसाम में चली गई।

त्रिवेणी के पण्डा की कहानी

त्रिवेणी के पंडा की कहानी का मूल कोई हिन्दी या उर्दू किताब है। कवि स्वयं कहता है—

हिन्दी बयानेते सेइ केताब आछिल
बङ्गिया सकल लोक मालुम हइल।(इ० बाँ० सा० पृ० १०१)

---

१ सिलहटेर मुसलमानेरा उत्तर पश्चिमेर हिन्दी भाषी मुसलमानेदेर संगे बराबर योग रखे चले छिलेन। पुरा पुरा पुरी बाँगाली हये उठते पारेनि अनेक दिन अवधि।

(इ० बाँ० सा०, पृ० ४४)

२ इ० बाँ० सा० १४४।

हिन्दी प्रभाव की झलक द्रष्टव्य है—

पीरेर खातेर आल्सा करेछेन तैयार
× × ×
आल्लार पैयारा पीर आपुष्टी सोलतान।
एयया माते कतलोक करे कहा सुना
नाहि जाने कोनरूप नेहात ठिकाना।
× × ×
दिल खुड़ाइया जाण देखिया मकान
एकारेर दिले मेरा आफसोष करिल
बहुतर आदेमेर मिल्ते जाइया
पुछिनु खबर खूब ख्याहिश करिया
× × ×
हिन्दी जबानेते सेइ केताब आछिल
पड़िया सकल भेद मालुम हइल।
एयसा केरामत छिल से मामीर धुनि
मौर्चा दिले जिन्दा हइत मुरदेते रखवानि।

मुरशुट-मन्दारन-लेखक

पश्चिमी बंगाल में इस्लाम की पीठ यही स्थान पाण्डुया थी। इस्लामिक परम्परा एवं हिन्दी प्रभाव में उत्पन्न कवि भारतचन्द्र रायगुणाकर का निवास स्थान भी यही है। यहाँ बड़खां गाजी को आश्रय करके मुरशुट मन्दारन में इस्लामी साहित्य का केन्द्र अठारहवीं शताब्दी में बन गया था। इस साहित्य की भाषा की विशेषता अरबी फारसी एवं हिन्दी शब्दों की प्रचुरता है। इसी प्रसंग में बंगाली कवि की इस्लामी ढंग की हिन्दी रचना का प्रथम उल्लेख करना उचित है—

भाग पिया फिया करे मीब
होमा हारामजाद जाने खाबार
खोनुते हो वलिमराय पैदा बमाबाब
बोंमके मैं जानेछे तबे हारामजादी।
कामालत पेरकु तोड़ने कहे कौन
सितार(र)देखने बाद केदाइ सपराम।

(इ० बाँ० सा० पृ० १०१)

परीबुस्सा की इसुफ जुलेखा, आमीर हामजा के जंगनामा के उदाहरण भी देखने योग्य है—

खबर बतैन पाओ तोमाके समझाई।
इफसुफ नबीर बात सुन मेरा भाई॥
× × ×
प्रास्तार दरगाय खबर मोगाइया माथा।
कहित लागिम इफसुफ-बैसेकार कथा।
× × +
तामाम हुहस पुथि बालि ले करिलेम इति।
प्राखा पुथ हुहस प्रामार
बीरहामीर मातारे ये और कबेर जिबे
उतारिया छिम विवि पहाड़ेर नीचे।

लैला मजनू की प्रेम कहानी

लैला मजनू की प्रेम कहानी समस्त भारत में प्रसिद्ध है। उन्नीसवीं शताब्दी में कलकत्ता में बहुत सस्ते छापाखाने हो गये थे। इनके मालिक और प्रकाशक मुसलमान थे। बंगला के कथा-साहित्य के प्रचार के लिये मुसलमान प्रकाशक ही नहीं हिन्दू भी बहुत उत्साहित थे। अशिक्षित और अल्पशिक्षित जनता में विशेषकर नगर-प्रवासी माम्झी मल्लाह, दुकानदार पंसारी चाकर और दलाल सबके पास अरबी फारसी हिन्दी मिश्रित इस्लामी-बंगला की छोटी बड़ी पुस्तकों का बाहुल्य था। इसी समय गुरगुट मन्दारन अंचल के कवियों का ही प्राधान्य था। हिन्दी इस्लामी पद्धति ही अपनायी जा रही थी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य भाग में मुसलमान प्रकाशकों में सर्व प्रधान काजी सफीउद्दीन थे। इनके ही प्रेस के लोगों ने अधिक फारसी एवं हिन्दी से अनुवाद किये थे। फारसी पुस्तक गुलबकावली के नेमीचन्द्र कृत हिन्दी अनुवाद गुलबकावली के बंगानुवाद का प्रकाशन १८२१ ई० में हुआ था। मृगावती शाहनामा और तूतिनामा का बोलबाला इसी समय था। लैला-मजनू में से हिन्दी बंगला मिश्रित एक गीत द्रष्टव्य है—

ए महब्बत छोड़के प्यारी किधरे गुलिके मोरे
मे तेरा दुखाइये बांचि नारे बांचि नार।
जबसे लैला हो तुझे एसक गम हुए मुझे
पिलिया महब्बत का प्याला तबसे मैं मुसि नारे।
थार प्राणा ए पाजराह जहाछा प्रम धारा।
नाय रोके महब्बत में पेयारी मुसिले पामारि तेरे।
तुमि कारति हो सदा तुझे चोल राति चोल
हामको दारदिया दुखाधार दुख सहेना मोर(इ बां० सा० १२४)

पुरानी रोमांटिक कथा कहानियों का आदर्श उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में प्रचुर था। इस समय की रचना सब पद्य में है। विक्रमादित्य का उपाख्यान, तूति नामा (शुक-सप्तति) सखोनामा हातमताई, यूसुफ जुलेखा एवं गुलबकावली सब ही हिन्दू मुसलमानों को समान रूप से प्रिय थीं। अरबी फारसी तथा हिन्दी या उर्दू इनका मूल था। माधेर अली ने लैला का प्रथम खण्ड लिखा था। इस पुस्तक में बहुत गीत हैं। उनमें विशुद्ध बंगला केवल हिन्दी और हिन्दी बंगला मिश्रित गीत भी हैं। इस प्रकार हिन्दी प्रभाव के अनेक उदाहरण हैं—

देखको मर तु करनी चाहे ताहारि सने मिलन
बतनत छाया करो पावें अमूल्य रतन
ऐए बात करो देखो आपना तारिकिर्दे तरके रहना।
परत पत्ते तारें कि साथ थमे आसन।
बोल को बांधे लिया एक बार अंद्रका हुय दिवारके दरकार
मुरषद परिया से थमये करो सेवन।
माधेरआलि रोरकर पुकारी लिया ऊपर
अिमाय न पाय तनु विने मुरषद सामन। (इ० बां० सा० पृ० १३२)

हिन्दी मिश्रित बंगला गीतों के कई उदाहरण हैं —

एरसादि आवसदे लैल बसके काबार हुआ।
फुवार ताहकिन छारा बिछे मेरा मया
रात को मा वाम चेतन बेस्तार पर छोने हैं।
मम हुआ पोल वेतदे आवला हुय सम बरन छारा
एस्तोवारि में मिल्न आँखों से एर मील बहु पैदा।
अतमों कि आवधि
पुकार मैकाननता है मुर्षे पुकार पुकार बोल
मुए मैदाने कामा आज आतन पुरा हुआ।
हम अरम रफाइ कार छाले पैरान
माधेरअलि देखकर बेहुस रह पैदा। (इ० बां० सा० पृ० १३२)

मुसलमान रोमांटिक कवियों में अनेक सूफी मतावलम्बी थे। उनका परिचय उनकी रचनाओं में मिलता है। शमसुद्दीन सिद्दीक का भीमकार का भावलाभ और पुरत नाल (देसरामेर काहिनी) भावलाभ में अनेक गीत हैं। विशुद्ध बंगला हिन्दी बंगला मिश्रित केवल हिन्दी के गीत भी मिलते हैं। जैसे—

हिन्दी चैतावेते दिल केवटा देलाराम
लाहाते मिलिमाहिल एकमात कालाम

हिन्दुस्थान देशे एक शाहिम हातमताई
शुन तार कथा बाँगालाय लिखे जाई ।[1]

ग्रन्थ में शमसुद्दीन फकीर के आध्यात्मिक गीत हैं। हिन्दी के आधार पर बँगला (हिन्दी-मिश्रित बंग भाषा) में एबादतुल्ला ने पुष्पकावती लिखी थी। मुरशुट के वालेश्वर ने मृगावती की कहानी लेकर कुरंग भानु लिखा था। अब्दुल मजीद के बंगबहार से उदाहरण देते हैं—

एयसा केहु बाँयजार स्वामेर ना करे प्यार ।
जब तक दुनिया बाहाल—

—इ० बाँ० सा० पृ० ११६ ।

× × ×

करिनु आवाज कैच्छा (कैच्छा) सब तारिख बिन शाम्भा ।
लाड्काई उम्र मेरा ना जानिल कबिता धारा ।

× × ×

मेरा भि सरकार लिखे बहुतेकभाषी धाधि ।
फारसी बाँड्स्या बंग इंगरेजी नागरि संग ।

× × ×

आवाते नमक जमेका हुम ।
थोड़ा थोड़ा पड़िमुनि केताब कोरान शुनि

× × ×

शुद्ध ए बाँगला नय हिन्दि मिशेछेताय
ए कारणे पर बैधि कम ।

हातमताई के किस्सा शाह गर्जतुल्ला में भी हिन्दी प्रभाव है—

एस समालेर कैच्छा हुदी तामाम ॥
कलमेर थोड़ा मेरा तुड़िया लगाम ।

मुरशुट के वालेश्वर की भी हिन्दी-बंगला मिश्रित रचना है—

एइ मे लाड्काइ उमरेते
लाड्काई उम्मर मेरा ना जानि कबिताधारा ।

बंगबहार की रचना भी इसलामी बँगला में हुई थी। कवि स्वयं स्वीकार करते हैं—

शुद्ध ए बाँगला नय हिन्द मिशेछे ताय ।[2]

---

१ बाँ० सा० इ० प्र० खंड पृ० ६२२ ।
२ एताहि आमार थोड़ा उम्मेदेर बोल
आपनि बतावत ह्ये जाते जाते बोल ।

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध एवं बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हिन्दी से अनेक छोटे-बड़े किस्से कहानियों के अनुवाद हुए थे। गरीबुल्ला (ढाका) की विमराम की पुस्तक का हिन्दी से अनुवाद हुआ था। यह एक हिन्दी कहानी का स्वाधीन अनुवाद है। जैसे—

गीहद केतकेसे दिल बैगला बेलाराम

मैक बिबि किस्सा समद शाली कारदाम एवं अमृत भेषा हिन्दी से अनूदित हुए थे। कई गीतों की भाषा हिन्दी मिश्रित है। हिन्दी बंगला मिश्रित एक गजल का उदाहरण देना अपेक्षित है—

सालाम मेहि साया मेरी सोमे लाले बाये फुल
केमनते हुबे सोभा फूले या बसिले बुलबुल।
बैसबाहा बेकारारि एयार मेहि पाया कैसी।
मरे मरि दिल दुवेला केम्ने केम्ने प्राण थाकल।
रोमि हुय बेल हाथाँरि बेराम बले आहामारि।
बाखो सालाम मलेकि हाय तुमि आमार आति काल। (इ० बाँ० सा० पृ० १२२)

वास्तव में मुसलमानी-बंगला साहित्य को लोक-साहित्य के अन्तर्गत रखना अधिक न्यायसंगत है। नेमर्गाजह गीतिका और पूर्वबंगगीतिका भी मुसलमानी लोक-साहित्य के अन्तर्गत भले ही नहीं आवें किन्तु उनपर भी हिन्दी-शब्दावली की छाप है।

जिस समय बंगला में इस रोमान्टिक साहित्य की रचना हो रही थी उस समय हिन्दी में भी इसी प्रकार की शृंगार रस-पूर्ण रचनायें हो रही थी। यह प्रवृत्ति तत्कालीन बंगाली रामायणकारों में भी परिलक्षित होती है[1]। ऐसा होना स्वाभा

चिड़िया तबियत मेरा करे बेहु तेज
जड़िया बाइते ऐसा ना हुय मालेम।
बयानके कर मेरा सक्कर शिरिम
एयारसे करे बेहु रंगीले रगीम।
कागजके कर मेरा आम्बास केयाम
कलम के करे बेहु मेम्पारे समान।
मोलाब कारारा मेरा बोयातके कर
पेयारिहु आतर बालि सार लिखेथर।
पयाम हइते कण्ठा करिलाम शुरु
बोसा कर आदि जम कबितार गुरु (इ० बाँ० सा० पृ० १४८)

१ देखिये—परिशिष्ट में तुलसीदास का बंगाली रामायणों पर प्रभाव—विषयक-प्रसंग।

सिद्ध हो चला था उस समय मुस्लिम सम्राटों का राज्य ग्रस्त हो गया था। छोटे-बड़े राजाओं और नवाबों के मनोरंजन के लिए कवि लोग दरबारों में ऐसी ही रचना सुनाया करते थे। जनता में भी यही डा० गोपाल जी की सम्मति में छिन्नसूत्र रोमांस की साहित्यधारा ही सर्वप्रिय थी।

५

मुसलमानी—बँगला भाषा

जिसे मुसलमानी-बँगला कहते हैं उसकी सृष्टि उन्नीसवीं शताब्दी में हुई। इससे पहले मुसलमान लेखक साहित्य सृजन में परंपरागत साधु-बँगला का ही प्रयोग करते रहे हैं। उन्हें बहुत कम अरबी-फारसी—यावनी भाषाओं के शब्दों का समावेश हो पाया था। इन शब्दों को बहुत मुसलमान जानते थे। किन्तु हिन्दू-मुसलमानों के काव्य की भाषा सामान्य परंपरागत संस्कृतनिष्ठ साधु-बँगला थी।

कुछ बँगला गद्य में अवश्यमेव अरबी फारसी उर्दू शब्द मिलते हैं। जब से गद्य का निदर्शन मिलता है तब से ही ये शब्द हैं। सोलहवीं शताब्दी में कोच बिहार के राजा नर नारायणसिंह के संस्कृत बहुल पत्र में फारसी का खिताब-खिताप है। उस समय से बाद के पत्र दलिलों में भाषा का प्रभाव बढ़ता गया। यह मुद्रित प्रतिलिपियों में मिलता है, और एक सौ साल बाद इस भाषा में तथा कथित इस्लामी बँगला के कुछ बाद उसका नमूना आनरेबल कम्पनी के कामरेसन्ट के पास १७७६ ई० का लिखा हुआ हरमोहन शर्मा की अर्जी है।[1] पुरानी बँगला में साहित्य सृष्टि पद्य में हुई थी। पद्य की भाषा प्राचीनता का बहुधा अनुसरण करती है। संस्कृत का प्रभाव बराबर विद्यमान है। किन्तु कहीं-कहीं कथा-वार्ता की भाषा में विदेशी शब्दों का प्रवेश बिलकुल ही निषिद्ध नहीं था। श्रीकृष्ण कीर्तन में फारसी 'मजूर' शब्द है, उसमें बँगला के प्रत्यय के योग से ठेरि मजुरिया है। गौण कर्मवाचक अनुसर्ग रूप में बराबर श्रीकृष्ण विजय में मिलता है। सोलहवीं शताब्दी में एकाधिक उल्लेख योग्य रचना विदेशी शब्दों में नामधातु की सृष्टि हुई। बदल ∠ से बदलिया, कुसुप ∠ से कुसुपित (विशेषण) इत्यादि मिलते हैं। डा० सुकुमार सेन महोदय के अनुसार

१ श्रीयुत ओनरेबल कोम्पानिते प्रार्थना लिर मूमेर चौकी नारिकेर बाटनी प्रामि मरवा टाका पाइब जामानी करियाछी आपरेल माहाते एवम् ओकाम मजकूरेर गोमस्ता नायक ग़रीब करितेछिल एवम् कापड़ कषक कषक आमदानी हइयाछे एवम् हइतेछिल दास कषकर दरबार हइयाछे एवम् मवसक कापड़ ओजार हाते बराबर कारन रहियाछे———इत्यादि।

(इ० बाँ० सा० पृ० १८२)

हिन्दी शब्द और मुहावरों को अपनाकर इस्लामी-बंगला का जो स्वरूप होता है। वह उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम भाग की व्यवहारिक बंगला फोर्ट विलियम कालेज के पंडितों की साधु-भाषा नहीं थी। उस भाषा[1] के साथ पंडितों की भाषा का मेल नहीं था। फिर भी पत्र चिट्ठी-पत्री दलील दस्तावेजों में उसका प्रचुर प्रयोग होता है।[2] किन्तु चलित[3] भाषा में उसका व्यवहार होता ही था। कर्ताभाषा के निम्न गीत से स्पष्ट है—

> भाई आमार आहुवान किछू सुन दल मोदे
> करिले धार दुमगत भाई सुलुके।
> एक बफाते फौपर दुमेदी
> तोफा एक देयार साथे पिरीत करेछि।
> और मुझेसे कारवाति मात्र समाहुत बदनामि।
>
> (इ० बां० सा० पृ० १८५)

इस प्रकार कुछ हिन्दी का भी पुट उसमें रहता था जैसे—

> तोम तुरा होके कोराह दरबतता में सोया,
> ना खाया कैया किमारे भाई बरकत ना हुदया।
> और लिया पुछिया खिहास तोमि
> आयोगा आर आयो ना देरख दुनिया के लिबले।
> से चिठे उसारे देख चाहिले ना चाहिले।
>
> (इ० बां० सा० पृ० १८६)

उन्नीसवीं शताब्दी में संस्कृत और अंग्रेजी शिक्षित लोग प्राचीन परंपरागत साधु-बंगला भाषा में ही रचना करते रहे किन्तु अन्य मुसलमान लोग फारसी उर्दू या हिन्दीमूलक बंगला का ही पत्र पकड़े रहे।

१ हिन्दी प्रभाव का कुछ भाषा वैज्ञानिक विवेचन इस प्रकार है —

मुसलमानी बंगला में हिन्दी शब्दों का बाहुल्य रहा है, जिस प्रकार—मुझे, तुझे, मेरा तेरा एता (इतना) एमो (यह), येता (इतना) एइसा (ऐसा) वइसा बइसा (वैसा) जइसा तइसा (तैसा) आइया∠आना जाइया∠जाना, वैसाहा, तैसा∠तैसा, भाभि∠भाभी भि∠भी, तक, दो पाचटा∠पाँच छइटा∠छठा सातटा∠सात चौगा∠चूना मच्छर, बात।

---

१ साधु=साहित्यिक
२ देखिये—इस्लामी बांगला साहित्य, पृ० १८१ १८६।
३ चलित=बोलचाल की।

२ हिन्दी धातुओं का व्यवहार —

ऐसा∠एइचा माते कतुरे भेकासिया ∠निकास खाय∠खाना मत्पर्यक करमे गिरीनू∠गिर धातु पतनार्थे धामि तुइवेक∠तुइ (कममेर घोड़ा तुड़िया सामाम हायमकाई) हाती घोड़ा ऊट माये डासिया∠डास सुमारी ∠सवारी घोड़े पेके कूदे∠कूद उठे∠उठ बेचिल∠बेच∠बीच खेलाइव∠खिला खाना पीना किस प्रकार बाहार चाकरि बाजाई∠बाजाना आरचाकि धामिमिले, आमीर क्सदाम परे पड़े उतारिया∠उतार, खोदासिसे बकिर पोशाक मौगाइया ∠मौगा बोरे देना घाडाइया (बुझाना) परे घो घुमाइया∠घुमाना मारे कर घोड़ाना उपरे मार∠मारना भेजिया∠भेजना बियाछे भेजा हुजुरे शोमार ढाका दिया∠ढाका देना ढुकेरे देखाव∠देखा इत्यादि हिन्दी धातुओं के मुसलमानी बंगला में प्रयोग के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं।

३ विविध हिन्दी शब्दों के अनुसग[1] उपसर्गों का व्यवहार[2] —

हिन्दी शब्दों के अनुसर्गों और उपसर्गों का व्यवहार भी मुसलमानी बंगला में हुआ है।

(क) वासते—रे—विभक्ति के समान गौण और मुख्य कर्म में आमू तामार तरे—

(ख) बराबर—उपमा गौण कर्म के अर्थ में—घूट बराबर मत आमारि आमीर पवन भाग बराबरि—अग्नि के समान—आगुनेर मत—

(ग) बिच (सप्तमी के अर्थ में)—आपन बाड़ीर बिच रहे खोदासिते अकेला जगत बिच नहे आरि साथे।

इस प्रकार हिन्दी के उपसर्गों एवं प्रत्ययों का प्रयोग इस्लामिक बंगला में हुआ है।

किन्तु आज भी साहित्यिक-स्वरूप में मुसलमानी साहित्यकारों (भारत और पाकिस्तान) हिन्दी या उर्दू प्रभावित साधु-बंगला का भी प्रचलन है। किन्तु प्रमुखतः साहित्य की शैली परम्परागत संस्कृत गर्भित बंगला ही है। लोकभाषा या चलित भाषा साहित्यिक साधु-बंगला की तरह जनभाषा के रूप में कलकत्ता से बंगाल के

---

१ अनुसग = प्रत्यय।

२ मुसन ताकिर, नजदिग (नजदीक) सिवाय वगैरह, हुजूर आदि शब्द अरबी फारसी के हैं किन्तु हिन्दी या उर्दू में अब वे पूर्णतया आत्मसात हो गये हैं। अब वे हिन्दी की सम्पत्ति माने जाते हैं। हिन्दी के समस्त शब्दकोषों में उनका उचित स्थान है। देखिये—संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर, पृष्ठ ४१ ५१८, ६८१ १ २९।

}

अन्य प्रदेशों में फैली है, और देश विभाजन के कारण बाजारू हिन्दुस्तानी या उर्दू का पाकिस्तान के पूर्वी बंगाल और भारत के पश्चिमी बंगाल में अनेक रुकावटों विरोधों एवं राजनीतिक सम्बन्धों के बावजूद भी सहज रूप में नदी की स्वाभाविक धर्मधारा के रूप में प्रचार, प्रसार एवं प्रभाव हो रहा है।

भारत विभाजन के बाद पाकिस्तान की राष्ट्रभाषा उर्दू का राजकीय एवं जन-स्तर पर प्रसार पूर्वी बंगाल में हो रहा है। बहुत मुसलमान शरणार्थी उत्तर प्रदेश बिहार, पश्चिमी बंगाल से पूर्वी पाकिस्तान में बसे गये हैं। अतः उनकी मातृ भाषा हिन्दी या उससे मिलती जुलती भाषा है। साधु-बंगला के साथ-साथ हिन्दी या उर्दू नुमा बंगला बलित भाषा एवं लिखित साहित्यिक स्वरूप को भी प्रभावित करने लगी है। हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा होने के कारण साधारणतः समस्त पश्चिमी बंगाल विशेषतया कलकत्ता-केन्द्र में उसका प्रभाव दिन दूना रात चौगुना हो रहा है।

६

"भारतचन्द्रराय गुणाकर १७२२ १७६० ई०

भारतचन्द्र आलाओल की परम्परा के परवर्ती कवि हैं। वे हिन्दी बंगला संस्कृत फारसी आदि भाषाओं के पण्डित थे[1] उनकी काव्य-शक्ति का भी विकास उस वातावरण में हुआ था। जो फारसी एवं हिन्दी से ओतप्रोत थी।[2] हिन्दी शब्दावली एवं हिन्दी पद उनकी रचनाओं में मिलते हैं। उन पर हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण दो रूपों में कर सकते हैं —

१ प्रत्यक्ष — हिन्दी

२ अप्रत्यक्ष — ब्रजबुलि

प्रत्यक्ष रूप में उन्होंने हिन्दी पदों की रचना की है। अप्रत्यक्ष में ब्रजबुलि के माध्यम से उन पर हिन्दी का प्रभाव पड़ा है। कुछ उदाहरणों से यह स्पष्ट किया जा सकता है —

जय शिव नाचहि पाँचहि ताता।
बाजत डमरू पिनाक रसाला॥

---

१ बं० भा० सा० पृ० ६६६ ६०८। कतकगुलि कविताय भारतचन्द्र हिन्दो ओ फारसी के आश्रय करिया रस सृष्टिर प्रयास करियाछेन। बां० सा० इ०, प्र० खंड, पृ० ८१६)

२ सुमसित एवम् रसाल शब्द अपने पूर्ववर्ती कविदेर तुलनाय भारतचन्द्रेर योग्यता अधिकतर बेनमा इति संस्कृत छाड़ा फारसी ओ हिन्दी भाषाओं जानितेन। (वही पृ० ८४०)

नाचत भूत बजावत भैरव ।
गावत ताल बेताला ।
नन्दी कहे तालाकार मनोहर भृंगी
बाजावत गाला ॥
गंगा झरे जलधार सुधारस
उगल हलाहल ज्वाला ।
भारत के हर शंकर-मूरति नाथ कपाल कपाला ।
(भा० ग्रं० पृ० ८० ८१)

ब्रजबुलि का एक उदाहरण उल्लेखनीय है—

शिव-विवाह

जय जय हर रंगिया । कर विलसित निशित परशु
प्रमथ बर कुरंगिया ॥
लक लक फणी जटविराज ।
धक धक धक रजनिराज
धक धक धक दहन साज
विमल धवल अंगिया ।
[illegible] डुगु डुगु नयन बोल
छमु छमु छमु योगिनी बोल
झुमु झुमु झुमु शाकिनी बोल
प्रमथ प्रमथ संगिया
भभम् भभम् बबम भाल
धन राजे चिता कमक गाल
धर ताले ताल देह बेताल
भृंगी नाचे संग भंगिया
पुरंदर कहे जय महेश
पुलके पूरल सकल देश
भारत पावत भगति वेश
सरस भनत धनिया । (ब्र० ग्रं० पृ० ५१ ५४)

इस तरह भारतचन्द्र ग्रंथावली (अन्नदामंगल) में ब्रजबुलि के अनेक पद हैं। भारतचन्द्र बहुभाषाविद थे। उन्होंने सफलतापूर्वक अनेक भाषाओं की काव्य-रचना के लिए कलम चलाई। उनकी विशुद्ध ब्रजभाषा की रचना का उदाहरण इस तथ्य को प्रमाणित करता है —

भाट के प्रति राजा की उक्ति (भाटेर प्रति राजार उक्ति)

गंग कहो गुणवंतपु महीपति नन्दन सुन्दर क्यों नहिं आया ।
जो सब भेद बुझाय कहा कियों नहीं तहाँ समुझाय सुनाया ।
काम दिए तुझे भेज दिया सुधि भूल गया अब मोहिं भुलाया ।
भट्ट हो अब मग्न भया कविताई मठोठ में राग बढ़ाया ।
प्यार कहा बहु प्यार किया गज वाजि दिया सिर ताज धराया ।
दान दिया तलवार दिया सरपोच किया सब काव्य पढ़ाया ।
नामहिं नाम महाकवि नाम दिया मणिदाम बढ़ाइ बढ़ाया ।
काम भया बरबार सबै अब भारती के नहिं भेद बनाया ।

भाट का उत्तर (भाटेर उत्तर)

भूप मैं सिधारि भट्ट काँचिपुर आयके ।
भूप को सभाय माझ राजपुत्र पायके ॥
हाथ जोरि पत्र खोलु दीप भूमि लायके ।
राजपुत्रि को कथा विशेष में सुनायके ॥
राजपुत्र पत्र बाँचि पुत्रि भेद जाय के ।
एक में हजार लाख मैं कहा बताय के ।
बूझके सुनाय राजपुत्र चित लायके ।
सामने भया महावियोगी चित्त चायके ॥
याहि में कहा भया कहाँ गया भुलायके ।
बाप मा महावियोगी देखने न पायके ॥
खोजि खोजि पाँच माह में तेहि गमायके ।
माधुरी कहा तु बात वर्धमान आयके ॥
न्याय नहीं है महीप में गया बतायके ।
पुण्डु दिवानजी सो वचसि के मँगायके ॥
बूझके कहे महीप भट्ट को मनायके ।
चोर कौन है तु जिन्ह देख देख आयके ॥
भूपके निदेश पाय गंग बात पायके ।
चोर कौन है तु जिन्ह देख दश पायके ॥
वेष में कहा महीप पास यह आय के ।
सोहि एहि है कुमार काँचिराज रायक ॥
नाम है तिहारी पुत्र आप एहि आयके ।
जा समे यहा तिहारि पुत्रि को बिहायके ॥

चोर को मशान में कहा दियो पठायके ।
भाग मानि आप जाय लायहु समायके ।
भट्ट को कहे महीप विद्दमोद सायके ।
साथमें चले मशान भारती बनायके ॥
(भा० ग्रं० पृ० ११० १११)

उन्होंने ऐसी भाषा का भी प्रयोग किया है जिसे हम हिन्दी भी कह सकते हैं और व्रजबुलि भी। निम्नलिखित उदाहरण से इस तथ्य को समझा जा सकता है—

मानसिंह को यशोर यात्रा

धो धों गुरु गुरु बाजे नाघारा बाजे रवाब मृदंग दोतारा ।
पयदल कसबल मुगल हलमल साबल डलबल पठन सोमारा ।
दामिनी दक दक बाम को धक धक, झकझक झक मक करतरवारा ॥
ब्राह्मण रजपुत क्षत्रिय रघुत मोगल मारुत रण अभिचारा ।
मोड़ कलावत नाचत गायत, भारत अभिमत गीत सुधारा ॥
(भा० ग्रं० पृ० १२७)

इसके अतिरिक्त हिन्दी भाषा की कविता भी उन्होंने की है—

हिन्दी भाषार कविता

एक समय एक भानु कुमारी भरूस्थि सम बैठ भिखारी ।
हुये लय भावो सब पूछी जो आयि मेहबस नम्रतास बोलायि ।
देव नहि प्राण सुन नहि कान का कुछ आयि हो भायोल जायि ॥
कोहा के भागाया तास कोहा सो पश्चनू जानू ।
कोहा सो तु आयि है जाक पर तरे बर्जक बसने ।
जानि में भाप समायोने आयि ।
कुछ बात ए दील को कुछ, बातयोतोक को बातोन सुन ।
बात हामारि सात सामायि है ।
(भा० ग्रं० पृ० ४२०)

उनकी विविध कविताओं में हिन्दी का अनुकरण किया गया है। कवि की विविध कविताओं में ऋतुओं पर कविता चौपदी में है। एक हिन्दी का पद इस प्रकार है—

धुम बड़ा धुम किया खाने सोने नाहि दिया
चहुँयार घेर लिया फौज किसि कायोया ।

कामजाला कोट किया कामात से घेर लिया।
तहुँमान धागा दिया प्राण किसि ताग्रोया।
देखने में हुआ चूर छोड़ लिया मेरि पुर,
तोंहारि आसाई दूर भाग्यो मेरे बाग्रोया।
चुप लिया नरम सहि जगलिया गरम सहि,
विरह लियो परम सहि आहुमारे हाथ्रोया।
(भा० ग्रं० पृ० ४४८)

पहले कहा जा चुका है कि भारतचन्द्रराय गुणाकर को कई भाषाओं का ज्ञान था। वे सफलतापूर्वक उन भाषाओं में कविता कर सकते थे। उनके अपूर्ण चण्डी नाटक में इसका स्पष्ट प्रमाण है। अपूर्ण चण्डी नाटक में एक पात्र संस्कृत पद बोलता है। उत्तर में दूसरा पात्र हिन्दी में बोलता है—

नटी की उक्ति

सुन सुन ठाकुर शिष्य विशारद चतुर सभासद सारि,
नूतन नाटके नूतन कवित्त हमि तोंहि नूतन नारी।
श्यामले प्राणाधव भाव भवानी को भीति में समुझे भारि।
बालक बलने भारती मण्डले तारिणी से अवतारी।
ध्रुव सम धीर वीर सम कृष्ण सगुण मुरारि।
कृष्णचन्द्र नृप राजा शिरोमणि भारतचन्द्र विचारि।

महिषासुर की उक्ति

आयेगा देवदेवी पाकड़ पाकड़ इन्द्र को बाँध लागे
मेर्कस को रीति वैसा ममभर यम को प्राण को प्राण लागे।
वायोंको रोग करके करत वरुणको मजदू सो आग भागे।
ब्रह्मा लोकानुकि सों कमिनहि समको कोंबो कुबेरा न भागे॥
(भा० ग्रं०, पृ० ४५५)

प्रजा के प्रति महिषासुर की उक्ति

लोग रे गोंवार लोग छोड़दें उपास रोग।
मानहुँ आनन्द भोग मैंपराज योग में॥
आपमें लगाओ चीत काहे को जलाओ जीव
एक रोज प्यार पिउ भोगएहि लोग में।
आपको लगाओ भोग कामको लगाओ योग
छोड़दो योग भोग, मोक्ष एहि लोक में।

बधा एणाम् बधा बयाम् अर्धनार प्राकृमाम् ॥
एहि ध्यान एहि ज्ञान यार सम्बरोप में ।
(भा० ग्रं० पृ० ४२१)

इसी प्रकार एक उदाहरण और दृष्टव्य है—

एक बासये बघबतोर कोप प्रकमे हास्य करिलेन
कमल करटक कलि कमा कलतट दिलपथ उमयार
अपघट व्याम् रे ।
वसुमती कम्पत गिरिगण नयत जलनिधि मम्मत बाहूबमय रे ॥
त्रिभुवन पुलक रविरथ हुकत घन घन मुरत मेघ परसत रे ।
त्रिबली घट बाड धर घर घट घट ममुद लद घद मद्
मा गया हाय रे ॥
(भा० ग्रं० पृ० ४२९)

भारतचन्द्र हिन्दी इस्लामी प्रभाव की परम्परा की उपज हैं[1]। व्यक्तिगत रूप में भी वे हिन्दी के ज्ञाता एवं प्रेमी थे। उनकी भाषा में व्याकरणिक एवं उच्चारण सम्बन्धी भाषा की त्रुटियाँ अवश्य हैं। इसका कारण हिन्दी-बंगला का उच्चारण भेद ही है। वैसे उनमें हिन्दी प्रभाव मज्जागत था। इसका अंतरंग प्रमाण कवि की स्वीकारोक्ति में मिल जाता है।

'भारतचन्द्र पाठआम हुइल जे जानी
संचित ये भारती फारसी हिन्दुस्थानी
पड़ियाछी सेइमत वर्णिबार पारी।

नूतन पुरातन की युग-सन्धि पर भारतचन्द्र की तरह रामनिधि गुप्त भी हिन्दी से प्रभावित हैं उनके विषय में अगली पंक्तियों में कुछ प्रकाश डाला जायेगा।

७

''रामनिधि गुप्त (१७४१ १८३९ ई)''

प्रणय-भावनाओं की परम्परा मुसलमान कवियों में चलती रही है, भारत चन्द्र पर भी इस परम्परा का प्रभाव पड़ा है, किन्तु हिन्दू कवियों में सर्वप्रथम

---

1 इ० बां सा० पृ० १०६ एइ समये फारसी ओ भाषरी (अर्थात्) साधारण बांगाली-सन्तानेर अन्यतम शिक्षणीय विषयछिल विशेष करिया कायस्थ भद्रलोकेर घरे। ब्राह्मण घरेर उन्नतिकामी सन्तान ओ फारसी-हिन्दी-शिखित। ताहार उदाहरण भारतचन्द्र। अंतएव एइ फारसी ओ हिन्दी मुख्य रूपे अभिमत इस्लामिक बनियाद भारतचन्द्र मतानुगतिक साहित्येर एकटु मोड़ फिराइते पारिया छिलेन।
(बां० सा० इ०, प्र० खंड, पृ० १०७)

रामनिधि गुप्त या निधु बाबू ने ही विशुद्ध प्रणय गीतों की रचना की है। निधु बाबू को इन लघु प्रणय-गीतों अथवा टप्पों की प्रेरणा हिन्दी-संगीत से ही मिली है।

डा० दिनेशचन्द्र सेन[1] और डा० सुकुमार सेन इस तथ्य को स्वीकार करते हैं। डा० सुकुमार सेन का मत है, 'दशसाला बंदोबस्त के समय निधु बाबू छपरा गये थे, वहीं पर हिन्दुस्तानी संगीत अच्छी तरह से सीख कर हिन्दी गीतों के आधार पर बँगला में टप्पा अर्थात् संक्षिप्ताकार गीतों की रचना करते रहे[2]।

कवि ईश्वरचन्द्र गुप्त विरचित रामनिधि गुप्त के जीवन के सम्पादक श्री भवतोषदत्त जी ने भी उपयुक्त मत का समर्थन किया है। टप्पा शब्द के हिन्दी में अनेक अर्थ होते हैं[3]। किन्तु यहाँ पर टप्पा से अभिप्राय हिन्दी के एक रागविशेष से है जिसमें तान की प्रधानता होती है। शब्द-कोशों में टप्पा की परिभाषा इस प्रकार है—"व्युत्पत्ति की दृष्टि से टप्पा शब्द हिन्दी-शब्द से उत्पन्न है जिसका अर्थ होता है

---

१ ब० भा० सा० पृ० ११५, हि० ब० भा० लिट्० पृ० १२६, बाँ० गा०, पृ० ६२८ से तथा ८२९।

२ दशसाला बन्दोबस्तेर समय निधु बाबू छापराय गिया छिलेन सेखाने हिन्दुस्थानी संगीत भालोकरिया शिखिया लइया हिन्दी गान भाँगिया बाँगलाय टप्पा अर्थात संक्षिप्ताकार गान रचना करिते थाकेन—(बाँ० सा० इ०, प्र० खंड, पृ० ६७४)

३ देखिये—बृ० हि० को० पृ० ५२० हि० श० सा० सं० हि० श० सा०, पृ० ४२६, बाँ०भा०अ० पृ० ८२९। Etymologically derived from a Hindi word which means tripping or frisking about with light fantastic toe a tappa means a little song of light nature-H. Music.

हिन्दी खेयालेर अनुकरणे रचित ललित पदबद्ध संगीत, विशेष सुर लये गेय लघु प्रकृतिर क्षुद्रगीत टप्पा गेये शोरियान उद्भावक छिलेन। टप्पा शृंगार रस प्रधान साहित्य है। संकीर्ण राग में रचा गया है। विलंबित ठिमठ या धीमा तिताला तिलवाड़ा और झूमरा वगैरह तालों में होता है। इसमें स्थायी और अंतरा दो अवयव हैं। पद और विस्तार दो ही अंग हैं। स्फुरित, आहति, प्रत्याहति—इन गमकों से युक्त खटका मुर्की प्रयोग बहुत है। शोरी मियाँ ही टप्पे के प्रमुख रचयिता हैं। कहा जाता है कि टप्पे की उत्पत्ति पंजाब में हुई और ऊँट पालने वाले ही इसको गाते हैं। इसकी पंजाबी या पंजाबी मिश्रित हिन्दी है। टप्पे का मुख्य विषय है हीर व रांझा का प्रणय-संगीत शास्त्र पृ० २४४ बाँ० गा० पृ० ६२८।

धीम, अस्थिर अंगूठे से चक्करना फूलना। टप्पा का अर्थ है—एक छोटा गीत ललित प्रकृति का। हिन्दी ख्याल के अनुकरण पर रचित ललित पद बहुल संगीत[1]।"

कवि जीवनी लेखक स्वयं स्वीकार करते हैं 'छपरा की कलेक्ट्री कार्य से केरानी का कार्य ग्रहण करके सायंकाल संगीत विद्या के सुपण्डित एक यवन गायक को वेतन पर नियुक्त कर अपने अवकाश के समय उससे संगीत-शास्त्र की शिक्षा प्राप्त करने लगे। गीत विद्या में निपुण मुसलमान उस्ताद आसानी से यथार्थ रूप में किसी को उपदेश नहीं देते थे। इससे निधु बाबू के कुछ संस्कार उत्पन्न हुए। इस शिक्षा-दान विषय में मियां साहब को उलाय करके कहने लगे मैं आप लोगों के जातीय भाषामिक गीत और गान नहीं कर था अपने लिये हिन्दी गीतों के अनुवाद पूर्वक राग रागिनी संयुक्त करके बंगभाषा में गान कर था। इसके फलस्वरूप उन्होंने वैसा ही किया अर्थात् उक्त मुसलमान गायकों को विदा कर, अपने आप ही राग रागिनी ताल मान के अनुसार बंगला-गीत रचना करने के लिये प्रवृत्त हो गये[2]। हिन्दी टप्पा के अनुकरण पर निधु बाबू ने सकड़ों बंगला टप्पों की रचना कर एक नूतन प्रेम-गेय-पदावली को जन्म दिया। रामनिधि गुप्त को बंगला का प्रथम

---

१ राम निधि गुप्त अर्थ निधु बाबू (११४८ बंगाब्द) आसे हुगली जायगा, ग्रामे जन्मे "शोरि मियाँर" टप्पार अनुकरणे बाँगाला टप्पा वा प्रणय संगीत रचनार प्रवर्तक "बंगाल की टप्पा" संगीत गानेर प्रकार भेद (संगीतराग कल्पद्रुम)

'Tappa unlike कवि बीचाली वा यात्रा was essentially Baithaki gan or songs for the drawing room, which was appreciated chiefly if not wholly by the upper class.

(बां० सा० अभि० प्र० पं० ८१६)

२ "छापरार कलिक्ट्री केरानिर कर्म ग्रहण करिया निधु बाबु तत्काले तत्प्राय संगीतविद्याय सुपण्डित अनेक यवन गायके वेतन दिया नियुक्त करत स्वावकाश समय ताहार निकट संगीत-शास्त्र शिक्षा करिते लागिलेन। गीतविद्या तत्पर यवनेरा प्राय सहजेइ कूर कहने काहाकेउ यथार्थरूपे उपदेश करेना। यवन विदाय बाबुर किंचित तस्कार जन्मिल उक्त शिक्षादान विषये विरक्तेर कार्पण्य जानिते मियां साहेबके सेलाम करिया कहिलेन, 'आमि तोमारदिगेर जातीय भाषामिक गीत आर गान करिब न। आपनिय बंग भाषाय हिन्दिगीतेर अनुवाद-पूर्वक राग रागनी संयुक्त करिया गान करिब।' फल ताहार अल्पेक दिन परे ताहाई करिलेन अर्थात् उक्त मुसलमान गायकेर विदाय दिया आपनिइ राग रागनी ताल मान अनुसारे बांगाला गीत रचना करणे प्रवृत्त हइलेन।"
(ईश्वरचन्द्र गुप्त विरचित कवि जीवनी पृ० १०२)

आधुनिक कालीन गीत-लेखक कह सकते हैं। वे प्रथम हिन्दू बँगला के गीत लेखक हैं जिन्होंने धर्म और परलौकिकता से साहित्य को अलग किया। टप्पों के कुछ उदाहरण देना अपेक्षित होगा—

"भाल बासिबे बले भालबासिनें।
आमार स्वभाव एई तोमा बइ आर जानि नै
बिधु मुखे मधुर हासि देखते बड़ भाल बासि
ताई देखे येते आसि देखाँ दिते आसिनें[1]॥"

अर्थात् मैं तुझे इसलिये प्यार नहीं करता हूँ कि तुम भी इसके बदले में प्यार करो। यह तो मेरा स्वभाव बन गया है कि तुझे प्यार करूँ केवल तुझे। मैं तेरे अधरों पर मुस्कान देखना चाहता हूँ। उसके लिये मैं प्रतिदिन यहाँ आया करता हूँ। ओ प्रिये, मुझे समझने में भूल मत करो मैं तुझे देखने आता हूँ। इसलिये नहीं कि तू मुझे देखे। इसी प्रकार हिन्दी-संगीत के प्रभाव की परम्परा आधुनिक काल तक आती है।

१८

उपसंहार

बँगला प्रेमाख्यानक-काव्य की परम्परा हिन्दी के माध्यम से आयी है। बँगला में यह परम्परा सत्रहवीं शताब्दी से शुरू होती है। दौलत काजी और आलाओल इस परम्परा के बँगला के शक्तिशाली मुसलमान कवि हैं। इन पर हिन्दी कवियों का साहित्यिक एवं भाषामूलक गम्भीर प्रभाव रहा है।

दौलत काजी ने हिन्दी-कवि मुल्ला दाउद के चंदायन का कथानक एवं साधन की मैनासत का आधार लेकर अपनी 'सतीमयना ओ लौर चन्द्रानी' की रचना की थी। जायसी के महाकाव्य पद्मावत का आधार लेकर आलाओल ने बँगला पद्मावती का निर्माण किया था।

१ हि० बं० सा० वि०, पृ० १२१ बाँ० सा० इ०, प्र० खं० पृ० ९७८, संगीत रत्नावली पृ० २१, बं० सा० प०। प्रसंगवशात शोरी मियाँ का भी कुछ परिचय देना समीचीन जान पड़ता है। शोरी मियाँ का असली नाम गुलाम नबी था। इनकी पत्नी का नाम शोरी था। अपना नाम गौण रख कर पत्नी के नाम से टप्पों का प्रचार किया। हिन्दी टप्पा रचना और गायक के रूप में वे अद्वितीय हैं। टप्पा का उदाहरण देना अपेक्षित है।

रे दिवा नाम ना करिये सखि रखते डरिये।
आयो शोरी मिल पियासा पीले,
समझ समझ पाग धरिये।

(संगीतसीर राग पृष्ठ ११६)

किन्तु परवर्ती इस्लामिक बंगला-साहित्य के लेखक भाव-एवं भाषा की दृष्टि से हिन्दी से प्रभावित रहे हैं। वस्तुतः इस युग का साहित्य अनुवादात्मक है। हिन्दी-पुस्तकों के अनेक अनुवाद बंगला में हुए थे। मूलतः इस मुसलमानी बंगला भाषा और साहित्य का आधार एवं प्रेरणा हिन्दी ही थी। इस साहित्य में से बहुत कुछ को हम लोक-साहित्य के अन्तर्गत परिगणित कर सकते हैं।

इस युगीन प्रसिद्ध हिन्दू कवि भारतचन्द्रराय गुणाकर भी इसी हिन्दी इस्लामिक बंगला के वातावरण और इसी परम्परा की उपज हैं। इनके काव्य में भी हिन्दी प्रभाव का पुट है। इन्होंने ब्रजबुलि और हिन्दी में सफलतापूर्वक कविताएँ की हैं।

बंगला के प्रसिद्ध टप्पाकार रामनिधि गुप्त भी इसी काल की उपज हैं। उनको टप्पा रचना की प्रेरणा हिन्दी संगीतकार शोरी मियाँ के टप्पों से मिली है।

परिशिष्ट

बंगला रामायणों पर तुलसी रामायण का प्रभाव

डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं 'जैसे कि मुस्लिम काल में हिन्दी भारत की सार्वदेशिक भाषा थी तुलसीदास की रचना सारे देश में पढ़ी जाती थी और बहु प्रशंसित हुई थी और उसने भारत के अन्य भागों के साहित्यकारों को भी प्रभावित किया था।' हम अब देखेंगे कि अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दियों की कुछ बंगला रामायणों पर तुलसीदास के प्रभाव की कुछ छाप है।[1]

श्री कालिदास राय लिखते हैं 'कृत्तिवासी रामायण के भावों और भाषा के अनुसरण पर परवर्ती रामायणकारों ने अपने-अपने ग्रन्थों की रचना की थी। तब उन्होंने केवल वाल्मीकि का ही आश्रय नहीं लिया किन्तु उन्होंने जैन रामायण अध्यात्म रामायण एवं तुलसीदास की रामायण आदि से कुछ-कुछ अंश ग्रहण किए थे।[2]

१ As Hindi during the Mohamedan times was the lingua franca of India Tulsidas's work was read and appreciated throughout India and influenced the writers of other parts of the country We shall presently see that some of the Bengali Ramayanas of the 18th and 19th centuries were stamped with his influence.
B. R. page 136

२ कृत्तिवासेर रामायणेर भाव ओ भाषा अनुसरणेइ परवर्ती रामायण प्रणेतारा स्व स्व ग्रन्थ रचना करियाछिलेन—तबे ताँहारा एकमात्र वाल्मीकि केइ आश्रय करेन नाइ। ताँहारा जैन रामायण अध्यात्म रामायण, तुलसीदासेर रामायण इत्यादि हइते ओ कोन कोन अंश ग्रहण करियाछेन।

—श्री कालिदास राय प्राचीन बंग साहित्य पृ० ५१।

अत सुविधा के लिए तुलसीदास की रामायण के प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है —

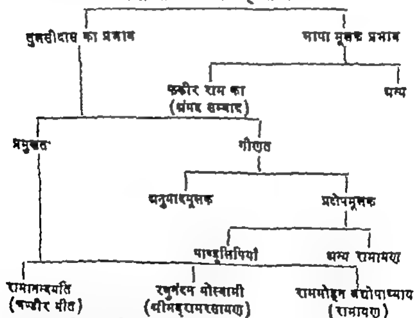
१ बंगला रामायणकारों पर तुलसीदास जी के प्रभाव की छाप है। जैसे—

(क) रामानंद यति (चण्डीर-गीत रचनाकाल, शकाब्द १६७८—१७६६ ई०)
(ख) रघुनंदन गोस्वामी (रामरसायन रचनाकाल ११९१ बंगाब्द१७८५ ई०)
(ग) राममोहन बंद्योपाध्याय (रामायण रचनाकाल १७६० शकाब्द१८३८ ई०)

२ (क) तुलसीदास के कुछ दोहे बंगला-पाण्डुलिपियों में पाये जाते हैं।
(ख) तुलसीदास की समस्त कृतियों का अनुवाद बंगला में हुआ है।
(ग) तुलसीदास के पावन एवं उच्च व्यक्तित्व तुलसी रामायण की धार्मिकता एवं काव्य-सौष्ठव तथा साहित्यिक सौन्दर्य के कारण सामान्य प्रभाव आज तक निरंतर गति से चला आ रहा है।[1]

यद्यपि बंगला रामायणों पर मुख्यत: तुलसी रामायण का प्रभाव है किन्तु स्वल्प रूप में हिन्दी प्रभाव भी कहीं-कहीं दृष्टिगोचर होता है। निम्न मानचित्र द्वारा हिन्दी प्रभाव बंगला रामायणों पर अधिक स्पष्ट हो सकेगा।

बंगला रामायणों पर हिन्दी प्रभाव



उपर्युक्त मानचित्र का किंचित विवेचन अपेक्षित है।

---

१ आधुनिक काल में शचीनाथ माथुरो विरचित चौपाई चरित-मानस पर तुलसी कृत रामचरितमानस का प्रभाव है। यह तुलसीकृत रामचरितमानस के अनुकरण पर विरचित है। इसमें बीच-बीच में हिन्दी रामायण के पद भी उद्धृत हैं। हिन्दी के चर्चित रामायणी की उक्त पुस्तक पर छाप है।

अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी के बँगला रामायणकारों पर तुलसीदास का स्पष्ट प्रभाव है। इस प्रभाव के निम्न ऐतिहासिक प्रमाण हैं —

१ श्री रामानन्दयति

श्री रामानंदयति ने अष्टीर गीत लिखा है।[1] इन्होंने स्वयं तुलसीदास जी का ऋण स्वीकार किया है। इनके अष्टीर गीत में तुलसीदास जी का प्रभाव है। जैसे :—

लघु शाप विवरण ताहि करि रामायण तुलसीदासेर विवरण।

कवि स्वयं अपने ग्रंथ में तुलसीदासजी की वंदना करते हैं।

कत श्री तुलसीदास महापुण्यधाम। जाके वरदान दिया द्विज प्रभुराम॥
किन्तु काले कवि पायलो स्मरण। अन्यरे तुलसीदास देखायो चरण॥[2]

२ श्री रघुनन्दनदास गोस्वामी (श्रीमद्रामरसायण)

रामरसायण तुलसी रामायण की तरह एक भक्ति प्रधान काव्य है। यदि रामरसायण को बंगला की रामचरितमानस कहें तो कोई अनुचित नहीं होगी। डा० दीनेशचन्द्र सेन रामरसायण का बहुत कुछ आधार तुलसी रामायण को मानते हैं। वे लिखते हैं 'कवि की संस्कृत परायणता तो सत्य है किन्तु हिन्दी भाषा का मेल उनके काव्य में प्राय सर्वत्र ही दृष्टिगोचर होता है। जैसे—लोहित, कैनू, तिहं तबहुं प्रभृति छोटे-छोटे शब्द संस्कृत की गुरु घन और परिशुद्ध प्रणाली के मध्य में हिन्दी प्रभाव की पतनोन्मुख ध्वजा उड़ाते हैं।'[4] वे अपने अंग्रेजी ग्रन्थ बंगला भाषा तथा साहित्य के इतिहास में लिखते हैं 'यह ग्रन्थ केवल वाल्मीकि की रामा

---

१ एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल की हस्तलिखित प्रति संख्या ८० रामानंद यति का अष्टीर गीत है। यह फोर्ट विलियम कालेज की हस्तलिखित पोथियों में से है। यह सुन्दर रूप में सुरक्षित है। देखिये पत्र संख्या अष्टीर गीत १४१।

२ यह प्रसंग काव्य के अंत में मिलता है। —डॉ० सा० इ० प्र० खण्ड पृ० ६७८ हस्तलिखित प्रति पत्र १०४ १०५ पर मिलता है।

३ यह तुलसीदास जी के प्रभाव का अंतरंग प्रमाण है। अतः इसको प्रमाणित और स्पष्ट करने के लिए पत्रों १०४ १०५ १४१ की प्रतिलिपियाँ पृष्ठ २४७ २११ के सामने संलग्न हैं। —डा० सुकुमार सेन और एशियाटिक सोसाइटी के सौजन्य से

४ किन्तु कविर संस्कृत परायणता सत्ये या हिन्दी भाषार छिन्न फोटो तोहार काव्येर प्राय सर्वत्र दृष्ट हय। लोहित, कैनू, तिहं तबहुं प्रभृति क्षुद्र शब्दगुलि संस्कृतेर गुरु घन ओ परिशुद्ध प्रणालीर मध्ये हिन्दी प्रभावेर पतोन्मुख ध्वजा उड़ाइते छ।

(बं० भा० सा०, पृ० ५११)

यण के ऊपर ही आधारित नहीं है किन्तु तुलसीदासजी की हिन्दी रामायण पर भी आधारित है।[1] कवि स्वयं स्वीकार करते हैं "राम की बाललीला अपने में भुषण्डी काक का विवरण तुलसीदास की रामायण से ग्रहण किया हुआ है। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है। यथा—

श्रीमान तुलसीदास निजरामायण—
उत्तरकाण्डेते ग्रहा करेन वर्णन।[2]

अर्थात् श्री तुलसीदास जी ने अपनी रामायण के उत्तरकाण्ड में इसका वर्णन किया है। डा० दीनेशचन्द्र सेन पुनः लिखते हैं "कवि ने अनेक स्थल में वाल्मीकि रामायण का अनुसरण किया है। बीच बीच में कहीं कहीं तुलसी रामायण के अंशों का भी ग्रहण हुआ है।[3]

जिस प्रकार तुलसीदास राम को भगवान बना कर उनकी भक्ति में विलीन हो जाते हैं उसी प्रकार रामरसायण भी तुलसी रामायण की तरह राम भक्ति से पूर्णतः ओत प्रोत है। डा० सेन फिर लिखते हैं 'तुलसीदास की अनुप्रास छटा तथा उपमा वाली शैली का अक्षरशःपूर्वक रघुनन्दन गोस्वामी अनुसरण एवं अनुकरण करते हैं।[4] यही प्रक्रिया रामरसायण में तुलसी रामायण की तरह आदि से अन्त तक चलती है। कुछ उदाहरणों से स्पष्ट करना अपेक्षित जान पड़ता है—

रामरसायण—

देखि देव अनुज सहित दयामय
कमनीय कलानिधि करिला उदय।

रामचरितमानस—

भुवन समाज सकल गुन खानी।
करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी॥
× ×
मुद मंगलमय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथ राजू॥

१ It is based not only on the Ramayan of Valmiki but also on the Hindi recension by Tulsidas...H. B B L. page 109

२ रामेर बाल्यलीला वर्णनाय भुषण्डी काकेर विवरण ये तुलसीदासेर रामायण हइते ग्रहण करा हइयाछे, ताहा कवि निजेई स्वीकार करिया गियाछेन—
(बं० सा० द्वि० खण्ड पृ० १५९)

३ कवि अनेकांशे वाल्मीकि के अनुसरण करिया छेन मध्ये मध्ये तुलसीदासेर हिन्दी रामायण हइते ओ कोन कोन अंश गृहीत हइयाछे।
(बं० भा० सा० पृ० २११)

४ But Raghunandan adheres more closely to the characteristic ways of Tulsidasa's imagery —B R.

अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी के बंगला रामायणकारों पर तुलसीदास का स्पष्ट प्रभाव है। इस प्रभाव के निम्न ऐतिहासिक प्रमाण हैं —

१ श्री रामानंदयति

श्री रामानंदयति ने चण्डीर गीत लिखा है।[1] इन्होंने स्वयं तुलसीदास जी का ऋण स्वीकार किया है। इनके चण्डीर गीत में तुलसीदास जी का प्रभाव है। जैसे —

वस्तु जत विवरण ताहे करि रामायण तुलसीदासर विवरण।[2]

कवि स्वयं अपने ग्रंथ में तुलसीदासजी की वंदना करते हैं।

कलि श्री तुलसीदास महापुण्यवान। जाके दरशन दिया छिल प्रभुराम॥
विष्णु काले कपि पालयो पुराण। अन्यरे तुलसीदास देखायो शरण॥[3]

२ श्री रघुनंदनदास गोस्वामी (श्रीमद्रामरसायण)

रामरसायण तुलसी रामायण की तरह एक भक्ति प्रधान काव्य है। यदि रामरसायण को बंगला की रामचरितमानस कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। डा० दीनेशचन्द्र सेन रामरसायण का बहुत कुछ आधार तुलसी रामायण को मानते हैं। वे लिखते हैं 'कवि की संस्कृत परायणता तो सत्य है किन्तु हिन्दी भाषा का मेल उनके काव्य में प्राय सर्वत्र ही दृष्टिगोचर होता है। जैसे—कहिनु कैसू, तिहुँ तबहुँ प्रभृति छोटे-छोटे शब्द संस्कृत की शुभ्र शंख और परिशुद्ध प्रणाली के मध्य में हिन्दी प्रभाव की पतनोन्मुख ध्वजा उड़ाते हैं।[4] वे अपने दूसरी ग्रन्थ बंगला भाषा तथा साहित्य के इतिहास में लिखते हैं 'यह ग्रन्थ केवल वाल्मीकि की रामा

---

१ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की हस्तलिखित प्रति संख्या ८० रामानंद यति का चण्डीर गीत है। यह फोर्ट विलियम कालेज की हस्तलिखित पोथियों में से है। यह सुन्दर रूप में सुरक्षित है।

२ यह प्रसंग काव्य के अंत में मिलता है। देखिये पत्र संख्या चण्डीर गीत १४१।
—बं० सा० इ० प्र० खण्ड पृ० ६७८

३ यह तुलसीदास जी के प्रभाव का अंतरंग प्रमाण है। हस्तलिखित प्रति पत्र १०४ १०५ पर मिलता है। अत इसको प्रमाणित और स्पष्ट करने के लिए पत्रों १ ४, १०५ १४१ की प्रतिलिपियां पृष्ठ २५७ २६६ के सामने संलग्न हैं। —डा० सुकुमार सेन और एशियाटिक सोसाइटी के सौजन्य से

४ किन्तु कविर संस्कृत परायणता सत्ते यो हिन्दी भाषार छिटा फोटों ताहार काव्येर प्राय सर्वत्र दृष्ट हय। कहिनु कैसू तिहुँ तबहुँ प्रभृति क्षुद्र शब्दगुलि संस्कृतेर शुभ्र शंख श्री परिशुद्ध प्रणालीर मध्ये हिन्दी प्रभावेर पतोन्मुख ध्वजा उड़ाइते छे।

(बं० भा० सा०, पृ ५११)

पन्थ के ऊपर ही आधारित नहीं है किन्तु तुलसीदासजी की हिन्दी रामायण पर भी आधारित है।[1] कवि स्वयं स्वीकार करते हैं "राम की बाललीला वर्णन में भुशुण्डी काक का विवरण तुलसीदास की रामायण से ग्रहण किया हुआ है। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है। यथा—

श्रीमान तुलसीदास निजरामायण—
उत्तरकाण्डेते द्वारा करेन वर्णन।[2]

अर्थात् श्री तुलसीदास जी ने अपनी रामायण के उत्तरकाण्ड में इसका वर्णन किया है। डा० दीनेशचन्द्र सेन पुनः लिखते हैं "कवि ने अनेक अंश में वाल्मीकि रामायण का अनुसरण किया है। बीच-बीच में कहीं कहीं तुलसी रामायण के अंशों का भी ग्रहण हुआ है।[3]

जिस प्रकार तुलसीदास राम को भगवान बना कर उनकी भक्ति में विलीन हो जाते हैं उसी प्रकार रामरसायण भी तुलसी रामायण की तरह राम भक्ति से पूर्णतः ओत प्रोत है। डा० सेन फिर लिखते हैं 'तुलसीदास की अनुप्रास छटा तथा उपमा वाली शैली का सफलतापूर्वक रघुनंदन गोस्वामी अनुसरण एवं अनुकरण करते हैं।[4] यही प्रक्रिया रामरसायण में तुलसी रामायण की तरह आदि से अन्त तक चलती है। कुछ उदाहरणों से स्पष्ट करना अपेक्षित जान पड़ता है—

रामरसायण—

देखि देव अनुज वदन सयामय
कमनीय कलानिधि करिला उदय।

रामचरितमानस—

सुजन समाज सकल गुन खानी।
करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी॥
× ×
मुद मंगलमय संत समाजू।
जो जग जंगम तीरथ राजू॥

---

१ It is based not only on the Ramayan of Valmiki but also on the Hindi recension by Tulsidas...H. B. B L. page 100

२ रामेर बाल्यलीला वर्णनाय भुशुण्डी काकेर विवरण ये तुलसीदासेर रामायण हइते ग्रहण करा हइयाछे, ताहा कवि निजेइ स्वीकार करिया गियाछेन—
(बां० सा० द्वि० खण्ड पृ० ११६)

३ कवि अनेकांशे वाल्मीकि के अनुसरण करिया छेन मध्ये मध्ये तुलसीदासेर हिंदी रामायण हइते ओ कोन कोन अंश गृहीत हइयाछे।
(बं० भा० सा० पृ० २११)

४ But Raghunandan adheres more closely to the characteristic ways of Tulsidasa's imagery
—B R

अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दी के बंगला रामायणकारों पर तुलसीदास का स्पष्ट प्रभाव है। इस प्रभाव के निम्न ऐतिहासिक प्रमाण हैं —

१ श्री रामानंदयति

श्री रामानंदयति ने चण्डीर गीत लिखा है।[1] इन्होंने स्वयं तुलसीदास जी का ऋण स्वीकार किया है। इनके चण्डीर गीत में तुलसीदास जी का प्रभाव है। जैसे —

> छतु अन्य विवरण ताहे करि रामायण तुलसीदासेर विवरण।[2]
>
> कवि स्वयं अपने ग्रंथ में तुलसीदासजी की वन्दना करते हैं।
>
> जय श्री तुलसीदास महापुण्यधाम। जाके वरक्षन दिया दिला प्रभुराम॥
>
> शिशु दासे कपि पामयो पूजन। पम्परे तुलसीदास देखायो चरन॥[3]

२ श्री रघुनन्दनदास गोस्वामी (श्रीमद्रामरसायण)

रामरसायण तुलसी रामायण की तरह एक भक्ति प्रधान काव्य है। यदि रामरसायन को बंगला की रामचरितमानस कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। डा० दीनेशचन्द्र सेन रामरसायण का बहुत कुछ आधार तुलसी रामायण को मानते हैं। वे लिखते हैं 'कवि की संस्कृत परायणता तो सत्य है किन्तु हिन्दी भाषा का मेल उनके काव्य में प्रायः सर्वत्र ही दृष्टिगोचर होता है। जैसे—कहिहु, कैनु, दिहुँ तबहुँ प्रभृति छोटे-छोटे शब्द संस्कृत की शुभ्र सरल और परिशुद्ध प्रणाली के मध्य में हिन्दी प्रभाव की पतनोन्मुख ध्वजा उड़ाते हैं।'[4] वे अपने अंग्रेजी ग्रन्थ बंगला भाषा तथा साहित्य के इतिहास में लिखते हैं 'यह ग्रन्थ केवल वाल्मीकि की रामा

---

१ एशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल की हस्तलिखित प्रति संख्या ८० रामानंद यति का चण्डीर गीत है। यह फोर्ट विलियम कालेज की हस्तलिखित पोथियों में से है। यह सुन्दर रूप में सुरक्षित है।

२ *यह प्रसंग काव्य के अंत में मिलता है। देखिये पत्र संख्या चण्डीर गीत १४१।*

—बां० सा० इ० प्र० खण्ड पृ० ९७८

३ यह तुलसीदास जी के प्रभाव का अंतरंग प्रमाण है। हस्तलिखित प्रति पत्र १०४ १०५ पर मिलता है। अतः इसको प्रमाणित और स्पष्ट करने के लिए पत्रों १०४, १०५ १४१ की प्रतिलिपियाँ पृष्ठ २५७ २६६ के सामने संलग्न हैं। —डा० सुकुमार सेन और *एशियाटिक सोसाइटी* के सौजन्य से

४ किन्तु कविर संस्कृत परायणता सत्ये ओ हिन्दी भाषार छिटा फोंटा ताहार काव्येर प्राय सर्वत्र दृष्ट हय। कहिहु कैनु, दिहुँ तबहुँ प्रभृति क्षुद्र शब्दगुलि संस्कृतेर शुभ्र सरल ओ परिशुद्ध प्रणालीर मध्ये हिन्दी-प्रभावेर पतोन्मुख ध्वजा उड़ाइते छे।

(बं० भा० सा०, पृ० ५११)

यण के ऊपर ही आधारित नहीं है किन्तु तुलसीदासजी की हिन्दी रामायण पर भी आधारित है।[1] कवि स्वयं स्वीकार करते हैं "राम की बाललीला अथम में भुशण्डी काक का विवरण तुलसीदास की रामायण से ग्रहण किया हुआ है। कवि ने स्वयं स्वीकार किया है। यथा—

श्रीमान तुलसीदास निजरामायण—
उत्तरकाण्डेते इहार करेन वर्णन ।[2]

अर्थात् श्री तुलसीदास जी ने अपनी रामायण के उत्तरकाण्ड में इसका वर्णन किया है। डा० दीनेशचन्द्र सेन पुनः लिखते हैं 'कवि ने अनेक स्थल में वाल्मीकि रामायण का अनुसरण किया है। बीच-बीच में कहीं कहीं तुलसी रामायण के अंशों का भी ग्रहण हुआ है।[3]

जिस प्रकार तुलसीदास राम को भगवान बना कर उनकी भक्ति में विलीन हो जाते हैं उसी प्रकार रामरसायण भी तुलसी रामायण की तरह राम भक्ति से पूर्णतः ओत प्रोत है। डा० सेन फिर लिखते हैं 'तुलसीदास की अनुप्रास छटा तथा उपमा वाली शैली का सफलतापूर्वक रघुनंदन गोस्वामी अनुसरण एवं अनुकरण करते हैं।[4] यही प्रक्रिया रामरसायण में तुलसी रामायण की तरह आदि से अन्त तक चलती है। कुछ उदाहरणों से स्पष्ट करना अपेक्षित जान पड़ता है—

रामरसायण—

हेरि सब अनुज सजन दयामय
कमनीय कमार्गिनि करिता उदय ।

रामचरितमानस—

सुजन समाज सकल गुन खानी ।
करउँ प्रनाम सप्रेम सुबानी ॥
× ×
मुद मंगलमय संत समाजू ।
जो जग जंगम तीरथ राजू ॥

---

१ It is based not only on the Ramayan of Valmiki but also on the Hindi recension by Tulsidas H. B B L. page 169

२ रामेर बाल्यलीला वर्णनाय भुषण्डी काकेर विवरण ये तुलसीदासेर रामायण हइते ग्रहण करा हइयाछे, ताहा कवि निजई स्वीकार करिया गियाछेन—

(बं० सा०, द्वि० खण्ड पृ० १२१)

३ कवि अनेकाने वाल्मीकि के अनुसरण करिया छेन मध्ये मध्ये तुलसीदासेर हिंदी रामायण हइते ओ कोन कोन अंश गृहीत हइयाछे ।

(बं० भा० सा० पृ० २११)

४ But Raghunandan adheres more closely to the characteristic ways of Tulsidasa s imagery —B R.

इस प्रकार अनुप्रास की छटा समान रूप से दोनों महाकाव्यों में है। तुलसी रामायण का बहुत कुछ साहित्यिक सौन्दर्य अनुप्रास की मालाओं पर अवलम्बित है। निःसन्देह यह शैलीगत प्रभाव तुलसी रामायण का रामरसायण पर है। विराट काव्य श्रीमद्‌रामरसायण में अनेक ऐसे पद, प्रसंग हैं जिनकी साम्यता तुलसी रामायण से सरलता से हो जाती है। राम केवट संवाद तुलसी रामायण की एक महत्व पूर्ण घटना है। अन्य रामायणों में यह घटना नहीं मिलती है। किन्तु रामरसायण में यह मिलती है। कवि स्वयं कहते हैं—

रामरसायण—

एइ स्थाने एक लीला शुन सर्वजन।
शिष्ट परंपरा देखि करिब वर्णन।
किन्तु एइ लीला नाहीं रामायणे।
परम मधुर एइ लीला ए कारणे। (पृ०४७)

अर्थात् एक लीला इस स्थान पर सब लोग सुनें। किन्तु यह लीला रामायण में नहीं मिलती है। शिष्ट परम्परा देखकर वर्णन करता हूँ। इस कारण से यह लीला परम मधुर है।

किन्तु दोनों के देश, काल परिस्थितियों में अंतर है। रामचरितमानस में यह घटना राम-वनवास के समय घटती है। रामरसायण में विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के पश्चात् जनकपुर को जाते समय होती है। किन्तु यह निश्चित है, यह तुलसीदास से ली गयी है। जैसे—

रामरसायण—

बोलये नाविक प्रभु कहएकेमन शिलाते काष्ठेते भेद ना हय वरण।
सेइ जड़ निरस कठिन प्राणहीन एइ सेइ मतन्हे कौन रूप भिन।

रामरसायण—

यदि हरि पदधूलि परसे तोमार। नारी हवे जावे जीविका आमार।
अस्यय दरिद्र मुई एहेते जीवन यदि नष्ट हय तबे बड़ विपदन।

रामचरितमानस—

माँगी नाव न केवट आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।।
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई।
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहनते न काठ कठिनाई।
तरनिउँ मुनि घरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव-उड़ाई।
येहि प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानौं कछु और कबारू।

रामरसायण में अनेक स्थल ऐसे हैं जिनसे तुलसी रामायण के अनेक प्रसंगों से साम्य है। जैसे भगवान् राम जब धनुष तोड़ने के लिये जाते हैं तब प्रत्येक व्यक्ति उनका दर्शन अपनी भावना के अनुसार करते हैं।

रामरसायण—

समाते आइये यत दांति मुनि गण । परतत्त्व करि रामे करे निरीक्षण ॥
परम ईश्वर करि देखे देवगण । सख्यभेर सख्य रस करे आस्वादन ॥
जनकेर रानी माने निजेर नन्दन । जानकीर अंतरेते साक्षात मदन ॥
कोन कोन मुनि देखि करेन करम । हृदयेते वात्सल्ये निमगन ॥
दुष्ट राजा रूप देखि पाइला विस्मय । जनकेर कन्यादान वीररसोदय ॥
मूढ़ नारी देखि यत सबे भयमय । श्रीरामेर व्यथा मानि कृपायुक्त मन ॥
दुष्ट राजा यत तारा देखि रघुवर । निज काल मन्य जानि सरोष अंतर ॥
राक्षस असुरे देखे यमेर समान । ए प्रकार जैन सुधाकर ज्ञान ।
दयानन पुरोहित करये नियम । पूर्व उपकार बसे पैत्रक ये मन ।
एइ रूपे सबे देखे आर जेन मन ।

तुलसी रामायण में भी उपर्युक्त विचारों का वर्णन है—

रामचरितमानस—

जिन्ह के रही भावना जैसी । प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी ॥
देखहिं रूप महारन धीरा । मनहुँ बीर रसु धरे सरीरा ॥
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी । मनहुं भयानक मूरति भारी ॥
रहे असुर छल छोनिप बेषा । तिन्ह प्रभु प्रकट काल समदेखा ॥
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई । नर भूषन लोचन सुखदाई ॥
दो॰ नारि बिलोकहिं हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप ।
जनु सोहत सिंगार धरि मूरति परम अनूप ।
बिदुषन्ह प्रभु बिराटमय दीसा । बहुमुख कर पगलोचन सीसा ॥
जनक जाति अवलोकहिं कैसे । सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे ॥
सहित बिदेहु बिलोकहिं रानी । सिसु सम प्रीति न जाइ बखानी ॥
जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा । सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा—॥

राजर्षि जनक की निराशा भी दोनों रामायणों में समान है।

रामरसायण—

हाय हाय केह नाहि करिते पारिला । बुझि एइ धरातल निर्वीर हइला ॥

रामचरितमानस—

अब जनि कोउ माखै भटमानी । बीर बिहीन मही म जानी ॥

नारी सुलभ सहज भावना भी दोनों काव्यों में समान है। स्त्रियाँ विचार करती हैं। राम सीता का पति होने योग्य है।

रामरसायण—

कोन पुण्यवती कत पुण्य करियाछे । आर भाग्ये हेमपति विधि लिखियाछे ॥
आर जन कहे शुन वचन आमार । राम योग्य नारी सीता बिने नाहि आर ॥

इस प्रकार अनुप्रास की छटा समान रूप से दोनों महाकाव्यों में है। तुलसी रामायण का बहुत कुछ साहित्यिक सौन्दर्य अनुप्रास की भावनाओं पर अवलम्बित है। निःसन्देह यह शैलीगत प्रभाव तुलसी रामायण का रामरसायण पर है। विराट काव्य श्रीमद्‌रामरसायण में अनेक ऐसे पद प्रसंग हैं, जिनकी साम्यता तुलसी रामायण से सरलता से हो जाती है। राम केवट संवाद तुलसी रामायण की एक महत्व पूर्ण घटना है। अन्य रामायणों में यह घटना नहीं मिलती है। किन्तु रामरसायण में यह मिलती है। कवि स्वयं कहते हैं—

रामरसायण—

एइ स्थाने एक लीला शुन सर्वजन।
शिष्ट परंपरा देखि करिब वर्णन।
किन्तु एइ लीला नहीं रामायणे।
परम मधुर एइ लीला ए कारणे। (पृ०४०)

अर्थात् एक लीला इस स्थान पर सब लोग सुनें। किन्तु यह लीला रामायण में नहीं मिलती है। शिष्ट परम्परा देखकर वर्णन करता हूँ। इस कारण से यह लीला परम मधुर है।

किन्तु दोनों के देश काल परिस्थितियों में अंतर है। रामचरितमानस में यह घटना राम-वनवास के समय घटती है। रामरसायण में विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के पश्चात् जनकपुर को जाते समय होती है। किन्तु, यह निश्चित है यह तुलसीदास से ली गयी है। जैसे—

रामरसायण—

बोलये नाविक प्रभु कहएकेमन मिलाते काष्ठेते भेद ना हय दरशन।
सेइ काष्ठ निरस कठिन प्राणहीन एइ सेइ नानाहे कोन रूप भिन।

रामरसायण—

यदि तरि पदधूलि परशे तोमार। नारी हये जाबे जीविका आमार।
प्रस्तर वाक्य मुई एहेते जीवन यदि नष्ट हय तबे बड़ विपदन।

रामचरितमानस—

माँगी नाव न केवट आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना।।
चरन कमल रज कहुँ सबु कहई। मानुष करनि मूरि कछु अहई।
छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन ते न काठ कठिनाई।
तरनिउँ मुनि घरिनी होइ जाई। बाट परइ मोरि नाव-उड़ाई।
एहिं प्रतिपालउँ सबु परिवारू। नहिं जानौं कछु और कबारू।

रामरसायण में अनेक स्थल ऐसे हैं जिनसे तुलसी रामायण के अनेक प्रसंगों से साम्य है। जैसे भगवान् राम जब धनुष तोड़ने के लिये जाते हैं तब प्रत्येक व्यक्ति उनका दर्शन अपनी भावना के अनुसार करते हैं।

रामरसायण—

समात भाइये यत यति मुनि जन । परतत्त्व करि रामे करे निरीक्षण ।।
परम ईश्वर करि देखे देवगण । सकमीर सम्य रस करे उल्लासन ।।
जनकेर रानी माने शिशुर मतन । कामकीर अंतरेते साक्षात मदन ।।
योग कोन मुनि देखि करेन करम । हृदतेपे वातरसे निमगन ।।
यत राजा रूप देखि पाइला विस्मय । जनकेर कम्यातान वीररसोदय ।।
मूढ नारी देखि यत भये प्रायमन । श्रीरामेर व्यथा थाकि कृपायुक्त मन ।।
दुष्ट राजा यत तारा देखि रघुवर । निज कौम मग्न थाकि सरोष अंतर ।।
राक्षस असुरे देखे यमेर समान । ये प्रकार जैन सुधाकर ज्ञान ।
शतानन्द पुरोहित करये नियम । पूर्व संस्कार बसे पेखक ये मन ।
एइ रूपे सबे देखे यार जैन मन ।

तुलसी रामायण में भी उपयुक्त विचारों का वर्णन है—

रामचरितमानस—

जिन्ह के रही भावना जैसी । प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी ।।
देखहिं भूप महारन धीरा । मनहुँ बीर रसु धरे सरीरा ।।
डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी । मनहुं भयानक मूरति भारी ।।
रहे असुर छल छोनिप बेषा । तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देखा ।।
पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई । नर भूषन लोचन सुखदाई ।।
दो० नारि बिलोकहिं हरषि हिय निज निज रुचि अनुरूप ।।
जनु सोहत सिंगार धरि मूरति परम अनूप ।
बिदुषन्ह प्रभु बिराटमय दीसा । बहुमुख कर पगलोचन सीसा ।।
जनक जाति अवलोकहिं कैसे । सजन सगे प्रिय लागहिं जैसे ।।
सहित बिदेह बिलोकहिं रानी । सिसु सम प्रीति न जाइ बखानी ।।
जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा । सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा—।।

राजर्षि जनक की निराशा भी दोनों रामायणों में समान है ।

रामरसायण—

हाय हाय देह माहि करिते पारिला । बुझि एइ धरातल निर्वीर हइला ।।

रामचरितमानस—

अब जनि कोउ भाखै भटमानी । बीर बिहीन मही मैं जानी ।।

नारी सुलभ सहज भावना भी दोनों काव्यों में समान है । स्त्रियाँ विचार करती हैं । राम सीता का पति होने योग्य है ।

रामरसायण—

कोन पुण्यवती यत पुण्य करियाछे । तार भाग्ये हैमपति विधि लिखियाछे ।।
मार मन कहे शुन वचन आमार । राम योग्य नारी सीता जिने नाहि आर ।।

देह देह सखी तुमि कहिये उत्तम। सीता रामे बिवाह हइले हय सम॥
सीता सम राम राम सम सीता हय

रामचरितमानस—

देखि राम छबि कोउ एक कहई। जोगु जानकिहि यह बरु अहई॥
जौं सखि इन्हहि देख नरनाहू। पन परिहरि हठि करइ बिबाहू॥

कैकेयी मंथरा संवाद में दोनों का स्वर एक ही है। देवता सरस्वती से समान रूप से कैकेयी की मति भ्रष्ट करने के लिये प्रार्थना करते हैं। यदि राम वन नहीं जायेंगे तो देवताओं का शत्रु रावण कैसे मारा जायेगा।

रामरसायण—

रावन दोरात्मा तव नाशइ सकले। तार वध लागि राम प्रकट भूतले॥
किन्तु यदि ना हय प्रभुर वनवास। तबे तार मरण किरूपे हबे भाष॥

रामचरितमानस—

बिपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोइ आजु।
राम जाहिं बनराजु तजि होइ सकल सुर काजु॥

राम वनवास के समय राम-सीता संवाद राम-लक्ष्मण संवाद कौशल्या दशरथ कैकेयी एवं सुमित्रा आदि के विचार तुलसीदास एवं रामरसायण में समान हैं।

वनवास-काल में ग्रामीण नारियाँ सीता से राम लक्ष्मण के विषय में पूछती हैं। ये कौन हैं। सीताजी-आँखों के संकेत से ही उत्तर देती हैं। यह प्रसंग रामचरित मानस को अद्भुत सौन्दर्य प्रदान करता है। मानव भावनाओं का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण दोनों काव्यों में समान है। रामरसायण में भी यह प्रसंग तुलसी रामायण के अनुरूप ही है।

रामरसायण—

कोन कोन ग्रामे आसि मिले नारीगण।
दवि तारा राम सीता रूप नेत्र भरि। जानकीरे पुछे किछु मृदु मृदु करि॥
श्याम तनु याते येहु करेन गमन। चंद्रमुखि हय एइ तोमार केहन॥
जानकी उत्तर किछु ना कन वचने। किन्तु मृदु हास्य करि जानान नयने॥

रामचरितमानस—

दो० स्यामल गौर किसोर बर सुंदर सुषमा ऐन।
सर्बरीनाथ मुखु सरद सरोरुह नयन।
कोटि मनोज लजावन हारे। सुमुखि कहहु को आहिं तुम्हारे॥
सुनि सनेहमय मंजुल बानी। सकुचि सियमन महुँ मुसुकानी॥
तिन्हहि बिलोकि बिलोकति धरनी। [redacted] सकोच सकुचति बरबरनी॥
संकुचि सप्रेम बाल मृगनयनी। बोली मधुर बचन पिक बयनी॥

सहज सुभाय सुभग तन गोरे। नाम लखनु लघु देवर मोरे ॥
बहुरि बदन बिधु अंचल ढाँकी। पिय तन चितइ भौंह करि बाँकी ॥
खंजन मंजु तिरीछे नयननि। निज पति कहेउ तिन्हहि सिय सैननि ॥

वनगमन में सुमन्त्र को विदा करते हुए रामचन्द्र जी निवेदन करते हैं कि प्रत्येक को उनके गन्तव्य अनुसार मेरा निवेदन कर देना। भगवान राम का यह निवेदन दोनों रामायणों में समान है।

रामरसायण—

कहिलेन मधुर वचने सुमंत्र एखानहते फिरि जाओ अयोध्याते आर न थाकिब स्यन्दने।
वशिष्ठादि विप्रगणे, नृपतिर श्रीचरणे विस्तर प्रणाम जानाइबे।
कौशल्या कैकयसुता सुमित्रादि यतमाता सबे मोर प्रणति कहिबेन।
मोर शोके नरपति हबेन विह्वल मति कराइबे सतत सान्त्वन।
कहिबे मोदेर लागि ना हबेन शोक भागी मोरा वने बड़ सुखी मन।
मातामह पुरी हते शीघ्र आनि श्रीभरत अभिषेक करिबे आनि।
इह वचन बलतारे, जनकर सेवा करे, समभावेहय मातृगण ॥

रामचरितमानस—

बिकल बिलोकि मोहि रघुबीरा। बोले मधुर बचन धरि धीरा ॥
तात प्रनामु तात सन कहेहू। बार बार पद पंकज गहेहू ॥
करबि पायँ परि बिनय बहोरी। तात करिअ जनि चिंता मोरी ॥
बन मग मंगल कुसल हमारें। कृपा अनुग्रह पुन्य तुम्हारें ॥
छं० तुम्हरें अनुग्रह तात कानन जात सब सुखु पाइहौं।
प्रतिपालि आयसु कुसल देखन पाय पुनि फिरि आइहौं ॥
जननीं सकल परितोषि परि परि पायँ करि बिनती घनी ॥
तुलसी करेहु सोइ जतनु जेहिं कुसली रहहिं कोसल धनी ॥
सो० गुर सन कहब सँदेसु बार बार पद पदुम गहि।
करब सोइ उपदेसु जेहिं न सोच मोहि अवधपति ।१५१।
पुरजन परिजन सकल निहोरी। तात सुनाएहु बिनती मोरी ॥
सोइ सब भाँति मोर हितकारी। जातें रह नरनाहु सुखारी ॥
कहब सँदेसु भरत के आएँ। नीति न तजिअ राजपदु पाएँ ॥
पालेहु प्रजहि करम मन बानी। सेएहु मातु सकल सम जानी ॥

सुमन्त्र के अयोध्या आगमन पर राजा सीता के विषय में पूछते हैं कि हे सुमन्त्र सीता ने क्या कहा? सुमंत्र उत्तर देते हैं—हे राजन! जनकपुत्री सीता बहुत लज्जाशील है। उसने कुछ नहीं कहा केवल कातर मन से दोनों नयनों से आँसू

गिराते हुए केवल सबको प्रणाम कहा है। दोनों रामायणों में सीता की य
कातरोक्ति भी समान है।

रामरसायण—

जनक नृपति सुता, अतिशय लज्जायुता।
मोरे कोन कथा ना कहिला।
केवल कातर मने, थरथर पुलकने।
सभा कारे प्रणाम कहिला।

रामचरितमानस—

कहि प्रनामु कछु कहन लिय सिय भइ सिथिल सनेह।
थकित बचन लोचन सजल पुलक पल्लवित देह।।

लक्ष्मण के विषय में भी दोनों काव्यों में समान चरित्र-चित्रण है।

रामरसायण—

यद्यपि वारण करि याके रामचन्द्र कोपेते कहिला केह कुमार लक्ष्मण

रामचरितमानस—

लखन कहे कछु बचन कठोरा। बरजि राम पुनि मोहि निहोरा।।
बार बार निज सपथ दिवाई। कहबि न तात लखन लरिकाई।।

रामरसायण में अनेक ऐसे स्थल हैं जिनकी रामचरितमानस के भावों के साथ अद्भुत समानता है। सुमंत्र दशरथ को राम वनगमन के विषय में बताते हैं—

रामरसायण—

नृपशिरे मंत्रीवर प्रणति करिया। अधोमुखे दीड़ाइला कृताञ्जलि हइया।
नरपति एकाकि देखिया मंत्रीवरे। रामकोथा बलिया पड़िला भूमि परे।

रामचरितमानस—

देखि सचिव जय जय कहि कीन्हेउ दंड प्रनामु।
सुनत उठेउ व्याकुल नृपति कहु सुमंत्र कहँ रामु।

इस प्रकार अनेक उदाहरण दोनों में समान हैं।

रामरसायण—

प्रथम दिनेर कथा कहिबे ताथे यथा विपिनते यात्रा करि राम।
दिन अवसान काले तमसा नदीर कूले तरुतले करिला विश्राम।।

रामचरितमानस—

प्रथम बासु तमसा भयउ दूसर सुरसरि तीर।
नहाइ रहे जलपानु करि सिय समेत दोउ बीर।

यथा कलापक्ष यथा भावपक्ष यथा अनुप्रास विधान आदि में रामरसायण

पर तुलसी रामायण का प्रभाव है। कहीं-कहीं तो शब्दावली का भी अनुकरण किया गया है। जैसे—

रामरसायण—

ऐहेन कौपिन केश शिरे धर चीर। जटा बिरचन कैला गुह बीर॥

रामचरितमानस—

होत प्रात बटछीर मँगावा। जटामुकुट निज हाथ बनावा॥

जब सुमंत राजा को राम-वनवास का वर्णन सुना रहे थे उस समय रानियों ने रोना प्रारंभ कर दिया किन्तु वशिष्ठ ने आकर सबको सांत्वना प्रदान की।

रामरसायण—

एइ रूप महारानी करेन क्रंदन। केहि नारि ना पारये करिते सांत्वन॥
हेन काले सेइ स्थाने वशिष्ठ आसिया। उठा कराइला राणीजने आशा दिया॥
तबे नाना वाक्ये करि सबारे सांत्वन ।

रामचरितमानस—

तब बसिष्ठ मुनि समय सम कहि अनेक इतिहास।
सोक नेवारेउ सबहि कर निज बिग्यान प्रकास॥

भरत के ननिहाल से आने पर उनको अनेक अपशकुनों का आभास होता है। यह हृदयद्रावक दृश्य दोनों रामायणों में एक समान है।

रामरसायण—

न जाने हृदयमोर कंपे कि कारण। वाम बाहु वाम आँखि नाचे घनघन॥
कतकुर आमार आगे करये क्रन्दन

रामचरितमानस—

असगुन होहिं नगर पैठारा। रटहिं कुभाँति कुखेत करारा।
खर सियार बोलहिं प्रतिकूला। सुनि सुनि होइ भरतमन सूला।
श्रीहत सर सरिता बन बागा। नगरु बिसेषि भयावनु लागा॥

भरत के राजतिलक का भी वर्णन दोनों काव्यों में एक जैसा है।

रामरसायण—

पर दिन प्रभाते वशिष्ठ तपोधन। सभाते आइला संगे मंत्री प्रजागण।
भरते आनिला सेइ सभार भितरे। समय उचित कथ कहेन तादेरे।

रामचरितमानस—

सुदिनु सोधि मुनिबर तब आए। सचिव महाजन सकल बोलाए।
बैठे राजसभा सब जाई। पठए बोलि भरत दोउ भाई।

रामरसायण एवं तुलसी रामायण में कई-कई विभाग भरत-गुह संवाद वर्णन में अद्भुत समानता है। कहीं-कहीं रघुनंदन गोस्वामी तुलसीदासजी की नीतिमूलक

उपमामूलक शैली का भी अनुकरण करते हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है —

रामरसायण—

तिन जन रहिला परम सुखीमन। लक्ष्मण जानकी रहिला सुखरे।
विष्णु शची इन्द्र येन सुमेरु शिखरे

रामचरितमानस—

रामलखन सीता सहित सोहत परन निकेत।
जिमि बासव बस अमरपुर सची जयंत समेत।

रामरसायण में तुलसीदास जी के प्रभाव का वर्गीकरण दो प्रकार से हो सकता है —

१ रामरसायण में प्रकृति वर्णन तथा अनुप्रास विधान में तुलसीदासजी का प्रभाव है।

२ रघुनंदन गोस्वामी तुलसीदास जी के सर्वव्यापी भक्तिवाद से प्रभावित हैं। यद्यपि युग प्रभाव के कारण राम की कथा के आवरण में राधाकृष्ण की प्रेम लीला वर्णन करने लगते हैं। डा० दीनेशचन्द्र सेन भी हमारे मत का समर्थन करते हुए लिखते हैं 'तुलसीदास अपने दो बंगाली शिष्यों रघुनंदन और राममोहन को प्रेरणा प्रदान करते हैं किन्तु वे उनके उच्च धार्मिक दर्शन के धरातल पर स्थिर नहीं हो पाते हैं। संगीत की प्रणाली तुलसीदास की है किन्तु बंगाली कवि उस प्रणाली में अपने ही गीत गाते हैं[1]।'

राममोहन बंद्योपाध्याय[2]

डा० दीनेशचन्द्र सेन का मत है "राममोहन बंद्योपाध्याय की रामायण तुलसीदासजी की रामायण की ऋणी है जिससे बंगाली कवि ने कई रूपक लाक्षणिक प्रयोग ग्रहण किये हैं। यह हम पहले बता चुके हैं कि कवि अपनी प्रारंभिक कविताओं

---

१ Tulsidas inspires his two Bengali disciples Raghunandan and Rammohan. But they cannot stick to the pitch of his high strung religious philosophy The mode of music is Tulsidasa's, but the Bengali poets sing songs of their own in that mode.
B. R.

२ लेखक को राममोहन बंद्योपाध्याय की रामायण न तो पाण्डुलिपि रूप में बंगीय साहित्य परिषद तथा अन्य स्थान से प्राप्त हुई है न कोई प्रकाशित संस्करण प्राप्त हुआ है। जो कुछ सामग्री प्राप्त हुई है वह डा० दीनेशचन्द्र सेन के बंगभाषा ओ साहित्य हिस्ट्री आफ बंगाली लैंग्वेज और लिटरेचर बंगाली रामायण्स तथा बंग-साहित्य-परिचय द्वितीय भाग तथा श्री मणीन्द्र मोहन के बांग्ला साहित्य से प्राप्त हुई है।

में इस बात को स्वीकार करते हैं और अपनी श्रद्धांजलि कृत्तिवास और तुलसीदास दोनों महाकवियों को समान रूप से अर्पित करते हैं[१]। उनकी यह श्रद्धांजलि इस प्रकार है —

तुलसी दासेर पद करिया वंदन
प्रणमिया कृत्तिवास पंडितेर पाय।
श्रीराममोहन मित्र रचिल भाषाय।

अर्थात् तुलसीदास जी के चरणों की वंदना करके कृत्तिवास पंडित के चरणों में प्रणाम करके श्री राममोहन मित्र ने भाषा में (रामायण) रचना की।

राममोहन की रामायण पर तुलसीदास जी का प्रभाव माना क्यों गया है। डा० दीनेशचन्द्र सेन लिखते हैं "किन्तु मैं विश्वास करता हूँ कि बंगाली कवि ने भक्ति के ये सच्चे भाव वानर-देवता के प्रति तुलसीदास की रचना से प्राप्त किये हैं, जिन्होंने हनुमान एवं उनके साथियों की स्तुति की है, जो राम के लिए लड़े थे[२]। रामभक्त हनुमान का प्रसंग बंगाली रामायणों में नया है। कृत्तिवास की रामायण में यह प्रसंग है। किन्तु हनुमान को इष्ट-देव का स्थान तो तुलसीदास ही प्रदान करते हैं। तुलसीदास जी को रामायण लिखने की प्रेरणा हनुमानजी से ही प्राप्त हुई थी। तुलसीदास जी के परिवर्तीकालीन अठारहवीं उन्नीसवीं शताब्दियों के बंगला रामायणकारों को हनुमान स्तुति की परम्परा तुलसीदास जी से मिली है। राममोहन इसके अपवाद नहीं हैं। बंगाली रामायणकार तो कहीं-कहीं हनुमान और राम को एकरूपता प्रदान करते हैं—

मारुति सहित रामेर किंचित नाही भेद।

अर्थात् हनुमान के साथ राम का कुछ भी भेद नहीं है। राममोहन हनुमान से प्रार्थना करते हैं —

---

१ This Ramayana is indebted to Tulsidasa s work, from which Bengali poet borrows many metaphors and this we have already indicated. In this preliminary verses he admits this and pays his tribute of respect to Krithivasa and Tulsidas both

—B. R.

२. But I believe the Bengali poet derived the sentiments of such earnest devotion for the Ape god from Tulsidasa s work, which has hymns addressed to Hanuman and to his comrades who fought for Rama

—B R

रामायण—

दीर्घायु करह मोरे करुणा करिया ।
भाग्यवती धर्म्मा देह कृपा वितरिया ।
तव पद सेवि जेन सशोक हृदया ॥
सुसंतान देह मोरे करुणा-सदन ।
मोर वंश सेवे जेन तोमार चरण ॥

तुलसीदास जी भी रामचरितमानस में हनुमान की प्रशंसा करते हैं। स्वयं भगवान् रामचन्द्र के मुखारविंद से हनुमान की प्रशंसा करवाते हैं। विनय-पत्रिका में तो तुलसीदास हनुमान की बड़ी स्तुति करते हैं[1]।

रामोपासक राममोहन ने तुलसीदास जी की रामायण से रूपक या लाक्षणिक प्रयोग (Metaphor) अपनाये हैं। दोनों की वर्षा-वर्णन में समानता है। उदाहरण से स्पष्ट किया जाता है—

रामायण—

कुटीरे करेन वास कमल-लोचन । सीता कारणे सदा झोरे दुनयन ।
सान्त्वना करेन तबा सुमित्रा-संतान । तारमुखी राघवेर देहे रहे प्राण ।
आषाढ़ नवीन मेघ दिन दरशन । येमन सुन्दर श्यामरामेर बरन ।
घन घन घन गर्ज्जे अति घनरव । येमन रामेर धनु टंकारेर रव ।
रवे रवे सौदामिनि चमके गगने । येमन रामेर रूप झलकर मने ।
मयूर करये नृत्य सब मेघ हेरि । राम देखि उल्लास येमन हय सुखी ।
तदा जलधारा पड़े धरणी उपरे । सीतालागि येमन रामेर अश्रु झोरे ॥
सरसिज शोभाकर हैल सरोवरे । येमन शोभित राम हियार अंतरे ॥
मधु लागे पद्मे अलिवास करे मोदे । येमन मुनिगण राघवेर पदे ॥
जलपाने चातकेर तृषा दूरे जाय । रामपेये येमन दासगण सुख पाय ॥
पुलकित हये मेघ डाके घनेघन । येमन रामेर डाके नाम परायण ॥
नदी नद अति वेगे समुद्रे मिशाय । येमन रामेर पदे जीवगण धाय ॥
प्रचरित वृष्टिते पृथ्वीर ताप जाय । येमन रामेर नामे जीवतय पाय ॥

---

१ रामचरितमानस एवं विनय-पत्रिका आदि तुलसीदास जी के ग्रन्थों में हनुमान की महिमा वर्णित है।
देखिये—विनय-पत्रिका में पद संख्या २५ से ३६ में हनुमान स्तुति है। जैसे—
मंगल मूरति मारुत नंदन सकल अमंगल मूल-निकंदन।
पवनतनय-संतन हितकारी हृदय विराजत अवध बिहारी।— पं० ३६ वि० प०।

अगाध सलिले मीन हइल निर्भय। राम पेये वैष्णव निर्भये जीव रय॥
अविरत वृष्टिते पृथ्वीर ताप जाय। वैष्णव तापित राम नामेते जुड़ाय॥
(कृ० रा० प०, प्र० भा० पृ० १०४५)

गोस्वामी तुलसीदास जी का भी वर्षा-वर्णन नीतिमूलक रूपक शैली में रामचरितमानस के किष्किन्धाकाण्ड में इस प्रकार है —

फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई। सुख आसीन तहाँ द्वौ भाई॥
कहत अनुज सन कथा अनेका। भगति बिरति नृपनीति बिबेका॥
बरषा काल मेघ नभ छाए। गरजत लागत परम सुहाए॥
दो०—लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पेखि॥
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुँ देखि॥
घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥
दामिनि दमक रह न घन माहीं। खल के प्रीति जथा थिर नाहीं॥
बरषहिं जलद भूमि नियराए। जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ॥
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें। खल के बचन संत सह जैसें॥
छुद्र नदी भरि चलीं तोराई। जस थोरेहुँ धन खल इतराई॥
भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी॥
समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा॥
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई। होइ अचल जिमि जिव हरि पाई॥

तुलसीदास जी की शब्दावली का प्रभाव इस रामायण पर भले ही न हो, किन्तु उनकी उपमा रूपक या लाक्षणिक एवं नीतिमूलक काव्य-शैली का रामगोहन की रामायण पर प्रत्यक्ष प्रभाव है।

तुलसीदास जी के भक्तिवाद से बंगाली कवि बहुत प्रभावित हैं। यद्यपि बंगला रामायणकारों ने रामकथा के आवरण में कृष्ण एवं चैतन्य की लीला के चित्र अंकित किए हैं। किन्तु भक्ति-भावना की तीव्रता एवं गंभीरता उन कवियों में तुलसीदास जी से ही आयी है। तुलसीदास जी की तरह बंगाली रामायणकार केवल भक्ति चाहता है। प्रभु के चरणारविंदों का मकरंद पान ही भ्रमर भक्त का मनोरथ है जैसे—

भुक्तिर प्रार्थना नाहि करि तव स्थाने।
दीन भक्त हय तव नाम सुधा पाने॥

तुलनीय—

सकल कामना हीन जे राम भगति रसलीन।
नाम प्रेम पीयूष ह्रद तिन्हहु किए मनमीन॥

अन्त में कहा जा सकता है। इस ढंग पर तुलसीदास जी की कला का

रामायण—

दीर्घायु करह मोरे करुणा करिया।
भाग्यवती भार्या देह कृपा वितरिया।
सब पर देहि मोर सत्कीर्ति हउया॥
सुसंतान देह मोरे करुणा-सदन।
शेष यश देवे मोर तोमार चरण॥

तुलसीदास जी भी रामचरितमानस में हनुमान की प्रशंसा करते हैं। स्वयं भगवान् रामचन्द्र के मुखारविन्द से हनुमान की प्रशंसा करवाते हैं। विनय-पत्रिका में तो तुलसीदास हनुमान की बड़ी स्तुति करते हैं[1]।

रामोपासक राममोहन ने तुलसीदास जी की रामायण से रूपक या सांगरूपिक प्रयोग (Metaphor) अपनाये हैं। दोनों की वर्षा-वर्णन में समानता है। उदाहरण से स्पष्ट किया जाता है—

रामायण—

धूमोरे करेन वाक्य कमल-लोचन। सीता कारणे सदा झोरे दुनयन।
सान्त्वना करेन सदा सुमित्रा-संतान। तारगुणी रामेर देहे रहे प्राण।
आषाढ़ नवीन मेघ दिन बरषण। जेमन सुन्दर श्यामरा मेर बरण।
घन घन घन गर्जे अति भयंकर। जेमन रामेर धनु टंकारेर रव।
रये रये सौदामिनी चमके गगने। जेमन रामेर रूप तापसेर मने।
मयूर करये नृत्य सब मेघ वक्ति। राम देखि सज्जन जेमन हय सुखी।
सदा जलधारा पड़े धरणी उपरे। सीतालागि जेमन रामेर चक्षु झोरे॥
सरसिज शोभाकर हेन सरोवरे। जेमत शोभित राम सेवक अंतरे॥
मधु पाने मधुपे प्रतिशब्द करे भोरे। जेमत मुनिगण रामेर पदे॥
जलपाने चातकेर तृषा दूरे जाय। रामपेये जेमत वासना क्षयपाय॥
पुलकित हये मेघ डाके अनुक्षण। जेमत रामेर डाके नाम परायण॥
नदी नद प्रति देवे समुद्रे मिलाय। जेमत रामेर पदे जीवलय पाय॥
अवारित वृष्टिते पृथ्वीर ताप जाय। जेमत रामेर धये जीवलय पाय॥

---

१ रामचरितमानस एवं विनय-पत्रिका आदि तुलसीदास जी के ग्रन्थों में हनुमान की महिमा वर्णित है।
देखिये—विनय-पत्रिका में पद संख्या २५ से ३६ में हनुमान स्तुति है। जैसे—
मंगल मूरति मारुत नन्दन सकल अमंगल मूल-निकंदन।
पवनतनय-संतन हितकारी हृदय विराजत अवध विहारी।— सं० ३६ वि० प०।

अगाध सलिले मीन हइल निर्भय । राम पेये वैष्णव निर्भय जीव रय ।।
अविरत वृष्टिते पृथ्वीर ताप जाय । वैष्णव तापित राम नामेते जुड़ाय ।।
(कॉ० सा० प० प्र० मा०, पृ० ६०४५)

गोस्वामी तुलसीदास जी का भी वर्षा-वर्णन नीतिमूलक रूपक शैली में रामचरितमानस के किष्किन्धाकाण्ड में इस प्रकार है —

फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई । सुख आसीन तहाँ द्वौ भाई ।।
कहत अनुज सन कथा अनेका । भगति बिरति नृपनीति बिबेका ।।
बरषा काल मेघ नभ छाए । गरजत लागत परम सुहाए ।।
दो०—लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पेखि ।।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुँ देखि ।।
घन घमंड नभ गरजत घोरा । प्रिया हीन डरपत मन मोरा ।।
दामिनि दमक रह न घन माहीं । खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं ।।
बरषहिं जलद भूमि निअराएँ । जथा नवहिं बुध बिद्या पाएँ ।।
बूँद अघात सहहिं गिरि कैसें । खल के बचन संत सह जैसें ।।
छुद्र नदीं भरि चलीं तोराई । जस थोरेहुँ धन खल इतराई ।।
भूमि परत भा ढाबर पानी । जनु जीवहि माया लपटानी ।।
समिटि समिटि जल भरहिं तलावा । जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा ।।
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई । होइ अचल जिमि जिव हरि पाई ।।

तुलसीदास जी की पदावली का प्रभाव इस रामायण पर भले ही न हो किन्तु उनकी उपमा रूपक या आलंकारिक एवं नीतिमूलक काव्य-शैली का राममोहन की रामायण पर प्रत्यक्ष प्रभाव है।

तुलसीदास जी के भक्तिवाद से बंगाली कवि बहुत प्रभावित हैं। यद्यपि बँगला रामायणकारों ने रामकथा के आवरण में कृष्ण एवं चैतन्य की लीला के चित्र अंकित किए हैं। किन्तु भक्ति भावना की तीव्रता एवं गंभीरता उन कवियों में तुलसीदास जी से ही आयी है। तुलसीदास जी की तरह बंगाली रामायणकार केवल भक्ति चाहता है। प्रभु के चरणारविंदों का मकरंद पान ही भ्रमर भक्त का मनोरथ है जैसे—

मुनिवर प्रार्थना नाहि करि तवस्थाने ।
दीन मात हुम तव नाम सुधा पाने ।।

तुलनीय—

सकल कामना हीन जे राम भगति रसलीन ।
नाम प्रेम पीयूष हृद तिन्हहुँ किए मनमीन ।।

अन्त में कहा जा सकता है। इस ग्रंथ पर तुलसीदास जी की कृपा का

नीतिमूलक उपमात्मक काव्य शैली का एवं भावपक्ष की दृष्टि से भक्ति भावना का गंभीर प्रभाव है।

बंगाल में तुलसी रामायण के पठन पाठन की परम्परा पर्याप्त समय से प्रचलित है। किन्तु बंगला में तुलसी रामायण के अनुवादों की परम्परा आधुनिक काल में ही विशेष रही है। आधुनिक काल में समस्त तुलसी साहित्य का अनुवाद हुआ है। रामचरितमानस के तो कई अनुवाद अनेक विद्वानों द्वारा हुए हैं। संभवत अन्य रामायणों में तुलसीदास जी के क्षेपक भाषान्तरित होकर चले गए हैं। एक दो बंगला पाण्डुलिपियों में भी उनके कुछ पद मिलते हैं।[1]

वाल्मीकि की रामायण की तरह तुलसीकृत रामचरितमानस का प्रचार और विस्तार सारे भारत में रहा है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का राम साहित्य तुलसीदास के प्रभाव से अवश्य अनुप्राणित है।

तुलसीदास के परवर्ती बंगला रामायणकार भी उनकी रामचरितमानस से न्यूनाधिक रूप में प्रभावित हैं। जिस प्रकार नाभादास जी के भक्तमाल के सुमेरु गोस्वामी तुलसीदास जी हैं। उसी तरह वे राम-साहित्य के भी सम्राट हैं। भक्ति भावना उनके रामचरितमानस की प्रमुख विशेषता है। यह उनकी विश्व-साहित्य को अनुपम देन है।

अत उनकी भक्ति भावना की गंगा रामचरितमानस में अनेक बंगला विद्वानों साहित्यकारों और बंगला रामायणकारों ने गहरी डुबकियाँ लगाई हैं। स्वयं गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर भी उनके रामचरितमानस से काव्य सौन्दर्य और महिमा से अभिभूत होकर उनकी भूरि भूरि प्रशंसा और वंदना करते हैं। उनकी गोस्वामीजी के प्रति श्रद्धांजलि निम्न प्रकार है—वे नवीन दृष्टि से उसी पुरातन उपकरण को नया रूप देकर समस्त देश को प्रदान करते हैं। भक्ति द्वारा जिस व्याख्या से उन्होंने रामायण को नवीन रूप दिया है वह साहित्य को असाधारण दान है[2]। तथा—

देश के सर्वसाधारण के मानस पटल से तुलसीदास का अधिकार किसी भी काल में नहीं जायेगा। उनका दान स्थायी महान प्रतिभा का विकास लेकर काल के प्रभाव को अतिक्रमण कर चिरकाल देश को समृद्ध करेगा[3]।

---

१ श्री पंचानन मण्डल सम्पादित पुथि-परिचय द्वितीय खण्ड, पृ० २०६ २०७ देखिये।

२ तिनि नूतन दृष्टि दिये सेइ पुरातन उपकरणे के नूतन रूप दान करे परिवेषण करेछेन समस्त देश के। भक्तिद्वारा ये व्याख्याय तिनि रामायण के नूतन परिणति दियेछेन सेटी साहित्ये असाधारण दान। (र०वी० च०अ० पृ २२१)
देशेर सेइ सर्वजनेर चित्तलोके थेके तुलसीदासेर अधिकार कोनो कालेइ जाबे ना। तार दान स्थायी महान प्रतिभार विकाश निये कालेर प्रभाव के अतिक्रम करे चिरकाल देश के समृद्ध करबे। (र० वी० च० पं० पृ २२४)

२ भाषामूलक प्रभाव

हिन्दी का भाषामूलक प्रभाव बंगला पर परम्परागत रूप से चला आ रहा है। यह हिन्दी प्रभाव दो रूपों में प्राप्त होता है।

१ हिन्दी भाषा के रूप में
२ ब्रजबुलि के रूप में।

बंगला राम-साहित्य भी हिन्दी के प्रभाव का अपवाद नहीं है। श्री मणीन्द्र मोहन बसु का मत इस सम्बन्ध में इस प्रकार है—"रायबारों के अनेक प्राचीन पाला हिन्दी के सचि में ढले हुए मिलते हैं[१]।"

डा० सुकुमार सेन का मत है "मल्लराजा आदि की सभा में नागरी अक्षर और हिन्दी भाषा एवं उत्तर-पश्चिम के आचार-व्यवहार का प्रचलन था उन्हीं के संसर्ग में हिन्दी प्रभाव से रायबार कहानी की उत्पत्ति और विकास हुआ था[२]।"

अतः इस हिन्दी प्रभाव के बंगला रायबार[३] तथा पाला प्रत्यक्ष प्रमाण हैं। श्री फकीर रामदास का अंगदरायबार तथा रामनाटक श्री लोचन शर्मा का अंगद रायबार, श्री रामनारायण का अंगदरायबार तथा विभीषणरायबार, श्रीमतिराम का कुम्भकर्ण पाला आदि की रचना हिन्दी प्रभाव की साक्षी है। हिन्दी भाषा में रायबार रचयिताओं में फकीर रामदास अग्रतम हैं, लोचन शर्मा रामनारायण मतिराम प्रभृति ने उनके ही दृष्टान्तों का अनुसरण किया था।[४] अतः रायबारों पर किंचित विस्तारपूर्वक हिन्दी प्रभाव का दिग्दर्शन अपेक्षित है।

१ फकीर रामदास का अंगदरायबार (कलकत्ता विश्वविद्यालय पुथि संख्या २८१, तिथी १००८ साल १९०२ ई०) पर हिन्दी प्रभाव स्पष्ट करने के लिये एक उदाहरण आवश्यक है—

---

१ रायबारेर अनेकगुलि पाला भाषा हिन्दीते रचित देखिते पाओ या जाय। (बां० सा० पृ० २०१)

२ मल्ल राजादिगेर सभाय नागरी अक्षर हिंदी भाषा एवं उत्तरपश्चिम अंचले आचार-व्यवहार प्रचलित छिल। ताइ ए संसर्गेइ हिन्दीर प्रभावे रायबार काहिनीर उत्पत्ति एवं विकास हइयाछिल। (बां० सा० इ० प्र० खं० पृ० १७२)

३ रायबार शब्द का अर्थ है, राजद्वार, राजसभा का वर्णन तथा राजस्तुति। (बां० सा० इ० प्र० खंड पृ० १७२)
रायबार (संस्कृत राजवार्ता) (बां० सा०, पृ० १०२)

४ हिन्दी भाषाय रायबार रचयितृदिगेर मध्ये फकीर रामदास प्राचीनतम लोचन शर्मा रामनारायण मतिराम प्रभृति ताँहारइ दृष्टान्त अनुकरण करियाछिलेन। (बां० सा०, पृ० १०२)

अंगद को अंग धरि सब राक्षस पातिस माया।
शत शत रावण होंके बसठे परके अद्भुत काया।
अंगद बीर को अंग ताकाए सब कोइ रावण कुम्ह।
सब कोई मिस हुआ बिसारद मिस (हुस्त) नाम बस मुण्ड
(बां० सा० पृ० २०४)

तथा—

अद्भुत भेजमाय कम बात राजभवन कि बैठे।
कौन बाज तेरे काहा पिया का बिपबिवाह रण मेटे॥
कौन बाज तेरे मद्धुरिका (?) फूलो कामाचा है पातालें।
कौन बाज तेरे अल्पाया अम्बुज को बोलकसालें॥
(बां० सा० पृ० २०६)

अंगदरायबार के अतिरिक्त इनके रामनाटक ग्रंथ में भी कुछ हिन्दी प्रभाव है।

२ बोधाल शर्मा का अंगदरायबार (कलकत्ता विश्वविद्यालय २६८ संख्यक पुथि ११८१ ई०) इनके अंगदरायबार की भाषा का नमूना भी द्रष्टव्य है—

समुद्र पार होके राम आण्पा होके बयठा।
दोनों पर पुछि मिलने मायोमे रावण बोल्टो॥
अनुदि आम्बुवान मयचि मद्धू राजा के गुजरा।
सम्भजगार भीतुर हुमि चोपसार भेज बोलरा॥
—बां० सा०, पृ० २१० पुथि-परिचय पृ० ६६ म० ब०।

तथा—

लंका बीका देनके अंगद पालव फिरके आये।
सयल होंके बाये अंगद रामका दरसन पाये।
श्रीरामन में बैठे प्रभुजि लाम्बे माणिक्यबाघ।
दक्षिण चरण में बाई लक्ष्मण बामे आम्बूवान।
(बां० सा०, पृ० २११)

३ रामनारायण का अंगदरायबार (कलकत्ता विश्वविद्यालय २१२१ संख्यक पुथि १०६१ बंगाब्द) इसमें भी रावण-अंगद का प्रश्नोत्तर द्रष्टव्य है—

इह लंकक पड़-भिखड़ न मामोत बानव-दैत्य सुरासुर मेला।
तेरे बाप बड़े तुह बाप बड़े पुभि बाप बड़े तुह मानव बेला।
बहु लंक बलक किए शिव पुजन किन्नर को किए अंकर बोधी।
सुरहि नगर सुरेन्द्र पराजित सब जितहि बली बिरल मोधी।
(२०१ संख्यक पुथि)

अंगद का उत्तर—

अरे रावणहि नाम प्रकाश उच्चारण सुमरे लंका का अधिकारी ।
तेरे बुद्धि भ्रष्ट बुद्धि विरुद्धि न मानत जानकी मानहि नारी ॥

इनके विभीषण रायबार से भी हिन्दी प्रभाव का नमूना दृष्टव्य है ।

विभीषण रावने कहे हाथ जोरि ।
सुन नाथ मेरे बात लंकाधिकारी ॥
रघुवीर जलधिर तीर लैके बयठे ।
लंकेमें पयठे ।

(बां० सा० पृ० २१४)

४ मतिराम का कुंभकर्ण पाला में भी हिन्दी प्रभाव है—

मतिराम कर दास कहे
कुछ जाने होया तोम्हारे ।

(क० वि० २७११ सं० पुथि)

तथा—

कुंभकर्ण बोले कहो मोरे स्वामि ।
कोनो वीर आया बधेमे सीतारि ।
यदि इन्द्र आमत आसि बाट रूपें ।
फणी यदि आमत बधे नाग रूपें ।

(बां० सा०, पृ० २१६)

किन्तु प्रश्न उत्पन्न होता है इन राजभाटों ने हिन्दी में ही इस प्रकार की कविता क्यों की ? जिस प्रकार अन्य ग्रन्थों की रचना इन्होंने बंगला में की थी वैसे ही वे रायबारों और पालों की रचना भी बंगला में कर सकते थे । किन्तु श्री मणीन्द्रमोहन बसु इसका उत्तर इस प्रकार देते हैं "रायबारों की हिन्दी में रचना लोक-मनोरंजनार्थ हुई थी । अतः हिन्दी रायबारों से जनता का मनोरंजन होता था । सर्वप्रिय होने के कारण आवश्यकतावश भी हिन्दी को अपनाया जाता था ।"

हिन्दी में पद रचना की प्रवृत्ति भाषावालाओं में भी परिलक्षित होती है । हिन्दी संगीत का प्रभाव भी इसी काल से बंगला संगीत पर प्रारम्भ होता है, जिसका किंचित विवेचन आगे किया जायेगा ।

चतुर्थ अध्याय

आधुनिक काल (१८५०   )

१

हिन्दी बंगला का आदान प्रदान और पारस्परिक प्रभाव

बंगला के आधुनिक-साहित्य पर हिन्दी का थोड़ा प्रभाव है। इसके ऐतिहासिक एवं राजनीतिक कारण हैं। हिन्दी प्रभाव की जो गंगधारा बंगला साहित्य सागर में शताब्दियों से विलीन होती आई है, वह आधुनिक काल के मरुस्थल में आकर अकस्मात पूर्णरूप से समाप्त नहीं हुई है। किन्तु उस हिन्दी प्रभाव की धारा में अत्यन्त क्षीणता आ गई है। इस क्षीणता के कारण भारत में अंग्रेजों का प्रभुत्व योरपीय सभ्यता संस्कृति एवं साहित्य के गम्भीर प्रभाव तथा घनिष्ठ सम्पर्क के कारण बंगाल में जागृति और बंगला-साहित्य की अभूतपूर्व उन्नति है। आधुनिक युग में साधारणतया बंगला-साहित्य विशेषतया गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का प्रभाव आधुनिक भारत की समस्त भाषाओं के साहित्य पर पड़ा है। संस्कृतियों की तरह भाषाओं और साहित्यों की धारायें भी अविरल रूप से बहती रहती हैं। अतः परम्परा के कारण हिन्दी प्रदेश और बंग प्रदेश का सम्पर्क भी आधुनिक काल में रहा है। हिन्दी तथा बंगला में साहित्यिक तथा भाषामूलक पारस्परिक आदान प्रदान तथा प्रभाव भी रहे हैं।

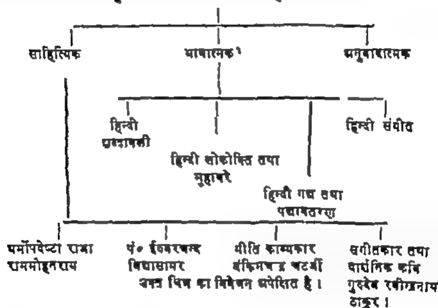
अतः परम्परागत हिन्दी प्रभाव की कड़ी आधुनिक-काल में भी अविच्छिन्न रही है। जैसा कि डॉ० सुधाकर चटर्जी का कथन है "ब्रिटिश राज में अनेक प्रभावशाली बंगाली हिन्दी के समर्थक रूप में आगे आये हैं। वे हिन्दी की सहायता से बंगला साहित्य की समृद्धि के लिए प्रयत्नशील थे।"[1]

उदाहरणतया आधुनिक काल में राजा राममोहनराय तरणीचरण मित्र ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, राजनारायण बसु, भूदेव मुखोपाध्याय केशवचन्द्र सेन बंकिमचन्द्र चटर्जी गुरुदेव [illegible] ठाकुर आचार्य क्षितिमोहन सेन श्री अमरवन्धु

१ [illegible] मसे यो धमे [illegible] ोद हिन्दीर समर्[illegible] [illegible]पे एसेछेन या
बाँग [illegible] र प्रयास पेये
र स्थान

भट्ट सतीशचन्द्र राय डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी इत्यादि अनेक बँगाली महानुभाव हिन्दी के समर्थक, उन्नायक एवं प्रचारक रहे हैं। ये इससे प्रभावित होकर हिन्दी साहित्य और भाषा की सहायता से बँगला भाषा तथा साहित्य की उन्नति एवं विकास में योगदान देते रहे हैं। महर्षि दयानन्द के आर्य समाज कांग्रेस के राष्ट्रीय आन्दोलन तथा हिन्दी या उर्दू भाषी हिन्दू तथा मुसलमान जनसंख्या के आवास प्रदान के कारण भी कुछ-कुछ हिन्दी का प्रसार एवं प्रभाव बँगला में रहा है। अतः निम्न मानचित्र के द्वारा इस प्रभाव को सरलता से समझा जा सकता है —

आधुनिक काल में बँगला पर हिन्दी प्रभाव



उक्त चित्र का विवेचन अपेक्षित है।

२

धर्मोपदेष्टा राजा राममोहनराय (१७७४–१८३३)

राजा राममोहनराय हिन्दी गद्य-साहित्य के निर्माताओं में एक प्रमुख व्यक्ति हैं। वे हिन्दी के प्रेमी पंडित और उन्नायक थे। उन्होंने हिन्दी गद्य के वेदान्त विषयक ग्रन्थों का अनुवाद करके प्रचार किया था। राजा राममोहनराय की हिन्दी गद्य रचना के विषय में पंडित रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी के

---

१ देखिये—परिशिष्ट में भाषात्मक तथा अनुवादात्मक प्रभाव के रूप में।

मत उल्लेखनीय हैं। शुक्ल जी लिखते हैं, संवत् १८७२ में उन्होंने वेदान्त सूत्रों के भाष्य का हिन्दी अनुवाद करके प्रकाशित कराया था। संवत् १८८६ में उन्होंने "बंगदूत[1]" नामक एक संवादपत्र भी हिन्दी में निकाला। राजासाहब की भाषा में एकआध जगह कुछ बंगलापन जरूर मिलता है, पर उसका रूप अधिकांश में वही है जो शास्त्रज्ञ विद्वानों के व्यवहार में आता था[2]।" किन्तु द्विवेदीजी राजासाहब की हिन्दी को बँगला मिश्रित नहीं मानते हैं। उनके विचार में वह व्याकरणसम्मत विशुद्ध हिन्दी है।[3] राजा राममोहनराय के पूर्ववर्ती फोर्ट विलियम कालेज के सेवक नौकरी के लिए हिन्दी लिखते थे किन्तु राजा राममोहनराय स्वेच्छा-प्रेरित सेवक थे।

राजा साहब द्वारा लिखित हिन्दी गद्य का नमूना उल्लेखनीय है—' जो सब ब्राह्मण सांग वेद अध्ययन नहीं करते सो सब व्रात्य हैं यह प्रमाण करने की इच्छा करके ब्राह्मण धर्मपरायण श्री सुब्रह्मण्य शास्त्री जी ने जो पत्र सांग वेदाध्ययन-हीन अनेक इस देश के ब्राह्मणों के समीप पठाया है उसमें देखा जो उन्होंने लिखा है—वेदाध्ययन-हीन मनुष्यों को स्वर्ग और मोक्ष होने सकता नहीं।[4] राजा राममोहन द्वारा विरचित सुब्रह्मण्य शास्त्री के सहित शास्त्रार्थ नामक हिन्दी ग्रन्थ का प्रसंग भी उल्लेखनीय है।

हिन्दी की सहायता से बँग साहित्य की अभिवृद्धि में योग देने वालों में राजा राममोहनराय एक प्रमुख स्थान के अधिकारी हैं।

२

पंडित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (१८२० १८९७ ई०)

पंडित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर हिन्दी के अच्छे पण्डित थे। वे बँगला गद्य के जनकों में से सर्वप्रधान हैं। फोर्ट विलियम कालेज में उनका सम्बन्ध हिन्दी पण्डितों के साथ घनिष्ठ रहा था। वहीं पर हिन्दी बेताल पच्चीसी नामक पुस्तक का अनुवाद किया था। वे स्वयं लिखते हैं कालिज आँव फोर्ट विलियम नामक विद्यालय के तत्कालीन विद्यार्थियों के लिए बँगला भाषा में हितोपदेश नामक पुस्तक निर्धारित थी उसकी रचना अच्छी नहीं थी। विशेषत उसके कई अंश दुरूह एवं असंलग्न थे। जिनसे तात्पर्य और अर्थ स्पष्ट नहीं होता था। उसके बदले में पुस्तक परिवर्तन करना उचित एवं आवश्यक समझ कर उक्त विद्यालय के अध्यक्ष महामत श्रीयुत मेजर जी० टी० मार्शल महोदय ने नई पुस्तक प्रस्तुत करने के लिए आदेश

1. बाँगला सामयिक पत्र पृष्ठ १० १८२ ४००।
2. हि० सा० इ०, पृ० ४२७।
3. आधुनिक हिन्दी साहित्ये बाँगलार स्थान, सामान्यतया द्वितीय परिच्छेद पृष्ठ १०-२१। विशेषतया हिन्दी गद्ये बाँगला पृ० ११ १७।
4. हि० सा० इ०, पृ ४२७।

किया। तदानुसार मैंने बैताल पच्चीसी नामक प्रसिद्ध हिन्दी पुस्तक का अवलम्बन करके यह ग्रंथ लिखा है[1]।

इस हिन्दी बैताल पच्चीसी का बंगानुवाद बैताल पंचविंशति के नाम से हुआ था। छात्रों और जनता में यह पुस्तक बहुत प्रसिद्ध हो गयी थी। पंडित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने इस पुस्तक के निर्माण में न तो संस्कृत का आश्रय लिया न अंगरेजी का। उन्होंने हिन्दी की ही बैताल-पच्चीसी[2] का अवलम्बन लेकर बंगला साहित्य की अभिवृद्धि की।

४

गीतिकाव्यकार बंकिमचन्द्र चटोपाध्याय (१८३८–१८९४ ई०)

बंकिम बाबू की रचनाओं में हिन्दी प्रभाव की किंचित झलक है। प्रमुखतया उनके दो-चार हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के पद मृणालिनी नाटक एवं बंगदर्शन में प्राप्त होते हैं। ब्रजबुलि परंपरागत रूप से हिन्दी की अखिल भारतीय प्रवृत्ति का वाहन रही है। अतः आधुनिक काल में भी इसका सूत्र अविच्छिन्न रहा है। बंकिम बाबू के कुछ पदों के उदाहरण देकर इसको इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है—

'मथुरावासिनि मधुरहासिनि श्याम विलासिनि-रे।
कहलो नागरि, गेहु परिहरि, काहे विवासिनी-रे॥
वृन्दावन धन गोपिनी मोहन काहे तु तेयागी-रे।
देश देश पर सो श्यामसुन्दर, फिरे तुया लागि रे॥
विकच नलिने, यमुना-पुलिने, बहुत पियासा रे।
चन्द्रमा शालिनी, या मधुयामिनी, नामिटल आशा रे॥

१ कालेज ऑव फोर्ट विलियम नामक विद्यालये तत्रत्य छात्रवर्गेर पाठार्थे बांगला भाषाय हितोपदेश नामे ये पुस्तक निर्दिष्ट छिल, ताहार रचना अति कदर्य। विशेषतः कोन-कोन अंश एरूप दुरूह ओ असंलग्न ये कोन क्रमे अर्थबोध ओ तात्पर्य ग्रह हइया उठेना। तत्परिवर्ते पुस्तकान्तर प्रचलित करा उचित ओ आवश्यक विवेचना करिया उक्त विद्यालयेर अध्यक्ष महामति श्रीयुत मेजर जी० टी० मार्शल महोदय कोन नूतन पुस्तक प्रस्तुत करिते आदेश देन। तदनुसारे आमि बैतालपच्चीसी नामक प्रसिद्ध हिन्दी पुस्तक अवलम्बन करिया एइ ग्रन्थ लिखियाछिलाम।

—बैताल-पंचविंशति विज्ञापन पृ० १।

२ १८०५ ई० में तारिणीचरण मित्र ने इसका संपादन किया था।

—विद्यासागर ग्रन्थावली पृ० ६।

सामिया समरि, कहतो मु बरि कोहा मिले वेला रे।
मुनि यायाये भति बाजवि मुरली बने एका-रे॥

(मृणालिनी पृ० ११, १४)

इस प्रकार मृणालिनी में एक पद और है—

"पास बात तब माठ फिरि फिरनु बहु बश।
कोहा मिर कान्त बरन कोहा राब वेश॥
हिया पर रोपनु पंकज केनु मतन भारि।
सोहि पंकज कोहा मोर, कोहा मृणाल हाम्मारि॥"

(मृणालिनी पृ० १६)

बंकिम बाबु के हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के चार पद बंगदर्शन में भी प्राप्त होते हैं। उनमें से भी उदाहरण देना अपेक्षित है¹—

देख सखी नागर राजे। मो मुख सुन्दर हेरि बिधुबर बसरे मुकाम साजे
मरकत भाँति जिमि तनु कांति भूषित बनफूल साजे
बनमे घुरंघे तरल तरी, नूपुर रनु रनु बाजे। ब्रजनि मेघ वृन्दावने मदन विराजे।

तथा—

कुंतल छतबन सरे भीर लावत बपवन नवबधू साजे।
कुसुम सभिवत मुकुल परिमल मुरल मलये बलाये॥
केतकी हासत पिककुल गाजत मंगलमायनी चाले।
ताहे सहि पुन पुन ब्रजपति। निकरब कर लोचन सार करत विचार।
कैसे जीयब सखि प्राण हमार।

बंकिम बाबु ने हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि में रचना करने की सफल चेष्टा की है। अतः उनका बंगला गीतिकाव्य को यह योगदान है।

---

१ शेष पद इस प्रकार हैं—

अमर विकासित मधुरिम हासे, सारि रमणीगण प्रमद फसि।
× × ×
सखिरे कैसे राजय मन कुलशील माने।

तथा—

मधुर मुरलीधर तान बरिखे मुरछत मुनि मन बारत बरिखे।
× × ×
झमझम बोले पीरिति हिलोके कुसल रसे प्रतिपाद,
सखि कैसे रहब घरे मानवे घाद॥

—बंग दर्शन पृ० खण्ड पृ० ८१, १२८१ बंगाब्द।

५

संगीतकार तथा दार्शनिक कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर (१८६१ से १९४१ ई०)

आधुनिक बँगला-साहित्यकारों में सम्भवत सर्वाधिक हिन्दी प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर ही पड़ा है। गुरुदेव पर यह हिन्दी प्रभाव अनेक स्रोतों से पड़ा है। प्रमुखतया यह हिन्दी प्रभाव त्रिमुखी है। रवीन्द्र-संगीत (गीतिकाव्य) के उद्भव और विकास में हिन्दी संगीत का आश्चर्यजनक प्रभाव है। गुरुदेव ने छदम नाम भानुसिंह ठाकुर रख कर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' का सृजन किया था। यह 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' परम्परा प्राप्त ब्रजबुलि भाषा में विरचित है। ब्रजबुलि के माध्यम से भी कुछ हिन्दी प्रभाव गुरुदेव पर पड़ा है। गुरुदेव हिन्दी-संत साहित्य के अत्यधिक प्रशंसक और पुजारी रहे हैं। अत इस त्रिमुखी हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है :—

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव।
२ भाषा सम्पत (ब्रजबुलि का) प्रभाव।
३ हिन्दी-संत-साहित्य का प्रभाव।

उक्त वर्गीकरण का इस प्रकार सुदर्शन किया जा सकता है।

१ हिन्दी सगीत का प्रभाव

रवीन्द्र संगीत के निर्माण में हिन्दी-सगीत का योगदान अनुपम है। इस तथ्य को गुरुदेव ने मुक्तकण्ठ से अनेक बार स्वीकार किया है जिस परिवार में उन का जन्म हुआ था उसमें हिन्दी-सगीत की परम्परा चली आ रही थी। क्योंकि महात्मा राममोहनराय ने शास्त्रीय हिन्दी संगीत के अनुकरण पर ब्रह्म संगीत का सूत्रपात किया था[1]। अतएव ब्रह्म-समाज और गुरुदेव के पूज्य पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा पैतृक-संपत्ति के रूप मे प्राप्त हुई है।

श्री शान्तिदेव घोष का मत है 'गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं ही उच्चांग[2] हिन्दी संगीत के विशेष भक्त थे। सुना जाता है जोड़ाबागान स्ट्रीट में एक मकान किराये पर लेकर उस्ताद रखकर गाना-बजाना करते थे। बाल्यकाल में साहब मास्टर के पास पियानो सीखा करते थे। मोटे रूप में वे गा सकते थे। हिन्दी गीतों के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत उनका ज्ञान स्पष्ट था। उनके द्वारा रचित प्रत्येक

---

१ हिन्दी उच्च संगीतेर अनुसरणे ब्राह्मसंगीतेर सूत्रपात करेन महात्मा राममोहन राय। —रवीन्द्र-संगीत, पृ० ४०।

२ शास्त्रीय हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत।

सालिग्रा समरि, कहतो सु बरि कोंहा मिले देखा-रे।
सुनि मायावे बलि बाजयि मुरली बने एका रे ॥

(मृणालिनी पृ० १३, १४)

इस प्रकार मृणालिनी में एक पद और है—

"माह बाह तह माठ फिरि फिरनु बहु देश।
काँहा मेर कान्त बरन काँहा राज वेश ॥
हिया पर रोपनु पंकज कँनु यतन भारि।
सोहि पंकज काँहा मोर काँहा मृणाल हामारि ॥"

(मृणालिनी पृ० १६)

बंकिम बाबू के हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के चार पद बंगदर्शन में भी प्राप्त होते हैं। उनमें से दो उदाहरण देना अपेक्षित है[1]—

देख सखी श्यामर राजे। श्री मुख सुन्दर हेरि विधुवर बसरे मुकाय लाजे
मरकत श्रोणि जिनि तनु काँति भूषित बनफूल साजे
चरने नुपुर तरल तरी नूपुर रनु रनु बाजे। तवनि नव वृन्दावने मदन विराजे।

तथा—

फुटल मलयन सरे धीर सावन उपवन नववधू साजे।
फुटल अलिकुल गुंजत परिमल फुटल मलये बातासे ॥
केतकी हासल पिककुल बासल मंजलमाधवी माधे।
ताहे सहि पुन पुन ब्रजपति। मिकवन कर लोचन ग्रर करत विचार।
कैसे चौवन राखि प्राण हमार।

बंकिम बाबू ने हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि में रचना करने की सफल चेष्टा की है। अतः उनका बंगला गीतिकाव्य को यह योगदान है।

---

१ शेष पद इस प्रकार हैं—

अम्बर विकासित मधुरिम हासे सारि रजनीमय प्रमद भाति।
× × ×
सखिरे कैसे राखब मन कुलशील माने।

तथा—

मधुर मुरलीधर तान धरिके मुरछत मुनि मन आरत धरिये।
× × ×
डमसम कोके पीरिति हिलीले फुटल रसे प्रतिपाद
सखि कैसे रहब करे मानवे पाइ ॥

—बंग दर्शन द्वि खण्ड पृ० ८१ १२८१ बंगाब्द।

५

संगीतकार तथा दार्शनिक कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(१८६१ से १९४१ ई०)

आधुनिक बंगला-साहित्यकारों में संभवतः सर्वाधिक हिन्दी प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर ही पड़ा है। गुरुदेव पर यह हिन्दी प्रभाव अनेक स्रोतों से पड़ा है। प्रमुखतया यह हिन्दी प्रभाव त्रिमुखी है। रवीन्द्र-संगीत (गीतिकाव्य) के उद्गम और विकास में हिन्दी संगीत का आश्चर्यजनक प्रभाव है। गुरुदेव ने प्रथम नाम भानुसिंह ठाकुर रख कर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' का सृजन किया था। यह 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' परम्परा प्राप्त ब्रजबुलि भाषा में विरचित है। ब्रजबुलि के माध्यम से भी कुछ हिन्दी प्रभाव गुरुदेव पर पड़ा है। गुरुदेव हिन्दी-संत साहित्य के अत्यधिक प्रशंसक और पुजारी रहे हैं। अतः इस त्रिमुखी हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है :—

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव।
२ भाषा रूपगत (ब्रजबुलि का) प्रभाव।
३ हिन्दी-संत-साहित्य का प्रभाव।

उक्त वर्गीकरण का इस प्रकार हृदयंगम किया जा सकता है।

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव

रवीन्द्र संगीत के निर्माण में हिन्दी-संगीत का योगदान अनुपम है। इस तथ्य को गुरुदेव ने मुक्तकण्ठ से अनेक बार स्वीकार किया है जिस परिवार में उन का जन्म हुआ था उसमें हिन्दी-संगीत की परम्परा चली आ रही थी। क्योंकि महात्मा राममोहनराय ने शास्त्रीय हिन्दी संगीत के अनुकरण पर ब्रह्म-संगीत का सूत्रपात किया था[1]। अतएव ब्रह्म-समाज और गुरुदेव के पूज्य पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा पैतृक-संपत्ति के रूप में प्राप्त हुई है।

श्री शान्तिदेव घोष का मत है 'गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं ही उच्चांग[2] हिन्दी संगीत के विशेष भक्त थे। सुना जाता है चीत्पुर स्ट्रीट में एक मकान किराये पर लेकर उस्ताद रखकर गाना-बजाना करते थे। बाल्यकाल में साहब मास्टर के पास पियानो सीखा करते थे। मोटे रूप में वे गा सकते थे। हिन्दी गीतों के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत उनका ज्ञान स्पष्ट था। उनके द्वारा रचित प्रत्येक

---

१ हिन्दी उच्च संगीतेर अनुसरणे ब्रह्मसंगीतेर सूत्रपात करेन महात्मा राममोहन राय।
—रवीन्द्र-संगीत पृ० ४०।

२ शास्त्रीय हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत।

सांगिया समरि, कहतो पु वरि काँहा मिले देखा रे।
भुनि यामाये यदि बाजयि मुरली यम एका-रे ॥

(मृणालिनी पृ० ११, १४)

इस प्रकार मृणालिनी में एक पद और है—

'याट बाट तट माठ फिरि फिरनु बहु देश।
काँहा मेरे कान्त वरण काँहा राज वेश ॥
हिया पर रोपनु पंकज कँनु सतम भारि।
सोहि पंकज काँहा मोर, काँहा मृणाल हामारि ॥"

(मृणालिनी पृ० १६)

बंकिम बाबू के हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के चार पद बंगदर्शन में भी प्राप्त होते हैं। उनमें से भी उदाहरण देना अपेक्षित है [1]—

देख सखी नागर राजे। ओ मुख सुन्दर हेरि विधुवर लजते मुखाम साजे
मरकत भाँति जिनि तनु कांति भूषित वनफूल साजे
चलने नुपूरे तरल तरंगे नूपुर रुनु रुनु बाजे। सजनि नव वृन्दावने मदन विराजे।

तथा—

फूलल मालदल सरे भोर सावल उपवन नवमधु साजे।
फूलल मल्लिदल मुकुल-परिमल फूलल मलये बाताये ॥
किंशुकी हासल पिककुल भासल मंगलमालती भासे।
ताहे सहि पुन पुन ब्रजपति। निकरल कर लोचन भर करत विचार।
कैसे जीयब सखि प्राण हमार।

बंकिम बाबू ने हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि में रचना करने की सफल चेष्टा की है। अतः उनका बँगला गीतिकाव्य को यह योगदान है।

---

1 शेष पद इस प्रकार हैं—

मधुर विकासित मधुरिम हासि, धारि रमणीगण प्रमद कलि।
× × ×
सखिरे कैसे राखब मन कुलशील मामे।

तथा—

मधुर मुरलीधर तान बरिखे मुरछल भूमि मन बारल बरिखे।
× × ×
झमझम डोले पीरिति हियीके फूलल रसे मतिगाइ
बलि कैसे रहब घरे माधवे छाड़ ॥

—बंग दर्शन द्वि० खण्ड पृ० ८६, १२८१ बंगाब्द।

५
संगीतकार तथा दार्शनिक कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(१८६१ से १९४१ ई०)

आधुनिक बंगला-साहित्यकारों में संभवतः सर्वाधिक हिन्दी प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर ही पड़ा है। गुरुदेव पर यह हिन्दी प्रभाव अनेक स्रोतों से पड़ा है। प्रमुखतया यह हिन्दी प्रभाव त्रिमुखी है। रवीन्द्र-संगीत (गीतिकाव्य) के उद्भव और विकास में हिन्दी संगीत का आश्चर्यजनक प्रभाव है। गुरुदेव ने प्रथम नाम भानुसिंह ठाकुर रख कर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' का सृजन किया था। यह 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' परम्परा प्राप्त ब्रजबुलि भाषा में विरचित है। ब्रजबुलि के माध्यम से भी कुछ हिन्दी प्रभाव गुरुदेव पर पड़ा है। गुरुदेव हिन्दी-संत साहित्य के अत्यधिक प्रशंसक और पुजारी रहे हैं। अतः इस त्रिमुखी हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है:—

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव।
२ भाषा रूपगत (ब्रजबुलि का) प्रभाव।
३ हिन्दी-संत-साहित्य का प्रभाव।

उक्त वर्गीकरण का इस प्रकार सुसंबद्ध किया जा सकता है।

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव

रवीन्द्र संगीत के निर्माण में हिन्दी-संगीत का योगदान अनुपम है। इस तथ्य को गुरुदेव ने मुक्तकण्ठ से अनेक बार स्वीकार किया है जिस परिवार में उन का जन्म हुआ था उसमें हिन्दी-संगीत की परम्परा चली आ रही थी। क्योंकि महात्मा राममोहनराय ने शास्त्रीय हिन्दी संगीत के अनुकरण पर ब्रह्म संगीत का सूत्रपात किया था[1]। अतएव ब्रह्म-समाज और गुरुदेव के पूज्य पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा पैतृक-संपत्ति के रूप में प्राप्त हुई है।

श्री शान्तिदेव घोष का मत है, 'गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं ही उच्चांग[2] हिन्दी संगीत के विशेष भक्त थे। सुना जाता है जीड़न स्ट्रीट में एक मकान किराये पर लेकर उस्ताद रखकर गाना-बजाना करते थे। बाल्यकाल में साहब मास्टर के पास पियानो सीखा करते थे। मोटे रूप में वे गा सकते थे। हिन्दी गीतों के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत उनका ज्ञान स्पष्ट था। उनके द्वारा रचित प्रत्येक

१ हिन्दी उच्च संगीतेर अनुसरणे ब्रह्मसंगीतेर सूत्रपात करेन महात्मा राममोहन राय। —रवीन्द्र-संगीत, पृ० ४०।

२ शास्त्रीय हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत।

शांतिभरा समरि कहतो नु हरि कोहा मिले देखा रे ।
मुनि मायाये चलि, बाजयि मुरली, बने एका-रे ॥
(मृणालिनी पृ० १३, १४)

इस प्रकार मृणालिनी में एक पद और है—

"याव याव तव माठ फिरि फिरनु बहु देश ।
कोहा मेर कान्त बरन कोहा राज वेश ॥
हिया पर रोपनु पंकज कँनु यतन भारि ।
सोहि पंकज कोहा मोर, कोहा मृणाल हामारि ॥'
(मृणालिनी पृ० १५)

बंकिम बाबू के हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के चार पद बंगदर्शन में भी प्राप्त होते हैं। उनमें से भी उदाहरण देना अपेक्षित है[१]—

देख सखी नागर राजे। जो मुख सुन्दर हेरि विधुवर लाजे मुकाय लाजे
मरकत काँति जिनि तनु काँति भूषित बनफूल साजे
चरने नूपुर तरल तरंगे, नूपुर रुनु रुनु बाजे। सजनि नव वृन्दावने मदन बिराजे।

तथा—

कुसुम सतदल भरे मोर, सावल अपवन नवमधु साजे।
कुसुम मल्लिका मुकुल परिमल कुसुम मलये बासाले ॥
केतकी हासत पिककुल भासत अंगसमावली भाखे।
ठाहे सहि पुन पुन बनपति। निकरन कर सोभन घर करत विचार।
कैसे बीतब सखि प्राण हमार।

बंकिम बाबू ने हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि में रचना करने की सफल चेष्टा की है। अतः उनका बंगला गीतिकाव्य को यह योगदान है।

---

१ शेष पद इस प्रकार है—

अमर विकासित मधुरिम हासे, सारि रमणीमन प्रमद फाँसे।

× × ×

सखिरे कैसे राखब मन कुलशील माने।

तथा—

मधुर मुरलीवर तान धरिबे मुरछत मुनि मन धारत धरिबे।

× × ×

झमझम डोले बीरिसि हिलोले कुसुम रसे मतिपाए
सखि कैसे रहब घरे मानबे साए ॥

—बंग दर्शन पृ० खण्ड पृ० ८५, १२८१ बंगाब्द।

५

संगीतकार तथा दार्शनिक कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(१८६१ से १९४१ ई०)

आधुनिक बँगला-साहित्यकारों में संभवतः सर्वाधिक हिन्दी प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर ही पड़ा है। गुरुदेव पर यह हिन्दी प्रभाव अनेक स्रोतों से पड़ा है। प्रमुखतया यह हिन्दी प्रभाव त्रिमुखी है। रवीन्द्र-संगीत (गीतिकाव्य) के उद्भव और विकास में हिन्दी संगीत का आश्चर्यजनक प्रभाव है। गुरुदेव ने प्रथम नाम भानुसिंह ठाकुर रख कर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' का सृजन किया था। यह 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' परम्परा प्राप्त ब्रजबुलि भाषा में विरचित है। ब्रजबुलि के माध्यम से भी कुछ हिन्दी प्रभाव गुरुदेव पर पड़ा है। गुरुदेव हिन्दी-संत साहित्य के अत्यधिक प्रशंसक और पुजारी रहे हैं। अतः इस त्रिमुखी हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है :—

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव।
२ भाषा पक्ष (ब्रजबुलि का) प्रभाव।
३ हिन्दी-संत-साहित्य का प्रभाव।

उक्त वर्गीकरण का इस प्रकार हृदयंगम किया जा सकता है।

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव

रवीन्द्र संगीत के निर्माण में हिन्दी-संगीत का योगदान अनुपम है। इस तथ्य को गुरुदेव ने मुक्तकण्ठ से अनेक बार स्वीकार किया है जिस परिवार में उन का जन्म हुआ था उसमें हिन्दी-संगीत की परम्परा चली आ रही थी। क्योंकि महात्मा राममोहनराय ने शास्त्रीय हिन्दी संगीत के अनुकरण पर ब्रह्म संगीत का सूत्रपात किया था[१]। अतएव ब्रह्म समाज और गुरुदेव के पूज्य पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा पैतृक-संपत्ति के रूप में प्राप्त हुई है।

श्री शान्तिदेव घोष का मत है 'गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं ही उच्चांग[२] हिन्दी संगीत के विशेष भक्त थे। सुना जाता है बीडन स्ट्रीट में एक मकान किराये पर लेकर उस्ताद रखकर गाना-बजाना करते थे। बाल्यकाल में साहब मास्टर के पास पियानो सीखा करते थे। मोटे रूप में वे गा सकते थे। हिन्दी गीतों के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत उनका ज्ञान स्पष्ट था। उनके द्वारा रचित प्रत्येक

१ हिन्दी उच्च संगीतेर अनुसरणे ब्रह्मसंगीतेर सूत्रपात करेन महात्मा राममोहन राय। —रवीन्द्र-संगीत, पृ० ४०।

२ शास्त्रीय हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत।

सारिखया समरि, कहतो तु हरि कोंहा मिले बेला रे।
मुनि यामाये सखि बाजयि मुरली बने एका-रे ॥
(मृणालिनी पृ० ११, १४)

इस प्रकार मृणालिनी में एक पद और है—
"साद बास सत माठ फिरि फिरनु बहु देश।
कोंहा मेरे कान्त बरज कोंहा राज बेश ॥
हिया पर रोपनु पंकज कैनु मदन भारि।
सोहि पंकज कोंहा मोर कोंहा मृणाल हामारि ॥"
(मृणालिनी पृ० १६)

बंकिम बाबू के हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि के चार पद बंगदर्शन में भी प्राप्त होते हैं। उनमें से भी उदाहरण देना अपेक्षित है[१]—

देख सखी नागर राजे। ओ मुख सुन्दर हेरि बिधुवर बलये मुकाय लाजे
मरकत माति जिमि तनु कांति भूषित बनफूल साजे
चलने मुरने तरल तरगी नूपुर रुनु झुनु बाजे। सजनि तब वृन्दावने मदन बिराजे।

तथा—
फुटल मालबन सरे ओर साजल उपबन नवबधू साजे।
फुटल मल्लिका मुकुल-परिमल फुटल मलये वातासे ॥
केतकी हासल मिलफूल मायल मंगलमायवी भासे।
ताहे सहि पुन पुन डकपति। निकस कार लोचन पर करत बिचार।
कैसे बीवब सखि प्राण हमार।

बंकिम बाबू ने हिन्दी मिश्रित ब्रजबुलि में रचना करने की सफल चेष्टा की है। अत उनका बँगला गीतिकाव्य को यह योगदान है।

१ शेष पद इस प्रकार हैं—
प्रबर बिकाशित मधुरिम हासे, सारि रमणीगण प्रमद फसि।
× × ×
सखिरे कैसे राजत ब्रज कुलशील माने।

तथा—
मधुर मुरलीधर तान बरिखे सुरसत मुनि मन आरत बरिखे।
× × ×
डगमग डोले पीरिति हिलोले फुटल रसे अतिपाइ
सखि कैसे रहब घरे मानबे छाइ ॥
—बंग दर्शन तृ० खण्ड पृ० ८१ १२८१ बैसाख।

५

संगीतकार तथा दार्शनिक कवि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर
(१८६१ से १९४१ ई०)

आधुनिक बंगला-साहित्यकारों में संभवतः सर्वाधिक हिन्दी प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर ही पड़ा है। गुरुदेव पर यह हिन्दी प्रभाव अनेक स्रोतों से पड़ा है। प्रमुखतया यह हिन्दी प्रभाव त्रिमुखी है। रवीन्द्र-संगीत (गीतिकाव्य) के उद्गम और विकास में हिन्दी संगीत का आश्चर्यजनक प्रभाव है। गुरुदेव ने छद्म नाम भानुसिंह ठाकुर रख कर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' का सृजन किया था। यह 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' परम्परा प्राप्त ब्रजबुलि भाषा में विरचित है। ब्रजबुलि के माध्यम से भी कुछ हिन्दी प्रभाव गुरुदेव पर पड़ा है। गुरुदेव हिन्दी-संत साहित्य के अत्यधिक प्रशंसक और पुजारी रहे हैं। अतः इस त्रिमुखी हिन्दी प्रभाव का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है :—

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव।
२ भाषा रूपगत (ब्रजबुलि का) प्रभाव।
३ हिन्दी-संत-साहित्य का प्रभाव।

उक्त वर्गीकरण का इस प्रकार हृदयंगम किया जा सकता है।

१ हिन्दी संगीत का प्रभाव

रवीन्द्र संगीत के निर्माण में हिन्दी-संगीत का योगदान अनुपम है। इस तथ्य को गुरुदेव ने मुक्तकण्ठ से अनेक बार स्वीकार किया है जिस परिवार में उन का जन्म हुआ था उसमें हिन्दी-संगीत की परम्परा चली आ रही थी। क्योंकि महात्मा राममोहनराय ने शास्त्रीय हिन्दी संगीत के अनुकरण पर ब्रह्म संगीत का सूत्रपात किया था[१]। अतएव ब्रह्म-समाज और गुरुदेव के पूज्य पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा पैतृक-संपत्ति के रूप में प्राप्त हुई है।

श्री शान्तिदेव घोष का मत है गुरुदेव के पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर स्वयं ही उच्चांग[२] हिन्दी संगीत के विशेष भक्त थे। सुना जाता है बीडन स्ट्रीट में एक मकान किराये पर लेकर उस्ताद रखकर गाना-बजाना करते थे। बाल्यकाल में साहब मास्टर के पास पियानो सीखा करते थे। मोटे रूप में वे गा सकते थे। हिन्दी गीतों के सम्बन्ध में थोड़ा बहुत उनका ज्ञान स्पष्ट था। उनके द्वारा रचित अनेक

१ हिन्दी उच्च संगीतेर अनुसरणे ब्रह्मसंगीतेर सूत्रपात करेन महात्मा राममोहन राय। —रवीन्द्र-संगीत, पृ० ४०।

२ शास्त्रीय हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत।

बँगला उपासना संगीत हिन्दी-उच्चांग संगीत के अनुकरण पर विरचित है। उपासना और उत्सवों के लिये गीत उच्चांग हिन्दी संगीत की पद्धति को ही उपयुक्त मान कर रचे गये थे। अधिक क्या कहें वे इस परिपाटी को ही प्रधानता प्रदान करते थे। उनकी इच्छा और प्रभाव से ही उनके पुत्र द्विजेन्द्रनाथ सत्येन्द्रनाथ और ज्योतिरिन्द्रनाथ ने उच्चांग हिन्दी संगीत के अनुकरण पर बहुत ब्रह्म-संगीत की रचना की थी। उसमें भी ध्रुपद की संख्या ही अधिक थी।[१]

अतएव गुरुदेव को भी यह हिन्दी संगीत की परम्परा उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई थी। गुरुदेव स्वयं लिखते हैं 'हमारे घर के अंमुखी कण्ठ बाबू दिन रात गानों में ही तल्लीन रहते थे, वे गीत सिखाते नहीं थे प्रदान करते थे। न मालूम कब वे गीतों में ही मग्न हो जाते थे यह मैं नहीं जानता ठीक तरह नहीं कह सकता वे खड़े होकर नाच-नाच कर सितार बजाते थे—हँस-हँस कर बड़ी बड़ी आँखें निकाल कर गीत गाते थे—'मैं छोड़ों ब्रजकि बासरि' साथ-साथ मुझसे भी बिना गाये नहीं रहा जाता था।[२] अज्ञातनामा गायक का स्मरण करते हुए गुरुदेव लिखते हैं— प्रात काल मधहुरी में वे उनके गीत सुना करते थे—नियमानुसार दीक्षा हुआ

---

१ गुरुदेवेर पिता महर्षि देवेन्द्रनाथ निजे छिलेन बराबरइ उच्चांगेर हिन्दी संगीतेर विशेष भक्त। छोटो काल विजन स्ट्रीटे एकटी बाड़ि भाड़ा करे उस्ताद रेखे गान बाजना करतेन। वैनेबेलाय साहेब मास्टारेर काछे पियानो देखेन। तिनि मोटी मुटि भावे गाइते पारतेन। हिन्दी गाने ब्राह्मोमत बोध तौर बेश परिष्कार छिल तौर रचित प्रत्येकटि बाँगला उपासना संगीत हिन्दी उच्चांग संगीतेर भावे रचित। उपासना ओ उत्सवेर गाने उच्चांगेर हिन्दी संगीतेर ढमकेइ उपयुक्त मने करतेन। एमन कि तिनि तार बेशि प्राधान्य दितेन। तौरइ इच्छा ओ प्रभावे तौर पुत्र द्विजेन्द्रनाथ सत्येन्द्रनाथ ज्योतिरिन्द्रनाथ उच्चांगेर हिन्दी संगीत भेंगे बहु ब्रह्म-संगीत रचना करेछिलेन तार मध्ये ध्रुपदेर संख्याइ अधिक।
—रवीन्द्र संगीत पृ० १२।

२ आमादेर बाड़िर अंमु श्रीकण्ठ बाबू दिन रात गानेर मध्ये तलिये थाकतेन। तिनि तो गान शेखातेन ना गान दितेन तिनि कखन तुले निलुम जानते पारतुमना। फूर्ति यखन राखते पारतेन ना दाँड़िये उठतेन नेचे नेचे बाजाते थाकतेन सेतार हासिते बड़ो बड़ो चोख ज्वल् ज्वल् करत गान धरतेन' मय छोड़ो ब्रजकि बासरि' संगे संगे आमिओ ना गाइले छाड़तेन ना।'
—रवीन्द्र संगीत पृष्ठ १४।

याद नहीं प्रातःकाल यही स्वर भरा करता था। बंसी हमारी रे ।[1] अर्थात् प्राय २१ वर्ष की उम्र तक गान रचना के लिये उनकी शिक्षा का यथा युग था। इस आयु तक सुर योजना के लिये नाना प्रकार हिन्दी राग रागिनी ही केवल उनका अवलम्बन थी।[2] इस काल तक उनकी रचना में हिन्दी-राग संगीत का बहुत प्रभाव है।[3]

गुरुदेव स्वयं स्वीकार करते हैं—"मैं बचपन से ही खूब हिन्दुस्तानी गान सुनता आया हूँ। इससे अधिक क्या कहूँ? इसका महत्त्व और माधुर्य पूर्ण हृदय से स्वीकार करता हूँ। सुन्दर हिन्दुस्तानी गान मुझे गम्भीर भाव से मुग्ध करता है। विषय वस्तुहीन छवि का विशुद्ध रूप मुझे अच्छा लगता है जिस प्रकार वाक्य-विहीन संगीत का आलाप। वस्तुतः मेरा झुकाव इसी ओर है। शैशव से ही हिन्दुस्तानी सुरों से मेरे कान और प्राण भरे गये हैं। मैं बाल्यकाल से ही ध्रुपदगान सुनने का अभ्यस्त हूँ उसका आभिजात्य अपनी बृहत् सीमा में अपनी मर्यादा की रक्षा करता है इस ध्रुपद गानों में मुझे दो वस्तुयें प्राप्त हुई एक ओर उसकी विपुलता गम्भीरता एक ओर उसका आत्म-दमन—सुसंगति के मध्य में अपने वजन की रक्षा करना।"[4]

---

१ अजाना गायके स्मरण करे गुरुदेव लिखेछेन— 'भोर बेला अन्धकारे येके ठेने बेर करे तोर गान शुनतेम, निम्नेर छेला पावेर पातेनेइ, तादेर छत्र अनियमेर खेयाय—सकाल बेलार सुरे बसत —बंसी हमारि रे—।" —वही पृष्ठ १४।

२ अर्थात् प्राय २१ बछर बयस पर्यन्त गान रचनाय तोर शिक्षा नविसिर युग एइ बयस पर्यन्त सुर योजनाय नाना प्रकार हिन्दी राग रागिनीइ छिल तोर एकमात्र अवलम्बन। —वही पृष्ठ १६।

३ तखन पर्यन्त तोर रचनाय हिन्दि रागसंगीतेर प्रभाव खूबबेशि। —रवीन्द्र संगीत पृ० १६।

४ छेलेबेला थेके आमि हिन्दुस्थानी गान शुने आसछि बले तार महत्त्व ओ माधुर्य समस्त मन दियेइ स्वीकार करि। भालो हिन्दुस्थानी गान आमाके गभीर भावे मुग्ध करे। "अति बाल्यकाल थेके हिन्दुस्तानी सुरे आमार कान एवं प्राण भर्ति हयेछे।"—विषय वस्तुहीन छविर निछक विशुद्ध रूप आमार भालोइ लागे येमन भालो लागे वाक्य हारा संगीतेर आलाप। वस्तुत आमार निजेर झोंक ए दिके। "आमरा बाल्यकाले ध्रुपद गान शुनते अभ्यस्त तार आभिजात्य बृहत् सीमार मध्ये आपन मर्यादा रक्षा करे। एइ ध्रुपद गाने आमरा दुटो जिनिस पेयेछि—एकदिके तार विपुलता गभीरता, आर एक दिके तार आत्म-दमन सुसंगतिर मध्ये आपन वजन रक्षा करा।" —वही, पृ० १६।

यह जनश्रुति है कि मैं हिन्दुस्तानी गान न तो जानता हूँ न समझता हूँ। मेरे आदिगुरु रचित गान हिन्दुस्तानी ध्रुवपद्धति की राग रागनियों का साक्षी इस प्रति विपुल प्रमाण के साथ दूरभावी शताब्दी के प्रत्नतात्त्विकों के निवारण वाद वितण्डा के लिये अपेक्षा करता है। इच्छा होने पर भी इस संगीत का मैं प्रत्याख्यान नहीं कर पा रहा हूँ। उसी संगीत से मैंने प्रेरणा प्राप्त की है जो इस बात को नहीं जानता है वह हिन्दुस्तानी संगीत को भी नहीं जानता है।[1]

इस प्रसंग में अन्यान्य रवीन्द्र संगीत विशेषज्ञ विद्वानों की समालोचना भी हिन्दी संगीत का रवीन्द्र-संगीत पर प्रभाव के विषय में उल्लेखनीय है।[2] सुश्री इन्दिरादेवी चौधुरानी लिखती हैं, 'बाल्यकाल से उनके घर पर बहुत हिन्दुस्तानी संगीतवेत्ताओं का आवागमन रहता था। यदु भट्ट, मौलाबख्श आदि के तो केवल मैंने नाममात्र सुने हैं। विष्णुराम चक्रवर्ती हमारे समय तक संगीत के प्रेमी रहे हैं। इसके पश्चात् नाना देश के अनेक अच्छे पुरे उस्तादों से सुनने का सौभाग्य हममें से अनेकों को प्राप्त हुआ है। गुरुदास किसी विशेष उस्ताद के पास रीति अनुसार शिक्षा न प्राप्त कर सब शुद्ध हिन्दू संगीत की मूल नीति के एक मोटे रूप से समझने का अवसर उनको अनेक बार मिला था। सुन्दर हिन्दी-गाना-बजाना सुनकर वे बहुत आनन्दित होते यह तो सब लोग जानते हैं। आदि ब्रह्म समाज का ब्रह्म-संगीत सकल प्रकार से हिन्दी सुरों का रत्नाकर-विशेष है यदि उसका मंथन किया जाये तो ऐसी कोई हिन्दी राग-रागिनी नहीं है जो नहीं प्राप्त हो। उसके हारथ मान के प्रथम

---

१ जनश्रुति आछे, ये आमि हिन्दुस्थानी गान जानिने बुझिने। आमार आदि गुरुर रचित गाने हिन्दुस्थानी ध्रुवपद्धतिर रागरागिणीर साक्षीदल प्रति विपुल प्रमाण-सह दूरभावी शताब्दीर प्रत्न तात्त्विकदेर निवारण वाद वितण्डार जन्ये अपेक्षा करे आछे। इच्छा करलेओ सेइ संगीत के आमि प्रत्याख्यान करते पारिने सेइ संगीत थेकेइ आमि प्रेरणा लाभ करि एकथा यारा जानेना तारा हिन्दुस्थानी संगीत जाने ना। —रवीन्द्र संगीत पृ ४०, २८०।

२ देखिये—रवीन्द्र संगीत (शान्तिदेव घोष) रवीन्द्र संगीतेर धारा (शुभगुह ठाकुर) रवीन्द्रनाथेर गान (सोमेन्द्रनाथ ठाकुर सांगीतिकी (श्री दिलीपकुमार राय)—संगीत परिक्रमा (नारायण चौधरी) आदि ग्रन्थों एवं श्री इन्दिरादेवी चौधुरानी श्री धुर्जटिप्रसाद मुखोपाध्याय आदि के लेखों में रवीन्द्र संगीत पर हिन्दी-संगीत के गम्भीर प्रभाव के विषय में विस्तृत विवेचन है।

तीन भागों को छोड़ कर शेष रवीन्द्र रचित है।[1] आगे फिर लिखती हैं—कवि के गीतों के साथ जिनका थोड़ा बहुत भी परिचय है वे जानते हैं कि गुरुदेव हिन्दी-गीतों की गठन प्रणाली को सदा मान कर चलते थे। अर्थात् पूर्णांग गान अस्थायी, अन्तरा सञ्चारी आभोग आदि चार भागों का व्यतिक्रम नहीं करते थे।[2]

श्री धूर्जटिप्रसाद मुखोपाध्याय लिखते हैं, "मुमूर्षु हिन्दुस्थानी दरबारी संगीत को देसी सुर के रक्त से संजीवित करते हुए रवीन्द्रनाथ ने जीवन धर्म का ही अनुगमन किया था[3]।" आगे लिखते हैं—रवीन्द्रनाथ के गीतों के संबंध में इस कथा को स्मरण रखते हुए देखा जाय कि उनका हिन्दुस्थानी संगीत की धारा के विपक्ष में जाना तो दूर रहा। उसी धारा को देसी संगीत (बंगाली संगीत) के संस्पर्श से और व्यक्तिगत भावों ने नया-जीवन प्रदान किया।[4]

---

१ छेलेबेला थेके ठाकुर बाड़ीते आम हिन्दुस्थानी संगीत बेशुर यातायात छिल। यदु भट्ट मौलाबक्स-एदेर नाम आमादेर काने शोना मात्र हले। विष्णुराम चक्रवर्ती आमादेर काल पर्यन्त से संगीतेर धारा बये एनेछिलेन, एवम् तार परे नाना देशे नाना नामजन्य उस्तादर शोनबार सौभाग्य आमादेर अनेकेरइ हयेछे। सुतराम कोन विशेष उस्तादेर काछे रीतिमत शिक्षा ना पेले ओ सब शुद्ध हिन्दु संगीतेर मूल नीति सम्बन्धे एकटो मोटामुटि धारणा लाभ करबार सुयोग तार यथेष्ट हयेछिल एवम् भाल हिन्दी गान बाछला गुलते तिनि खुबइ भाल बासतेन तारिफकोरइ जानेन। आदि ब्राह्मसमाजेर ब्रह्मसंगीत सकल प्रकार हिन्दी सुरेर एकटि रत्नाकार विशेष ता मन्थन करल हेन हिन्दी राग-ताल नेइ या पाओया याय ना। एवम् तार द्वादश भागेर प्रथम तिन भाग बाद दिले शेष नय भागेर अधिकांश गानइ बोध हय रवीन्द्र रचित।

—रवीन्द्र जयन्ती, पृ० ४२।

२ कविर गानेर सङ्गे यार किछुमात्र परिचय आछे, तिनिइ जानेन ये तिनि हिन्दी गानेर गठन प्रणाली सर्वदा मेने चलेन, अर्थात् पूर्णांग गाने, आस्थायी अन्तरा, सञ्चारी आभोग एइ चार भागेर व्यतिक्रम करेन ना। —वही पृ० ४२।

३ मुमूर्षु हिन्दुस्थानी दरबारी संगीत के देशी सुरेर रक्ते संजीवित कराते रवीन्द्रनाथ जीवन-धर्मेर अनुगमन करलेन।

—रवीन्द्रनाथेर संगीत, जयन्ती उत्सर्ग पृ० ४११।

४ रवीन्द्रनाथेर गानेर सम्बन्धे एइ कयटि मोटो कथा स्मरण राखले देखा यावे ये तिनि हिन्दुस्थानी संगीत-धारार विपक्षे याओया दूरे थाकुक सेइ धाराकेइ देशी संगीतेर संस्पर्शे ओ व्यक्तिगत भावेर सम्पर्के एने नूतन जीवन दियेछेन।

—वही, पृष्ठ ४१२।

श्री नारायण चौधरी का विचार है कि कवि के प्रारंभिक जीवन की रचनाओं में हम क्या देखते हैं कि वे ध्रुपदगानों के संस्कार से विशेष रूप से प्रभावित हैं और उनके गीतों में यह प्रभाव पूर्ण मात्रा में प्रतिफलित हुआ है। जोड़ासाँकोर की ठाकुर बाड़ी में ध्रुपद संगीत की विशेष चर्चा हुआ करती थी। 'जीवन-स्मृति'[1] में देखते हैं कि कवि कि बाल्यावस्था में तत्कालीन विख्यात ध्रुपदगायक यदु भट्ट ठाकुर बाड़ी में प्रतिदिन आया जाया करते थे अन्य संगीतज्ञों का वहाँ भिन्न भिन्न रूप से आना जाना रहता था। स्वाभाविक रूप में इसका प्रभाव बालक रवीन्द्रनाथ पर विशेष कार्यकर हुआ। उन्होंने इस तरह आंशिक भाव से ध्रुपदांग गानों की शिक्षा भी ग्रहण की। इसी का फल है कि रवीन्द्रनाथ प्रथम जीवन की सुर योजनाओं में स्पष्ट ग्राह्य ध्रुपद के संस्कार द्वारा उत्प्रेरित हैं। कवि के तत्कालीन विरचित गानों में हिन्दुस्तानी ध्रुपद गानों का ही अनूदित बँगला रूप है। केवल भाषा में ही पार्थक्य नहीं हो तो पंक्ति-विन्यास ताल प्रकरण हुबहु एक ही है। कवि का ब्रह्म संगीत इस तथ्य का प्रमाण है।[2]

श्री शान्तिदेव घोष का कथन है, 'हम रवीन्द्र संगीत की राग रागनियों को लेकर जब आलोचना करते हैं तब हमें मन में यह विचार रखना होगा कि उन्होंने हिन्दी गीतों से किस प्रकार स्थान प्राप्त किया था। उस तरह विचार करना उचित नहीं है। यदि हम इस तरह विचार करते हैं तो गुरुदेव के गीतों के सम्बन्ध में अनेक भ्रांत धारणाओं के उद्भव होने की सम्भावना है। कारण यह है कि उन्नीसवी

१ जीवन-स्मृति पृ० २६ विष्णु चक्रवर्ती (१८१२ १६०१)

२ कविर प्रथम जीवनेर संगीत रचनाय आमरा की देखते पाई ? देखते पाइये, तिनि ध्रुपद गानेर संस्कार द्वारा विशेष भावे प्रभावित एवम् तॉर गाने ये प्रभावपूर्ण मात्राय प्रतिफलित। जोड़ासाँकोर ठाकुरबाड़ीते ध्रुपद संगीतेर विशेष चर्चा हत। "जीवन-स्मृति" ते देखते पाइ, कविर बाल्य वयसे तदा नीतन विख्यात ध्रुपद गायक यदु भट्ट ठाकुर बाड़ीते नित्य याओया आसा करतेन आर ओ अनेक संगीतेर सेखाने नियमित आनागोनाछिल स्वभावतइ एँदेर प्रभाव बालक रवीन्द्रनाथेर उपर विशेष कार्य करी हयेछिल। तिनि एँदेर कारओ काछ थेके आंशिक भावे ध्रुपदांग गानेर शिक्षा ओ ग्रहण करिछिलेन। एर फल हयेछिल एइ ये रवीन्द्रनाथ प्रथम जीवनेर सुर योजनाय स्पष्ट ग्राह्य भावे ध्रुपदेर संस्कार द्वारा चालित हन। कविर तदानीन्तन कालेर रचित गान येन हिन्दुस्थानी ध्रुपद गानेरइ तर्जमाकरा बाँगला रूप। शुद्ध भाषाय या पार्थक्य नइले पंक्तिविन्यास ताल प्रकरण हुबहु एक। कविर ब्रह्मसंगीत गुलि ए कथार प्रमाण।

—संगीत परिक्रमा पृ० ११।

शताब्दी के उत्तरार्ध में बंगाल में हिंदी-गीत जिस नियम रीति से प्रचलित थे उनके साथ अब प्रचलित हिंदी गीतों के क्षेत्र में बहुत अन्तर आ गया है। गुरुदेव के प्रथम जीवन में बंगाल में प्रचलित हिंदी उच्चांग संगीत किस रूप में था और गुरुदेव के ऊपर किस तरह उसका प्रभाव हुआ था। यहां इस विषय की विस्तार भाव से आलोचना करना आवश्यक है।[1]

यद्यपि उन्होंने शिष्यों की तरह निष्ठा से किसी गुरु विशेष के पास हिंदी संगीत की शिक्षा प्राप्त नहीं की थी। जब कभी नाना प्रकार के हिंदी गीतों का स्वर उनको आनन्द प्रदान करता था तब से उस स्वर को बंगला भाषा में सुरक्षित रखने की चेष्टा करते थे।[2] गुरुदेव ने बाल्यकाल से वृद्धावस्था तक अनेक हिंदी राग रागनियों के अनुकरण पर बंगला साहित्य के भण्डार को भरा था। उनमें से कुछ प्रसिद्ध राग रागनी इस प्रकार है—टोड़ी भैरवी आशावरी भैरव कालंगड़ा सारंग, भूपाली इमनकल्याण छायानट, बिहाग खम्बाज कामोदी बहार, परज देश सिन्धु काफी कानड़ा, अड़ाना पुरबी मुलतान मल्लार, सहाना बिभास हमीर, केदारा वृन्दावनी सारंग जै-जैवन्ती झिंझु, श्री भीमपलासी आदि।

उक्त राग रागनियों के अतिरिक्त उन्होंने अनेक संगीतकारों गान रचना की विभिन्न पद्धतियों के संतों और भक्तों के पदों और भजनों का अनुसरण अनुकरण और अनुवाद भी किया है। इनको हिंदी भांगा बांगला गान भी कहा जाता है।[3] अतः सोदाहरण किंचित विवेचन अपेक्षित है।

रवीन्द्र संगीत में आड़ाना रागनी में एक प्रचलित गीत को हिंदी गीत के आधार पर निर्मित हुआ है इस प्रकार है —

---

१ आमरा रवीन्द्र संगीतेर राग रागिनी निये यखन आलोचना करब तखन आमादेर मने राखते हबे ये उच्चांगेर हिंदी गाने ये मत प्राधान्य देयेछे से मते एर विचार करा उचित नय। से भाव विचार करते गेल गुरुदेवेर गान सम्बन्धे अनेक भ्रान्त धारणार उद्भव हबे। कारण ऊनविंश शताब्दीर शेषार्धे बांगला देशे हिंदि गाने ये नियम प्रतिष्ठित तार संगे अधुना प्रचलित हिंदि गानेर अनेक क्षेत्रे पार्थक्य घटे छे। गुरुदेवेर प्रथम जीवने बांगला देशे प्रचलित हिंदी उच्चांगेर संगीत की भावे गड़े उठेछिल और गुरुदेवेर उपरे की भावे ता प्रभाव विस्तार करेछिल विषयटिर गुरुत्ववशतः विस्तार भावे एखाने आलोचना करा दरकार। —रवीन्द्र संगीत पृ० ४६।

२ यदि ओ तिनि साधारणेर मतो निष्ठा निये गुरुर काछे गान शेखेन नि तबु ओ नाना प्रकार हिंदिगानेर सुर यखनि ताँके आनन्द दियेछे तखनि तिनि से सुरके बांगला भाषा धरे राखबार चेष्टा करेछेन। —रवीन्द्र संगीत पृ० ४८।

३ हिंदी भांगा बांगला गान का अर्थ है हिंदी-गीतों के अनुकरण पर विरचित बंगला गान—भांगा का अर्थ है १ टूटा हुआ २ अनुकरण।

मन्दिरे मम के आसिले हे ।
सकल गगन अमृत मगन
दिशि दिशि गेल मिशि अमानिशि दूरे दूरे ॥
सकल दुआर आपनि खुलिल
सकल प्रदीप आपनि ज्वलिल
सब वीणा बाजिल नव नव सुरे ॥ (गीत-वितान, पृ० १७२)

हिंदी गीत इस प्रकार है :—

सुन्दर लागोरी है पियरवा
चपल चपल चपल नयन
मोरे मोरे मोरे मोरे
फिर मुसुकानी जानी ॥ (रवीन्द्र संगीत पृ० १२१)

केतेकेता पुस्तक में रवीन्द्रनाथ ने काफी रागनी के ध्रुपद का अनुकरण करके भिन्न उपासना का बँगला गीत लिखा था—

शून्य हाते फिरि हे नाथ पथे पथे फिरि हे द्वारे द्वारे
चिर भिखारि हृदि मम निशिदिन चाहे कारे ॥
चित्त ना शांति जाने तृष्णा ना तृप्ति माने—
यहा पाइ ताइ हाराइ अतिथि अश्रुधारे ॥
सकल यात्री चलिगेल बहि गेल सब बेला ।
आसे तिमिर यामिनी, भांगिया गेल मेला—
कत पथ आछे बाकि याब चलि भिखा राखि
कोथा ज्वले गृह प्रदीप कोन सिन्धु पारे ॥
(गीत-वितान पृ० १६४ १६५)

हिंदी गीत—

सब सुख करके साजु बदरवा पिया विदेस मोरि,
बार बार अखियां न निशदिन मन भावे ।
नैन न नींद आवे दामिनि दमक जावे
छनछिन कल न परत नाथ नाथ कारे ।
(रवीन्द्र संगीत पृ० १२२)

किसी किसी बँगला गीत का भाव प्रारंभ में हिंदी गीत के भाव से मेल खाता है, किन्तु अन्तिम पंक्तियाँ भिन्न हो जाती हैं । जैसे—सिन्धु रागिनी पर आधारित बँगला गीत इस प्रकार है —

चरण ध्वनि शुनि तव नाथ जीवन तीरे
कत नीरव निर्जने कत मधु समीरे ॥

गगने ग्रह तारा चय अनिमिखे चाहि रय।
भावनास्रोत हृदये बय धीरे एकान्ते धीरे ॥
चाहिया रहे आँखि मम तृष्णातुर पाखिसम।
श्रवण रयेछि मेलि चित्त गभीरे।
कोन शुभ प्राते दाँड़ाबे हृदि-माझे,
भुलिब सब दुख सुख डुबिया आनन्द नीरे ॥

(गीत-वितान पृ० १६४)

हिंदी गीत—

मुरली ध्वनि सुनि आइ आइ यमुना तीरे
तब सों हाय तब मन यौवन बिकाई ॥

(रवीन्द्र संगीत पृ० १२१)

भैरों राग में निम्न उपासना बँगला गीत हिंदी गीत के अनुकरण पर विरचित है —

मन जागो मंगल लोके
अमल अमृतमय नव आलोके
ज्योति विभासित चोखे।
हेरे गगन भरि जागे सुन्दर
जागे तरंगे जीवन सागर
निर्मल प्राते विश्वेर साथे
जागो अभय अशोके ॥

(गीत-वितान पृ० ११२)

हिंदी गीत—

जागो मोहन प्यारे
साँवरि सुरत मोरे मन भावे
सुन्दर लाल हमारे ।

(रवीन्द्र संगीत, पृ० १२१)

हिंदी गीतों के भावों के साथ बँगला गानों का मेल नहीं है ऐसी बात नहीं है न्यूनाधिक रूप में मेल अवश्य है। हिंदी गीतों की भाषा के साथ भी मेल है। गुरुदेव ने हिंदी गीतों की भाषा का भी अनुकरण किया है। प्रेरणा तो प्राप्त की ही है। निम्न बँगला गान बिहाग रागिनी के हिंदी गीत के आधार पर विरचित है—जिसमें भाव के साथ कहीं-कहीं भाषा का भी अनुकरण किया गया है।

तिमिर विभावरी काटे कैमने
जीर्ण भवने, शून्य जीवने—

हृदय कुसुमदल प्रेम विहूने ।
पहुन आँचार करे पुलके पूर्ण हुये
कोहे प्राणवल्लभ, तोमार बीणारवे—
पशिबे परागे तव सुगंध बसंत पवनें ॥

(गीत-वितान पृ० १७२)

तथा शापमोचन का निम्न गीत भी हिन्दी गीत के अनुकरण पर निर्मित हुआ है—

हे विरही, हाय चंचल हिया तव
नीरवे जागो एकाकी शून्य मंदिरे—
कोन से निरुद्देश लागि आछ चाहिया ।
स्वप्न रूपिणी आलोक सुन्दरी
अलक्ष्य अलकापुरी—निवासिनी
ताहार मूरति रचिले वेदनाय हृदय माझारे ॥

(शापमोचन संयोजन—रवीन्द्र रचनावली द्वादश खण्ड पृ० १०६)

हिन्दी गीत—

कैसे काटूँगी रयना सो पिया बिना
एकेलि जागि सजनि मधु मोरा
नयन में निंद न आवे दोहि सैया ॥

—रवीन्द्र संगीत पृ० १२१

हिन्दी वर्षा गीत के आधार पर बंगला गीत की रचना हुई थी—इस प्रकार कुछ गीत वर्षा मंगल में भी प्राप्त होते हैं। यहाँ एक बंगला गीत दिया जा रहा है —

प्रलय नर्तने आसिल एकि दुर्दिन—
चारण घनघटा अविरल अशनि तर्जन ॥
घन घन दामिनी-भुजंग क्षत यामिनी,
अम्बर करिछे अन्ध नयने अश्रु-वरिषण ॥
छाड़ो रे शंका जागो भीरु अलस
आनंदे जागाबो अन्तरे प्रकृति ।
अकुण्ठ आँखि मेलि हेरो प्रशांत-विराजित
महाभय-महासने अपरूप मृत्युजयरूपे भयहरण ॥

—गीत-वितान पृ० ९९,१०१ ।

हिन्दी गीत—

प्रचण्ड गर्जन आवत बरखा ऋतु
काम मगन भ्रता विरहिणी जीवन तपन ।
मस्त मस्त दामिनी गर्जत मत्त यामिनी ।
शाहुम नाच कदम्ब कुसुम शाखि वरिखन ।

—रवीन्द्र संगीत पृ० १२४ ।

कवि का सर्वप्रिय बँगला गीत भी हिन्दी गीत के अनुकरण पर विरचित हुआ था । बँगला गीत इस प्रकार है —

वीणा बाजाओ हे मम अन्तरे ।
सजने विजने बन्धु सुखे दुखे विपदे—
आनन्दित तान शुनाओ हे मम अन्तरे ।।

—गीत वितान पृ० ११८ ।

हिन्दी गीत—

बीन बजाइ रे मन के मधो ।
मधुर मधुर ध्वनि अधर न धरर
रस भर तान सुनाइ र मन के मधो ।।

—रवीन्द्र संगीत पृ० १२४ ।

हिन्दी के टेमना गान के सुर और दशों से अनुप्राणित निम्न बँगला गीत है :—

सुखहीन निशिदिन पराधीन हये भ्रमिछे दीन प्राणे ।
सतत हाय भावना शत शत नियत भीत पीड़ित
शिर नत कत अपमाने ।।
जान मा रे अभ-जर्जर बाहिर अंतरे
घेरे तोरे नित्य राखे सेह अभय आश्रय ।
तोलो आनत शिर त्यजो रे भय भार,
सतत सरल-चित चाहो तारि प्रेम मुख-पाने ।।

—गीत वितान पृ० १०६ ।

हिन्दी के तरमन्ना गीत की सुर लिपि देना अपेक्षित है ।

तारा दीम तारा दीम् तारादीम् तारा तारारे दानि-दानि
ताना ना देर देर तोम् ता नाना ताना
तीम् देर तदारे दानि तारानि ताना दानि दानि दानि दानि ।।

—रवीन्द्र संगीत पृ० १२२ ।

मीराबाई के एक भजन को रूपान्तरित करके यह बँगला गीत लिखा था —

'कानन दिसे परायी स्वप्न बरणमाला व्यथार माला——'

हिन्दी गीत की प्रथम पंक्ति कुछ इस प्रकार है —

"जिन्हे देखा कन्हैया, प्यारा कि बंसी वाला"

किन्तु मुद्रित प्रतियों में मीराबाई का यह गीत इस प्रकार प्राप्त होता है —

जिसने देखा कनैया प्यारा मुरली वाला
जमुना के तीर धेनु चरावे कंधे कामलिया काला ॥
मोर मुकुट पीताम्बर सोभे कुण्डल झलकत लाला ॥
मीरां के प्रभु गिरधर नागर । भक्तन के प्रति पाला ॥

—मीरां सुधा सिन्धु, पृ० १८६ ।

वाल्मीकि प्रतिभा में भूपकल्याण का बँगला गीत हिन्दी के चतुरंग गीत के आधार पर बना है :—

एइ बेला सबे मिले चल हो चलो हो चलो हो
छूटे आय शिकारे के रे याबि आय
एमन रजनी बहे याय ये ।
धनुर्बाण बल्लम लये हाते आय आय आय रे ।
राजा शिंग घन घन बाजे काँपिबे बन—
आकाश फेटे याबे चमकि ये पशु पाखि सबे ।
छूटे याबे कानने कानन चार दिके घिरे ।
आय चिबे चिबे, हो हो हो हो—

—वाल्मीकि प्रतिभा रवीन्द्र रचनावली द्वितीय खण्ड पृ० २१० ।

गुरुदेव को जो हिन्दी गीत सुन्दर प्रतीत होता था उसको वे बँगला भाषा की लिपि बनाने का प्रयत्न करते थे । अनेक टप्पा गीतों का भी उन्होंने अनुकरण किया । अचलायतन में उनका एक टप्पा गीत जो शोरीमियाँ के टप्पों के अनुकरण पर निर्मित हुआ था वह यहाँ दिया जा रहा है —

ना हुआर ना हुबे ।
ये आमाके काँदाय से यमनि रेहे से ।
पथ हते ये भुलिये आने
पथ ये कोथाय सेइ ता जाने
घर ये छाड़ाय हात से बाड़ाय
सेइ तो घरे लबे ।

—रवीन्द्र रचनावली एकादश खण्ड
अचलायतन पृ० ११९ ।

गुरुदेव अन्य व्यक्तियों से भी हिन्दी गीत सुनकर बँगला में रूपान्तरित करने का प्रयत्न करते थे। निम्न बँगला गीत का आधार हिन्दी गीत नाद-विद्या परब्रह्म रस जानरे है। बँगला गीत इस प्रकार है :—

विश्ववीणा रवे विश्वजन मोहिछे
स्थले जले नभतले वने उपवने
नदी नदे गिरि गुहा पारावारे
नित्य जागे सरस संगीत मधुरिमा॥
नित्य नृत्यरस भंगिमा—
नव वसन्ते नव आनन्द उत्सव नव।
अति मञ्जुल श्रुति मञ्जुल गुञ्जन कुञ्जे।
पिक कूजन पुष्पवने विजने।
मृदु वायु हिल्लोल—विलोल विभोल
विशाल सरोवर माझे,
कल गीत सुललित बाजे—।

—गीतबितान पृ० ६७०।

गुरु नानक के हिन्दी गीत के अनुकरण पर गुरुदेव ने इस ब्रह्म संगीत की रचना की थी। यह गीत इस प्रकार है —

गगनेर थाले रवि चन्द्र दीपक ज्वले
तारका मण्डल चमके मोति रे।
धूप मलयानिल पवन चामर कर
सकल बनराजि फुल्ल ज्योति र।
कमन आरति हे भव खण्डन तव आरति
अनाहत शबद बाजन्त भेरी रे॥२४६॥

—ब्रह्म संगीत पृ० १७७ १७८।

हिन्दी गीत भी द्रष्टव्य है —

गगन में थालु रवि-चंदु दीपक बने तारिका मंडल जनक मोती।
धूपु मलआनलो पवणु चवरो करे सगल बनराइ फूलंत जोती॥
कैसी आरती होइ भवखंडना तेरी आरती अनहता सबद वाजत भेरी।
सहस तव नैन नन नैन हहि तोहि कउ सहस मूरति ननो एकु तोही॥
सहस पद बिमल नन एक पद गंधबिनु सहस तव गंध इव चलत मोही।
सभ महि जोति जोति है सोइ तिसदै चानणि सभ महि चानणि होइ॥
गुर साखी जोति परगटु होइ जो तिसु भावै सु आरती होइ।

हरि चरन कँवल मकरंद लोभित माने अनदिनो मोहि आही पियासा ॥
कृपा जलु देहि नानक सारिंग कउ होइ जाते तेरै नाइ वासा ?
—संत-सुधा-सार, पृ० २१६।

गुरुदेव ने नाना स्रोतों से हिन्दी गीतों को एकत्रित कर, उनका अनुकरण अवलम्बन एवं अनुवाद करके बँगला गीतिकाव्य के भण्डार को भरा है। अतः हिन्दी संगीत का गम्भीर प्रभाव रवीन्द्र गीतिकाव्य पर माना जा सकता है।

२ भाषा रूपगत (ब्रजबुलि का) प्रभाव

गुरुदेव जिस प्रकार हिन्दी-संगीत के प्रेमी रहे हैं उसी तरह बाल्यावस्था में वैष्णव-पदावलियों के भी भक्त रहे हैं। उनकी भानुसिंह ठाकुरेर पदावली[1] इसका प्रमाण है। उन्होंने वैष्णव पदावलियों के भाव-माधुर्य और भाषा सौंदर्य की ओर आकृष्ट होकर इस पदावली का सृजन किया था।

गुरुदेव लिखते हैं, "उनके (विद्यापति) पद और गीत मेरे लिए बचपन के आकर्षण थे जिनसे यौवनावस्था में मेरी कवि कल्पना सजीव हुई। मैंने उनको संगीत पर ढाला[2]।"

आगे फिर लिखते हैं, "विद्यापति की दुर्बोध विकृत मैथिली पदावली अस्पष्ट थी। इसलिए मेरा आकर्षण इसके प्रति हुआ। मैंने टीका के ऊपर निर्भर न रहकर मूल को समझने का प्रयत्न किया[3]।" पहले लिख चुका हूँ श्रीयुत अक्षयचन्द्र सरकार और सारदाचरण मित्र महाशय द्वारा संकलित प्राचीन काव्य संग्रह मैंने विशेष आग्रह के साथ पढ़ा था। उसकी मैथिली मिश्रित भाषा मेरे लिये दुर्बोध थी। इसलिये अध्यवसाय से मैंने समझने का प्रयत्न किया।"[4] बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त का

---

१ भानु+सिंह+ठाकुर=भानु=रवि सिंह=इन्द्र ठाकुर=ठाकुर भानुसिंह ठाकुर=रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

२ His Vidyapati poems and songs were one of the earliest deli ghts that stirred my youthful imagination and even had the privilege of setting one of them to music
H. M. L, Vol. I page 172-173

३ विद्यापतिर दुर्बोध विकृत मैथिली पदगुलि अस्पष्ट बलियाइ बेशि करिया आमार मनोयोग टानित आमि टीकार उपर निर्भर ना करिया निजे बुझिबार चेष्टा करिताम।
—जीवन-स्मृति, पृ० ७८

४ पूर्वेइ लिखियाछि श्रीयुत अक्षयचन्द्र ओ सारदाचरण मित्र महाशय कर्तृक संकलित प्राचीन काव्य संग्रह आमि विशेष आग्रहेर सहित पड़िताम। ताहार मैथिली मिश्रित भाषा आमार पक्षे दुर्बोध छिल किन्तु सेइ जन्येइ एत अध्यवसायेर सङ्गे आमि ताहार मध्ये प्रवेश चेष्टा करियाछिलाम।
—जीवन स्मृति, पृ० ९४।

कथन है कि मैथिल कवियों का अध्ययन कर उन्होंने मैथिली भाषा पर पूर्ण अधिकार कर लिया। बचपन में छद्म नाम भानुसिंह रखकर ब्रजबुलि में अनेक कवितायें कीं। रवीन्द्रनाथ प्रथम व्यक्ति हैं जो मैथिल कवियों विद्यापति और गोविन्ददास[1] का ऋण स्वीकार करते हैं। उनके प्रकाश ने ही रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा को प्रकाशित किया एवं उनके चारों ओर एक नये प्रशंसनीय जगत का निर्माण किया।[2]

श्री प्रमथनाथ विशी का मत है "किशोर रवीन्द्रनाथ का चण्डीदास के परिणत* शिल्प की ओर आकृष्ट न होकर विद्यापति की अलंकारमयी पदावली की ओर झुकना स्वाभाविक ही था। उन्होंने विद्यापति की शिल्प रीति और भाषा को ग्रहण किया[3]।" श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य का विचार है "विद्यापति की विशुद्ध मैथिली पदावली और अन्यान्य पदकर्ताओं द्वारा व्यवहृत ब्रजबुलि भाषा की ओर रवीन्द्रनाथ गम्भीर भाव से आकृष्ट हुए।[4]"

वैष्णव-पदकर्ताओं ने राधाकृष्ण के प्रसंग को एक धार्मिक-रहस्य की दृष्टि

---

१ गोविन्ददास के विषय में बहुत मतभेद है। देखिये प्रस्तुत प्रबन्ध पृ० १०८ से ११० तक।

२ By studying the poems of the Maithili poets he acquired a wonderful command over the Maithili language He was in his teens when under pseudonym of Bhanu Singh (Bhanu being a synonym for Ravi the sun) he wrote a number of lyrics in the Maithili language

Ravindra Nath would be the first to acknowledge the debt that he owes to the great Maithili poets—Vidyapati and Govind Das — But it is their light that has illuminated the *genius of Ravindra Nath Tagore and brought an admiring* world around him

—H. M. L. vol. I. P 172.

* परिणत=परिपक्व बो० भा० अभि०, पृ० ६१० ।

३ किशोर रवीन्द्रनाथ के चण्डीदासेर परिणत शिल्प आकर्षण ना करिया ये विद्यापतिर अलंकारमयी पदावली आकर्षण करिबे—इहा खुबइ स्वाभाविक छिलो विद्यापतिर शिल्प रीति, विद्यापतिर भाषा अवधि ग्रहण करिया छेन।

—रवीन्द्र काव्य प्रवाह, पृ० ४३।

४ विद्यापतिर विशुद्ध मैथिली पदगुलि ओ अन्यान्य पदकर्तादेर व्यवहृत ब्रजबुलि भाषा रवीन्द्रनाथेर गम्भीर मनोयोग आकर्षण करियाछिल।

—रवीन्द्र साहित्य परिक्रमा, पृ० ५२।

हरि चरण कँवल मकरंद लोभित मनो अनदिनो मोहि आही पियासा ।।
कृपा जलु देहि नानक सारिंग कउ होइ जाते तेरे नाइ वासा ?
—संत-सुधा-सार, पृ० २११ ।

गुरुदेव ने नाना स्रोतों से हिन्दी गीतों को एकत्रित कर, उनका अनुकरण, अवलम्बन एवं अनुवाद करके बँगला गीतिकाव्य के भण्डार को भरा है। अतः हिन्दी संगीत का गम्भीर प्रभाव रवीन्द्र गीतिकाव्य पर माना जा सकता है।

२ भाषा रूपगत (व्रजबुलि का) प्रभाव

गुरुदेव जिस प्रकार हिन्दी-संगीत के प्रेमी रहे हैं, उसी तरह बाल्यावस्था में वैष्णव-पदावलियों के भी भक्त रहे हैं। उनकी भानुसिंह ठाकुरेर पदावली[1] इसका प्रमाण है। उन्होंने वैष्णव पदावलियों के भाव-माधुर्य और भाषा सौंदय की ओर आकृष्ट होकर इस पदावली का सृजन किया था।

गुरुदेव लिखते हैं, 'उनके (विद्यापति) पद और गीत मेरे लिए बचपन के आकर्षण थे जिनसे यौवनावस्था में मेरी कवि कल्पना सजीव हुई। मैंने उनको संगीत पर बाला[2]।"

आगे फिर लिखते हैं, "विद्यापति की दुर्बोध विकृत मैथिली पदावली अस्पष्ट थी। इसलिए मेरा आकर्षण इसके प्रति हुआ। मैंने टीका के ऊपर निर्भर न रहकर मूल को समझने का प्रयत्न किया[3]। पहले लिख चुका हूँ श्रीयुत अक्षयचन्द्र सरकार और सारदाचरण मित्र महाशय द्वारा संकलित प्राचीन काव्य संग्रह मैंने विशेष आग्रह के साथ पढ़ा था। उसकी मैथिली मिश्रित भाषा मेरे लिये दुर्बोध थी। इसलिये अध्यवसाय से मैंने समझने का प्रयत्न किया। बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त का

१ भानु+सिंह+ठाकुर=भानु=रवि सिंह=इन्द्र ठाकुर=ठाकुर भानुसिंह ठाकुर=रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

२ His Vidyapati poems and songs were one of the earliest delights that stirred my youthful imagination and even had the privilege of setting one of them to music
H. M. L. Vol. I, page 172-173.

३ *विद्यापतिर दुर्बोध विकृत मैथिली पदगुलि अस्पष्ट बलियाइ बेशकरिया आमार* मनोयोग टानित आमि टीकार उपर निर्भर ना करिया निजे बुझिबार चेष्टा करिताम। —जीवन-स्मृति, पृ० ७८

४ पूर्वेइ लिखियाछि श्रीयुत अक्षयचन्द्र ओ सारदाचरण मित्र महाशय कर्तृक संकलित प्राचीन काव्य संग्रह आमि विशेष आग्रहेर सहित पड़िताम। ताहार मैथिली मिश्रित भाषा आमार पक्षे दुर्बोध छिल किन्तु सेइ जन्येइ एत अध्यव सायेर संगे आमि ताहार मध्ये प्रवेश चेष्टा करियाछिलाम।
—जीवन स्मृति पृ० ९४।

कथन है कि मैथिल कवियों का अध्ययन कर उन्होंने मैथिली भाषा पर पूर्ण अधिकार कर लिया। बचपन में छद्म नाम भानुसिंह रखकर ब्रजबुलि में अनेक कविताएँ कीं। रवीन्द्रनाथ प्रथम व्यक्ति हैं जो मैथिल कवियों विद्यापति और गोविन्ददास[1] का ऋण स्वीकार करते हैं। उनके प्रकाश से ही रवीन्द्रनाथ की प्रतिभा को प्रकाशित किया एवं उनके चारों ओर एक नये प्रशंसनीय जगत का निर्माण किया।[2]

श्री प्रमथनाथ बिशी का मत है, "किशोर रवीन्द्रनाथ का चण्डीदास के परिणत* शिल्प की ओर आकृष्ट न होकर विद्यापति की अलंकारमयी पदावली की ओर झुकना स्वाभाविक ही था। उन्होंने विद्यापति की शिल्प रीति और भाषा का ग्रहण किया[3]।" श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य का विचार है, "विद्यापति की विकृत मैथिली पदावली और अन्यान्य पदकर्त्ताओं द्वारा व्यवहृत ब्रजबुलि भाषा की ओर रवीन्द्रनाथ गम्भीर भाव से आकृष्ट हुए।[4]"

वैष्णव-पदकर्त्ताओं ने राधाकृष्ण के प्रणय को एक धार्मिक-कृत्य की दृष्टि

---

१ गोविन्ददास के विषय में बहुत मतभेद है। देखिये प्रस्तुत प्रबन्ध पृ० १०८ से ११० तक।

२. By studying the poems of the Maithili poets he acquired a wonderful command over the Maithili language He was in his teens when under pseudonym of Bhanu Singh (Bhanu being a synonym for Ravi the sun) he wrote a number of lyrics in the Maithili language

Ravindra Nath would be the first to acknowledge the debt that he owes to the great Maithili poets—Vidyapati and Govind Das – But it is their light that has illuminated the genius of Ravindra Nath Tagore and brought an admiring world around him

—H. M. L. vol. I P 172.

* परिणत = परिपक्व बां० भा० अभि०, पृ० ६१०।

३ किशोर रवीन्द्रनाथ के चण्डीदासेर परिणत शिल्प आकर्षण ना करिया थे विद्यापतिर अलंकारमयी पदावली आकर्षण करिये—इहा खूब स्वाभाविक तिनि विद्यापतिर शिल्प रीति, विद्यापतिर भाषा ग्रहण बहुल करिया छेन।

—रवीन्द्र काव्य प्रवाह पृ० ४१।

४ विद्यापतिर विकृत मैथिली पदगुलि ओ अन्यान्य पदकर्त्तादेर व्यवहृत ब्रजबुलि भाषा रवीन्द्रनाथेर गम्भीर मनोयोग आकर्षण करियाछिल।

—रवीन्द्र साहित्य परिक्रमा, पृ० १२।

से देखा था। किन्तु गुरुदेव ने इस प्रणय व्यापार को अपने २० पदों[1] में बिना किसी धार्मिक दृष्टि की छाप के अंकित किया है।

भानुसिंह ठाकुरेर पदावली की भाषा में कुछ हिन्दी रूपों का भी पुट है। उदाहरण एवं विवेचन से यह प्रभाव स्पष्ट हो सकेगा।

गहन कुसुम कुंजमाझे
मृदुल मधुर बंशी बाजे।
बिसरि त्रास लोक लाजे
सजनि आओ आओलो॥
अंगे चारु नीलवास,
हृदय प्रणय कुसुमराश।
हरिण नेत्र विमल हास
कुंज बन में आओलो।
ढाले (रे) कुसुम सुरभि भार
ढाले (रे) विहग सुरव सार
ढाले (रे) इन्दु अमृतधार।
कुंज बन में आओलो रजत विमल रजत भाति रे।
मन्द मन्द भृंग गुंजे
अयुत कुसुम कुंजे कुंजे
फुटल सजनि पुंजे पुंजे बकुल यूथि जाति रे।
देखि सजनि श्यामराय
नयने प्रेम उथल जाय
मधुर वदन अमृत सदन
चन्द्रमाय निन्दिछे
आओ आओ सजनि वृन्द
हेरब सखि श्री गोविन्द
श्याम को पदारविन्द
भानुसिंह वन्दिछे।

—रवीन्द्र रचनावली द्वितीय खंड, पृ० १३।

---

[1] देखिये—पदों के शीर्षक इस प्रकार हैं—बसंत-वासना, शून्य-कानन विफल रजनी विरह-वेदना मिलन-सज्जा मिलन-वंशीध्वनि अभिसार, प्रतीक्षा व्याकुलता रसावेश निद्रा अनुतप्ता विदा दूती समस्या मरण कौतुहे आदि।

यह पदावली बाल-कवि चाटरटन[१] की तरह उन्होंने छद्म नाम रख कर लिखी थी। गुरुदेव स्वयं लिखते हैं "एक दिन दोपहर को खूब मेघ घिरे हुए थे। इस मेघाच्छन्न समय में छायायन के अवकाश आनन्द में घर के एक कमरे में खाट पर लेट कर एक स्लेट लेकर लिखने लगे 'गहन कुसुम कुंज माझे !' और बहुत प्रसन्न हुआ[२]।"

सूक्ष्म-दृष्टि से देखने पर 'भानुसिंह ठाकुरेर पदावली' में कुछ ऐसे हिन्दी रूपों का प्रयोग भी प्राप्त होता है। जो अन्य वैष्णव पदावलियों में विरल दृष्टिगोचर होता है। ऐसा होना स्वाभाविक है जैसा कि गुरुदेव स्वयं स्वीकार करते हैं 'भानुसिंह कोई भी हो यदि उनकी रचना मुझे प्राप्त हो तब भी मैं ठगा नहीं जाऊँगा। इस बात को मैं जोर देकर कहना चाहता हूँ। इसकी भाषा को प्राचीन पदकर्त्ताओं की भाषा कहकर चला देना असम्भव नहीं था। यह भाषा उनकी मातृभाषा नहीं थी यह एक कृत्रिम भाषा थी भिन्न-भिन्न कवियों द्वारा कुछ-न-कुछ भिन्नता इसमें हुई[३]।

अतएव कुछ परिवर्तन भानुसिंह ठाकुरेर पदावली भाषा में भी गुरुदेव के द्वारा हुए। कुछ नये शब्दों और वाक्यों का प्रयोग इस पदावली में दिखाई पड़ता है। इस पदावली में अपना चित्त में हमको मुझको पंथ में अधर में पथ में बन में, वृन्दावन में आदि प्रयोग हिन्दी के हैं तथाकथित वैष्णव पदकर्त्ताओं की ब्रजबुलि भाषा में दिखाई नहीं पड़ते। ब्रजबुलि में अधिकरण के लिए ए, हि हि और कहीं कहीं मध्य शब्द का तद्भव रूप—माह माहे, माझे आदि प्रयोग में आते हैं।[४] किन्तु

१ जीवन-स्मृति पृ० ९४ वो सा० इ० तृतीय खंड पृ० ५४।

२ एक दिन मध्याह्ने खूब मेघ करियाछे। सेइ मेघला दिनेर छायायन अवकाशेर आनन्दे बाड़िर भितरे एक घरे खाटेर उपर उपुड़ हइया पड़िया एकटो स्लेट लइया लिखिलाम 'गहन कुसुम कुँज माझे !' लिखिया भारि खुशि हइलाम।
—जीवन-स्मृति, पृ० ९४।

३ भानुसिंह गिनिइ हउन ताँहार लेखा यदि वर्तमान आमार हाते पड़ित तबे आमि निश्चयइ ठकिताम ना ए कथा आमि जोर करिया बलिते पारि। इहार भाषा प्राचीन पदकर्त्तार बलिया चालाइया देओया असंभव छिल ना। कारण ए भाषा ताँहादेर मातृभाषा नहे, इहा एकटो कृत्रिम भाषा भिन्न भिन्न कविर हाते इहार किछु ना किछु भिन्नता घटियाछे।
—जीवन-स्मृति पृ० ९२।

४ सप्तमी वा अधिकरण कारक ए, हि ओ हि विभक्तिर प्रयोग देखा याय। बचन ओ ना कोन विभक्ति-चिह्न व्यवहृत हय ना। अनेक स्थले 'मध्ये शब्देर अपभ्रंश 'माहा माह वा माझे' शब्देर प्रयोग द्वारा सप्तमीर अर्थ प्रकाश करा हय।
—प० क० त० पं० खण्ड पृ० २४०।

सप्तमी विभक्ति में हिन्दी या मथिली में ही 'में' का प्रयोग मिलता है। कहीं-कहीं वाक्य विन्यास में भी अन्तर है। कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं[1]।

भानुसिंह ठाकुरेर पदावली में इस प्रकार कुछ हिन्दी या मैथिली के समरूप कुछ विशेष प्रयोग प्राप्त होते हैं।

शेष शब्द और वाक्य परम्परागत ब्रजबुलि भाषा के अनुसार हैं[2]। गुरुदेव ने अपने शब्द-तत्त्व नामक प्रबन्ध में हिन्दी के विशेष कवियों के कुछ उद्धरणों और किंचित हिन्दी की विभाषाओं की तुलनात्मक व्याकरण का भी अंकन किया है[3]। गुरुदेव की अन्यान्य रचनाओं में भी कुछ हिन्दी शब्द प्राप्त हो सकते हैं[4]।

३ हिन्दी संत साहित्य का प्रभाव

विद्यापति की परम्परा के पश्चात् गुरुदेव हिन्दी संत कवियों के साहित्य के सम्पर्क में आए। इस प्रसंग में सन्तों के विषय में लिखना कुछ आवश्यक हो सकता है। संत मत (निर्गुण सम्प्रदाय) का प्रभाव समस्त भारतीय समाज एवं साहित्य पर पड़ा है। कबीर, दादू, नानक, सुन्दरदास एवं रज्जब आदि सन्त सारे देश की विभूतियाँ हैं। भारतीय समाज गठन साहित्य सृजन एवं देश के नैतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक विकास में इन सन्तों की देन अनुपम है। भारतीय संस्कृति का उज्ज्वल आदर्श इन सन्तों ने प्रकट किया है। संत मत भारतीय समस्त विचार धाराओं का सारांश है। वैदिक एकेश्वरवाद जैन धर्म के अहिंसावाद बौद्ध-धर्म के उदारतावाद पौराणिक वैष्णव धर्म की विशाल हृदयता सिद्धों का खण्डन-मण्डन,

---

१ 'मोतिम हारे वेश बनाये सीँथी लगाये भाले'

(रवीन्द्र रचनावली हि० खंड पृ० १८)

'अब सो मधुरपुरक पंथमे हैं जब रोयत राधा'

(वही पृ० २२)

'अब को स्याम सो मथुरा पर को राज्य मानको होय'

(वही पृ० २१)

'पद तले अपना खोय को दुःख बोलबि भोय'

(वही, पृ० २७)

२ परम्परागत ब्रजबुलि में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्द इस प्रकार हैं
सर्वनाम—सो सब मधु, तोम हम तुम, हमारा आदि।
विशेषण—सब कहि कभु कहाँ तब आदि।
क्रिया—कहत उठत, हेरिया, डारिया राखत बरखत निकसत आदि।

३ रवीन्द्र रचनावली द्वादश खण्ड पृष्ठ ६६८ ६६७।

४ फेरि बाला गोरा उपन्यास'।

अक्खड़पन, फक्कड़पन, नाथों की नाद-बिन्दु एवं योग-साधना और उमटवादियों का अद्भुत समन्वय सन्त-दर्शन एवं साहित्य में प्राप्त होता है।

हिन्दी-साहित्य के प्रसार, प्रचार एवं विकास में इनका योगदान बहुत है। अन्य भारतीय भाषाओं के साहित्य पर भी सन्तों का प्रभाव पड़ा है। भारत की महान् विभूतियाँ इनसे प्रेरणा लेती रही हैं।

भारत के महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने भी मुक्तकण्ठ से इन सन्तों की साधना एवं काव्यानुभूतियों की भूरी भूरी प्रशंसा की है। अपने जीवन-दर्शन एवं साहित्य में भी उनकी विचारधारा को आत्मसात किया है। वे भी उनके देशव्यापी प्रभाव से अभिभूत हैं। बंगाल के बाउल सम्प्रदाय की भी कुछ न कुछ विचार परंपरा सन्तों से प्रभावित है। वैसे तो समस्त सन्तों की वाणी में आश्चर्यपूर्ण समरसता, माधुर्य, एकता और एक भावमयता है। किन्तु कबीर सन्त-मत के मुकुट-विहीन सम्राट हैं, उनका स्वर सबसे दृढ़, गम्भीर और ओजस्वी है। संत मत का प्रभाव उत्तरी भारत की संस्कृति पर ही विशेष है। विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर का चिन्तन गम्भीर और उनकी कल्पना देश एवं कालातीत है। इसके व्यक्तित्व में पुरातन मध्ययुगीन और नूतन पूर्व-पश्चिम की विचारधाराओं का समन्वय है। वे दार्शनिक एवं अद्भुत प्रतिभाशाली कवि हैं। अतः यह स्वतः सिद्ध है कि प्रत्येक कवि अपने पूर्वजों का थोड़ा-बहुत ऋणी होता ही है। गुरुदेव भी इस सत्य के अपवाद नहीं हैं। उनके काव्य में संस्कृत कवियों का प्रभाव है। फारसी और रोमान्टिक अंग्रेजी कवियों की उन पर छाप है। यद्यपि वे विश्वकवि हैं तथापि उनकी मौलिकता निर्विवाद है। फिर भी भारतीय और पश्चिम के दर्शनों और साहित्यकारों का प्रभाव उन पर स्वतः ही पड़ा है, जिस प्रकार पुष्प में सुगंध और सौन्दर्य का संयोग स्वाभाविक है। गुरुदेव मैथिल-कोकिल, विद्यापति-ठाकुर, बंगाली-वैष्णव पदकर्त्ताओं एवं बंगाल के बाउल सम्प्रदाय के साहित्य-परम्परा के परवर्ती कवि हैं। अतः गुरुदेव पर इनका प्रभाव परम्परागत है।

गुरुदेव निराकार निर्गुण ब्रह्म के उपासक हैं। उनको यह परम्परा उपनिषदों ब्रह्मसमाज और महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर से पैतृक-सम्पत्ति के रूप में प्राप्त हुई है। किन्तु उनके रहस्यवादी-साहित्य (Mystic-Literature) पर हिन्दी सन्तों का रंग भी है। जैसा कि डा० शशिभूषणदास गुप्त का मत है, "औपनिषदिक-चित्रपट पर वैष्णव प्रणय कवियों ने बंगाल के मरमिया बाउलों ने और ऊपरी प्रदेश उत्तर भारत के रहस्यवादी संतों कवियों ने उदाहरणतया कबीर, दादू रज्जब और दूसरों ने विविध छायाओं के रंग और रेखायें प्रदान की हैं"[१]।

---

१ On the Upanisadic canvas the Vaishnava love poets and the mystic Bauls of Bengal and other mystic poets of upper and

प्रोफेसर वी० लेसनी का मत है कि कबीर के धार्मिक काव्य का रवीन्द्रनाथ पर प्रभाव के परिणाम-स्वरूप उनके सौ पदों का अनुवाद है, इन पदों का संचय और सम्पादन उन्होंने अंग्रेज भाषा भाषी जनता के लिए किए १९२१ ई० में किया था।[1]

अनुवाद से ही एक कवि का प्रभाव दूसरे कवि पर पड़ जाता है ऐसा कहना वास्तव में सत्य से दूर है। यह बहुत गम्भीर और विचारणीय विषय है। एक कवि पर दूसरे कवि के प्रभाव के अनेक कारण हो सकते हैं, जैसा कि पहले कहा जा चुका है। पूर्ववर्ती परम्परा साहित्य-सौंदर्य के प्रति आकर्षण सांस्कृतिक अथवा धार्मिक गौरव एवं उत्थान-पतन एक जाति का दूसरी जाति पर राजनीतिक प्रभुत्व आदि कारण हो सकते हैं। किन्तु गुरुदेव पर हिन्दी सन्त-साहित्य का प्रभाव आदान प्रदान की भावना से आया प्रतीत होता है। गुरुदेव स्वयं लिखते हैं कि मैं हिन्दीभाषी लोगों के निकट सम्पर्क में आने के लिए उत्सुक हूँ। यहाँ हम लोग संस्कृति प्रचार के लिए जितना भी कुछ कर सकते हैं कर रहे हैं। हम चाहते हैं कि हिन्दी भाषी लोग आएँ, हमारे अनुभव में हिस्सा बटाएँ और अपने अनुभव से हमें लाभान्वित करें।[2]

यह सत्य है कि प्रत्येक परवर्ती कवि पूर्ववर्ती कवियों से न्यूनाधिक रूप में प्रभावित हो ही जाते हैं। विश्व के बड़े से बड़े कवि इस नियम के अपवाद नहीं हैं। गुरुदेव की गगनोपम उन्मुक्त प्रतिभा में भी रंग बिरंगे अनेक महाकवियों के इन्द्रधनुषों की छटाएँ और छवियाँ हैं।

रवीन्द्रनाथ ने हिन्दी के निर्गुणमार्गी सन्तों और सगुणोपासक वैष्णव-भक्तों को बहुत श्रद्धा की दृष्टि से देखा है। वे अनेक स्थलों पर सन्तों और भक्तों की वन्दना करते हैं। वे लिखते हैं। 'मेरे अपरिचित हिन्दी-सत्य के महल में काव्य के विशुद्ध रसरूपादि कब [illegible] खोजे इस समय एक दिन क्षितिमोहन महाशय के मुख से बघेलखण्ड के कवि रामदास के एक दो हिन्दी पद 'आपके गौरव से ही गौरवान्वित

northern India viz. Kabir Dadu Rajjab and others, have supplied lines and colours of different shades, obscure Religious cults.
—Introduction pp 101

१ The influence of Kabir's religious poetry on Tagore is witnessed by the fact that in 1921 he himself edited a selection of these poems for the English-speaking public—prof. V Lesny Rabindranath Tagore's works and his personality

२ I am anxious to come in touch with Hindi speaking people we are doing here what little we can for the spread of culture, we want *Hindi-speaking* people to come here, share our experience and give us the benefit of their experience
—Vishwal Bharat P 18 Ravindra Vishashank 1942.

हूँ, मात्र के रूप से ही समझती हूँ" मेरे कानों में पड़े मैं बोल उठा यह तो पा गया सार वस्तु, इससे ऊपर और कुछ सार नहीं। ज्ञानदास की कविता जब मैंने सुनी तब यह विचार बार बार मन में आया, यह तो आधुनिकतम है आधुनिक बोलते समय मैं इसी समय की वस्तु नहीं कहता हूँ। यह सब कविता चिरकाल के लिए आधुनिक है। इसको किसी काल विशेष की नहीं कह सकते। यह सब कविता चिरकाल आधुनिक है।[1]

विशेषकर कबीर के प्रति उनकी निष्ठा और आकर्षण विशेष रहा है। सन्तों की विचारधारा कई अंशों में गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय (चैतन्य वैष्णवधर्म) के साथ मिलती जुलती है। बंगाल का बाउल सम्प्रदाय भी कुछ न कुछ हिन्दी सन्तों सहजियों तथा सूफियों के रंग में रंगा है। रवीन्द्रनाथ इसी परम्परा के परवर्ती कवि हैं।

आचार्य क्षितिमोहन सेन समस्त देश में साधु-सन्तों के अखाड़ों में घूमे हैं। शांतिनिकेतन में उनका आगमन सन्तों के ज्ञान भण्डार और काव्यामृत के साथ हुआ। उन्होंने ही सन्त ज्ञान वाणी भण्डार का उद्घाटन रवीन्द्रनाथ के सामने किया। स्वयं गुरुदेव ने भी क्षितिमोहन सेन को सन्तों की वाणी का संकलन प्रकाशन और प्रचार करने के लिये अनुरोध किया था[2]। शांतिनिकेतन में हिन्दी भवन के स्थापित होने के पहले ही क्षितिमोहन हिन्दी के कल्पतरु बन गये। "हिंदी को राष्ट्रभाषा का पद राजनीतिक-स्वतन्त्रता के कारण मिला है, किन्तु उसका सांस्कृतिक-मिशन इससे गुरुतर है रवीन्द्रनाथ ने इस सत्य का साक्षात्कार किया था[3]।"

---

१ आमार अपरिचित हिन्दी-सन्तेर महले काछेर बिशुद्ध रसरूपादि यखन शुनछिलुम एमन समय एक दिन क्षितिमोहन सेन मशायेर मुख थेके बघेलखण्डेर कवि ज्ञानदासेर सुर एकटि हिन्दी पद (तोमार परश पराविनि आमि कनवि तोमार कर्से) आमार काने एल। आमि बले उठलूम एइत पायो था पॅल। एटि जिनिस एक बारे परम जिनिष एर उपरे आर तान चलेना। ज्ञानदासेर कविता यखन शुनलूम तखन एइ कथाटि बार बार मने एल ए ये आधुनिकतम। आधुनिक बलते आमि एइ कालेरई विशेष खादिर जिनिष बुझि ना। ए सब कविता चिरकालइ आधुनिक। —दादू भूमिका।

२ आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी का 'कबीर' नामक समालोचनात्मक ग्रंथ भी गुरुदेव की प्रेरणा से लिखा गया था। देखिये—'कबीर' भूमिका।

३ राजनैतिक कारणहेतु आज भारते हिन्दीके राष्ट्रभाषा रूपे आवश्यिक करिबार जन्य चेष्टा चलितेछे, किन्तु एइ सब आंदोलनेर बहुवत्सर पूर्व सांस्कृतिक दिक हइते हिन्दी चर्चार ये सविशेष प्रयोजन आछे, एकथा रवीन्द्रनाथ स्वीकार करियाछिलेन। —रवीन्द्र-जीवनी चतुर्थ खण्ड पृष्ठ १२१।

श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय का कथन है, "इनको छोड़कर कवि के धर्म सम्बन्ध में जो ज्ञान अब तक उपनिषदों तक ही सीमित था उसका विस्तार साथ मध्ययुगीय सन्तों के जीवन में हुआ। इन सन्तों की वाणी में कवि ने अपनी अन्तर की वाणी का प्रतिबिम्ब प्राप्त किया। उन्होंने समझा कि वे भारत की धर्मसाधना की धारा को वहन करते आ रहे हैं। वे निःसंग नहीं हैं[1]।"

श्री क्षितिमोहन सेन का मत है "उन्होंने विश्वभारती में इस कार्य के लिये रचना करने के लिए अवसर प्रदान किया था। मध्ययुग के साधकों की गम्भीर वाणी के रस-सम्भोग में रसानुभव निपुण उनकी जो उपयुक्त प्रतिभा देखी, इस प्रकार अन्य कहीं नहीं देखी[2]।"

गुरुदेव हिन्दी-सन्तों के विषय में लिखते हैं 'जब हम भारत की इस आंतरिक साधना को धारावाहिक रूप में स्पष्ट देखते हैं तब हम भारत के प्राणवान इतिहास को पाते हैं, इससे अधिक हमें और कहीं नहीं मिलता—सुहृदय वर क्षितिमोहन सेन की धारा प्रवाहा रूप में मध्ययुगीय साधनार धारा ग्रंथ में इसका अनुसरण करते हैं[3]।
आगे फिर लिखते हैं, "क्षितिमोहन बाबू के कल्याण क्रम में हिन्दुस्तान के और साधक कवियों के साथ मेरा कुछ परिचय हुआ, आज मेरा सन्देह नहीं है, जो हिन्दी भाषा में एक बार जिस गीत-साहित्य का आविर्भाव हुआ था। उसके वर्षे में अमर सुधा की बरसाता है; अनादर की ओट में आज वे बहुत आच्छन्न हैं। उद्धार करना चाहिए। ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जो हिन्दी भाषा नहीं जानते हैं वे भी चिरकाल इस साहित्य

---

१ ए धारा कविर धर्म सम्बन्धे ये ज्ञान एतकाल उपनिषदेर मध्ये आबद्ध छिल, ताहा विस्तार लाभ करिल मध्ययुगीय सन्तदेर जीवनेर मध्य। एइ सन्तदेर वाणीर मध्ये कवि ताँहार अन्तरेर वाणीर छाया पाइलेन। तिनि बुझिलेन ये तिनि भारतेर धर्म साधनार धारा वहन करिया आसितेछेन, तिनि निःसंग नहेन। —रवीन्द्र जीवनी द्वितीय खण्ड पृ० १८८।

२ " तिनि विश्वभारती ते एइ कार्येर अवसर ओ रचना करिया दियाछेन (मध्य)। युगेर साधकदेर गंभीर वाणी रससंभोगे रसानुभव निपुण ताँहार ये सम्यक प्रतिभा देखियाछि एमन आर काहार ओ देखि नाइ।" —रवीन्द्र जीवनी चतुर्थ खण्ड पृ० १२२।

३ 'भारतेर एइ आन्तरिक साधनार धारावाहिक रूप यदि आमरा स्पष्ट करे देखते पेतुम ताहाले भारतेर प्राणवान् इतिहास ये कोनखाने ता आमादेर गोचर हते पारत। सुहृदय वर क्षितिमोहन सेन अनुसरण करे रखेछेन [भारतीय मध्ययुगे साधनार धारा] ग्रंथे भारतवर्षेर युगीयकालेर सेइ चित्त प्रवाहेर पथटिके तार भिन्न-भिन्न धाराय।" —वही पृष्ठ १२२।

को अपना उत्तराधिकार मानकर गौरवान्वित हों[1]। रवीन्द्रनाथ ने अपनी बहुत रचनाओं के लिए क्षितिमोहन सेन का ऋण स्वीकार किया है। उत्तरी भारत के सन्तों और बंगाल के बाउल आदि की वाणी का संचय उन्होंने क्षितिमोहन से प्राप्त किया। गुरुदेव ने सन्त विचारधारा को बहुत सहृदय-पूर्ण दृष्टि से देखा है, जैसा कि मी एवलिन अंडरहिल का मत है "यह कबीर के गीतों का अनुवाद मुख्यतया श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर का कृतित्व है। उनके रहस्यवादी प्रतिभा की प्रवृत्ति जिन्होंने इन कविताओं को पढ़ा है वे देखेंगे कि वे कबीर के दृष्टिकोण और विचारों के विचित्र सहानुभूति पूर्ण व्याख्याता हैं[2]।"

गुरुदेव मध्ययुग के साधक कवियों के विषय में लिखते हैं 'मनुष्य के अन्तवर्ती जो सृष्टिकर्ता भगवान् का स्पर्श मध्ययुग के साधक कवियों ने पाया था वह शास्त्र वर्णित नहीं है। वह मन में प्राण में हृदय में आविष्कृत अद्वैत परमानन्द स्वरूप है। उनके लिए उनकी मंत्र पढ़ने से पूजा नहीं होती। गीतों से उनका आरोहण होता है। वह सत्य रूप में प्रत्यक्ष सहज सुन्दर रूप में, जीवन में आविर्भूत हुआ। काव्यरूप में प्रकाशित हुआ। हमारे साधक कवियों का हृदय ही उनके गीतों का उत्स था वे एक राम को आनन्दस्वरूप आत्मा में प्राप्त करते थे। क्षिति बाबू से सुनता हूँ कि हमारे देश में ऐसे लोगों को मरमिया कहते हैं। इनकी दृष्टि इनका स्पर्श मर्म में है। इनके पास सत्य का बाह्य स्वरूप नहीं है। उसके भीतर का मर्म स्पर्श है। आज के युग में राजा राममोहनराय ही हमारे देश के मुक्ति प्रदाता हैं। जिससे प्रतीत होता है कि कबीर नानक, दादू आदि ने भारत की सत्य साधना का वहन किया था। उन्हीं

---

१ क्षितिबाबूर कल्याणे आमि हिन्दुस्थानेर मध्ये कोनो कोनो साधक कविर संगे आमार किछु किछु परिचय हल। आज आमार सन्देह नाइ ये हिन्दी भाषाय एकदा ये गीत-साहित्यर आविर्भाव हयेछे तार मध्ये अमर सभार वरमाल्य। अनादरेर माझखाने आज तार अनेकटा आच्छन्न उद्धार करा चाइ, आर एमन व्यवस्था हओया चाइ याते भारतवर्षेर यारा हिन्दी भाषा जाने ना तारओ येन एइ चिरकालेर साहित्ये आपन उत्तराधिकार गौरव भोग करते पारे।

—दादू की भूमिका। रवीन्द्र जीवनी चतुर्थ खंड पृ० १२२।

२ This version of Kabir's songs is chiefly the work of Mr Rabindranath Tagore. The trend of those mystical genius makes him as all who read these poems will see a peculiarly sympathetic inter reter of Kabir's vision and thought.

—One hundred poems of Kabir introduction p 43.

साधना का प्रवाह आज हमारे प्राणों के क्षेत्र को परिव्याप्त किए हुये है।[१]

गुरुदेव पुनः सुन्दरदास ग्रन्थावली के प्राक्कथन में अपना मत प्रकट करते हैं—"दुर्भाग्य से मेरा अधिकार हिन्दी भाषा पर नहीं है। किन्तु बंधुवर आचार्य क्षितिमोहन सेन की सहायता से हिन्दी भाषा में लिखित संत-साहित्य के प्रति मेरे हृदय में गंभीर श्रद्धा एवं अनुराग उत्पन्न हो गया है। इस सम्बन्ध में अब तक जिस प्रकार की रचनाओं से मेरा परिचय हुआ है। उसकी तुलना और किसी भी साहित्य में नहीं मिल सकती। इस समय देश में ऐसे बहुत लोग हैं जो भारत की राष्ट्रीय साधना की सिद्धि के रूप में हिन्दी भाषा के प्रचार की कामना करते हैं किन्तु आधुनिक भारत की विभिन्न भाषाओं में ऐसी कोई भी भाषा सम्पूर्णतया अभीष्ट नहीं है, जिसके द्वारा सामयिक प्रयोजनों की पूर्ति हो सके। कोई भी भाषा अपने साहित्य की दृष्टि से ही अपने प्रति श्रद्धा उत्पन्न कर सकती है। इस प्रकार का विशेष महत्व हिन्दी भाषा के साहित्य में यथेष्ट रूप में पाया जाता है। मध्य-युग के साधक कवियों ने हिन्दी भाषा में जिस भावधारा का ऐश्वर्य विस्तार किया है। उसमें असाधारण विशेषता पायी जाती है। वह विशेषता यही है कि उनकी रचनाओं में उच्चकोटि के साधक एवं कवियों का एकत्र मिलन हुआ है। इस प्रकार का संयोग सर्वत्र ही दुर्लभ है[२]।

---

१ मानुषेर अन्तवर्ती सेइ सृष्टिकर्ता मध्य-युगेर साधकदेर मध्ये ये भगवानेर स्पर्श पेयेछिलेन तिनि मने प्राणे हृदये आविर्भूत हइ त परमानन्दस्वरूप। सेइ सम्बन्ध मध्ये पड़े तारा पूजा हवना नाम दिये तारा आरोहण हन। तिनि प्रत्यक्ष सत्य रूपे जीवने आविर्भाव हयेछिलेन बले सहज सुन्दररूपे काव्ये प्रकाश पेयेछेन। आमादेर साधक कविदेर अंतर थेके आमेर सत्य एमनि करेइ सुगमे तारा धाम के आनन्दस्वरूप परम एकके आत्मार मध्ये पेयेछिलेन। क्षितिबाबु आजे बुझिय आमादेर देखे एदेर अनेर लोकके बले याके अरभिमा' एदेर दृष्टि; एदेर स्पर्श मर्म्मेर मध्ये एदेर काछे आसे सत्येर बाहिरेर मूर्तिमय तार मर्म्मेर स्वरूप। आजकेर दिने यथा राममोहनराय आमादेर देशे ये धर्मोपदेश ताके बुझते पारि ये कबीर, नानक दादू आदेर से सत्य साधना के ग्रहण करेछिलेन धारा ओ सेइ साधनार प्रवाह आमादेर प्राणेर क्षेत्र परिव्याप्त करे छि। (दादू भूमिका)

२ दुर्भाग्य क्रमे हिन्दी भाषाय आमार अधिकार नय किन्तु बंधुवर श्रीयुत क्षितिमोहन सेनेर जनत भाषाय लिखित सन्तदेर साहित्येर प्रति आमार गंभीर श्रद्धा ओ अनुराग जन्मियाछे, एइ उपलक्ष्ये एमन सकल रचनार सहित आमार परिचय घटियाछे अपर कोन साहित्ये ताहार तुलना नाइ। अनेके आधुनिक भारतेर राष्ट्रीय साधनार वाहन रूपे हिन्दी भाषार प्रचार कामना करेन।

बँगला साहित्य के इतिहासकारों समालोचकों और विद्वानों के मत भी इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय हैं। बँगला-साहित्य के महान् इतिहासकार डॉ० सुकुमार सेन का मत है "गीतांजलि गीतिमाल्य गीतालि के युग में रवीन्द्रनाथ ने उत्तर-पश्चिम भारत के मरमिया कवियों की रचनाओं का परिचय प्राप्त किया था। मरमिया बाउल कवियों की मानस प्रकृति के साथ रवीन्द्रनाथ की रस दृष्टि का साधर्म्य सहज था इस समय इस साधर्म्य ने रचनाओं में प्रकाश पाया"[1]।

डॉ० शशिभूषणदास का कथन है "मध्ययुग के संत कवियों का प्रभाव रवीन्द्रनाथ पर है। कथा ओ काहिनी' नामक पुस्तक में 'अपमान वर' कविता कवि की कबीर के प्रति श्रद्धा की द्योतक है[2]।" दादू के पदों का स्पष्ट प्रभाव है नानक का प्रसिद्ध पद "गगन में थालु रवि चंद दीपक बने तारिका मण्डल जनक मोति" कविता ब्रह्मसमाज कलकत्ता की प्रसिद्ध कविता है, ब्रह्म-संगीत में इसका अनुवाद—रवीन्द्रनाथ ने "गगनेर थाले रवि चन्द्र दीपक ज्वले" नाम से किया था।[3]

संतों में विशेषकर कबीर में खण्डन-मण्डन की प्रवृत्ति जातिवाद और रूढ़ियों का विरोध भी पाया जाता है। यह प्रवृत्ति रवीन्द्रनाथ में भी दृष्टिगोचर होती है। रवीन्द्रनाथ और कबीर की विचारधारा में बहुत साम्य पाया जाता है। दोनों ही

किन्तु कोन भाषार सामयिक प्रयोजन साधनेर उपयोगिता यथेष्ट यथेष्ट नहे। भाषा भाषनार प्रति आंतरिक श्रद्धाशाली करिते पारे। भाषनार साहित्येर मूल्य अथवा सेइ विशेष मूल्य हिन्दी भाषाय यथेष्ट परिमाणे आछे। मध्ययुगेर साधक कविरा हिन्दी भाषाके ये भावरसेर ऐश्वर्य विस्तार करियाछेन ताहार मध्ये असामान्य विशेषत्व आछे। सेइ विशेषत्व एइ ये ताँहादेर रचनाय उच्च अंगेर साधक एवं उच्च अंगेर कवि एकत्रे मिलित हइयाछेन। एमन मिलन सर्वत्र दुर्लभ। —मु० सं० प्रथम खंड प्राक्कथन पृ० १।

१ गीतांजलि-गीतिमाल्य-गीतालिर युगे रवीन्द्रनाथ उत्तर पश्चिम भारतेर मरमिया कविदेर रचनार परिचय लाभ करिलेन। मरमिया-बाउल कविदेर मानस प्रकृतिर संगे रवीन्द्रनाथेर रस-दृष्टिर साधर्म्य छिल निविड़। एखन साधर्म्य प्रकाश अवसर पाइल रचनाय। —डॉ० सा० इ० तृतीय खंड पृ० १६०।

२ लेखक की इस विषय पर डॉ० दास गुप्त से कलकत्ता-विश्वविद्यालय बँगला विभाग में ११.१२.५८ को चर्चा हुई। उन्होंने इस ओर संकेत किया देखिये— कथा ओ काहिनी 'अपमान-वर' में 'भक्त कबीर सिद्ध पुरुष ख्याति पड़िया छे देशे' ——पृ० ६२ कविता रवीन्द्रनाथ की कबीर के प्रति श्रद्धा की परिचायक है।

३ प्रस्तुत प्रबन्ध चतुर्थ अध्याय पृ० २८७ ब्रह्म-संगीत पृ० १०७-१०८ बँगला और पाठ पृष्ठ ६१२।

रहस्यवादी होते हुए भी गृहस्थ-आश्रम को ही सर्वश्रेष्ठ मानते हैं। दोनों पुराणपंथी (Orthodoxy) पर कुठाराघात करते हैं। दोनों ही विचार स्वातंत्र्य के पुजारी हैं। दोनों ही निराकार निरंजन ब्रह्म के उपासक हैं। दोनों ही मानवता के पुजारी हैं। जैसा कि इस संबंध में श्री प्रियरंजन सेन का मत द्रष्टव्य है कि रवीन्द्रनाथ ने अपनी अनेक रचनाओं में धर्म के विषय में हमारे विचारों में एक उदार-दृष्टिकोण उत्पन्न करने का प्रयत्न किया। नि:सन्देह यह सत्य है कि वे अनेक बार सिद्धान्त-विशेष और परम्परागत लकीरों से बहुत कतराते थे उन्होंने इन हर प्रकार के जीर्ण-शीर्ण भ्रम विश्वासों के विरुद्ध घोर संग्राम की घोषणा की। किन्तु इसके साथ वे किसी निश्चित संकुचित मत विशेष से नहीं चिपके। मध्यकालीन संत और भक्त उदाहरणतया कबीर आदि उनके प्रिय कवि रहे हैं। उनके अध्ययन के पुनर्जीवन के लिए उन्होंने यथाशक्ति प्रयत्न किये। इसी प्रकार अपना सामर्थ्य उन एक ब्रह्म के उपासकों के साथ प्रस्तुत किया। जिन्होंने अपने हृदयों से अत्यन्त भक्तिपूर्ण गीतों की वर्षा की थी[1]। श्री क्षुदीरामदास का विचार है—वे किसी धर्म सम्प्रदाय के भीतर नहीं हैं उन्होंने अपने मानस का सहज भाव से विकास किया था। उनकी साधना मध्य युग के कबीर, दादू और मरमिया बाउल के सम्प्रदाय की साधना की कोटि थी। वे इस कविता में स्पष्ट भाव से व्यक्त करते हैं —

> आमि ब्रात्य आमि मंत्रहीन,
> सकल मंदिरेर बाहिरे
> आमार पूजा आज समाप्त हल
> देवलोक थेके
> मानवलोके,

कवि आमि ओदेर दले—
आमि ब्रात्य आमि मंत्र हीन,
दकतार बन्दीशालाय
आमार नैवेद्य पौंछलना

—रवीन्द्र प्रतिभार परिचय पृ० २६६-७० ।

1 Rabindra Nath in his various writings has done much in infusing a liberal idea in our thoughts on religion It is no doubt true he has time and again fought shy of dogma and traditional ways, that he has declared war to the bitter and against hoary-headed superstition in all forms and shapes but at the same time he has refused consistently to hitch his wagon to the yoke of any definite and consequently limited creed.

The mediaveal sages and devotees, Kabir for example have been his favourite authors and he has done his best in reviving their study thus linking himself to those worshippers of the one God who poured out their hearts in intensly devotional songs."

—Western influence in Bengali Literature Page 266.

मूलतः रवीन्द्रनाथ का रहस्यवाद उपनिषदों की पृष्ठभूमि पर खड़ा है विशेषकर औपनिषदिक रहस्यवाद बुद्धि प्रधान अधिक है किन्तु कबीर का रहस्य भाव उनकी दिव्य-अनुभूतियाँ हैं। वे सरस हैं किन्तु जहाँ भावनात्मक या रसात्मक रहस्यवाद का प्रश्न है वहाँ गुरुदेव और कबीर के भावों में बहुत साम्य है। जैसा कि श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य का मंतव्य है कि वृक्ष जिस प्रकार सबसे अदृश्य वायु से प्राण वायु ग्रहण कर मिट्टी के नीचे सिकुड़कर और रस पाकर बढ़ता है वैसे ही रवीन्द्रनाथ का कवि मानस भी उपनिषदों की रसवायु से वृद्धि को प्राप्त हुआ है। उपनिषदों ने ही बहुत परिमाण में रवीन्द्रनाथ के कवि मानस का गठन किया है, एक विशेष प्रकार की भाव-दृष्टि का अधिकारी बनाया है। उपनिषदों के साथ-साथ वैष्णव दर्शन के अचिन्त्यभेदाभेद तत्त्व और लीलावाद हीगेल के आदर्श-यथार्थवाद (Ideal Realism) मतवाद बर्कले के पौत्तलिकत्व और—कबीर, दादू प्रभृति मरमी साधुगणों के आध्यात्मिक रसमूलक कविता का प्रभाव कुछ अंशों में पड़कर उनके कवि मानस गठन में सहायता की है।[1]

भारत की भक्ति-साधना रहस्यवाद के साथ उत्पन्न हुई है। जैसा कि श्री अजितकुमार चक्रवर्ती का मत है, "उपनिषद को ही वेदान्त अथवा श्रेष्ठ विद्या कहते हैं इनके सामने भारत के सकल तत्त्व-शास्त्र नतमस्तक होकर खड़े हैं। अर्थात् उनको साधकों के गम्भीरतम अध्यात्म उपलब्धि का अपूर्व प्रकाश उद्घोषित कर चिरकाल से भारतवर्ष श्रद्धा करता हुआ आ रहा है। भगवद्गीता श्रीमद्भागवत् प्रभृति सकल शास्त्रों से एक धारा तत्त्वज्ञान की ओर गई है। दूसरी धारा काव्य और संगीत की ओर गई है। ये दोनों धारायें ही भारत में चिरकाल से परस्पर एक दूसरी को परिपुष्ट करती हुई आ रही हैं। इसी कारण भारत का श्रेष्ठ धर्म संगीत

---

१ वायु येमन वृक्षेर अलक्ष्ये आकाश हइते प्राणवायु टानिया लइया ओ माटिर नीचे शिकड़ हइते रस टानिया निया वर्धित हय रवीन्द्रनाथेर कवि मानस ओ उपनिषदेर रस ओ वायुते वर्धित हइया छे। उपनिषदइ रवीन्द्रनाथेर कवि मानस के बहुल परिमाणे गठित करियाछे ओ एकटो भावदृष्टिर अधिकारी करियाछे। उपनिषदेर संगे वैष्णव दर्शनेर अचिन्त्यभेदाभेद तत्त्व ओ लीला वाद हेगेलेर (Ideal Realism) मतवाद वार्कलेर पौत्तलिकत्व ओ कबिर दादू प्रभृति मरमी साधुगणेर आध्यात्मिक रसमूलक कविताट प्रभाव एकटो किछु परिमाणे पड़िया ताहार कवि मानस गठने सहायता करियाछे।

—रवीन्द्रनाथ-साहित्य परिक्रमा प्रथम खण्ड पृष्ठ ४१।

यूरोपीय धर्म संगीत की तरह भक्तियों द्वारा विरचित नहीं है। यह तत्त्वदर्शी साधक कवियों की रचना है।[1]

अतः हमारा धर्म-साहित्य भी रस-सौन्दर्य को त्याज्य नहीं ठहराता है। जैसा कि श्री क्षितिमोहन का विचार है कि रवीन्द्रनाथ के धर्म संगीत के साथ सद्‌गुरु कबीर के धर्म काव्य का योग अत्यन्त सुस्पष्ट है। यह भारत की भक्ति-साधना के साथ संयुक्त है। हमारे साधक भक्त कवियों ने केवल रसहीन नीतिबोध का आश्रय नहीं लिया। हमारा धर्म-साहित्य रसरूप रूपी उत्तराधिकार को अस्वीकार नहीं करता। इसी कारण रवीन्द्र काव्य में कबीर के प्रभाव की ओर लक्ष्य करना संभव है। इसी से रवीन्द्रनाथ की भक्त कविता में रूप और सौन्दर्य कहीं भी अस्वीकृत नहीं हुआ। कबीर के गीत भी इस आनन्द में गुम्फित हैं।[2]

गुरुदेव की साधना का मूलमंत्र है :—

वैराग्य साधने मुक्ति से आमार नय
असंख्य बन्धन माझे महानन्दमय
लभिब मुक्तिर स्वाद

---

१ उपनिषदेर मध्ये वेदान्त ओ श्रेष्ठ-विद्या ताहारइ उपर भरकरिया सकल तत्त्व-शास्त्र भारतवर्षे नाना मूर्ति धरिया दाँड़ाइयाछे। अथच ताहाके साधकेर गंभीरतम अध्यात्मउपलब्धिर अपूर्व प्रकाशकरिया चिरदिनइ भारतवर्ष श्रद्धा करिया आसियाछे। भगवद्‌गीता श्रीमद्‌भागवत प्रभृति सकल शास्त्र संबन्धेई सेइ एक कथा—ताहा इहाते एकधारा मिलाछे तत्त्वज्ञानेर दिके अन्ये धारा गियाछे काव्य ओ संगीतेर दिके। एइ उभय धाराइ भारतवर्षे चिरकाल परस्पर के परिपुष्ट करिया आसियाछे। सेइ जन्य भारतेर श्रेष्ठ धर्मसंगीत गुलि युरोपेर धर्मसंगीतेर न्याय भक्तदेर द्वारा रचित नहे। ताहा तत्त्वदर्शी साधक कविदिगेर रचना।

—काव्य परिक्रमा पृ० ६२

२ रवीन्द्रनाथेर धर्मसंगीतेर सहित कबीरेर धर्मकाव्य गुलिर योग अत्यंत सुस्पष्ट। भारतेर भक्ति-साधनार सहित युक्त हइयाछे। आमादेर साधकगण भक्त कवि ताहरा शुधु रसहीन नीतिबोध के आश्रय करिया थाकेन नाइ। आमादेर धर्मसाहित्य रस रूपेर दाबिके अग्राह्य करे नाइ ताइ रवीन्द्र काव्ये कबीरेर प्रभाव लक्ष्य करा संभव। रवीन्द्रनाथेर भक्तकवितार रूप ओ सौन्दर्य कोथाओ अस्वीकृत हय नाइ। कबीरेर ओ एइ आनन्देर सुरे बाँधा।

कबीर का कथन है —

> कहै कबीर सिमुझ नहि मिलिहौं
> ज्यों तरवर छोड़ बन मापुरी [१]।

रवीन्द्रनाथ पर कबीर का प्रभाव अन्य संतों की अपेक्षा कुछ अधिक गहरा पड़ा है। उनके गीतों में रहस्य भाव को व्यक्त करने वाले प्रतीक अधिकांशत कबीर की साखियों से अनुप्रेरित जान पड़ते हैं[२]। अब कुछ उदाहरणों से संत साहित्य का प्रभाव गुरुदेव पर अधिक स्पष्ट हो सकेगा।

कबीर

कबीर का भावमूलक प्रभाव रवीन्द्रनाथ के अनेक पदों पर है। कबीरदास की रहस्य-साधना और रवीन्द्रनाथ के भगवद् प्रेम के आदर्श में बहुत साम्य है। इसको स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण आवश्यक हैं—

> आमि पथ तारा तव आकीसे
> सबे मोर प्राण-भरि-प्रकाशे

(गुरुदेव)

तुलनीय—

> या घट भीतर चन्द्र सूर है
> याही में नौलख तारा।

(कबीर)

पुनः—

> आमि रूपसागरे डुबदियेछि
> अरूप रतन आशाकरि

(गीतांजली गीत संख्या ४७ पृ० ५१)

तुलनीय—

> वारहि मूरत बीच अमूरत मूरत की बलिहारी[३]। (कबीर)

प्रणय व्यापार में भी दोनों में बहुत समानता है। जैसे—

> एकला आमि बाहिर हलेम तोमार अभिसारे
> साथे साथे के चले मोर नीरब अंधकारे।

---

१ देखिये रवीन्द्र साहित्येर परिचय पृ० ७२।

२ आलोचना पृ० ११०, २५ अंक जनवरी १९५८, ७ वर्ष अंक १—काव्यालोचन विशेषांक।

३ रवीन्द्रसाहित्येर परिचय पृ० ७१।

छाड़ते चाइ अनेक बार,
पूरे चलि, चाइ ये सरे,
मने करि आपन सेथि
आबर हेथि तारे ।
धरणी से काँपिये चले
विषय चंचलता ।
सकल कपार मध्ये से चाय
कहते आपन कथा ।
से ये आमार जानि प्रभु,
लज्जा ताहार चाइ ये कभु
तारे निये कौन लाजे वा
चाव तोमार द्वारे ।
(गीतांजलि, गीत संख्या १०३, पृ० ११५)

तुलनीय— पीतम बुलावत अनहद को पारसे
कौन बेशरमी आज तेर साथ जाइ[1] (कबीर)

प्रेम-व्यापार में दोनों ही प्रियतम से कोई लज्जा एवं दुराव छिपाव नहीं रखना चाहते हैं। क्योंकि किसी भी तरह का आवरण प्रेम में बाधक है।

जैसे— नीलाम्बरे छिपामाव तीर फेके एव बाव
ठेके दिये सब लाज सुनील बले।

तथा— येलयो बसन पुलाली अंचल पर धुइ तोवयेर लाज आवरणे।
सुर जासिकार येथ किरन बसन परिपूर्ण तनुखानि विकच कमल।
जीवनेर योवनेर लावण्येर मेला विश्विम विश्वेर माझे दाँड़ाओ एकेला ।

कबीर भी उसी भाव को अभिव्यक्त करते हैं—
निसदिन खेलत रही सखियन संग
मोहि बड़ा डर लागे ।
मोरे साहब की ऊँची अटरिया
चढ़त में जियरा काँपे ॥

1. देखिये—रवि रश्मि द्वितीय खण्ड पृ० १११।

जो सुख चाहे तो लज्जा त्यागे
प्रिय से हिलमिल लागे
घूँघट खोल अंगभरि भेंटे
नैन आरती साजै ।

रवीन्द्रनाथ की साधना भगवत् प्रेम का आदर्श है प्रेम और विरह के लिये उसमें स्थान है। कबीर भी प्रेम-विरह के कवि हैं। रवीन्द्रनाथ के भाव कबीर के साथ मिलते हैं। ये भाव गीतांजलि में अधिक समानता रखते हैं। जैसे—

× × ×
अरूप तोमार रूपेर लीलाय जागे हृदयपुर
आमार मध्ये तोमार प्रकाश एमनतु मधुर
× × ×
कत वर्णे कत गंधे कत गाने कत छंदे
× × ×
अरूप तोमार रूपेर लीलाय जागे हृदयपुर।
आमार मध्ये तोमार शोभा एमन सुमधुर
(गीतांजलि पृ० १२०, पृ० ११९)

तुलनीय—

जैसा मसके माहि मदमाँहि अंधी आँखिन सूझै नाहिं।
यहि घट चंदा यहि घट सूर, यह घट माहें अनहद तूर
(कबीर)

गुरुदेव की भक्त अभिसारिका का विरह विश्वव्यापी है—

हेरि अहरह तोमारि विरह
भुवने भुवने राजे हे
× × ×
सकल जीवन उदास करिया
कत गाने सुरे गलिया झरिया
तोमारि विरह उठिछे भरिया
आमार हियार माझे हे ।
(गीतांजलि गीत २४, पृ० १०)

कबीर में भी यह भाव नाना रूपों में व्यक्त हुआ है—

साँई बिन दरद करेजे होय

छाड़ते चाइ अनेक बार,
फूरे चलि, चाइ ये सरे,
मने करि आपन मेघे
आवार देकि तारे ।
धरणी से कांपिये चले
विपय चंचलता ।
सकल छयार मध्ये से चाय
कहते आपन कथा ।
हे ये आमार चापि प्रभु
लज्जा ताहार नाइ ये कभु
तारे निये कोन लाजे वा
चाव तोमार द्वारे ।
(गीतांजलि गीत संख्या १०१ पृ० ११५)

पुनश्च— पीतम बुलावत अनहद की धारसे
कोन बेशरमी काज हेर लाज आइ[1] (कबीर)

प्रेम-व्यापार में दोनों ही प्रियतम से कोई लज्जा एवं दुराव छिपाव नहीं रखना चाहते हैं। क्योंकि किसी भी तरह का आवरण प्रेम में बाधक है।

जैसे— नीलाम्बरे निवालाव हीरे ढेके एस नाथ
ढेके दिये सब लाज दुनीत वसे।

तथा— फेलगो वसन फुलाओ अंचल पर शुभ्र सोन्दर्येर लाल आवरणे।
दूर बालिकार वेश फिरण वसन परिपुण तनुखानि विकच कमल।
जीवनेर योवनेर लावण्येर मेला विचित्र विश्वेर माझे दाड़ाओ एकेला ।

कबीर भी उसी भाव को अभिव्यक्त करते हैं :—
निसदिन खेलत रही सखियन संग
मोहि बड़ा डर लागे ।
मोरे साहब की ऊँची अटरिया
चढ़त में जियरा कांपे ॥

---

१ देखिये—रवि रश्मि द्वितीय खण्ड पृ० १११।

जो सुख चाहे तो लज्जा त्यागे
प्रिय से हिलमिल लागे
घूंघट खोल अंगभरि भेंटे
नैन आरती साजे ।

रवीन्द्रनाथ की साधना भगवत् प्रेम का आदर्श है प्रेम और विरह के लिये उसमें स्थान है । कबीर भी प्रेम-विरह के कवि हैं । रवीन्द्रनाथ के भाव कबीर के साथ मिलते हैं । ये भाव गीतांजलि में अधिक समानता रखते हैं । जैसे—

× × ×
अरूप तोमार रूपेर लीलाय जागे हृदयपुर
आमार मध्ये तोमार प्रकाश एमनतु मधुर
× × ×
कत वर्णे कत गंधे कत गाने कत धरे
× × ×
अरूप तोमार रूपेर लीलाय जागे हृदयपुर ।
आमार मध्ये तोमार शोभा एमन सुमधुर

(गीतांजलि पृ० १२० पृ० ११६)

तुलनीय—

घंटा बाजै यहि घटमाँहि बाँधी जीवन सूझै नाहि ।
यहि घट बाजा यहि घट सुर यह घट गावें अनहद सुर

(कबीर)

गुरुदेव की भक्त अभिसारिका का विरह विश्वव्यापी है—

हेरि अहरह तोमारि विरह
भुवने भुवने राजे हे
× × ×
सकल जीवन उदास करिया
कत भावे सुरे गलिया भरिया
तोमारि विरह उठिछे भरिया
आमार हियार माझे हे ।

(गीतांजलि गीत २५, पृ० ३०)

कबीर में भी यह भाव नाना रूपों में व्यक्त हुआ है—

साँई बिन दरद करेजे होय

दिन नहिं चैन रात नहिं निदिया
कासे कहूँ दुख होय।
आधी रतियाँ पिछले पहरवा, साँई बिना तरस रही सेज
कहत कबीर सुनो भाई प्यारे, साँई मिले सुख होय।

तथा—

बाल्हा आव हमारे ग्रेहरे तुम बिन दुखिया देहरे।

कबीर की भाषा सरल है, रवीन्द्रनाथ की भाषा अलंकार प्रधान है। जि
भाव को कबीर सरलता से व्यक्त करते हैं गुरुदेव उस भाव को ही दार्शनि
गम्भीरता और छन्द-छन्द उपमाओं के साथ अंकित करते हैं। रवीन्द्र औपनिषदिक
रहस्यवाद के पुजारी हैं किन्तु उपनिषद का ऋषि साधक ही कभी वह भी
दुलहिन बनता हो किन्तु कबीर का तो रमैया की दुलहिन बने बिना काम नहीं
चलता। यही भाव रवीन्द्रनाथ ने अनेक रूपकों एवं प्रतीकात्मक शैली में चित्रित
किया है। जैसे—

से ये पाशे एसे बसे छिल तबु जागि नी,
की घुम तोरे पेयेछिल हतभागिनी।
एसे छिल नीरव राते वीणा खानि छिल हाते
स्वप्न माझे बाजिये गेल गंभीर रागिनी।

(गीतांजलि गीत ६१, पृ० ७२)

तुलनीय—

सोई सोहि लगन लगाये रे फकिरवा।
सोवत ही मैं अपने मंदिर में,
सब्दन मारि जगाये रे फकिरवा—।

तथा—

सपने में साँइ मिले सोवत [illegible] जगाय।
आँखि न खोलूँ [illegible]
[illegible] डरपती मति सपना ह्वै जाय।

भाव-साम्य [illegible]
के लिए [illegible]
कबीर भी उसी [illegible] के साथ-साथ कहीं-कहीं उपमा सादृश्य भी है। गुरुदेव प्रियतम
[illegible], सुन्दर, मधुर, प्रियतम प्राणसखा और राजा आदि का प्रयोग करते हैं।
कबीर भरतार, रामाराम साँइ, स्वामी प्रिये प्रियतम एवं बाल्हा आदि शब्दों का
प्रयोग करते हैं। उपमानों में समानता है। रवीन्द्र नाव, वीणा बाँसी तथा अनाहत
नाद आदि उपकरणों का आश्रय लेते हैं। कबीर वीणा, पट एवं अनहद नाद आदि
प्रतीकों की सहायता लेते हैं। जिस भाव की उपमा कबीर दुलहिया से देते हैं गुरुदेव
माता से। जैसे—

जो सुख चाहे तो लज्जा त्यागे
प्रिय से हिलमिल लागे
घूँघट खोल अंगभरि भेंटे
नन आरती साजे ।

रवीन्द्रनाथ की साधना भगवद् प्रेम का आदर्श है, प्रेम और विरह के लिये उसमें स्थान है। कबीर भी प्रेम-विरह के कवि हैं। रवीन्द्रनाथ के भाव कबीर के साथ मिलते हैं। ये भाव गीतांजलि में अधिक समानता रखते हैं। जैसे—

× × ×
प्रकाश तोमार कठोर शीतल आमि हृदयपुर
आमार मध्ये तोमार प्रकाश एमनतु मधुर
× × ×
कत वर्ण कत गन्धे कत गाने कत छन्दे
× × ×
प्रकाश तोमार कठोर शीतल आमि हृदयपुर।
आमार मध्ये तोमार शोभा एमन सुमधुर

(गीतांजलि पृ० १२० प० ११९)

तुलनीय—

जहा झलके महि घटमाँहि अंधी आँखन सूझे नाँहि।
महि घट अंदा महि घट दूर यह घट पावें अनहद तूर

(कबीर)

गुरुदेव की भक्त अभिसारिका का विरह विश्वव्यापी है—
दार्शनिकों में समान रूप से पाइ महाप्रह तोमारि विरह
भरेर मानुष भरेर मार्गे—है
एक बार विश्व वसु लुटे देखत पावि सब ठांऽ.
सब ठाँई मोर घर आछे आमि से घर हरि पूँछिय
देशे देशे मोर देश आछे आमि सेइ देश बुझिया।

तुलनीय—

दरियाव की लहर दरियाव है जी
दरियाव और लहर में भिन्न कोयम।

+ + +

---

१ 'कबीर' 'भगवत प्रेम का आदर्श'।

जगत की पैर सब जगत परब्रह्म में[1]
ज्ञान कर देख माल गोप्यम ।
(कबीर ग्रन्थावली पृ० १०)

मृत्यु के सम्बन्ध में दोनों ही कवियों के विचार एक जैसे हैं । जैसे—

केशव—एइ कुमार दुःख पारे हते संशय
जय मशानार जय ! (नैवेद्य)

कबीर—

जनम-मरन बीच देखो अंतर नाहीं
दच्छ और बाम यूँ एक आहीं ।
जनम मरन जहाँ तारी परत है
होत आनन्द तहँ गगन गाजै ।
उठत झनकार तहँ नाद अनहद घुरै—[1]

मृत्यु वंदनीय है और भगवान का वरदान है । दोनों ही कवि एक ही स्वर में इस मृत्युदेव का अभिनन्दन करते हैं । जैसे—

मिलन हवे तोमार साथे
एकदिन शुभ दृष्टि पाते
जीवन वधू हवे तोमार
नित्य अनुगता ।
मरण आमार मरण तुमि
कओ आमारे कथा ॥
वरण माला गाँथा आछे ।
आमार चित्त माझे ।
कबे नीरव हास्य—मुखे
आसबे बरेर साजे ।
से दिन आमार रबे ना घर
केइ वा आपन केइ वा अपर
बिजन राते पतिर साथे
मिलबे पतिव्रता ।
मरण आमार मरण तुमि
कओ आमारे कथा ।
(गीतांजलि गीत संख्या ११६, पृ० ११२ ११)

---
१ सत्येन्द्रनाथ मणिमंजूषा पृष्ठ ५४ ।

दुलनीय—

गावो गावोरी दुलहिनी मंगल चार।
हम घरि आये हो राजा राम भरतार।
तन रत करि मैं मन रत करि हूं पचतत बराती।
रामदेव मोर पाहुन आये मैं जोबन में माती।
× × ×
कहै कबीर हम ब्याहि चले
पुरुष एक अविनाशी।—

(संत सुधा सार, पृ० ११)

तथा—

जा मरने मरने से जग डर मेरे मन आनन्द—
किन्तु मर को पाहि है पूर्ण परमानन्द।

दादू

कबीर[1] की तरह अन्य सन्तों का भी गुरुदेव पर कुछ प्रभाव है। दादूवाणी का प्रभाव कहीं-कहीं दृष्टिगोचर होता है। उत्सर्ग के निम्नलिखित पद में दादू के एक पद का प्रभाव स्पष्ट है। यह पद रवीन्द्र काव्य में एक रूपक माना जाता है। प्रकृतिर प्रतिशोध में सन्यासी की उक्ति में भी यही भाव है[3]।

धूप आपनारे मिलाइते चाहे गंधे
गंध से चाहे धूपेरे रहिते जुड़े।
सुर आपनारे धरा दिते चाहे छंदे
छन्द फिरिया छुटे येते चाय सुरे।
भाव पेते चाय रूपेर माझारे आङ्ग।
रूपपेते चाय भावेर माझारे छाड़ा,
असीम से चाहे सीमार निविड़ संग
सीमा चाय हते असीमेर माझे हारा।

1 देखिये—रवि रश्मि द्वितीय खण्ड पृ० २६।
2 आचार्य क्षितिमोहन सेन पर भी हिंदी सन्तों का प्रभाव माना जा सकता है। गुरुदेव के अतिरिक्त श्री हरिदास राय श्री भूमानन्द स्वामी, श्री धीरेन्द्र कुमार पंचोली श्री मीतिभास राय गुणगुरु पूर्णचन्द्र मुखर्जी योगेन्द्रनाथ मजूमदार आदि सज्जन भी कबीरदास आदि सन्तों के पदों व आत्मकथा आदि की परम्परा बंगाल में सुरक्षित रखे हुए हैं।
3 ए जगत मिथ्या नय बुझि सत्य हबे
असीम हतेछे व्यक्त—सीमा रूप धरि—।

प्रलये सृजने ना जानि ए कार युक्ति
भाव हते रूपे अविराम यायोया आसा
रूप फिरिछे खुंजिया आपन मुक्ति
मुक्ति मागिछे बाँधनेर माझे बासा ।

(उत्सर्ग गीत संख्या १७ पृ० १८ १९)

दादू का पद इस प्रकार है —

बास कहे हम फूल-को पाऊँ
फूल कहे हम बास ।
भाव कहे हम सत् को पाऊँ,
सत कहे हम भाव ॥
रूप कहे हम भाव को पाऊँ
भाव कहे हम रूप ।
आपस में दोउ पूजन चाहे—
पूजा अगाध—अनूप ॥[1]

(दादू पृ० २११)

रवीन्द्रनाथ के अनेक गीतों पर दादू के भावों की छाया है —

ए बोझा आमार नामाओ बंधु नामाओ
भारेर वेगेते ठेलिया चलेछि,
ए यात्रा मोर थामाओ—

(नैवेद्य, भार)

यही भाव कबीर और दादू के पदों में भी पाया जाता है। दादू में यह भाव प्रकार है —

जो हम छाड़हि हाथ तें
सो तुम लिया पसार ।
जो हम लेवहि प्रीति सौं
सो तुम्ह दीया डार ।[2]

(दादू)

देखिये—रवि रश्मि द्वितीय खण्ड पृ० ४८-४९ ।
रवीन्द्र काव्य परिक्रमा प्रथम खण्ड पृ० ११० ।
लेखक को दादू का यह पद किसी हिंदी की मुद्रित प्रति में प्राप्त नहीं हुआ ।
रवि रश्मि पृ० १०४ ।

गीतांजलि के निम्नांकित गीत के साथ दादू के एक पद का भाव-साम्य है—

जगत जुड़े उदार सुरे
आनंद गान बाजे,
से गान कबे गभीर रबे
बाजिबे हिया माझे।
वातास जल आकाश आलो
सबारे कबे बासिब भालो
हृदय सभा जुड़िया तारा
बसिबे नाना साजे।

(गीतांजलि, गीत संख्या १५, पृ० १८)

तुलनीय—

दादू घट में सुख आनन्द है तब सब ठाहर होई।
घट में सुख आनन्द बिन सुखी न देख्या कोई॥
ये सब चरित तुम्हारे मोहन मोहे सब ब्रह्माण्ड खण्डा।
मोहे पवन पानी परमेश्वर सब मुनि मोहे रविचन्दा॥
सायर सप्त मोहे धरणी धारा अष्ट कुली पर्वत मेर मोहे।
तीन लोक मोहे जगजीवन-सकल भवन तेरी सेव मोहे॥
अगम अगोचर अपर अपरम्पार को यह तेरे चरित न जानहिं।
यह शोभा तुम्हको सोहे सुन्दर बलि बलि जाउ दादू न जानहिं॥

(रवि रश्मि प० १०४)

ज्ञानदास वधेलसखी

ज्ञानदास वधेलसखी के पदों का प्रभाव रवीन्द्रनाथ के अनेक गीतों पर है। डॉ० सुकुमार सेन लिखते हैं, "निम्न उद्धृत ज्ञानदास वधेली के कई पदों के भावों और उत्प्रेक्षा का आभास रवीन्द्रनाथ के अनेक गीतों और कविता में देखा जाता है।[1]" जैसे—

'आ बाजि कारे देखिलाम,
देखिलाम कार मुख।
प्रभाते प्राण देखिलाम तार चिठि।

१ निम्न उद्धृत ज्ञानदास वधेलिर पदटिर भावेर ओ उत्प्रेक्षार आभास रवीन्द्र नाथेर अनेक गाने ओ कवितार देखा याय।
(बां० सा० इ०, पृ० सं०, पृ० १६०)

पेयेछि ताइ दुखे आछि
पेयेछि एइ दुख।[१]
(उत्सर्ग गीत संख्या ११ पृ० २४)

गीतांजलि के निम्नलिखित गीत में भी यही भाव है —

जगते आनंद-यज्ञे आमार निमंत्रण।
धन्य हल धन्य हल मानव जीवन।
नयन आमार रूपेर पुरे
साध मिटाय बेड़ाय घुरे
श्रवण आमार गभीर सुरे
हयेछे मगन।[२]
(गीतांजलि गीत संख्या ४४ पृ० ५२)

हिन्दी गीत इस प्रकार है —

फजर में जब आया चलकी
पुशाक पुरहुली तेरी
चमक भर जब ज्योत लगाया
चित जमाया मेरी।
धूप में हम को किया तमाशा
गया पीड़ दूर गमाया
गाया बेख्या सुर मधर्ची
मरन सा रैन आया।
कागज काला हरफ उजाला
गया भारी बात पाया
इती रौनक क्यों रे मनुची
तु ही याद भुलाया
भारी जलसा आलम तावत
तु ही इक मेहमान
जगत जसुक मे रात है कैसी
मथकर हम फरमान।[३]

---

१ रवि रश्मि द्वितीय खण्ड पृ० ९८ ९९।
२ „ पृ० १०८।
३ बां०सा०इ० पृ०सं० पृ० ९९ ६१ रवि रश्मि द्वितीय खंड पृ० ९८ ९९।
मानदास बाउली का यह पद लेखक को किसी हिन्दी प्रति में प्राप्त नहीं हुआ।

इस पद का भाव रवीन्द्रनाथ की अनेक कविताओं में पाया जाता है। गीतिमाल्य की निम्नलिखित कविता में ज्ञानदास के एक अन्य पद का प्रभाव है —

"ओगो पथिक दिनेर शेषे
जागिछे ये एमन वेशे
कि आछे ना शिखाबे।"
"के जाने याइ के जाने।
बुकेर काछे प्राणेर सेतार
सुरटि नाम कहे ये तार,
सुनिछिलाम ज्योत्स्नारातेर स्वप्ने।
अपूर्ण तार चोखेर चाओया
अपूर्ण तार गायेर हाओया
अपूर्ण तार आसा याओया योवन।"

\+ + +

"ओगो पथिक दिनेर शेषे
जागिछे ये देश या एसे
पथ देखावे सेइखाने।'
"के जाने सो के जाने।
सुनछि सेइ एकटि वाणी
पथ देखा आर सबखानि
देखा याबे सकल माझार माझे गो
सि मग्न एइ प्राणेर पारे
अनाहूत चोखार तारे
गभीर सुरे बाजे सकाल-साँझे गो।"
(गीतिमाल्य गीत संख्या ११ पृ० १८-१९)

हिन्दी गीत इस प्रकार है —

चरण-कमल के साथ परस्पर
सब सुर सुरभि खोलें
दीन कोरक कोमल कोंपल का
कोमल कोहरा सब खोलें।
प्रभात हिरदय तिमिर परस्पर
सब तार सितार बाजें।

बेलि-चमेलिके महक फिरि फिरि
सब पर परसेय मोरौ ॥[१]

गुरु नानक

गुरु नानक के कुछ पदों को गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ने अपने गीतिकाव्य की भित्ति बनाया है।[२] ये पद इस प्रकार हैं :—

बाजे बाजे रम्य-बीणा बाजे
अमल कमल माझे ज्योत्स्ना रजनी माझे निविड़ आंधार माझे,
कालज घन माझ
कुसुम-सुरभि-माझे बीणरणन शुनिये
प्रेमे प्रेमे बाजे ॥
नाचे नाचे रम्य ताले नाचे
नदी समुद्र नाचे
तपन तारा नाचे, युगयुगान्त नाचे
जन्म मरण नाचे
भक्त हृदय नाचे विश्व छन्दे मातिये
प्रेमे प्रेमे नाचे ॥
साजे साजे रम्य वेशे साजे
धरणी धूलि साजे नील दुरी साजे
प्रभात चित्त साजे विश्व शोभाय लुकाये
प्रेमे प्रेमे साजे ॥(गीत-वितान पृ० १११)

हिन्दी गीत की प्रथम पंक्ति में कुछ भेद है —
बाजे बाजे रम्य बीण बाजे ।

मीराँबाई

गुरुदेव ने सार्डेनर की एक कविता में मीराँ के एक पद की छाया ग्रहण कर लिखी थी ऐसा सम्भव है। जैसा कि डाक्टर गुलाबराय लिखते हैं—"इसी भाव

१ डॉ० सा० इ०, तृ० खण्ड पृ० १९२।
लेखक को यह हिन्दी पद किसी भी मुद्रित हिंदी पुस्तक में प्राप्त नहीं हुआ।
२ लेखक को यह पद हिन्दी में इस रूप में देखने को नहीं मिला। किन्तु गुरु ग्रंथ साहिब में इस प्रकार का एक पद नामदेव जी का मिलता है उसकी प्रथम पंक्ति इस प्रकार है —"वन वन हो रम्य बीणा बाजे, मधुर मधुर ध्वनि अनहद गाजे।

की छाया लेकर कवि सम्राट रवीन्द्र बाबू ने अपनी Gardner नाम की कविता की जिसमें बागवान रानी से उसके यहाँ नौकरी करने की प्रार्थना करता है वेतन पूछे जाने पर वह कहता है—एक माला नित्य समर्पित करने का अधिकार—मीरां के सुमिरिण पाऊँ खरची (जेब खर्च) का ही भाव है।[1] मीरां का एक पद यहाँ दिया जा रहा है —

स्याम ! म्हाने चाकर राखोजी गिरधारीलाल ! चाकर राखोजी
चाकर रहसूं बाग लगासूं, नित उठ दरसन पासूं
ब्रिन्दावन की कुंज गलिन में—गोविन्द लीला गासूं
चाकरी में दरसन पाऊँ सुमिरण पाऊँ खरची
भाव भगति जागीरी पाऊँ तीनूं बातों सरसी
मोर मुगट पीताम्बर सोहे गल बैजंतीमाला ।
ब्रिन्दावन में धेनु चरावे मोहन मुरली वाला ॥
ऊँचे ऊँचे महल बनाऊँ । बिच बिच राखूं बारी ।
साँवरिया के दरसन पाऊँ, पहर कुसुम्भी सारी ।

(मीरां-सुधा-सिंधु पृ० १५२)

गार्डनर में यह कविता इस प्रकार है —

The service of your idle days, I will keep fresh the grassy path where you walk in the morning where your feet will be greeted with praise at every step by the flowers eager for death I will swing you in a swing among the branches of the Saptpran, Where the early moon will to kiss your spirit.

I will replenish with scented oil the lamp that burns by your bedside and decorate your foot stool with sandal and saffron paste in wondrous-designs.

What will you have for your reward ? To be your... ..to hold your little fists like tender lotus-beds and slip with flowers over your wrists to tinge the soles of your feet with the red joice of Ashok petals and kiss away the speck of dust that may dance to linger there......Gardner p. 2-3

गुरुदेव ने बंगला व्रजबुलि और अंग्रेजी में कविता की है, किन्तु हिन्दी में उनका कोई पद दृष्टिगोचर नहीं होता। हाँ कहीं कहीं कोई गीत हिन्दी की स्वर लहरी और राग रागिनी में लिखा हुआ मिलता है। गीतांजलि का निम्नलिखित

१ हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास पृ० ८६।

गीत प्रभावती राग में यहाँ दिया जा रहा है जिसका साम्य हिन्दी के साथ प्राप्त होता है —

अन्तर मम विकसित करो
अन्तरतर हे।
निर्मल करो, उज्ज्वल करो
सुन्दर करो हे
जाग्रत करो उद्यत करो हे।
मंगल करो निरलस करो
निःसंशय करो हे
अन्तर मम विकसित करो।

(गीतांजलि गीत ६, पृ० ६)

गुरुदेव ने सूरदास पर भी कविता लिखी है[1] तुलसीदास की रामायण और विनय-पत्रिका की ओर भी उनका आकर्षण रहा है। तुलसीदास की पर भी कविता लिखी है।[2] भक्तमाल से भी एक दो कथानक लिये हैं[3]। राजस्थानी साहित्य के प्रति भी उनका प्रेम रहा है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि रवीन्द्रनाथ के रहस्यवाद का संतों की प्रेम साधना के साथ स्वाभाविक-आन्तरिक मेल है। सन्तों की भाषा सरल है किन्तु उनके भाव गूढ़ हैं। गुरुदेव उसी गूढ़ भाव को कलात्मक स्वरूप प्रदान करते हैं। संत पहले साधक हैं बाद में कवि हैं। गुरुदेव सजग कलाकार होते हुए भी साधक हैं। सन्तों की कविता उनकी साधना को प्रकट करने का माध्यम है। गुरुदेव कविता को साधना का अलंकार बनाते हैं।

सन्तों के साथ उनका भाव-साम्य ही मिलता है। किन्तु भाव साम्य दो कवियों में होना स्वाभाविक है। दो विदेशी अथवा असमकालीन पूर्ववर्ती परवर्ती कवियों में भी भाव साम्य हो सकता है। किन्तु भाव-साम्य भी एक दो पदों में ही प्राप्त हो सकता है। जब भाव-साम्य बहुत अधिक पदों में प्राप्त हो तब उसको प्रभाव मानना ही उचित होगा। गुरुदेव और सन्तों के अनेक पदों में भाव-साम्य है। गुरुदेव ने स्वयं ही सन्तों के अनेक गीतों और पदों का आधार लेकर और अनुवाद करके अपनी गीतों की रचना की है। अतः सन्तों के साथ गुरुदेव का यह भाव-साम्य प्रभाव ही माना जाना चाहिये।

---

१ सूरदासेर प्रार्थना भैरवी भाव 'ढाको ढाको ढाकिया वसन प्रामि कवि सूरदास। —रवीन्द्र रचनावली, द्वितीय खण्ड मानसी पृ० २१९।

२ स्वामी भाव पृ ७२। (कथा ओ काहिनी)

३ गुरुदेव ने बंगला भक्तमाल से इन कथानकों की प्रेरणा ली है।

सन्त रसस्वरूप एवं आनंदस्वरूप ब्रह्म में सदा तल्लीन रहते थे। गुरुदेव सत्यम् ज्ञानम् अनंत ब्रह्म के पुजारी हैं।

सन्तों ने अपनी ब्रह्मोपासना अपने गीतों में अभिव्यक्त की है। गुरुदेव ने अपने जीवन और साहित्य में इसको 'सत्यं शिवं सुन्दरं' के रूप में मूर्तिमान स्वरूप प्रदान किया है।

६

उपसंहार

आधुनिक काल में बँगला का प्रभाव आधुनिक भारतीय भाषाओं के साहित्य पर स्पष्ट है किन्तु परम्परागत हिन्दी प्रभाव की अंतर्धारा भी विलुप्त नहीं हुई। राजा राममोहनराय ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बंकिमचन्द्र चटर्जी गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर और आचार्य क्षितिमोहन सेन पर न्यूनाधिक हिन्दी प्रभाव पड़ा है। इनमें से गुरुदेव पर हिन्दी का प्रभाव विविध रूप में पड़ा है। प्रथमतः वे हिन्दी संगीत के प्रेमी रहे हैं। उन्होंने हिन्दी की राग-रागनियों के अनुकरण पर बँगला गीतों की रचना की है। ब्रजबुलि के माध्यम से कुछ हिन्दी का प्रभाव उन पर पड़ सका है। अप्रत्यक्ष रूप में कुछ हिन्दी शब्द भी उनकी कृतियों में पाये जाते हैं।

दूसरे वे हिन्दी संत साहित्य के प्रेमी रहे हैं। हिन्दी संतों की साधना और साहित्य की परम्परा का प्रभाव उन पर पड़ा है। दोनों के आध्यात्मिक सिद्धान्तों में साम्य होने के कारण गुरुदेव का संतों से प्रभाव ग्रहण करना स्वाभाविक है। जो भाव की उदारता संतों में मिलती है वही भाव की उदारता कबीन्द्र रवीन्द्र में दृष्टिगोचर होती है।

इस पर्यवेक्षण से यह सिद्ध होता है कि गुरुदेव पर संतों का प्रभाव चाहे थोड़ा हो है किन्तु है अवश्य। उन्होंने उसको विस्तार देकर और कलात्मक रूप प्रदान कर उसकी सुन्दरता भी और संपन्नता की अभिवृद्धि की है। सौन्दर्य-बोध और गुणग्राहकता के लिये सतकवि नहीं करते हैं। वे प्रभावों के प्रति मुक्त द्वार रख कर अपना भी योगदान करते हैं और मूल-स्रोतों को आगे बढ़ाते हैं।

धर्मसाधना के साथ प्रवाहित जिस रूप-रस-सौन्दर्य की गंगा में संतों ने गहरी डुबकियाँ लगाई हैं गुरुदेव ने भी सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के रूप में अपने व्यक्तित्व और कृतित्व में उसी का अवगाहन किया है।

परिशिष्ट

साहित्यिक एवं अन्य विधाओं पर प्रभाव

१ बँगला में हिन्दी शब्दावली

जब एक भाषा के साथ दूसरी भाषा का सम्पर्क होता है। तब एक भाषा से शब्द दूसरी भाषा में चले जाते हैं। इसको भाषायी उधार लेना (Linguistic borrowing) कहते हैं। भाषा में सरलतम प्रभाव का स्वरूप एक भाषा से दूसरी भाषा में शब्दों का ग्रहण करना ही होता है। विश्व की भाषाओं और भारतीय भाषाओं में भी यह नियम लागू होता है। हिन्दी और बँगला भी इसके अपवाद नहीं हैं।

समान उद्गम स्थान वाली इन दोनों भगिनियों में भी साहित्यिक आदान प्रदान के साथ-साथ घनिष्ट भाषायी पारस्परिक प्रभाव भी रहा है। अतः हिन्दी के शब्द बँगला में आदिकाल से ही मिलते आये हैं। प्राचीन बँगला में यह प्रवृत्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। सिद्ध-साहित्य और चर्यापदों में उसकी छटा देखी जा सकती है। वैष्णव-युग में हिन्दी शब्दावली की बँगला पर गहरी छाप है। इस्लामिक बँगला में भी कुछ-कुछ हिन्दी शब्द प्राप्त होते हैं। किन्तु आधुनिक बँगला साहित्य और विशेषतः बँगला भाषा में हिन्दी के शब्द मिलते हैं। यह प्रवृत्ति बँगला लोक-साहित्य या बोलचाल की बँगला में अधिक है। बँगला साहित्यकारों की रचनाओं में भी कुछ हिन्दी शब्द ढूंढे जा सकते हैं। इस विषय में संकेत मात्र ही पर्याप्त है।

प्रमुख बँगला भाषा के शब्दकोशों (अभिधानों) का नामोल्लेख आवश्यक है। श्री हरानचन्द्र बंद्योपाध्याय ने बँगला में व्यवहृत अरबी फारसी व उर्दू की शब्दावली की तालिका बंगीय साहित्य परिषद् पत्रिका में दी है।[१] किन्तु लेखक उन उर्दू शब्दों को हिन्दी के ठेठ देशज शब्द मानता है। क्योंकि अरबी फारसी तुर्की संस्कृत अंग्रेजी और अन्य विदेशी या भारतीय प्रांतीय भाषाओं को छोड़कर जो शब्द उर्दू में बच जाते हैं वे हिन्दी के ठेठ देशज शब्द हैं। साधारण बोलचाल की हिन्दी और उर्दू में कोई अन्तर नहीं है। उपर्युक्त भाषाओं के शब्द भण्डार को छोड़ कर उर्दू में जो शब्दावली बच जाती है वह हिन्दी की ही निधि है। जो शब्द बँगला में ठेठ उर्दू के माने जाते हैं वे हिन्दी के ही हैं।

अतः बँगला के अनेक शब्दकोशों (अभिधानों) में हिन्दी शब्दावली मिलती है। श्री ज्ञानेन्द्रमोहन दास के 'बांगला भाषार अभिधान' में हिन्दी की शब्दावली पर्याप्त

---

१ बंग भाषाय व्यवहृत उर्दू फारसी ओ अरबी-शब्देर तालिका श्री हरानचन्द्र बन्द्योपाध्याय बंगीय-साहित्य परिषद् पत्रिका तृतीय संख्या पृ० १९२, बंगाब्द १३०८।

परिमाण में प्राप्त होती है। कोशकार ने भी इनको हिन्दी के ही शब्द माना है। उन्होंने लगभग समस्त हिन्दी शब्दों को लिया है जो प्रारम्भिक काल से आधुनिक काल तक बँगला भाषा और साहित्य में व्यवहृत हुए हैं। अन्य बँगला शब्दकोशों में भी लगभग हिन्दी के ये शब्द ही संकलित हुए हैं। बंगीय शब्दकोश और चलन्तिका में भी इस प्रकार के ही शब्द हैं।

२ बँगला प्रवादों और वाग्धाराओं पर हिंदी कहावतों एवं मुहावरों का प्रभाव

विश्व की अनेक भाषाओं के लोकोक्ति साहित्य में परस्पर बहुत साम्य है। कई लोकोक्तियाँ और मुहावरे तो देश काल की परिधियों को तोड़ कर सार्वकालिक और सार्वभौम बन गए हैं। भारतीय-भाषाओं एवं विश्व की भाषाओं के लोकोक्ति साहित्य में अद्भुत साम्य है। भारत की भाषाओं के लोकोक्ति साहित्य में भी परस्पर बहुत समानता है। लोकोक्ति साहित्य मानव जाति की पैतृक ज्ञान राशि है। संस्कृत की लोकोक्ति साहित्य का आधुनिक भारतीय आर्य-भाषाओं और द्राविड़ी भाषाओं के लोकोक्ति साहित्य पर प्रभाव है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं को संस्कृत पाली प्राकृत अपभ्रंश फारसी अरबी एवं अंग्रेजी आदि भाषाओं से यह ज्ञान राशि उत्तराधिकार के रूप में मिली है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं की कहावतों में भी पारस्परिक प्रभाव है। हिन्दी और बँगला इसके अपवाद नहीं हैं। बँगला में अनेक भाषाओं के प्रवादों (लोकोक्तियों), वाग्धाराओं (मुहावरों) का समावेश हुआ है। जैसा कि बंगाल के प्रख्यात विद्वान डा० सुनीतिकुमार दे स्वीकार करते हैं, इस प्रकार हिन्दी मैथिली और तो क्या अंग्रेजी आदि भाषाओं से अनेक प्रवाद वाक्य बँगला में ग्रहण किये गये हैं।[1] हिन्दी कहावतों और मुहावरों का प्रभाव भी बँगला पर है। कुछ का रूपान्तर हुआ है कुछ जैसे के तैसे अपना लिये गए हैं। डा० दे ने अपनी 'बाँगला प्रवाद' नामक पुस्तक में स्पष्ट रूप से लिखा है अथवा तथाकथित प्रवाद जैसे बाप का बेटा सिपाही का घोड़ा बँगला प्रवादों में मिल गये हैं। उनमें जो सुपरिचित या नित्य व्यवहार में प्रचलित हैं केवल उनको ही चयन करके दिये गये हैं।[2] साहित्यिक बँगला की अपेक्षा हिन्दी की अधिक कहावतें बोलचाल की बँगला में ही मिलती हैं।

---

१ एइ रूप हिन्दी, मैथिली, एमन कि इंरेजि प्रभृति भाषा हइते ओ अनेक प्रवाद-वाक्य इमत बाँगलाय गृहीत हइयाछे। (बाँगला प्रवाद पृ० ७८)

२ अथवा तथाकथित हिंदी प्रवाद (येमन, बाप का बेटा सिपाही का घोड़ा) बाँगला प्रवादेर शामिल होइयागियाछे, ताहार मध्ये येगुलि सुपरिचित वा नित्य व्यवहारे प्रचलित केवल सेइगुलि चयन करिया देवया हइयाछे।

(बाँगला प्रवाद, भूमिका, पृ० १

प्रवाद साहित्य मानव-जाति की संचित ज्ञान-राशि है। अतः यह एक जटिल और विचारणीय विषय है कि मूल रूप में प्रवाद किस भाषा का है। उदाहरणतया संस्कृत पाली प्राकृत अपभ्रंश एवं किसी प्रान्तीय देसी भाषा का है अथवा अरबी फारसी और अंग्रेजी आदि विदेशी भाषाओं से प्रादुर्भूत होकर हिन्दी में उनका समावेश हुआ। अर्थात् जो अन्यान्य भाषाओं की लोकोक्तियाँ हिन्दी और बँगला में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में प्रचल पा गयी हैं; जो लोकोक्ति साहित्य हिंदी की अपनी संपत्ति नहीं है, जो कहावतें अन्यान्य भाषाओं से हिन्दी में आई हैं, हिन्दी के माध्यम से बंगला में गई हैं; उनका हिन्दी के लिये औपचारिक महत्त्व है। क्योंकि वह हिन्दी की उधार ली हुई सम्पत्ति है।

लेखक उन प्रवादों को ही प्राथमिकता देता है जो हिन्दी से ही स्वयं अपनी देशज परम्परा के अनुसार उत्पन्न की हैं। जो उपर्युक्त भाषाओं के नहीं हैं। केवल हिन्दी की ही अपनी साहित्यिक और प्रादेशिक परम्परा से प्रसूत हैं। अर्थात् हिन्दी की अपनी प्रान्तीय क्षेत्रीय भूभागीय भाषाओं विभाषाओं और लोक-साहित्य से प्रादुर्भूत हैं।

राजस्थानी पश्चिमी हिन्दी (ब्रजभाषा बाँगरू खड़ी बोली) कन्नौजी बुन्देली पूर्वी हिन्दी अवधी, बघेली छत्तीसगढ़ी बिहारी भाषा (भोजपुरी मगही मैथिली) पहाड़ी हिन्दी मध्यवर्ती और पश्चिमी आदि विभाषाओं और उनके प्रादेशिक-साहित्य की कहावतों और मुहावरों को बृहत्तर-हिन्दी-साहित्य की ही संपदा माना जायेगा।

उर्दू की कहावतों और मुहावरों को भी हिन्दी के अन्तर्गत मानना चाहिये क्योंकि बोलचाल की भाषा हिन्दी और उर्दू एक ही माँ (खड़ी बोली) की दो बेटियाँ हैं। जैसे—खुदा जब देता है तो छप्पर फाड़ कर देता है अथवा मियाँ बीबी राजी तो क्या करेगा काजी—आदि कहावतों को हिन्दी की ही माना जायगा।

बँगला में आगत अधिकतर हिन्दी-लोकोक्तियों और मुहावरों को कुछ को शब्दानुवाद (Loan-translation)[1] की श्रेणी में रख सकते हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से बँगला में आगत हिन्दी कहावतों का वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है —

१ हिन्दी की वे कहावतें जो बँगला में ज्यों की त्यों (तत्सम रूप में) उद्धृत हैं।
२ जिनका अनुवाद या शब्दानुवाद बँगला में हुआ है।
३ जिनका बँगला में रूपान्तर या वेश-परिवर्तन हुआ है।

---

[1] देखिये शब्दानुवाद के लिए प्रस्तुत प्रबंध का द्वितीय अध्याय पृ० ७५।

४ जिनका बँगला में हिन्दीकरण हुआ है।

५ सादृश्य—(क) सहजात सादृश्य (ख) प्रभावगत सादृश्य।

१ हिन्दी की ये कहावतें जो बंगला में ज्यों की त्यों (तत्सम रूप में) उद्धृत हैं—

हिन्दी और बँगला के उच्चारण भेद के कारण थोड़ा बहुत अन्तर आ जाना नितान्त सम्भव है। दोनों भाषाओं के उदाहरणों से यह तथ्य सिद्ध हो जाता है। किन्तु अधिकतर कहावतें बँगला में प्रवेश पाकर भी हिन्दी के समरूप ही रही हैं —

१ आगे राह बतायके पाछे धोखा देय।	(बाँ० प्र०—बा० भा० अभि पृ० २२०६)
२ आप भला तो जग भला।	(,, ,, ,,)
३ आज अमीर, काल फकीर।	(,, ,, पृ० १०६)
४ अपने राम को रीज भजो चाहे खीज।	(,, ,, पृ० २२०६)
५ अपने रुचि खाना पर रुचि परना।	(बं० प्र० पृ० ५१७)
मन भाता खाना जग भाता पहनना।	(हि० क० इ० हि० श्री पृ० २८७)
६ ईद का चाँद।	(बाँ० प्र०—बं० प्र० पृ० ,,)
७ ऊँची दुकान फीका पकान।	(,, बा० भा० अभि पृ० २२०७)
ऊँची दुकान फीका पकवान।	(हि० क० इ० हि० श्री० पृ० १८१)
८ उलटा चोर कोतवाल को डाटे।	(बाँ० प्र० बाँ० भा० अभि पृ० २२०७)
९ एक पंथ दो काज।	(,, ,, पृ० २२०७)
१० एक बार खाय योगी दुबार खाय भोगी तीन बार खाय रोगी।	(—बाँ० प्र० सं० १००१)
११ कोयला का मयला छूटे यब आग करे परवेश।	(,,—बाँ० भा०अभि पृ० २००८)
कोयला धोये ना उजरो लागुन तजे ना चोय।	
१२ घर की मुर्गी दाल बराबर।	(,, ,, ,,)
१३ घर आवे मनभरी बात कहे बनाय जानियो पूरो बैरी।	(,, ,, ,,)
१४ चार दिन की चाँदनी फिर अन्धेरी रात।	(,, ,, ,,)
१५ जब बरसता है तब गरजता नहीं जब गरजता है तब बरसता नहीं।	(,, ,, ,,)
१६ जहाँ राम ताहाँ अयोध्या।	(,,—बाँ० प्र सं० ७२०४)

१७ जैसा को तैसा। (बाँ० प्र०, बाँ० भा० अभि पृ० २२०९)

१८ डोली न कहार बीबी है तैयार। („ „ „)

१९ दाता दान दे भण्डारी का पेट फिराय। („—बाँ० प्र० सं० ४०४१)

२० दाल में कुछ काला है। („—बाँ० भा० अभि पृ० २२०९)

२१ दिल्ली का लड्डू जो खाया सो पछताया जो न खाया सोभि पछताया। („ „ पृ० २२१०)
दूर का लड्डू जो खाया सो भी पछताया जो न खाया सो भी पछताया। (हि० क० हि० इ० डी० पृ० २२१०)

२२ दुनिया का माल भेड़ का बाल। (बाँ० प्र०—बाँ० प्र० सं० ४११७)
दुनिया में भेड़ चाल है।

२३ दूध का जला-माठा फूंक फूंक पीता है। (—बाँ भा० अभि पृ० २२१०)

२४ धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का। (—बाँ प्र० सं० ४१५४)

२५ नाच न जाने आँगन टेढ़ा। („—बाँ भा० अभि पृ० २२१७)

२६ नाम बड़ा दर्शन थोड़ा। („ पृ० २२११)

२७ नेह लटव लिख पर चर जाये। („ „ „)

२८ पत्थर पूज के हरि मिले तो हम पूजें पहाड़ माला जप के हरि मिले तो हम जपें कुधार। (—बाँ प्र सं० ४८३६)

२९. परिबी पछतायबि नहीं कमा पुरा जावेंगे। („—बाँ भा० अभि पृ० २२११)

३० पितलक कटोरी काम नाहि मायम उपरही झकमक सार। („ „ „)

३१ बगल में छुरी मुँह में राम राम। („ पृ० २२१२)

३२ बाप का बेटा सिपाही का घोड़ा कुछ न हावे तो थोड़ा थोड़ा। („—बाँ० प्र० सं०५६५९)
माँ पर पूत पिता पर घोड़ा अधिक नहीं तो थोड़ा थोड़ा। (हि० क०—हि० इ० डी०)

आधुनिक काल

१३ बाबाजी के बाबाजी (बां० प्र०—बां० प्र० सं० ५६९७)
तरकारि के तरकारि।
बाबा की रो बाबाजी (राजस्थानी कहावत पृ० ६१)
तरकारि रो तरकारि।
(बां० प्र०—बां० भा० प्रभि, पृ० २७०४)
१४ भैंस के आगे बीन बाजाये (बां० प्र०—बां० भा० प्रभि, सं० १४०२)
भैंस ठाढ़ी पगुराय। (बां० प्र०)
१५. मन चांगा तो कठौता में गंगा। (" बां० भा० प्रभि – पृ० २२१५)
१६ मरद की बात हाथी की दाँत। (" , पृ० २२१४)
१७ माँगे भीख पूछे गाँव का जमा। (" , सं० ८१७५)
१८ लड़े फौज नाम सरदार का। (, बां० प्र०
१९ सब लाल हो जायेगा।

२ जिनका अनुवाद या शब्दानुवाद बंगला में हुआ है—

हिन्दी की अनेक कहावतों और मुहावरों का बंगला में अनुवाद हो गया है। अनुवाद को सादृश्य का उदाहरण भी कह सकते हैं। कुछ उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं — (बां० प्र० बां० प्र० सं० ७०५)

४० ईदेर चाँद। सं० ११८३)
ईद का चाँद।
४१ कानार देशे एक चोखाइ राजा। ("
अन्धों में काना राजा। सं० २०४९)
४२ कोथाय राजा भोज कोथाय (
गंगाराम तेली।
कहाँ राजा भोज कहाँ गंगाराम तेली। सं० २१०९)
४३ सोना के ना देखा जाय याचकले (,
तार चे भा जाय।
खुदा देखा नहीं जाता अकल से तो (हि० का० हि० द० री० पृ० २६५)
पहचानो। (बां० प्र० बां० प्र०, सं० २२०८)
४४ घरेर मुर्गी डाल बराबर (हि० क०, बृ० हि० को०, पृ० ४०२)
घर की मुर्गी दाल बराबर। (बां० प्र० बां० प्र०, सं० ११५०)
४५ चोरेर दश दिन साधुर एक दिन।
सौ दिन चोर के एक दिन साहूकार सं० ११११)
का। (, " पृ० ४६०)
४६ छोटे मुंह बड़ कथा। (हि० क०, बृ० हि० को
छोटा मुँह बड़ी बात।

४७ बसे खाय करे कुमीरेर संगे बाद। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० , स० ११६२)
बरया में रहना और मगर
मच्छ से बैर। (हि० क० हि०क०को० पृ० ११७)

४८ जोर जार मुलुक तार। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० १४८७)
जिसकी लाठी उसकी भैंस।

४९. तुमि फेर डाले डाले
आमि फिरि पाताय पाताय। (, सं० १८४४)
तुम डाल डाल मैं पात पात।

५० नियत गुने बरकत। (, , स० ४६८८)
नियत जैसी बरकत।

५१ मायर नाम फेराकी बीवी
पुतेर नाम सुलतान खाँ। (, , , सं० ६७१५)
माँ का नाम फेराकी बीवी
पूत का नाम सुलतान खाँ।
माँ भटियारी बाप फतीबा बेटा
मीर अस्लाम। (श्री हरदत्त शर्मा)

५२ मानुषे मानुषे अन्तर कोई
हीरा कोई पत्थर। (,, सं० ११६७७)
मनुष्य मनुष्य में अन्तर कोई
हीरा कोई पत्थर।

५३ मारेर आगे भूत भागे। (,, ,, सं ६७५०)
मार के आगे भूत भागे।

५४ मीयाँ भरछ राजी कि करे काजी। (" सं० ११५४)
मियाँ बीबी राजी तो क्या करेगा काजी।

५५. मोल्लार दौड़ मसजिद तक। (" " स० ६१६८)
मुल्ला की दौड़ मस्जिद तक।

५६ सबेरा बाला पुड़ि खाय।
सब दिन समान जाय ना। (" ' सं० ८१४१)

५७ सात काण्ड रामायण पढ़ी।
सीता कार भार्या ? (बाँ प्र० बाँ० प्र सं० ८२६१)
सारी रात रामायण पढ़ी पर नहीं
नहीं पता राम कौन रावण कौन ?

५८ सात खून माप। (बाँ० प्र०, बाँ० प्र० सं० ८१७१)
सात खून माफ।
५९. सेरेर ऊपर सवा सेर। (" " सं० ८४११)
सेर के ऊपर सवा सेर।
६० सांड रांड़ सन्यासी एइ तिन
मिले हुस काशी। (" " सं० ८०४६)
६१ दुधा चायला सुधा-पिरीत
चायना जाति घुमे चायना
छाड पसरा खाडु चायना जाति। (" बाँ०भा०प्रमि सं० २१११)
नींद न देखे टूटी खाट—प्यास न
देखे धोबी घाट भूख ना देखे बासी
भात इश्क ना देखे जात कुजात।

३ जिसका बँगला में रूपांतर या वेश-परिवर्तन हुआ है—

कुछ हिन्दी लोकोक्तियों का बँगला में वेश-परिवर्तन हो गया है, यह प्रयत्न लाघव के कारण अथवा उच्चारण भेद से हुआ है। निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। कुछ उदाहरण भेद देना अपेक्षित जान पड़ता है—

६२ आमि छाडित कमली छाड़े ना। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० ५६०)
हम छोड़ता है कमली नहीं छोड़ता। (" " ")
६३ आज नगद कलधार। (" " सं० ११२)
आज नगद कल उधार।
६४ आगे दुख परे सुख। (बाँ० प्र०, बाँ० प्र० सं० २६७)
आगे दुख पीछे सुख।
६५. आड़े हाथि लागे। (" " सं० १५१)
आड़े हाथों लेना। (हि०मु०, स० शब्दसागर पृ० ७८)
६६ अढ़ाइ दिन की बादशाही। (बाँ० प्र०, बाँ० प्र० सं० ३४६)
अढ़ाइ दिन की बादशाही।
६७ आध गगरी जल करे छल छल। (" " सं० ३२७)
अध जल गगरी छलकत जाय।
६८. आपन हाथ जगन्नाथ। (" " सं० ४२०)
अपना हाथ जगन्नाथ।
६९. आपनार घोल केउ टके बले ना। (" " सं० ४६६)
अपनी छाछ को कोई खट्टी
नहीं कहता।

७० आमार नीचेइ आँधार। (बाँ० प्र० बाँ० प्र०, सं० १४६)
दिया तले अँधेरा।
७१ एक काने शोने, एक कान बेरोय। (" " सं० ८६८)
एक कान से सुनना, दूसरे कान से
निकाल देना।
७२ एक दिन घटि एक दिन दाँत
खिरकुटि। (" " सं० ९७०)
कभी घी घना कभी मुट्ठीभर चना।
७३ ऐक बने दोइ बाघे। (" " सं० ९९२)
एक म्यान में दो तलवार।
७४ एक हाते ताली बाजेना। (" सं० १०७०)
एक हाथ से ताली नहीं बजती।
७५ एखाकि काण्ड वा एखाहि कारखाना। (" " सं० १२०४)
अलाही कारखाना।
७६ कयला धुले यो मयला जायना। (" " सं० १४०६)
कोयला होय ना उजेला चाहे
सौ मन साबुन होय।
७७ कमला ममता लुटे जब माथ करे
परदेश। (" " सं० १४११)
७८ खावेर वेला मावे बाजार वेला भावे। (" " सं० १५५६)
१ खाने को उग कमाने को मजमून। (हि०क० हि०इ०डी० पृ० १७४)

४ जिनका बँगला में हिन्दीकरण हुआ है—

बँगला में कुछ प्रभाव ऐसे हैं जिनको हिन्दी का स्वरूप प्रदान करने का प्रयत्न किया गया है। सम्भवतः यह हिंदी लोकोक्तियों के अनुकरण पर हुआ है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

७९ असती सती मिले पूत मिले
भतारथा। बेश्या बैसे पूत मिले
चोर मिले कोतवाला। (बाँ० प्र०, बाँ० प्र० सं० १७७)
८० आमो खायो घर तोमरा
खाना माँगो दुश्मन हामरा। (" " सं० १९६)

८१ छठम बाद विवेक बाद
बस बाचा मक्का बाद। (बाँ० प्र०, बाँ प्र० सं० ७८९)
८२ एस पार कि ओस पार। (" सं० १२०९)
८३ एक बाड़ीते सातकर्त्ता करे
केवल बेगुन मर्त्ता। (" " सं० ९९९)
८४ कत साध जायरे माथ मुकुटो
छोड़ि परण करबे। (" सं० ११२४)
८५. कसबी हँसति बाक, मेड़या
किसका खाता। (" सं० १४७१)
८६ कामाये दुधियाला, खाये पुतिपाला। (" " सं० १७४०)
८७ कोम्पनी का माल दरिया में डाल। (" " सं० २०७१)
८८. घोड़ा घा खाता। (" " सं० २१४८)
८९ तेरी मेरी बाँचाली कहू छाकेर
कांपासी। (" " सं० १८११)
९० [1]पहेला कुत्ता, बोले दौसरा कुत्ता
घर घर बोले, तीसरा कुत्ता घर का
भाई, चौथा कुत्ता घर जमाई। (" " सं० १४१४)
९१ ना तेरा कुदरत ना तेरा खेल
छूँछू दर लगावे चमेली का तेल। (" बाँ० प्रा० प्रचि० पृ० २२११)
अजब तेरी कुदरत अजब तेरा खेल
छू छू दर के सिर में चमेली का तेल। (हि० क०, हि० इ० डी०, पृ० ४४६)
९२ हाथी पर हौदा घोड़ा पर जीन
बास्ति मामो बास्ति मामो बारेन
हेस्टिंग। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० ८९८९)
९३ डामरे मामला, प्रीति मार मामला
कैसा फल मामला। (" " सं० ८७७२)

५ सादृश्य—(क) सहजात सादृश्य (ख) प्रभावगत सादृश्य

हिन्दी और बंगला की बहुत लोकोक्तियाँ समान हैं, क्योंकि बहुत लोकोक्तियाँ तो दोनों भाषाओं को संस्कृत आदि अन्य भाषाओं से उत्तराधिकार के

---

1 "One day a man is a guest, second day a burden third day a pest

रूप में प्राप्त हुई हैं। अतः समानता होना स्वाभाविक है फिर भी कुछ सादृश्य प्रभाव के कारण भी आया है। दोनों भाषाओं की लोकोक्तियों सादृश्य के उदाहरण यहाँ दिये जा रहे हैं —

९४ अजगरेर दाताराम। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० ९०)
अजगर करे ना चाकरी पंछी करे
ना काम दास मलूका कह गये
सबके दाता राम।
अजगर के दाता राम। (हि० क० हि० इ० कौ० पृ० ३९)

९५ अमावस्यार चाँद (बाँ० प्र०, बाँ० प्र० सं० ११४)
डुमुरेर फूल। („ श्री हरप्रसाद शास्त्री)
ईद का चाँद। (हि० क० हि० भा० सा० पृ० ९९)

९६ आगुन खाये अंगारा हगे। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० २११)
आग खाये अंगारा हगे। (हि० क० „ हि० भा० पृ० १११)

९७ आगुने घी ढाला। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० , सं० २४४)
अग्नि में घी डालना। (हि० क० पु० हि० भा० पृ० ११३)

९८ आपनार पाये कुड़ल मारला। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० „)
अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारना।

९९. काना कुजो घोड़ा तिन अछोरे गोड़ा।(बाँ० प्र० बाँ प्र० सं० १५५४)
काना कुजो डैंगरा हरामजादा
लैंगड़ा। („ „ सं० १५५५)
काना घोड़ा कुजो तिन जने ना छाड़ो („ „ स १५५६)
काना घोड़ा (घोड़ा) एक गुन बाड़ा।(„ „ सं० १५५८)
सौ में सूरदास, हजार में काना
सवा लाख में ऐंचा ताना। (श्री हरप्रसाद शास्त्री)

१०० कुकुरे पेट घी सहे ना। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० १६०२)
कुत्ते को घी हजम नहीं होता।

१०१ खाली कलसीर बाजना बड़। („ सं० २२२७)
थोथा चना बाजे घना। (हि० क० हि० इ० कौ० पृ० २२७)

१०२ बानर कि जाने आदेर सोयाद। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० २६६१)
बन्दर क्या जाने अदरक का स्वाद। (हि० क० हि० भा० सा०, पृ० ११२)

१०३ चिरदिन समान यायना। (बां० प्र०, बां० प्र० सं० १०२९)
समय एकसा नहीं रहता।

१०४ चुरि ते चुरि आरो आरि चुरि। („ „ सं० २०१८)
चोरी की चोरी और सीनाजोरी।

१०५ चोखे धुलो देओया। („ सं० १०९२)
आँखों में धूल झोंकना।

१०६ छायाते भूत देखा। (बां० प्र०, बां० प्र० सं० १२११)
छाया में भूत दिखाई देना।

१०७ जलेर रेखा खलेर पिरीत। („ „ सं० १४००)
ओछे की प्रीत जैसे बालू की भीत।
खल की प्रीति यथा थिर नाहीं। (हि० क०, तुलसी रामायण,)

१०८ तेल ओ पोड़बो ना राधाओ
नाचबो ना। (बां० प्र० बां० प्र० सं० १८७२)
न नौ मन तेल होगा न राधा
नाचेगी।

१०९ देशी कुकुर मारहट्ठो बोल। („ „ सं० ४२९२)
कउआ चले हंस की चाल अपनी
भी चाल भूल गया।

११० देशेर कुकुर विदेशेर ठाकुर। („ „ सं० ४२९४)
घर का जोगी जोगड़ा आन गाँव
का सिद्ध।

१११ नाक नेइ बेटी बेसर परे। („ „ सं० ४५१५)
नाक तो है ना नथिया पहनने
की साध। (हि० क०, हि० क० को० पृ० ११२०)

११२ नामे धर्मदास धर्मेर नाम नेई। (बां० प्र०, बां० प्र० सं० ४६१९)
अंधा का नाम नैनसुख।
आँखों का अंधा नाम नैनसुख।
जनम का दुखिया नाम नैनसुख।

११३ निमक खेये निमकहारामी। („ „ सं० ४६७७)
नमक खाकर नमकहरामी करना।

११४ नोन खाई यार, गुन गाई तार। („ „ सं० ४६१५)
जिसका खाना उसी का गाना।

११५. नून तेल लकड़ी (बां० प्र० बां० प्र० सं० १८८१)
तेल नून लकड़ी ।
भूख पये राम रंग भूख भये लकड़ी
तीन चीज याद रही नोन तेल लकड़ी ।

११६ नेंगटे परेर चुरि । („ सं० ४७४९)
नंगा के घर चोरी ।

११७ परेर पिठे बड़ मीठे । („ सं० ४९११)
मुफ्त की शराब काजी को भी हलाल ।
मुफ्त का चन्दन घिस मेरे नन्दन । (श्री हरदत्त शर्मा)

११८ पर भरसा करे ये जने बूक मरे से । („ सं० ४८६८)
दूसरे का क्या भरोसा ?

११९. पाँच जने के जाने भगवान से जाने ।(„ सं० ४९२१)
पंच परमेश्वर ।

१२० पुरातन पापी । („ „ सं० ५१३५)
पुराणा पापी ।

१२१ पुरुष और स्त्री आगुन और घी । („ „ सं० ५१५०)
स्त्री और पुरुष का मेल आग ।
और घी का मेल है ।

१२२ बगले छुरी मुखे राम राम । („ सं० ५१६५)
मुँह में राम बगल में छुरी ।

१२३ बड़ाई बुड़ी । („ सं० ५४४८)
बड़ी बुड़ी ।

१२४ बला सहज करा कठिन । („ „ सं० ७२६४)
कहना आसान है करना कठिन है

१२५ बेदिल नौकर दुश्मन बराबर । („ „ सं० ६०१२)
बेदिल नौकर दुश्मन बराबर । (हि० क० हि० द औ० पृ० ११५)
भृत्यपक्षोन्तरदायण (हितोपदेश)

१२६ बेड़ालेर भाग्ये शिके छिंड़ा । (बां० प्र० बां० प्र० सं० ६०३५)
बिल्ली के भाग से छींका टूटना ।

१२७ मत देखे काला कासा
सचाइ जैन बापेर शाला । („ सं० ७००१)
काला कासा सभी बाप का साला ।

१२८ राजा मारे दोहाई देब कारे। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० ७११२)
जबरदस्त मारे और रोने भी न दे।

१२९. राजार रानी कानार काली। (,, सं० ७११३)
रानी को राजा प्यारा
कानी को काना प्यारा।

१३० रांड रांड सिड़ी तिन काशीर बैरी। (,, ,, , सं० ८०४१)
रांड सांड सिड़ी संन्यासी
इनसे बचे तो सेवे कासी।

१३१ सब मुड़ेर एक रोयाल। (,, सं० ८१७७)
सब सयाने एक मत।

१३२ समय अनेक हय, असमय केहो ना। (, सं० ८११५)
भले भले के सब साथी बुरे का
कोई नहीं।

१३३ सामुने देखे मालेकि पिछने हराम
जादकि। (,, ,, सं० ८२११)
मुँह पर मुमानी पीठ पीछे गवानी। (हि० क०, हि० इ० डी० पृ० ११११७)

१३४ सुद खोर ओर मद खोर समान। (बाँ० प्र० बाँ० प्र० सं० ८४०४)
चोर चोर (मौसेरे) चचेरे भाई।

१३५ हाकिम फिरे त हुकुम फेरेना। (,, ,, सं० ८२११)
हाकिम चला जायगा हुकम रह
जायगा।

१३६ हातीर पिछने कुकुर भुले। (,, ,, सं० ८७०८)
हाथी के पीछे कुत्ते भोंकना।

१३७ हुरे चीन हुज्जते बंगाल। (,, ,, सं० ८११६)
हुनर में चीन हुज्जत में बंगाल। (हि० क० [हि० इ० डी०, —)

लोकोक्ति-साहित्य मानव-जाति का सामूहिक उत्तराधिकार है। इसी कारण विश्व की अन्यान्य भाषाओं की लोकोक्तियों में अद्भुत समानता है। किन्तु कभी कभी यह विवाद का विषय बन जाता है कि प्रथम अमुक लोकोक्ति का उद्गम किस भाषा में हुआ था। भारतीय भाषाओं के साथ भी यह नियम लागू होता है। हिन्दी और बंगला की अनेक लोकोक्तियों में समानता है। अतः निश्चयपूर्वक यह कहना सरल नहीं है कि मूलतः यह लोकोक्ति हिन्दी की है अथवा बंगला की। क्योंकि लोकोक्ति साहित्य दोनों की परम्परागत संपत्ति है। हिन्दी और बंगला की लोकोक्तियों में केवल भावों में ही समानता नहीं है अपितु भाषा भी बहुत लोकोक्तियों में

समान है। हिन्दी लोकोक्ति-साहित्य का प्रभाव बँगला प्रवाद-साहित्य पर दृष्टिगोचर होता है। साधारणतः यह प्रभाव साहित्यिक भाषा में अधिक दृष्टिगोचर नहीं होता है। विशेषतः चलति या चलित भाषा (बोलचाल की भाषा) में अधिक है। इसका कारण हिन्दी का देशव्यापी प्रचार और प्रसार है। साहित्यिक रूप में हिंदी समस्त भारत और पाकिस्तान में प्रचलित नहीं है, किन्तु बोलचाल के रूप में इसका प्रसार काश्मीर से कुमारी अंतरीप तक व पेशावर से ब्रह्म देश की पश्चिमी सीमा तक है।

अतः हिन्दी या उर्दू के कारण अनेक हिन्दी लोकोक्ति और मुहावरे भारत की अन्य भाषाओं में प्राप्त होते हैं। बँगला में भी बोलचाल की हिंदी या उर्दू के कारण अनेक लोकोक्तियों और मुहावरों का समावेश हुआ है।

३ हिन्दी-गद्यावतरण और पद्यावतरण

(१) हिन्दी-गद्यावतरण

बँगला कथा-साहित्य (उपन्यासों और कहानियों) में कहीं-कहीं टूटी-फूटी हिन्दी के गद्यावतरण मिलते हैं। बँगला के सामाजिक उपन्यासों में यह प्रवृत्ति अधिक स्पष्ट है। इसका कारण यह है कि बंगला की जनसंख्या का निर्माण अनेक तत्त्वों से हुआ है। हिन्दीभाषी लोगों की संख्या भी उसमें बहुत है। विशेषकर बंगाल के व्यापारिक और औद्योगिक केन्द्रों में भारत के सभी राज्यों के निवासी रहते हैं। कलकत्ता केवल बँगलाभाषी नगर ही नहीं है, अन्य भाषाओं का भी यहाँ बोलबाला है।

जब बँगला-लेखक किसी यथार्थ सामाजिक अवस्था का चित्र अंकित करते हैं तब अवचेतन अवस्था में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप में अन्य भाषाभाषी पात्र भी उपस्थित हो जाते हैं। तब पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग होता ही है। बँगला उपन्यासों में अंग्रेजी के साथ-साथ यत्र-तत्र हिन्दी की छाप भी दिखाई देने लगती है। यथा बंगाली बाबू, यथा दरवान नौकर चाकर, सिपाही और निम्न वर्ग के लोग कभी-कभी उस भाषा का प्रयोग करते हैं जिसे हम बँगला मिश्रित हिन्दी या बंगाली हिन्दी कह सकते हैं।

बँगला के कुछ प्रसिद्ध कथाकारों (उपन्यास लेखकों तथा कहानीकारों) के ग्रंथों से उदाहरणस्वरूप कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत की गयी हैं —

१ श्री अन्नदाशंकर राय—श्री अन्नदाशंकर राय की 'मधुराति' नामक पुस्तक में कुछ हिन्दी-प्रयोग इस प्रकार हैं —

रेवा—'जोर से बैठिए बोलते-बोलते' (मधुराति पृ० २)
'ओड़ है गाड़ी बोलायो' („ पृ० ६)

रेवा—'ड्राइवर को बोलाओ, सामान ले जायेगा (चतुराशि, पृ० ६)

मांगिराम मोधपुरिया—'हुजूर कलकत्ता शहर में' (चतुराशि पृ० १२)
'सैतानकार, हमाम तो बिलकुल भाल बन गया
हामा के देखे पूछल।

२ श्री केदारनाथ बंद्योपाध्याय—श्री केदारनाथ बंद्योपाध्याय के 'भादुड़ी मशाय' नामक उपन्यास में कुछ हिन्दी पद के मत हैं।

आयम देड़ भाइम बंगिहल में' (पृष्ठ ८)

हिन्दी बंगला मिश्रित भाषा का नमूना इस प्रकार है —

'बौयाली बौयाली हामार बड़ा प्रिय आछे (आछे) एतना भक्ति कोइ जातेर नेइ विच बिच में आओ। (पृष्ठ ८६)

३ श्री गोपालचन्द्र राय—श्री गोपालचन्द्र राय की 'धरतचन्द्रेर सठ्की मस्त' में कुछ ये अवतरण हैं:—

'कार्य नेइ हुजुर। कसुर माफ किजिये। तब आगे आमि। (पृष्ठ १७५)

४ श्री गोपाल हालदार—श्री गोपाल हालदार की पुस्तक 'आर एक दिन' में नमूना इस भाँति है —

कि ठिक नेइ है, कामरेड भुलकुन—
घर काहां ? जौहा मेरा काम वहां मेरा धाम। (पृष्ठ १४७)
'मजदूर की कोइ मुलुक नेहि हय'—मिला एक मुलुक—हमारा सोवियट देश—आर जौहां मेरा काम वहीं मेरा धाम। हाम बांगाल का मजदूर है—इउरोपीका का किसाम यह लाहौर नेहि। (पृष्ठ १६०)

५ श्री ताराशंकर बंद्योपाध्याय—श्री ताराशंकर बंद्योपाध्याय में यह प्रवृत्ति अधिक है। उन्होंने अपने एक उपन्यास का नाम ही 'दिल्ली का लाड्डू' रक्खा है। उनके 'अभियान' नामक उपन्यास में कुछ हिन्दी गद्यांश इस प्रकार हैं —

'बाबड़ा में कौन नेहि पिया रे ? तबियत खाराप हुआ ?' (पृ० ४१)
'आपका घर कहाँ है?' (पृष्ठ ४२)
'बरफ का माफिक हिम हय। पो। भारे तब कौन नेहि पिया ? ए मी बताओ। कैसा ? इस वक्त पड़ रहा ? मा लिखा पढ़ि ? क्यों ? तुम समस्ता होगोगे। उस्नू कीहां क। (पृष्ठ ४२)

'भोपुस बाड़िये गाड़ीवाला टोके देखिये से बसले मोहे हामि बारण करलाम एके एके बारणे करलाम माठके भेतर मत आओ, गाड़ी खाड़ा राखो मोटर के

पीछे। मोटर चला जायगा तो गाड़ी चलायो। नेहि सुना हामारा बात। बोला कि बूला होगा और उसका बात देखेन तो देखे तो—माठेर भितर केमन मजा करे याब। देखन तो फिन हाम काला किया। आप हुन दिया डर के मारे मार मार दिया माफ। बास उलट गिया गाड़ी। अब आप बोलिये तो उसका कसूर है कि नेहि।" (पृष्ठ ४९)

× × ×

"केस हुआ? और चार आदमी के केस होयेगा। लेकेन केस में बाप के देखा हो गेया। गाँव में पतित हुआ। हाम बिना पाड़ार दो रुपया उसके बाप के। ओ बेटि को दिया हामार साथ। हामारा वाड़ी में सिके काम करके।" (पृष्ठ ५०)

× × ×

ए गाड़ी किसका है? आप तो ड्राइवर हैं—लेकिन गाड़ी हामारा है।— टैक्सी है हाँ-हाँ! जाड़ा के मोटर गाड़ी हासले कोकटि जानता है। लेकेन इधार कोहा जायगा टैक्सी?

—वाड़ा जाता है, गिरधरजा गाँव जानता आप?

—हाँ हाँ! ओहि हमारा गाँव।

—हाँ हामि सुनि नेहि कि वाड़ि लोगेर एक लेड़का श्याम बाजार में टैक्सी किया है? हमारा नाम आप नेहि सुना? सुखराम साहु बहुत श्यामपुर में हमारा गदी। तामाकुल चावल के कारबार। गिरधरा में हमारा तिन चार वरिहार बालक है। (पृष्ठ ५१)

× × ×

श्री ताराशंकर बंद्योपाध्याय के 'नागी देवता' नामक उपन्यास में भी निम्न लिखित पर्याय हैं —

पंजाबी वनिस घोड़ा बेचने आसियाछि हामलोक। बाबू हामारा पास एक घोड़ा लिया। बहुत रोज हुआ ओ घोड़ा मालूम होता बातेल हो गेया। मगर बहुत अच्छा घोड़ा हामारे पास। (पृष्ठ ७१)

× × ×

"बहुत रोज के बाद सात वरिष हो गेया। मालिक बाबू हुजुर हामरा कोहा है। सेलाम तो भेजिये। रमजान देख आया है। ओ घोड़ा हामारा किधर है।" (पृष्ठ ७२)

× × ×

"ओहि काला घोड़ाठो हाम से आये थे। हामारा मालिकबाबा का कोहा देखभाल साथ एहि हाँ हाँ हाम बहुत छोटे बेटा था। सेलाम हामारा हुजुर मालिक हामारा—कसूर तो माफ होय जनाब हाम आपको पहचान नेह पाया। (पृष्ठ ७२)
}

६ श्री नारायण गंगोपाध्याय—श्री नारायण गंगोपाध्याय के 'मन्त्र-मुखर' से कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

'ठारिये ठारिये बाबू हाम देखता देता उसको (पृष्ठ १०१)

इनकी 'शिलालिपि' में कुछ उदाहरण इस तरह हैं —

'महात्मा गांधी की जय' (पृष्ठ ४०)

छिः छि: एसा बंगाल'

'एता बड़ा उठान मे एता बंगाल। (पृ० ७१)

'झंडा ऊँचा रहे हमारा। (पृ० ६१)

'मेरे सोने कि हिन्दुस्तान

तु हामारा दिल का रोशनी, तु हमारा जान। (पृ० ६४)

७ श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय—श्री बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय के 'राजसिंह' में हिन्दी के उदाहरण इस प्रकार हैं—

हा ! बाबा जान ! हा हा बेचो ! ऐसा तमाम रूपनगर से आने के वख्त एक रोज बाता था और कभी नेहि ? क्या।

'मास्मा जी। रूपनगर का जो केस्सा आप् फरमायेंगे बोली थी।

'चुप् ! यह बात् मुह में मत लाओ बापजान्। मैंने किया बोली थी ? खेयाल में बोली थी शायेद्।'

'चुप रहेंगे काहे माजी ? ऐसा किया बात होगी ?

मा—गुन् के का माफिक बात नेहि बापजान।

ऐसे—तब रहने दिजिये।

मा—और कुछ नेहि रूपनगर वाली कुमारीन कि बात।

ऐसे—वह कुमारीन बड़ा खूबसूरत ? येह कैसा पुछिला बात ?

मा—हाँ नेहि—औरी कि बड़ा देमाग। क्या आस्मा ! मैंने किया बोल चुका।

ऐसे—कोहा रूपनगर मह, कोहा उँहाका राजकुमारीन् कि देमागइये बाद् शाह्का बेगमाइ किया खबर्—हामारा पुछना किया जरूर ?

मा—अेक देमाग बापजान्। लोण्डी ने बादशाह आलम् को नेहि मानती।

ऐसे—बादशाहे आलम को मानि दिर होगी ?

मा—मानि—बापजान् ! उससे भी बदर कुछ।

ऐसे—उससे भी बदर ! किया हो सकता ? बादशाह आलम को और मार सकता नाह।

मा—उससे भी बदर !

ऐसे—मार से भी बदर ?

मा—बापूजान—और पूछिये मत—मेयने उसकी निमक खाइन्।

छेले—निमक् खाये हो! किसतरे मा?

मा—बासरफि बिन्?

छेले—काहे मामी?

मा—उसकी मुगाइ के बात किछिका पास बोल्ना मलोसेब मेहिन एस्लिये।

छेले—घाच्छा बात है। मुझको एकठो बासरफि बख्सिस फर्माइये।

मा—काहे रे बेटा?

छेले—मेहिन् त मुझको बोल खिपिये बाल्ए किया है?

मा—बात् और किया बादशाह का तस्वीर-तोरा। तोरा! बात्ठो भाष्ही निकली थी।

छेले—तसवीर माँग जाना?

मा—बारे बैटा बात् से माँग जाना। तोरा। मेयने निमकहारामी कर चुका।

छेले—निमकहारामी किया है इसमे तोम मा मेबने बैटा! हामरा बोल्मे से निमकहारामी किया है?

मा—देखियो बाप्जान्, किसइको बलियो मत।

छेले—आप बेतेरजामा रहिये—किस्इका पास् मेहिन बोलेंगे।

(राजसिंह पृ १६, १७)

× × ×

"हजरत् बेगम साहेबा एक् बखत कुच मजेमे होयेंगी" (पृ० २६)

"चुप रह बेतमिज। मेरे नाम हजरत इमलि बेगम।

निर्मल—जानते मेहिन? वह हामारि बेटी लाम्ती है। देख आयाकी सोने का दिन कसम थो हाथसे पर अनूप बेठा हय बस् पर बैठ-उन्निसा बैठी है। (पृ० १४८)

बंकिम बाबू के 'चन्द्रशेखर' में भी कुछ हिन्दी का नमूना है —

"हम आया है, किया बोलता है? (चन्द्रशेखर, पृ १५)

"पाकड़ो। पाकड़ो हामारा बिबी।"

"पाकड़ो। पाकड़ो फस्टर साहाब इनाम देगा" (प० ७०)

"वो एक बात हुआ"

"वो बात हुआ वो बात छोड़ कर तीन बात हुआ।"

"बाबू साहाब इसे बेतमिज आदमि को निकाल दिजिये। (पृ ८६)

बंकिम बाबू की 'देवी चौधुरानी' में भी कुछ नमूना है—

"कोन बदजात? तोम् गोइन्दा नेहि? (देवी चौधुरानी प० १२४)

बंकिम बाबू की 'सीताराम' पुस्तक में भी कुछ हिन्दी के उदाहरण मिलते हैं—

"बम्म रायजी, बम्म राय महाशय। जय काजि साहेब का।"

"तोम कौन हो रे ? (पृ० १६)

'तोम काहे हिया मैठ् के तोप खोदते हो ?

"आरे मुसलमान आने से हम लोग आभि होंकाय देंगे—तोम काहेको फिक किये हो ? बस हुजूर में जाने होगा।" (पृ० ७१)

"कोतवाल साहेब कि हुकुम से तोमको उसका पास ले जायेंगे।"

"हाँ हामलोग त इसको पहचानते हैं। येह हमारा गोलन्दाज पियारी लाल है—ये कोहां से आया ?

'ये आदमि त अच्छा बोलता है। जो तोपका पास रहेगा उसिको ले जाने को हुकुम है। एह मुख्तार तोपका पास है—उसको आलबत् ले जाने होगा।

"जय महाराजाधिराजकि जय।"

"जय श्री सीताराम राय राजा बाहादुर कि जय।"

"जय लछमीनारायण जी कि जय।"

'कापड़ उतार देरि खोल्ल टुकड़ा टुकड़ा करके हाथ दुकान में बचेंगे।

(पृ० १११)

८. वनफूल (बलाई चाँद मुखोपाध्याय)

बलाइ चाँद मुखोपाध्याय के 'जंगम' के चतुर्थ-पंचम खण्ड में हिन्दी के नमूने है —

'हमको मैं ने हुजुर, भूख भि लगा था, हालवाइ को कहा—जल्दि करो भाई। दो पूछते चला। मैं खाते चले। कुछ देर में खेयाल पड़ाइ तो मालुम काम कर रहे हैं, ए खाना तो कच्चा पूड़ि खिला रहा हमें। खेयाल होने का साथ हि खाना बंद कर दिया—मगर तबभि भोगना पड़ा डाक्टर बाबू।

"क्या हुआ "

"कच्चा आटो पेटमें सटक गिया।"

"सटक गिया ?

"सटक गिया। जो रोज दस्त नहि उतरा आइ तक भि गायेस दम्-टोंस। एक डाक्टर को बोलायाँ। जो आकर एक गुड़ दिहिन, एक पुड़िया दिहिन। पाँच रुपया फिस लेहिन। नेहि उतरा। दूसरा एक डाक्टर बोलाये। इस डाक्टर ने दो गुड़ दिहिन। एक शिशि दावाइ दिहिन फिस लिहिन आठ रुपिया। कुछ नेहि हुआ। पेट नेसि फूला दिहिस। मैं मार देरि नेहि किया वहाँ पहुर चले गये। डाक्टर चौधुरी को बोलाये। डाक्टर चौधुरी अच्छाइ तरेसे देखिन पेट में नलदर बैठाइल जाने किता लम्बाके क्षिसार देखिन। पेशाब जाँचिन बिहिन—पाँच रुपया फिस देना पड़ा पेशाब जाँचिन का वास्ते। सेथ सुनकर डाक्टर चौधुरी कहिन देखो—भाई

इसको दो तरैका बकसस है मेरा पास एक बड़ा, एक छोटा। बड़ा बकसस देने से चार मर्दों का पत्थर पाखाना उतर आयेगा। छोटों में दो रोज लगेगा। बड़ बकसस का किमत होगा पाठ रुपैया छोटे का पाँच रुपया अब तुमहारा क्या खाइस कहो? म्यैं कहा बड़ बकसस दीजिये हुजुर, जान या रहा हुये। तहां बड़ा एक बकसस चूरन में घोंल दिहिन। और मिसरिके सायेक एक बाबा ९ बाम्मृत लेके गरम पानि में घोर के पिला दिहिन। जहर के सायेक तिता। मगर हो गिया? एकदम साफ—दोहि घटे में!

"बेशक?

'आप हुजुर मेरा घर पर तशरिफ लाइये। काहे?

'मेरा वालाता को एक बकसस देना पड़ेगा?"

"क्या हुआ उनको?

'मो भव सकति फिरति है तब तो ठिक हय कोई तकलिफ नहि। मगर जबहि मो वाच्चे को गोद में लेकर बैठि तब तक सिवायहि तब तकतो ठिक रहि मगर जबहि दूध पिलानी को गिये सामनेहु झुकि कर—

"एक बस्तो बाद आओगे।"

एकठो बड़ा बकसस देने पड़ेगा।"

"अच्छा!"

'बात तब पाक्का?"

"पाक्का।

—अंचम आदुर्वे ओ पंचम सस्त पृ० १७७-१७८।

९ सतीनाथ भादुड़ी—सतीनाथ भादुड़ी की पुस्तक 'जागरी' में भी कुछ हिन्दी की छटा यत्र-तत्र दिखाई पड़ती है—

'और ऊँचा और भी ऊँचा जरूरत पड़े तो आसमान तक मिला दो"

(पृष्ठ ३)

"लकड़ी मिलेगा ओ सब महाराष्ट्र में किसियो तहाँ उसव नहीं चलेगा राष्ट्रभाषा बोलने नहीं आता है। पूना शहर को पूरे बोलता है। भाउर हिन्दी में बात बोलने का सउक है।" (पृष्ठ ४४)

१ शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय—शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय की 'पथेर दाबी' नामक पुस्तक में एक दो जगह हिन्दी की पंक्तियाँ उपलब्ध होती हैं—

'कैसा सिगबी बावर आओ?

"आपको कहि जाना दुनिया में कोई रोक सकता।" (पृ० २६७)

११ श्री शिवराम चक्रवर्ती—श्री शिवराम चक्रवर्ती की पुस्तकें मनविवाह

चरित' में 'हिन्दी में बात साओ' एक अध्याय ही लिखा गया है —

"नेहि नेहि—आमरा नेहि—हाम् । रास्ता तो नहि मिलती । आमि एइ कथा समझि ये हाम् को गयी ।" (पृ० ९०)

'बँगाली लोक किसतर से बंगला बोलति सिखना बहुत मुश्किल है ।' (पृ० ९०)

"हिन्दी में बातसाओ । फिन् बोलो ।" (पृ० ९१)

"और तुम यहाँ बैठकर, हियाँ आ जाओ । इधर आके बैठो ।

"आहा । नमस्ते क्या आप मजेमें है तो । तबियत खुश है ।" (पृ० ९८)

'हाँ ! मेटर सिनेमा को पास पहलेसे देखा आप्को धाक्का मे हाम् फाँस् गई ।"

"धाक्का में हाम् फाँस गइ—उहि रोज से मेरा जिन्दगि आपहिको चरण में सुपुर्द किया है ।" (पृ० १०१)

इनके अतिरिक्त श्री प्यारीचाँद मित्र के 'आलालेर घरेर' दुलाल श्री परशुराम की 'कज्जली' श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय की कहानियों श्री पाँचकड़ी चटोपाध्याय की 'पंचपल्लव', श्री प्रेमेन्द्र मित्र के 'कथागुच्छ', श्री विभूतिभूषण मुखोपाध्याय की रचनाओं और श्री सरोजकुमार राय चौधरी के 'गृहवास' आदि में हिन्दी के इस प्रकार के अंश उपलब्ध होते हैं। उर्दू के भी इस प्रकार के कुछ अंश बँगला पुस्तकों में दृष्टिगोचर होते हैं।[1]

बँगला नाटकों में भी यह प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है। कुछ पंक्तियों से प्रकाश डालना आवश्यक है —

१ श्री दीनबन्धु मित्र—श्री दीनबन्धु मित्र की 'नील-दर्पण' में इस तरह के कुछ उदाहरण हैं —

"तोम मय मय करके हाम्को देक किया नील कर साहेब का कोई काम में डर है तोमरा को मुनासिब ना होय काम छोड़ देगो ।" (पृ० १०१)

---

१ देखिये—"बहुत मेहरबानि है आपकि । अब् देखिये डाक्टर साब् । आप मसिद का जिकर करते थे खोदा उस बातको मन्जूर कर रक्खा है न मालुम कबसे । खएर, आप् तो जल्से में तश्रिफ् लायेंगे ।—'अजी । हामारा जिकरका जिकर छोड़ दिजिये जाँ साब् । हामुत बिलकुल ना-लायेक है और आपके अधिन् हैं । आप बुजुर्ग है आपका मुँह से जो बात् निकलेगि उसि बात कायेम हो जायगि । जी हाँ, जलसे में जरूर हाजिर रहूँगा—"

—स्मृतिर अतले पृ० १६१ ।

श्री सीतानाथ—'काव्य विनोद' के प्रहसन 'बाबाबाबू' से एक उदाहरण दिया जाता है —

"गोलमाल मत करो, गाड़ी छोटने का टाइम हो गिया आओ हियाँ से।"
(पृ० ४१)

१ श्री अपरेशचन्द्र मुखोपाध्याय—इनके 'शुभदृष्टि' नाटक में भी कुछ पंक्तियाँ हैं —

"बाबू बोले एकठो आमोरव पाले उसको वास्ते गाड़ी बोलाने। कहाँ मालगठ हियाँ एक मालगठ पड़ा है। कौन ठिकाने में गाड़ी बोलाता होने? और कोनूने नेहि मिलता।"
(पृ० ८)

जिस हिन्दी में अंग्रेज बोलते थे उसका प्रमाण भी बँगला के महान् साहित्यकार श्री माइकेल मधुसूदन दत्त के 'शर्मिष्ठा' नाटक में मिलता है —

सार—हासी! चउकीदार—एक आदमी उधार छोड़के गिया नेह?

चौकीदार—नेह साब हामतो कुछ नेहि देखा!

सार—आलबत् गिया। हाम देखा टोम् जल्दी दउड़ के आओ सप्टारफ देको आओ जल्दी आओ दयू सुअर।

चौकीदार—कोन हैय रे खाड़ा रेहु।

सार—इधर—इ यु फूल—

चौकी०—हाँ साब इधर!

(आधा चोट्टा तोमारा वास्ते चोड़ के हामारा काम गिया।)

सार—आइयस टोम् चोट्टा हैय। ई इधर गै-गै-गै—जुपराओ इदू यु निगर देक आओ टोमारा बेगमें किया हैय।

चौकी०—खाड़ा रओ साबा।

सार—इहे बेगमें चोर किया हैय जैके मा। बेस्का चोरि किया? उसको ठाने में ले चलो। सो नेह होगा टोम् थाने में चलो—किया? टोम सोचे नेह आलबट्ट थाने होगा।

चौकी०—चलूने थाने में चल।

सार—किया? टोम नेह मानटो। हाम् देकटो उस्का कुछ कसूर नेह, उस्को छोड़ देओ।

चौकी०—टोम् हामूको तो कुछ दिया नेहि—आच्छा आओ चला जाओ।

चौकी०—हाँ हाँ ए गाड़ी में—ओ बड़ा मजाकि आदमी हैय!

सार—देको चौकीदार रोपेया का बाट!

चौकी०—जो हुकुम—खाविन्।

सार—आदि चलो।

(पृ० १४—१५)

वास्तव में यह एक प्रकार की विचित्र हिन्दी है जो हिन्दी व्याकरण की की दृष्टि से अशुद्ध है। इसमें लिंग—वचन का कोई ज्ञान नहीं है। इस प्रकार की हिन्दी पाठक के लिए हास्यास्पद है। फिर भी बँगला लेखकों ने हिन्दी की मध्य शैली के अनुकरण का सफल प्रयत्न किया है और यह प्रवृत्ति अधिकांश बँगला लेखकों में पाई जाती है। वार्तालाप के प्रसंग में कहानियों उपन्यासों एवं नाटकों में इस भाषा का प्रयोग हुआ है।

इस प्रकार की बोलचाल की हिन्दी बंगाली-संस्कृति बँगला भाषा और साहित्य का अभिन्न अंग मानी जा सकती है। क्योंकि हिन्दी के अनेक रूप हैं। हिन्दी प्रदेश में उसका कुछ और रूप है अहिन्दी क्षेत्रों में भी कोई न कोई उसका रूप है। इसी कारण भारत की अन्य प्रान्तीय भाषाओं के साथ हिन्दी का भी एक रूप होता है। वह प्रदेश विशेष की जनता के उच्चारण पर निर्भर करता है जिस प्रकार अंग्रेजी का रूप संसार के अन्य देशों में कुछ-कुछ बदला हुआ है, चीन में वह 'पिजगिन इंगलिश' और अमेरिका में 'अमेरिकन इंगलिश' और भारत में 'बाबू इंगलिश' कहलाती है उसी तरह हिन्दी बोलचाल के रूप में अखिल भारतीय स्तर पर प्राप्त होती है। पंजाब में उसका कुछ और रूप, गुजरात में कुछ और ही रूप एवं बंगाल में भी हिन्दी का उपर्युक्त रूप उपलब्ध होता है।

(२) हिन्दी पदावतरण

हिन्दी पदों का समावेश बँगला में परम्परा से ही होता आया है। यह दो रूपों में हुआ है। एक तो स्वयं बँगला कवियों ने हिन्दी पदों की रचना की है। दूसरे हिन्दी कवियों के पदों का मत बंगला में हो गया है। आधुनिक काल में भी गद्य-पद्य दोनों साहित्यिक विधाओं में हिन्दी पदावतरणों का सन्निवेश हुआ है। कुछ पद तो भाषीय अनुकरण पर कुछ हिन्दी संगीत के आधार पर लिखे गये हैं एवं कुछ पद दृष्टान्त रूप में उद्धृत हुए हैं। हिन्दी सन्त साहित्य और भक्त साहित्य में से ही अधिक हिन्दी पद बंगला में गृहीत हैं। उदाहरणस्वरूप कुछ पदों का यहाँ देना आवश्यक है।

१ बँगाली कवियों द्वारा विरचित हिन्दी पद—
बंकिम बाबू के कुछ पद निम्न प्रकार हैं :—

गोरी समझे मदनमार,
पियारी समझे कालो।
सबी समझे बीरबाला॥
गंगा गर्जन दांगु बटपर
धरणि बैठल बासुकी फन में।

पवन हिल्लोल मधुप सखा
धीर भजत युवती मन में ॥

(रामसिंह पृ० १८)

× × ×

बरसन् बरसत पियारी,
सोम रस बधीयारी
भुरत लोचन से ।
न समझे गोपकुमारी,
मैहिन् बैठल मुरारी
बिहारत राह तुमारि ॥

(रामसिंह पृ० ७२)

सोने की पिंजिरा सोने की चिड़िया
सोने कि पिंजिर पथेर में
सोने की बाला सोने कि बाला
मधु केर्ड सेरेक समेर में ॥

(रामसिंह पृ० १२६)

× × ×

श्री द्विजेन्द्रलाल राय ने भी एक-दो हिन्दी पदों की रचना की है। वे इस प्रकार हैं —

गिरि गोवर्धन गोकुल चारि,
यमुना तीर निकुंज बिहारी
श्याम सुठाम किशोर निरुपम
चित्त- विनोदन कारी ।
पीताम्बर वनपुष्प विभूषण
चन्दन चर्चित, मुरारी धारी,
धिमि बरसे मोहित वृन्दावन
उथलत यमुना वारि ।
नूपुर शिंजित नृत्य विमोहन
कपट चपल चतुराली
प्रेम निमीलित नयन-विलोल
उदय चले बनमाली ।
नन्दकि नन्दन नाचि यशोदा
नयनांजन ब्रजबाल पियारी,

निशि लागी पिक कुल छोड़ि राधा
व्याकुल सब ब्रज नारी।
कंस विनाशक मथुरापति जय
निखिल - भक्त जन शरण
दुर्जन पीड़क सज्जन पालक
सुर नर वन्दित चरण।
जय नारायण श्रीश सनातन
जय परमेश्वर, भव भय हारी
जय कृष्ण मधु सूदन जय
गोविन्द मुकुन्द मुरारि।
(द्विजेन्द्रलाल ग्रंथावली पृ० २२३)

तथा—

प्यारे प्यारे सैंइया इसमें कैसा काम।
हसि बाड़ा में मुझको कुछ देना इनाम।
हातमे है चुड़ि आउर कानमे है दुल
गलाम है हासलि आउर नाकमे है फूल
मेरि जान हो आयगि बड़ि मशगुल
बड़ि पियार तोमको करेंगी हाम्।
(द्विजेन्द्रलाल ग्रंथावली पृ० ५८४)

इस प्रकार की हिन्दी में पद रचना की प्रवृत्ति अन्य बंगाली साहित्यकारों[1] और विशेषकर बँगला संगीतकारों[2] में दिखाई पड़ती है।

२ हिन्दी कवियों के उद्धृत पद—

विषय में विस्तार भय से हिन्दी कवियों के पदों का उदाहरण देना आवश्यक हो सकता है। अतः किंचित परिचय देना ही पर्याप्त है। बँगला के अनेक ग्रंथों में हिन्दी कवियों के पदों को उद्धृत किया गया है। श्री क्षितिमोहन सेन के ग्रंथों

---

१ श्री अवनीन्द्रनाथ ठाकुर का एक गीत इस प्रकार है —
आव् बाड़ि बाप् बाड़ि दुस दुस चसमेदार बाड़ि
कुसुपाबका एक कॉब्बा चोंहि बाड़ि सबसे आच्छा।
(बाङ्गीर गान-हासका हासिर गल्प पृ० २)

२ देखिये—रूपचाँद पक्षी के हिन्दी गीत बाङ्गालीर गान पृ० ४१५। महाराज विजयचन्द महताब पृ० ४८७ गिरीशचन्द्र घोष पृ० ६८६, सौरेन्द्रनाथ ठाकुर, पृ० ६०६, बिहारीलाल चट्टोपाध्याय पृ० १०१८।

श्री यतीनाथ भादुड़ी के 'कोहाई चरितमानस'[१] श्री वेदेवदास के 'रजवाड़ा' और 'राजसी' आदि में हिन्दी पदों को गृहीत किया गया है।

हिन्दी संत और भक्त-साहित्य का व्यापक प्रभाव बंगाल में रहा है। कबीर तुलसी और मीरां पर अनेक स्वतंत्र ग्रंथ लिखे गये हैं। श्री शंकरनाथ राय के 'भारतेर साधक' अध्यापक उपेन्द्रकुमारदास के 'भक्त कबीर' आदि ग्रंथों में भी हिन्दी पदों का समावेश किया गया है। तुलसीदास के ग्रंथों का केवल अनुवाद ही नहीं हुआ है, अपितु उनके साहित्य से बँगला साहित्यकारों को प्रेरणा भी मिली है। श्री हेमचन्द्र बंद्योपाध्याय ने कबीर और तुलसी के पदों का बंगानुवाद कर अपने साहित्य का अंग बनाया है[२]। मीरां के गीत तो बंगाल के घर घर में गाये जाते हैं। श्री मनाथनाथ वसु ने मीरां के पदों का बँगला में अनुवाद किया है।

सामान्यतः हिन्दी संत और भक्त साहित्य का प्रभाव अखिल भारत में है। सभी भाषाओं के साहित्य उनके प्रभाव से नहीं बच सके हैं।

बँगला संगीत के विकास में हिन्दी वैष्णव साहित्य का विशेष योगदान है। यह हिन्दी संगीत का बँगला संगीत के ऊपर प्रभाव के प्रकरण में आगे की पंक्तियों में देखा जा सकता है[३]।

४ हिन्दी संगीत का बंगाली संगीत पर प्रभाव

हिन्दी संगीत का बँगला संगीत पर प्रभाव के सम्बन्ध में विद्वानों में कुछ मतभेद हो सकता है। कुछ महानुभाव इसका विषय से प्रत्यक्ष संबंध मानने पर आपत्ति कर सकते हैं किन्तु विद्वानों ने साहित्य और संगीत की मूलगत एकता प्रतिपादित की है। क्योंकि साहित्य शब्द ब्रह्म की और संगीत नादब्रह्म की उपासना के प्रतीक हैं।

अतः साहित्य और संगीत में कृत्रिम विभिन्नता होते हुए भी दोनों का लक्ष्य आनंदानुभूति ही है। इस सम्बन्ध में साहित्य और संगीत की एकता का प्रतिपादन करने वाले अनेक विद्वानों के मत पठनीय हैं।

संस्कृत में साहित्य और संगीत को सरस्वती के दो कुचों से उपमा दी गई है[४]। सरस्वती को वीणापुस्तकधारिणी भी कहा गया है। वीणा संगीत और पुस्तक

---

१ देखिये—कोहाई चरितमानस में तुलसीदास के पदों और पर्याप्त हिन्दी शब्दावली का समावेश हुआ है।

२ हेमचन्द्र ग्रंथावली द्वितीय खण्ड दोहावली पृ० ११६ १२४।

३ बाँग्लागीर मान (हिन्दी भाग) पृष्ठ ९९१ १००१।

४ संगीतमपि साहित्यं सरस्वत्याः कुचद्वयम्।

साहित्य की परिचायक मानी जा सकती है। भर्तृहरि महाराज साहित्य और संगीत कलाविहीन मनुष्य को साक्षात बिना सींग-पूँछ वाले पशु के समान मानते हैं[१]। श्री मोलीसहोर का कथन है 'संगीत और साहित्य दोनों के इतिहास एक-दूसरे से इतने गुँथे हुए हैं कि उनका पृथक्करण करना मानो कला की आत्मा को विनष्ट करना है'[२]। श्री कार्लाइल संगीत और काव्य की एकता प्रदर्शित करते हुए लिखते हैं 'काव्य संगीतमय विचार है'[३]। श्री कॉलरिज भी इसी मत की पुष्टि करते हैं[४]। श्री एडगर एलानपो इसको सौंदर्य की संगीतमय सृष्टि' कहते हैं[५]। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में काव्य को मानव मस्तिष्क का भावमय और संगीतमय (तालमय) भाषा में स्थूल और कलात्मक वर्णन कहा गया है[६]। एनसाइक्लोपीडिया अमेरिकाना में भी इस मत को इसी प्रकार अभिव्यक्त किया गया है[७]। डा० गुलाब राय जी के शब्दों में 'संगीत साकार प्राण-काव्य है काव्य साधक संगीत है'[८]। श्री नारायण चौधरी का विचार है वास्तव में संगीत और साहित्य में मूलगत कोई पार्थक्य नहीं है[९]। इस सम्बन्ध में जयनारायण व्यास का मत भी दृष्टव्य है—'संगीत और साहित्य दो विभिन्न वस्तुएँ हैं। निस्सन्देह एक पर दूसरे का प्रभाव है। प्रत्येक काव्य में संगीत नहीं हो सकता। वैसे ही प्रत्येक संगीत साहित्य नहीं बन सकता।

---

१ साहित्य संगीत कलाविहीन।
साक्षात् पशु पुच्छ विषाण हीन॥

२ भारतीय संगीत का इतिहास पृ० १।

३ Poetry declares Carlyle We will call musical thought !" William Henry Hudson. An Introduction to the Study of Literature P 83

४ Biographia Literaria chapter XIV

५ According to Edger Allanpoe It is the rhythmic creation of beauty —

६ Absolute poetry is the concrete and artistic expression of the human mind in *emotional* and *rhythmical language*
—Encyclopaedia of Britanica Volume 18 P 100

७ On the side of rhythmical sound it is closely related to music but it differs from the latter in its capacity to represent both concrete and abstract ideas with some exactness. E.A. Vol. 22 p. 270

८ काव्य के रूप पृष्ठ २६।

९ आसले संगीत ओ साहित्येर मध्ये मूलगत कोनो पार्थक्य नेइ।
—संगीत परिक्रमा पृ० १४७।

संगीत में स्वर ताल की प्रधानता रहती है और संगीत सिखाने के लिए आरोह अवरोह सरगमों में व्यक्त किए जा सकते हैं। जिनमें कोई साहित्य ही नहीं होता। तराने आदि संगीत के अङ्ग हैं। पर उनके शब्दों में नाद है अर्थ नहीं। नृत्यों की पृष्ठभूमि में शास्त्रिक संगीत भी पाये जाते हैं तो ताल संगीत भी बोले जाते हैं। अतः संगीत को भाव-प्रधान ही समझना चाहिए जिसमें रस और ताल दोनों सम्मिलित हैं। शब्द प्रधान नहीं। यह सब कुछ होते हुए भी साहित्य शब्दों द्वारा सामञ्जस्य उत्पन्न कर सकता है। जैसे दक्षिण भारत के नाट्य-नृत्य की पृष्ठभूमि में पाये जाने वाले तामिल भाषा के संगीत।

संगीत में लय (Rhythm) की प्रधानता होती है। साहित्य में विषय की। किन्तु संगीत और साहित्य दोनों ही भाव या रस की एक ही इकाई हैं। साहित्य के एक अंग नाटक में तो संगीत के तीनों अवयवों गायन वादन और नृत्य का समावेश हो जाता है। साहित्य का गीत अंग और संगीत[१] का गीत-रूप एक ही है।

जो व्यक्ति एक ही साथ संगीतकार भी हो और साहित्यकार भी उसको आर्य भाषा में वाग्गेयकार (Composer) कहा जाता है[२]। हिन्दी और बंगला में भी वाग्गेयकारों की परम्परा रही है। संकुचित अर्थ में हिन्दी संगीत को हिन्दी गीति काव्य कहना अधिक उपयुक्त जान पड़ता है। क्योंकि हिन्दी संगीत और हिन्दी गीति में भेद केवल आभास मात्र है। हिन्दी में जितने बड़े-बड़े कवि हुए हैं वे लगभग सभी संगीतकार भी थे। कबीर अनहद नाद के साथ तानपूरे की तान भी मिलाते थे। सूरदास भी रङ्गनाथ जी के मन्दिर के प्रमुख कीर्तनिया थे। तुलसीदास जी के संगीत के ज्ञान के विषय में लिखा गया है, "तुलसीदास का काव्य क्यों इतना मानव मात्र में लोकप्रिय हुआ जब हम इस तथ्य का विश्लेषण करते हैं तो हम इसी निश्चय पर पहुँचते हैं कि उनके काव्य की नींव संगीत की पावन पृष्ठ पर सुदृढ़ता से रखी हुई है। उनके ग्रंथों में जहाँ हमें एक ओर काव्य का अद्वितीय सौंदर्य प्राप्त होता है, वहाँ दूसरी ओर संगीत का उत्कृष्ट रूप भी मिलता है। उनके शब्द-शब्द में संगीत की मधुरिमा बिखर गई है, हम उस मधुरिमा को उनके काव्य से पृथक नहीं कर सकते।"[३]

---

१ गीतं वाद्यं च नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते अर्थात् गीत वाद्य और नृत्य तीनों को संगीत कहा जाता है।

२ वाच् या मातु, गीत साहित्य में शब्दों के नाम हैं। 'गेय' या 'धातु' नाद के प्रकार का नाम है। इन दोनों में जो निपुण हैं वे ही 'वाग्गेयकार' कहे जा सकते हैं। (संगीत शास्त्र पृ० २२८)

१ भारतीय संगीत का इतिहास पृ० २२१।

मीरां का तो सारा जीवन ही संगीतमय था। संगीत-सम्राट तानसेन सुगायक होने के साथ-साथ सुकवि भी थे। स्वामी हरिदास, बैजूबावरा, कुम्भनदास और हरिराम व्यास जी भी इस नियम के अपवाद नहीं हैं। जिस प्रकार काया के बिना छाया का कोई अस्तित्व नहीं है उसी प्रकार हिन्दी-संगीत और साहित्य भी पुष्प के सौंदर्य और सुगन्ध की तरह परस्पर अभेद हैं। हिन्दी का समस्त भक्तियुगीन संत और भक्त-साहित्य संगीत की स्वर लहरी से ओतप्रोत है।

बँगला-संगीत पर हिन्दी-संगीत का प्रभाव दिखाने के पूर्व हिन्दी संगीत का न्यूनाधिक, ऐतिहासिक और सद्धांतिक या शास्त्रीय परिचय देना आवश्यक प्रतीत होता है। वास्तव में हिन्दी संगीत की परिभाषा करना सरल कार्य नहीं है क्योंकि इसी संगीत को हिन्दुस्तानी या उत्तर भारतीय संगीत भी कहा जाता है। हिन्दी संगीत का अर्थ है परम्परागत संगीत प्रणाली के साथ-साथ ध्रुपद, धमार, होरी, ठुमरी एवं टप्पा आदि विभिन्न राग रागनियों के सम्मिश्रण से मध्यकाल में मध्यदेश (हिन्दी प्रदेश) में हिन्दी कवियों और संगीतवेत्ताओं द्वारा इसका पुनर्गठन और विकास हुआ था। पंडित विष्णुनारायण भातखंडे के शब्दों में इसकी परिभाषा इस प्रकार हो सकती है "उत्तर हिन्दुस्तान के गायक जो गीत गाते हैं, उनके नाम—ध्रुवपद, ख्याल, टप्पा, ठुमरी, होरी, तराना और चतुरंग आदि हैं[1]।" अमीर खुसरो से लेकर आज तक अनेक परिवर्तनों के उपरान्त भी इस हिन्दुस्तानी या हिन्दी संगीत की आत्मा सुरक्षित रही है। मध्यकाल में मुसलमानी संस्कृति का प्रभाव भी कव्वाली और गजलों के माध्यम से इस संगीत पर पड़ा है। वैसे हिन्दी गीतिकाव्य का खूब प्रभाव बंगाल में चला आ रहा था जैसा कि श्री स्वामी प्रज्ञानानन्द लिखते हैं— "मिथिला दरभंगा प्रभृति स्थानों में बँगला भाषा व्रजबुलि के सम्मिश्रण से रस सान्निध्य प्रदान करने में अद्वितीय थी। रामानंद और कबीर के हिन्दी दोहों और साखियों के मधुर गीतों के माध्यम से ही सृष्टि की थी। कौन कह सकता है कि उनका प्रभाव बँगला गीतों पर नहीं पड़ा। इसके बावजूद भी बंगाली ने अपनी प्रतिभा की मौलिकता को बँगला गीतों में सुरक्षित रखा। नामदेव जी ने मराठी साहित्य को कुछ रस सिंचित कर रखा था। राधाकृष्ण की लीला कहानी भजनों के बीच में विख्यात नाम मेवाड़ के राणा की पत्नी साधिका मीराबाई के मधुर कण्ठ से मुखरित हुआ। व्रजभाषा का सम्मिश्रण तो सब भजनों में था[2]।"

---

१ हिन्दुस्तानी संगीत क्रमिक पुस्तक चौथी पृ० ४१।

२ मिथिला दारभंगा प्रभृति अंचले बांगला भाषा व्रजबुलिर सम्मिश्रणे रस-सान्निध्य परिवेशने अद्वितीय छिल। रामानंद ओ कबीर हिन्दी दोहा और साखीर व्याख्यान गानेर माध्यमेइ सृष्टि करे छिलेन ओ तादेर प्रभाव ओ बांगला गाने ये पड़ेनि ता के बलते पारे ताहले ओ बांगाली तार स्वकीय प्रतिभाय बांगला निजस्वता

पर इस हिन्दी-संगीत का प्रभाव बँगला संगीत के ऊपर श्री रामप्रसाद और श्री रामनिधि गुप्त के समय से ही पड़ने लगा था और उसका क्रम आधुनिक काल में वृद्धि को प्राप्त हुआ। श्री धूर्जटिप्रसाद घोष इस प्रभाव का कारण बतलाते हुए लिखते हैं 'मुगल-सम्राट द्वितीय शाह आलम (१७२१—१८०६ ई०) के ध्वंसोन्मुख दिल्ली दरबार के श्रेष्ठ गायक गुणी लोग नाना स्थानों को चले गये। तानसेन के वंशज पूर्व की ओर गये। उनका नाम पूर्बिया पड़ा तानसेन के शिष्य वंश वाले राजपूताना की ओर गये उनका नाम पछाव बाजा पड़ा। तानसेन के वंशजरों ने काशी के राजा अयोध्या के नवाब बेतिया रेवा के राजा और रीवाँ के राजा और अनेक दरबारों में आश्रय लिया। बंगाल देश में अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में दिल्ली के उस्तादों का एक दल कृष्णनगर और कलकत्ता में आया'।

इस हिन्दी संगीत की धारा के कारण परम्परागत बँगला-संगीत की धारा भी परिवर्तित हो गई। जैसा कि श्री प्रज्ञानानन्द स्वामी लिखते हैं कि बंग प्रदेश की भूमि में परिवर्तनशील शास्त्रीय राग रागनियों के मध्य में और नवरूपों की सृष्टि हुई थी। इसी कारण बसंत भैरव, रामकली असावरी भाखावरी पूरबी एवं बिहाग आदि की राग रागिनियों के रूप में विकास और रस-परिवेषण में उत्तर भारतीय संगीत पद्धति के कारण एक नयी अलग पद्धति बन गई। उसके धर्म में विलक्षण भाव और रसवर्षी संगीत साधकों के दरबार में उनके वास्तविक रूप में समादर से रक्षा होनी चाहिये। कारण यह है कि परिणाम नीति से जातीयकरण का मूल्य अधिक है। जिससे सभ्यता का भाण्डार उज्ज्वल और सतत वृद्धिशील होता रहे[२]।

बदाम देखेछिल। मराठा साहित्य के नामदेव किछुटो रस सिंचित करेछिलेन। रामकृष्णेर लीलाकाहिनी मथनेर मध्ये-दिये विकाश लाभ करेछिल। मेवार राणा पत्नी साधिका मीराबाइयेर किन्नर कण्ठे। व्रजभाषार प्रतिमरण छिल सेई सब भजनेर मध्ये।

(राग ओ रूप पृ० ८२)

१ मोगल सम्राट द्वितीय शा-आलमेर (१७२१—१८ ६) ध्वंसोन्मुख दिल्लिर दरबारेर श्रेष्ठ गायक गुणीरा नाना स्थाने छड़िये पड़लेन। तानसेन-वंशधरेरा एलेन पूर्वदिके ताँदेर नाम हल पूरबीया। तानसेनेर शिष्य वंशीयेरा गेलेन राज पुतानार दिके, नाम हल 'पछाव बाजा'। तानसेन—वंशधर देर काशीर राजा अयोध्यार नवाब बेतियार राजा रेवार राजा ओ अन्यान्य अनेके दरबारे आश्रय दिलेन। बांगला देशे ओ अष्टादश शताब्दीर शेषदिके दिल्लिर उस्ताद देर आसते देखि कृष्ण नगरे ओ कलकाताय। (रवीन्द्र संगीत, पृ० ४१)

२ बांगलार माटिते परिवर्तनशील शास्त्रीय राग रागिनीदेर मध्ये ओ आवार नव रूपायनेर सृष्टि हयेछिल—ये जन्य बसंत, भैरव रामकेली आसावरी पूरबी,

उक्त बात से भारत हिन्दी-संगीत के प्रभाव को बँगला-संगीत और साहित्य पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है —

(१) बंगालियों ने हिन्दी कवियों के पदों को अपनाया है।
(२) बंगालियों ने हिन्दी-गीतों के अनुकरण पर हिन्दी में गीत रचना की है।
(३) बंगालियों ने हिन्दी-गीतों के अनुकरण पर बँगला में गीत रचना की है।

१ बंगालियों ने हिन्दी-कवियों के पदों को अपनाया है—

बँगला के अनेक ग्रन्थों में हिन्दी कवियों और संगीतकारों के गीतों का समावेश हुआ है। किन्तु हम संगीतसार माला[1] में ही अधिक गीतों को पाते हैं। सूरदास बैजूबावरा गोपालनायक शोरीमियाँ गुरु नानक तुलसीदास कबीर नवलकिशोर शोरीमियाँ दूली खाँ बहादुरशाह शिवनारायण अग्निहोत्री वाजिदअली तानसेन मीराबाई आदि हिन्दी संगीतकारों सन्तों और कवियों के पद बंगाल में आज तक प्रचलित हैं। उनके द्वारा बँगला कवियों और संगीतकारों की भाव धारा पर भी प्रभाव पड़ा है। ब्रह्मसंगीत में भी लगभग ५० हिन्दी के पद प्राप्त होते हैं। उनमें से एक इस प्रकार है —

भोर भयो पंछीगण बोले
उठ जाग प्रभु गुण गाओ रे।
नव प्रभात प्रकृति छिटोका
बार बार हर्षायो रे।
प्रभु कि सुमेर निज मन में
सरस भावो उपजायो रे।
हीय हरत प्रेम में उमड
नयनन् नीर बहायो रे।

येहेतु प्रकृति राग रागिनीदेर रूपे विचारो ओ एक-परिवेशने उत्तर भारतीय संगीत पद्धति येन तारा आज एकटु आलादा हये पड़ेछे। तासमे ओ विचारण आ रसदर्शी संगीत-साधकदेर दरबारे एवेर सत्यकारेर समादर रूपान्तरित हये कारण ब्रजनीतिर येते जातीयकरणेर मूल्य येनी। ताते सम्पदर भाण्डार रूप उगग्रस ओ धर्मविवर्धमान।

(राग ओ रूप पृ० ८४)

१ द्रष्टव्य संगीतसार माला पृष्ठ ६६१ १००६।

ब्रह्म रूप-सागरमें मन को
बारम्बार डुबाओ रे ।
निर्मल शीतल लहरें ले ले,
आतम ताप बुझाओ रे ।
(ब्रह्म संगीत पृष्ठ १० ११ सौमालीर भाग पृष्ठ १००१)

इस प्रकार सैकड़ों हिन्दी गीत बंगाल में प्रचलित हैं। ये बँगला-संगीत और साहित्य की अभिन्न निधि बन गए हैं।

२ बंगालियों ने हिन्दी-गीतों के अनुकरण पर हिन्दी में गीत रचना की है—

परम्परा से ही बंगाली हिन्दी में गीत रचना करते आए हैं। आधुनिक काल में भी यह परम्परा प्रचलित है। हिन्दी में गीत रचने वाले प्रमुख संगीतकार श्री रूपचाँद पक्षी श्री रसिकचन्द्र राय श्री प्यारीचन्द्र मित्र श्री महाराजाधिराज विजयचन्द श्री गिरीशचन्द्र घोष श्री द्विजेन्द्रलाल राय, श्री अमृतलाल बसु, श्री क्षीरोदप्रसाद विद्याविनोद श्री मन्मथकृष्ण मित्र श्री द्वारकानाथ गाँगुली और श्री अमरेन्द्रनाथ दत्त आदि हैं। इन संगीतकारों और कवियों द्वारा विरचित कुछ हिन्दी गीतों के उदाहरण देना अपेक्षित है :—

रूपचाँद पक्षी—

काहे रङ्ग डारि हो निर्मम मुरारि।
सम्भार सम्भार हो बाँकि श्यामर,
मत मार पिचकारी श्याम सुनोमि
नगरी सखीनि मोरे संइया
देखोगि मुझे मारि ॥ (मुरारि)
छोड़ छोड़ बाट् जानेदे यमुना तट
रे थिट लागेगे वारि रँगिला छबिला
रे नन्दलाला छोड़ो बँइया हामारि ॥
(मुरारि) तु कैसा जान लाला
फगुआ के मिस्ता हो हो मोमासा गिरधारी
घन घन छींकत घोया चरणोस
तु कैसा जानत कैसेमे होरि ॥ (मुरारि)
कहे पंछिवर मन भावोमे मोर,
युगल चरण तुम्हारि हो हो निर्मम तेरा

छ्योंजि बैरसे पाग मयुर मुकुट बड़ा
बाँके बेहारी ।। (मुरारि)[1]

महाराजाधिराज विजयचन्द—

आज हमारी दुनिया में सब् दागादारी ।
जैहसे मिलना बदि उसे हुसियारी ॥
तू सोचो हरदम जब ना रहेगा दम् ।
सब् दम्बाजि करके देखा हुय काम् ॥
यदि मेहेर परदि होतो धाँबियारी,
दुनिया पर करते हो कैसा जुलुम
कजा कि वक्त सब होगा मालुम
सारे लोको समुझौ थोड़ी गुनाहगारी ॥

(वर्धमानीर गान पृष्ठ ४८६)

तथा—

इसको उसको बुरा न मानो ।
आपने को ठिक राखो जि ।
ए दुनिया में सबि है झूठा ।
एक मुठा खाक जि ॥
दुनिया दुनिया काहे मियाँ ।
कहते हो तु हरदमजि ।
दम टुटेगा खाहिश होवेगा
रहेगा खाक बोहि मोलाजि ।

(वर्धमानीर गान पृष्ठ ४८८)

---

१ रूपचांद पक्षी के कुछ गीत इस भाँति मिलते हैं —

'झूले झूले झूलन पर श्यामल सुन्दर युगल किशोर किशोरी हो ।'

(वर्धमानीर गान पृष्ठ ४११)

खेलते फगुवा कोर कन्हाइया
पाँचरंग लाल धूम केठे लाल बाजे मदन ।

(वही पृष्ठ ४१४)

ऐसे फागुन के दिन आई सजनी ।
पूर्णमासी यामी भई उजारा चाँदनी ॥

(वही पृ० ४१५)

साँझि भइ मनमोहन मुझे,
कोहाँ मिलि गोसाईं ।

(वही पृष्ठ ४१५)

गिरिशचन्द्र घोष—

काँहार मेरा वृन्दावन काँहा यशोदा माई।
काँहा मेरा नन्द पिता काँहा बलाइ भाइ॥
काँहा मेरि धवली श्यामली काँहा मेरि मोहन मुरलि।
श्री दामसुदाम राखालगण काँहा मै पाइ।
काँहा मेरि यमुना-तट काँहा मेरि वंशी वट।
काँहा गोप नारी मेरि काँहा हामारा राई॥[1]

(बाँगालीर गान पृ० ५५४)

अमृतलाल बसु—

क्या मजादार सहर गुलजार
चेहारा दुरस्त बहुत बहुत बाहार।
मरदोंका छोड़ा करम औरतोंका आपना शरम
कोई नाहि शरम सबको मचल गरम।

(बाँगालीर गान पृ० ८८१)

क्षीरोदप्रसाद विद्याविनोद—

आया हुकुम दरबार
आया हुकुम दरबार
बड़ि काम पियारा हरदम् मैसो भरपुर कामदार।
देखो कैसा काला रंग आयेर कैसा ववर हय।
सारा मजबुत काम करने वाला साच्चा समदार।
बहुत खोप मेजाजि राजि विविधि मालिक महलादार।[2]

(बाँगालीर गान पृ० ८८९)

द्विजेन्द्रलाल राय—

पुराण प्रेम को नहि जानो भइया हो
पुराण प्रेम को आखोर पो बिन मिया हो।

---

१ श्री गिरिशचन्द्र घोष ने अनेक हिन्दी गीतों की रचना की है—एक दो यहाँ दिए जा रहे हैं—

जय परमेश्वर परम भिखारी। कल्पतरु गुरु योग आचारी॥

(बाँगालीर गान पृ० ५५७)

२ श्री क्षीरोदप्रसाद विद्याविनोद द्वारा विरचित अनेक हिन्दी गीत प्राप्त होते हैं—जैसे—

हो हो बाबू हुजरान। दुनिया में जनम् लिया क्यों॥

(बाँगालीर गान पृ० ८८९)

हो वो दिन गिया हो प्यारे वो दिन गिया हो
भरपे पेयाला लिये वो दिन गिया हो।[1]

(द्विजेन्द्रलाल ग्रंथावली पृ० १२१)

तथा —

हम ईमानदार गरीबी से
सिर झुकाता-ओवर वो कुछ
वो कायेर उसको छोड़के पाँव।
हम गरीब हों—हो वो कुछ—
हमारा छोटा काम् ओवर वो कुछ
इज्जत हय पैसा का टैस
मर्द सोना हय—हो वो कुछ।
क्या छोटा खाना पर हमलोग
परता सूती—आओर वो कुछ।
देखो रेशम् बेवकूफ को दारू बरबाद को
मर्द मर्द वो कुछ आओर वो कुछ
दौलत उसको वो कुछ,
ईमानदार हो गरीब महाशय
तबभि बादशाह हो वो कुछ।
बादशाह बनाता हो देवमान्
आओर नवाब्—आवर वो कुछ,
मगर ईमानदार को बाना न
कोशिश करे मात वो कुछ
हो वो कुछ आवर वो कुछ
इज्जत अनोखा वो कुछ

---

1 गोंद मधु मन में फूल डूबिया हो
आया छोड़ि छो दूर में सो दिन गिया हो।
वो दिन नदी में तुम हम खेल किया हो
तबसे बोल में रहूँ माठा बरिया हो।
ले हात दे हात मुझको मोरा पिया हो
फिर कि पेयाला कर अब वो दिन गिया हो
तोमारि भरो तुम हम भरें मेरि पा हो

(द्विजेन्द्रलाल ग्रंथावली पृष्ठ १२१)

हुस्न का इज्जत नाम का बेमाक
सबसे ऊँचा—हो या कुछ।

(द्विजेन्द्रलाल ग्रन्थावली, पृ० १४२ ४१)

मधुसूदन मिश्र—

पूरा पियाला पियाला सवार पिया
चकूरा हुरदम् पिया साकि भरदम पिया
पूरा जामको बेसमेरा मशगूल किया।
पूरा कलेजा कुमकर बेसकल लिया ॥[1]

(बाँगालीर गान पृष्ठ ८६०)

अमरेन्द्रनाथ दत्त—

निपट कपट तुया श्याम
रोये रोये मरे मुरारि चरण धारे (राधा)
यमुन किनारि खि [illegible] गुहु गुणधाम ॥
लाज मान हरि यमुना पानिमें डारि
वारि वारि वारि पियासे कुमारि,
चोरा चित मन चोर कैसे निवारि—
कालिके काशोरि हरि लिये तेरि नाम।

(बाँगालीर गान—पृष्ठ ६४०)

बिहारी चट्टोपाध्याय—

जग जीवन हरि तहुँ परिहरि।
यायोग कोहा माला कहु मुरारि ॥
राका बनि मेहारि चढ़ि फिरे चकोरी।
काला-बनि माधामय नाना छवि
धेखि कैसे मौरे निवारे मुरारि—।

(बाँगालीर गान—पृष्ठ १०१८)

इस भाँति अनेक बंगालियों ने हिन्दी में गीत लिखे हैं। संगीत ग्रंथों में भी हिन्दी गीतों का आधार लिया गया है। जहाँ बंगाली कवियों ने हिन्दी में कविता की है वहाँ उन्होंने किसी अंश तक हिन्दी को व्यापक भाषा स्वीकार करते हुए हिन्दी

---

१ मधुसूदन मिश्र ने कई हिन्दी गीत लिखे हैं—

पियाला का साफ होने देयो, भरो हुसाकी फिक्र।
हाति को पर हाजरा मेरे घोर कोमर बीन् ॥

(बाँ० गान पृ० ८६१)

को अज्ञात अपचेतन रूप में स्वीकार किया है। इससे सिद्ध होता है कि दोनों भाषायें कितनी मिली जुली हैं और दैनिक व्यवहार में वे कितनी एक दूसरे के निकट हैं। यह सम्पर्क अज्ञात रूप से प्रभावों का भी कारण होता है। दो भाषाओं के मिलन से प्रभाव अवश्यंभावी है।

१ बंगालियों ने हिन्दी-गीतों के अनुकरण पर बँगला में गीत रचना की है—

हिन्दी या हिन्दुस्तानी संगीत का बँगला-संगीत पर प्रभाव एक युग-परिवर्तनकारी घटना है। इसी हिन्दी संगीत पद्धति के द्वारा बँगला गीतिकाव्य की सम्पदा की आश्चर्यजनक उन्नति हुई है।

आधुनिक बँगला गीतिकाव्य पर हिन्दी का सर्वाधिक प्रभाव हिन्दी संगीत के माध्यम से पड़ा है। उत्तर वैष्णव काल अथवा इस्लामिक बँगला युग से ही हिन्दी संगीत का प्रभाव बँगला संगीत पर स्पष्ट है। इस संगीत की पद्धति को अपनाकर राजा राममोहनराय ने ब्रह्मसंगीत की आधार शिला रखी थी। ब्रह्मसंगीत के अनेक गीत हिन्दी गीतों और गायन-पद्धतियों के अनुकरण पर बने हैं। अधिकांश ब्रह्मसंगीत में आराधना और कृतज्ञता के पद गुरु नानक तथा अन्य सन्तों से प्रभावित जान पड़ते हैं। श्री शान्तिदेव घोष का कथन है "हिन्दी ध्रुपद गीतों का मूलभाव भक्ति-पूजा का भाव था। बंग देश में इस भाव को सम्पूर्ण रूप से ग्रहण करके नये भाव से भक्ति और धर्म गीतों की रचना हुई। ख्याल गीतों के भिन्न ढंग के अनुसार पूजा और प्रेम के गीत रचे गये थे। शोरी-मियाँ के टप्पे प्रेम के गीत थे, निधु बाबू के गीतों की प्रसिद्धि का भी यही कारण है।[1]" हिन्दी गीतों के और गायन पद्धतियों के अनुकरण पर ब्रह्मसंगीत रचे गये हैं। यहाँ कुछ उदाहरणों से स्पष्ट करना आवश्यक है —

झिंझिट खमाज ठुमरी—

विभुपद-कमल पीयूष रसे
मज रे पिपासु मन मधुकर। (ब्रह्मसंगीत पृष्ठ १०५)

तुलनीय— किस सौत[2] बिहार में अटके हो
मन चुप करो आइ एक छिन को।

---

१ हिन्दी ध्रुपद गानेर मूल भाव छल भक्ति पूजार भाव। बांगलादेशे ए भावटिके सम्पूर्ण ग्रहण करेइ नूतन भावे भक्ति वा धर्म गान रचित हय। खेयाल गानेर भिन्न ढंग अनुसारे पूजा ओ प्रेमेर गान रचित हये छे बांगला देशे। शोरी मियाँर टप्पा छिल प्रेमेर गान निधु बाबूर प्रेमेर गाने ओ सेइ कारणे प्रसिद्ध।

(रवीन्द्र संगीत पृ० २५)

२ पाठ भेद—सौध=सौत।

मम चिन्ता को सब दूर करो
आमोर त्यागे ध्यान विषय वस्तु को
प्रभु पूजा में अनुराग करो
आमोर[1] प्रस्तुत हो हरि कीर्तन को
परित्राण के प्रति सब व्याकुल हो
तुम व्याकुल हो प्रभु दर्शन को।
भक्ति आमोर प्रेम के फूलों से
भरपूर करो हृद-कानन को
एकान्त सुधा रस पान करो
आमोर शान्ति कर आपने मन को॥

(ब्रह्मसंगीत पृ० १०७)

तथा—

आसावरी-भव—

सावे तोमाय दयामय डाकते चले।
तुमि पापी बले त्यजिबा ये कारे कोन् काले
जखन आमि ये दिके चाइ सर्वदा देखिते पाइ
(आमाय) कृपण हते दया करे राखिछे कोले।
घोर पापेर पापीदारा निमिषते तरे तारा
तोमार श्री चरण शरण निले॥

(ब्रह्मसंगीत पृष्ठ १४५)

तुलनीय—

तू मेरे प्राण-आधार (प्रभुजी)
नमस्कार दण्डवत वन्दन अनेकबार जो बार (प्रभुजी)
उठत बैठत सोवत जागत
एमन तुमेहि बिचारे,
यो तुमि कर सोहि फल आमार[2]
तुमि आपे सार (प्रभुजी)
तुमेरे घट वस् बुद्धि पण् तुमहि
तू मेरे परिवार।

---

[1] आमोर—और।

[2] आमार—हमारा बंगला और हिन्दी के उच्चारण भेद के कारण उक्त पद के कुछ शब्द विकृत हो गये हैं।

सुख दुःख सबै मनकि, बेरथा
सेवक नानक पूरु बरणमार (प्रभुजी)

(ब्रह्मसंगीत, पृष्ठ १४१)

नानक जी के इस पद की छाया एक अन्य ब्रह्मसंगीत पर भी है।[1] गुरु नानक की प्रसिद्ध आरती 'गगन के थाल में रवि चन्दु दीपक बने'[2] का प्रभाव दो बंगला गीतों पर दिखाई पड़ता है। एक गुरुदेव का पद 'गगनेर थाले रवि चन्द्र दीपक ज्वले' है। दूसरा यहाँ दिया जाता है।

तोमारि आरति करे निखिल भुवन
निरखि जुड़ाय नाथ! पुलक नयन।
गगन थाले केमन दीपक ज्वले अनुखन
शोभिछे शशी तपन हृदयरंजन।
मुक्तामाला येन ताय तारका समुदय
मरि किवा शोभा पाय हे भव भय भंजन।
धूप मलय पवन निरन्तर समीरण
करे चामर व्यजन हे विश्व कारण
वन उपवन यत पुष्पदेय अविरत
बाजे भेरी अनाहत शुने प्रमित ये जन॥

(ब्रह्मसंगीत पृष्ठ १४७)

उक्त पद में गुरु नानक की आरती का भाव-साम्य ही नहीं है अपितु शब्द सादृश्य भी है। जैसे—

गगनथाले =गगन में थालु
दीपकज्वले =दीपक बने
शशी तपन =रवि चंदु
मुक्तामाला =जनक मोती
तारिका समुदय=तारिका मण्डल
भव भय-भंजन =भव खण्डना
धूपमलय पवन =धूपुमलयानलो पवणु

एक पंक्ति तो हुबहु एक जैसी ही है। धूपमलय पवन निरंतर समीरण करे चामर व्यजन=धूपुमलयानलो पवणु चवरो। उपवन यत पुष्प देय अविरत=सगल बनराइ फूलंत जोती। बाजे भेरी अनाहत=अनहता शब्द बाजत भेरी।

---

1 देखिये—प्रस्तुत प्रबंध पृष्ठ २८७ तथा ब्रह्मसंगीत, पृष्ठ १७७।
2 ब्रह्मसंगीत पृष्ठ १४६।

तानसेन के एक गीत के साथ एक ब्रह्मसंगीत का केवल राग साम्य ही नहीं भाव और शब्द-साम्य भी है। जयजयवन्ती रागिनी में दोनों गीत इस प्रकार हैं

नाथ तुमि ब्रह्म तुमि नित्य तुमि ईश तुमि महेश
तुम आदि तुम अंत तुम अनादि तुमि अशेष।
जल स्थल अनल व्योम पशु मनुष्य देवलोक,
तुमि अपार सृजनकार दुखाधार त्रिभुवनेश।
तुमि एक तुमि पुरान, तुमि अनंत सुख सोपान
तुमि ज्ञान तुमि प्राण तुमि मोक्षधाम
पूत हृदे नमस्कार लये आमि तव नाम
तव पाय शतवार करि प्रणाम करि प्रणाम॥
(ब्रह्मसंगीत पृष्ठ १७७)

तुलनीय –

तुँहि ब्रह्म, तुँहि विष्णु, तुँहि शेष तुँहि महेश
तुँहि आद तुँहि अन्त तुँहि अनाद तुँहि अशेष।
जल स्थल अनल व्योम तुँहि अकार पवन सोम
तुँहि ओंकार तुँहि मकार
निराकार तुँहि अलेख
तुँहि वेद तुँहि पुरान
तुँहि हदीस तुँहि कुरान
तुँहि ध्यान तुँहि ज्ञान तुँहि भुवनेश
तानसेन कहे बखान तुँहि दिन तुँहि अयन
तुँहि धरि पग मन, तुँहि वचन तुँहि विशेष॥
(संगीतसार भाग पृष्ठ १००५)

इस भाँति अनेक बंगला-संगीतकारों ने हिन्दी संगीत[1] के अनुकरण पर बंगला

---

१ हिन्दी गीतों के स्वरों (सुरों) के अनुकरण पर बंगला के अन्य गीत-संग्रहों में बंगला गीत रचे गए हैं। गीतमाला में कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

(१) खमाज-एकताला—
हिन्दी सुर—'सीतापति रामचन्द्र रघुपती =बंगला नमो ब्रह्म परम
ईश निखिल-विश्व कारणो मंगलमय सकल कुशलकारी
भवतारणे। (गीतमाला पृ० २)

(२) „ 'झमके चलत रामचन्द्र=धन्य प्रभो धन्य असामान्य
महिमा तोमार। (गीतमाला, पृ० १)

भावों का सृजन किया है। कुछ प्रसिद्ध बँगला-संगीतकारों और गायकों का नामोल्लेख[1] आवश्यक है। श्री राधिकाप्रसाद गोस्वामी श्री ज्ञानेन्द्रप्रसाद गोस्वामी श्री भीष्म देव चटोपाध्याय श्री तारापद चटोपाध्याय श्री सत्येन्द्रनाथ गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर, श्री माइकेल, मधुसूदन दत्त श्री द्विजेन्द्रलाल राय, काजी नजरूल इस्लाम श्री दिलीप कुमार राय श्री हिमांशुदत्त श्री अजय भट्टाचार्य आदि प्रमुख हैं। इनमें से कुछ की संगीतकला का विवेचन अपेक्षित है।

श्री सत्येन्द्र नाथ—

इन्होंने हिन्दी के अनुकरण पर ब्रह्मसंगीत की रचना की है। इनकी एक मिश्रित ठुमरी हिन्दी और बँगला दोनों भाषाओं की मानी जा सकती है —

गाओरे जयपति जगवन्दन
ब्रह्म सनातन पातक नाशन।
एक देव त्रिभुवन परिपालक
कृपा-सिंधु सुन्दर सब नायक।
सेवक मनोमद-अमल दाता
चिंता सम्पद बुद्धि विधाता।
चाहे चरण भजत कर जोड़े,
चितर प्रेमसुधा चित चकोरे।

(ब्रह्मसंगीत, पृ० ९० बाँगालीर गान पृ०६०९)

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर—

हिन्दी संगीत पद्धति का गम्भीरतम प्रभाव गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर पर पड़ा है।[2] हिन्दी शास्त्रीय संगीत[3] ही रवीन्द्र संगीत की पृष्ठभूमि है। जैसा कि श्री उमेश

(३) „ पानी भरण जाति यमुना के घाट—कौन प्रताप वपु अखिलेर नाथ। (गीतमाला, पृ० ४)

(४) मुखड़ा क्या देखो दरपन में [illegible] दया धरम नहीं मन में—प्रभु हे पार कि कव तुमि मम्व। हेन मुग्ध नाहि देखि मुग्ध। (गीतमाला पृ० ४४)

(५) हृदय कोई नाहि है, यह राखो रघुबीर—आनन्द भार देह नाहि नाथ, तुमि राख रघुबीर।

(गीतमाला पृ० १६६)

१ जिन्होंने हिन्दी संगीत के आधार पर बँगला संगीतसाहित्य के भाण्डार को भरा है उन कवियों और संगीतकारों की संख्या बहुत विशाल है अतः उनके परिचय के लिये बाँगालीर गान पृ० १ १०४० देखने योग्य है।

२ देखिये विस्तृत परिचय के लिये प्रस्तुत प्रबंध पृष्ठ २७५ ३१७।

३ शास्त्रीय हिन्दी संगीत को बँगला में उच्चांग हिन्दी संगीत कहा जाता है।

जोशी का मत है— अपनी प्रारम्भिक गान रचनाओं में रवीन्द्र ने ध्रुपद-पद्धति का आधार लिया। उनके सभी गीत भारतीय पद्धति पर अवलम्बित हैं। रवीन्द्र संगीत प्रधानतः गीतिकाव्यात्मक अभिनव सृष्टि का दूसरा नाम है[1]।' उन्होंने नाना रसों के गान हिन्दी राग रागनियों के अनुकरण पर लिखे हैं। उन्होंने हिन्दुस्तानी गीतों का किस भाव से अनुभव और साक्षात्कार किया था। यह उनकी उक्तियों से प्रकट होता है। उनकी कई पंक्तियों में हिन्दी राग रागनियों का मानवीकरण भी अभिव्यंजित हुआ है।[2] श्री दिलीपकुमार राय गुरुदेव की हिन्दी की परज रागनी के प्रति रसिकता का एक उदाहरण देते हुए गुरुदेव के ही मत का उल्लेख करते हैं। गुरुदेव लिखते हैं 'हे गुरुजी मुझे काला काला कम्बल खरीद दो, राम जपने के लिये माला लादो और जलपान के लिये तुम्बी लादो मैं बंगाली होने के नाते इस भाव को इस प्रकार व्यक्त करता हूँ —

गुरु आमाय मुक्तिधनेर देखाओ दिशा।
कम्बल मोर सम्बल होक दिवानिशा।
सम्बल होक अपेर माला
नाम मन्दिर दीप्त ज्वाला,
तुम्बिते नाम करब ये जल
मिटबे ताहे विषय तृषा।

तुलनीय मूल हिन्दी—

कारि कारि कम्बलिया गुरुजी मोहे मोल ले दे,
राम जपन को माला ले दे पानी पियन को तुम्बरिया गुरुजी।[1]

इससे स्पष्ट होता है कि गुरुदेव हिन्दी संगीत के कितने बड़े प्रेमी थे।

---

१ भारतीय संगीत का इतिहास पृ १०६।

२ मुलतान येन शून्य गृहचारिणी विधवा सन्ध्यार अश्रुमोचन।
(रवीन्द्र संगीत पृ० ९१)
अर्थात मुलतान जैसे शून्य गृहचारिणि विधवा संध्या का अश्रुमोचन है।
परज येन अवसन्न रात्रि शेषेर निद्रा विह्वलता। (रवीन्द्र संगीत, पृ० ९२)
अर्थात् परज जैसे अवसन्न रात्रि शेष की निद्रा विह्वलता।
कानड़ा येन घनान्धकारे अभिसारिका निशीथिनीर पथविस्मृति।
(रवीन्द्र संगीत पृ० ९२)
अर्थात् कानड़ा जैसे घनान्धकार में अभिसारिका निशीथिनी की पथ विस्मृति।

१ सांगीतिकी पृष्ठ १४६।

उन्होंने इस पद्धति का अनुकरण करके नवभारती के गीतिकाव्य के भाण्डार को अनुपमनीय बना दिया है।[1]

श्री माइकेल मधुसूदन दत्त—

इन्होंने भी हिन्दी साहित्य के अनुकरण पर बँगला गीतों की रचना की है।[2] उनका एक गीत यहाँ दिया जाता है—

जय उमेश शंकर सर्व गुणाकार
त्रिताप संहर महेश्वर।
हलाहलांकित कण्ठ सुशोभित।
मौलि विराजित सुधाकर॥
पिनाक धारक भूत विनायक
त्रिशूल धारक, भयंकर।
गिरिराज नंदिनी सुरम्य सेवित।
चराचर पूजित परात्पर॥

(मधुसूदन ग्रंथावली, विविधा पृ० ७९)

श्री द्विजेन्द्रलाल राय—

श्री नारायण चौधरी इनके विषय में लिखते हैं, 'द्विजेन्द्रलाल राय के बँगला गीतों की समृद्धि विधान में दो बड़े दान हैं एक तो हिन्दी ख्याल के ढंग एकराग की भित्ति पर बँगला गीतों की सृष्टि और दूसरे यूरोपीय पद्धति पर बँगला में कोरस सुर का प्रवर्तन है'[3]।

श्री दिलीपकुमार राय भी द्विजेन्द्रलाल राय की ख्याल प्रेम के विषय में लिखते हैं "बहुधा देखा गया है कि रवीन्द्रनाथ का बँगला गीतों के विकास में ध्रुपद की ओर रुझान गोसाईं जी की अभिभावकता के कारण और श्री द्विजेन्द्रलाल का

---

१ रवीन्द्रनाथेर रागसंगीत बाँगला गान सांगीतिकी, पृष्ठ ११४।

२ देखिये—मधुसूदन ग्रंथावली में शर्मिष्ठा नाटक पृ० २८, ४१ ६६, ८१ ८२ ८४ तथा एकेइ कि बोले सभ्यता पृ० २१ पद्मावती नाटक पृ० ३२, ४२, ६६ एवं कृष्णकुमारी नाटक पृ० २६।

३ बाँगला गानेर समृद्धि विधाने द्विजेन्द्रलालेर बड़दान दुटि-एक, हिन्दी ख्यालेर ढंगे एकक रागेर भित्तिते बाँगला गान सृष्टि, दुइ इयोरोपीय धरणे बाँगलाय कोरास सुरेर प्रवर्तन।

(संगीत परिक्रमा पृ० १

मुख्यत प्रधानत सुरेन्द्रनाथ के अधिनायकत्व के कारण था।[1] इनका एक गीत यहाँ दिया जाता है :—

नील गगन चन्द्र किरण, तारकागण रे।
हेर नयन-हर्षमगन सब भुवन रे।
निद्रित सब कूजन-रव नीरव भर रे।
मोहन नव हेरि विभव मेदिनी तव रे।
चाहित सब स्निग्ध पवन ज्योत्स्ना मगन रे।
मगन मन पुण्य भवन मोहित मन रे।

(द्विजेन्द्रलाल ग्रंथावली पृ० २६६)

उक्त गीत हिन्दी साहित्य की पद्धति पर रचा गया है। अतः यह भाषा की दृष्टि से भी हिन्दी और बंगला दोनों भाषाओं की सम्पत्ति माना जा सकता है। इन्होंने हिन्दी संगीत पद्धति का अनुकरण कर बहुत बंगला गीतों का निर्माण किया है।[2]

काजी नजरुल इस्लाम—

रवीन्द्र संगीत के लेखक का विचार है—'गुरुदेव के समसामयिक और परवर्ती रचयिताओं में श्री द्विजेन्द्रलाल, श्री अतुलप्रसाद और श्री नजरुल का नाम ही एकमात्र उल्लेखनीय है। क्योंकि इन्होंने प्रत्येक ने अपने गीतों की कथा की ही रचना की थी। गुरुदेव के आदर्शानुसार हिन्दी गीतों के ढंग और सुर के प्रभाव से ही बंगला में ख्याल, ठुमरी और गजल गानों में रूप देने का प्रयत्न किया था।[3] गीतिकार

---

१ एक देखा देख-बांगला गानेर दिकाये रवीन्द्रनाथ अपरेर दिके झोंकन प्रधानत श्रीतारापिर अधिनायकत्वाय आर द्विजेन्द्रलाल झोंकन खेयालेर दिके प्रधानत सुरेन्द्रनाथेर अधिनायकत्वाय। (सांगीतिकी पृ० १६६)

२ देखिये द्विजेन्द्रलालेर कतिपय रागमैथिल गान (सांगीतिकी पृ० १६२-६६) राणा प्रतापसिंह पृ० ८ (खंकरा), पृ० २१ (हमीर) पृ० १२ (खमाज) पृ० ७४ (भीमपलश्री); पृ० २१ (बरवा), पृ० १९० (खमाज), द्विजेन्द्र ग्रंथावली (कविता ओ गान) पृ० ७०, काफी पृ० ७१ पुरवी पृ० ८० बिहाग पृ० ८१, भैरवी पृ० ८४ जयजयवन्ती, छायानट, बाग पृ० १८० ६६६।

३ गुरुदेवेर समसामयिक ओ अनुवर्ती रचयितादेर मध्ये द्विजेन्द्रलाल अतुल प्रसाद और नजरुलेर नामइ केवलमात्र करण। कारण ऐरा प्रत्येकइ निजेर गानेर कथा ओ सुर दुइ-इ रचना करेछेन। गुरुदेवेर आदर्श ऐरा ओ हिन्दि गानेर ढंग ओ सुरेर प्रभावेइ बांगला खेयाल ठुमरी ओ गजल गाने के रूपे देवार चेष्टा करे छिलेन। (रवीन्द्र संगीत पृ० २६)

और सुरकार काजी नजरुल के विषय में संगीत परिक्रमा के लेखक का कथन है कि जिन गीतों को हम आधुनिक बँगला गीत कहते हैं उनमें नजरुल का दान अजस्र है। 'मोर घुमघोरे एले मनोहर नमो नमो' आदि गीत मोर आहुत पाछीर सम, 'कुहु कुहु कुहु कुहु कोयलिया' (राग प्रधान—म मानूंगी नामक सुपरिचित हिन्दी गीत का बँगला रूप) प्रभृति अनेक गीतों का नामोल्लेख किया जा सकता जिससे नजरुल के सुर की विशेषता पूर्णमात्रा में प्रकट है।[1] वे आगे फिर लिखते हैं— सुपरिचित हिन्दुस्तानी ख्याल गीत के अनुसरण पर रचित बँगला ख्याल नजरुल की सांगीतिक प्रतिभा की एक और देता है।[2] विद्रोही कवि ने इस प्रकार हिन्दी गीतों और उर्दू गजलों का अनुकरण कर बँगला गीतिकाव्य को सम्पन्न बनाने में योगदान किया है।

हिन्दी भाषा की भाँति हिन्दी संगीत भी व्यापक है। अतः इसी व्यापकता और सांगीतिक श्रेष्ठता के माध्यम से हिन्दी संगीत या गीतिकाव्य का प्रभाव आधुनिक बँगला संगीतकारों और गीतिकाव्यकारों पर स्पष्ट है। बँगला कवियों और साहित्यकारों ने अपनी रुचि और विचार अनुसार इसको अपनी परमप्रिय बँगला भाषा साहित्य एवं संगीत का अभिन्न अंग बनाया है।

४ अनुवादात्मक (बँगला में अनूदित हिन्दी ग्रन्थ)

विश्व-साहित्य में आदान प्रदान का सरलतम मार्ग अनुवाद है। जहाँ दो संस्कृतियों साहित्यों भाषाओं और जातियों का सम्पर्क होता है वहाँ पारस्परिक आदान प्रदान का मार्ग खुल भी जाता है, यह आदान-प्रदान सीधा भी होता है प्रायः यह अनुवादों के सहारे होता है। अन्य समृद्ध देशों तथा भारत में अनुवादों की यह परंपरा प्राचीनकाल से ही चली आ रही है। संस्कृत फारसी और देशी-विदेशी भाषाओं के ग्रंथों का अनुवाद सर्वत्र से होता आया है हिन्दी और बँगला में भी एक दूसरी से अनुवाद हुए हैं।

---

१ आधुनिक बँगला गान बलते ये मेगिर गान बुझि ताते यो नजरुलेर दान अजस्र मोर घुम घोरे एले मनोहर नमो नमो आलपुलि मोर आहुत पाखीर सम 'कुहु कुहु कुहु कुहु कोयेलिया (राग प्रधान—म मानु'मि, मामक सुपरिचित हिन्दी गानेर बाँगला रूप) प्रभृति अनेक गानेरई नामकरा याय याते नजरुलेर सुरेर वशिष्ट्य पूर्णमात्राय प्रकट। (संगीत परिक्रमा पृ० ९८)

२ सुपरिचित हिन्दुस्तानी खयाल गाने अनुसरण रचित बाँगला खयाल नजरुलेर सांगीतिक प्रतिभार आरेकटि दिक।

(संगीत परिक्रमा पृ० १००)

यह विचारणीय विषय है कि अनुवादों को प्रभाव के अन्तर्गत रखा जाय या नहीं। केवल भाषा के रूपान्तर को प्रभाव की कोटि में नहीं रखा जा सकता। भाषान्तर बाहरी वस्तु है पर प्रभाव भीतरी तत्त्व है।

श्री सी० रैबिन अनुवाद की परिभाषा करते हैं— अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा कथित अथवा लिखित कथन एक भाषा जिसमें अनुवाद हुआ हो, अभीष्ट और परिकल्पित कथन अर्थ के साथ उस भाषा में पहले ही विद्यमान हो जिस भाषा से अनुवाद हुआ हो प्रकट हो जाये। इसमें एक अर्थ अथवा कुछ सत्यांश की ओर संकेत करते हुए संक्रम आदि दो विभिन्न तत्त्वों का समावेश होता है। हम उस भाषा को जिसमें पूर्ववर्ती कथन अंकित हो 'अ' तथा उस भाषा को जिसमें अर्थ का परिवर्तन हुआ हो 'ब' कहेंगे।[1]

कई अनुवाद पुनर्सृष्टि (Re-creation) भी होते हैं जैसे—गुरुदेव की अंग्रेजी गीतांजलि केवल बँगला-गीतांजलि का अनुवाद मात्र ही नहीं है वह पुनर्सृष्टि भी है। इसी Re oretion या Re-construction से मिलता-जुलता अनुकूलन (Adaptation) है। वही अनुवाद सर्वोत्तम माना जा सकता है, जो मूल लेखक या कवि के भाव और भाषा को क्षति पहुँचाये बिना दूसरी भाषा में उसके मर्म या आत्मा (Spirit) को पहुँचा दे पूर्णतया प्रेषित (Transmit) कर दे।

अनुवाद ग्रंथ भाषाओं के पारस्परिक-सम्पर्क के द्योतक होते हैं। वे प्रभाव के लिये सामग्री भी उपस्थित करते हैं। किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि जिस भाषा में अनुवाद हुआ हो उस भाषा को अनूदित ग्रंथ ने प्रभावित किया ही हो। इस प्रभाव का निषेध भी निश्चितता के साथ नहीं किया जा सकता। उसके लिये हमें स्वतंत्र साक्षी, भाव और भाषा के सामने से ही निश्चितता के लिये आधार लेना पड़ेगा। जो अनुवाद विचारधाराओं में परिवर्तन लावें भावों में परिष्कार करें या नये प्रयोगों अथवा नयी शब्दावली को प्रचलित करें नई साहित्यिक विधाओं को जन्म दें वे ही प्रभाव के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं।

अनुवाद ग्रंथ भी भाषा और भावों में परिवर्तन लाते हैं। क्योंकि यह एक

---

1 Translation is a process by which a spoken or written utterance takes place in one language which is intended and presumed to convey the same meaning as a previously existing utterance in another language.

It thus involves two distinct factors, a meaning or a reference to some slice of reality We shall call the language in which the first pre-existing utterance is couched language A, and language into which the meaning is transferred language B

—Aspects of Translation. Studies in Communication—2.

सोचने की बात है कि अनुवाद का कोई मूल्य या महत्व नहीं हो तो अनुवाद केवल कोरी बाल्य क्रीड़ा होगी। अनुवाद के भी कारण होते हैं। कुछ कारण इस प्रकार हो सकते हैं —

(१) किसी कवि या ग्रंथ-विशेष का उच्च साहित्यिक गौरव।

(२) आवश्यकतावश प्रभाव की पूर्ति के लिये।

१ जो ग्रंथ या कवि साहित्यिक सौन्दर्य सम्पन्न होता है, उसके ही अधिक अनुवाद होते हैं। विश्व के बड़े-बड़े कवि इसके साक्षी हैं। कालीदास तुलसीदास, शेक्सपीयर और रवीन्द्रनाथ ठाकुर के ग्रंथों के अनुवाद समवतः विश्व की प्रत्येक सभ्य भाषा में प्राप्त होते हैं। गुरुदेव ने कबीर के सौ पदों का अनुवाद उनके दार्शनिक गांभीर्य और भाव-सौन्दर्य से प्रभावित होकर किया था।

२ श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने हिंदी बैताल पच्चीसी का अनुवाद बँगला में आवश्यकतावश प्रभाव की पूर्ति के लिये किया था। अतः अनुवादों से भी एक भाषा का दूसरी भाषा पर प्रभाव होता है। अनुवाद भी अनुकूल धाराओं को प्रभावित करते हैं। कबीर के अनुवाद रहस्यवादी विचारधारा को बल प्रदान करते हैं। तुलसी-ग्रंथों के अनुवाद भक्तिधारा को अवश्य पुष्ट करते हैं। मीरां के पदों के अनुवाद दाम्पत्य प्रेम की वल्लरी को रस सिंचित करते हैं। 'वोल्गा से गंगा अनुवादक की साम्यवादी विचारधारा को अवश्य अनुप्राणित करती है। केवल अनुवाद भी उन भावधाराओं को प्रभावित करते हैं जहाँ प्रभाव के पुष्प प्रस्फुटित होते हैं।

अतः हिंदी से बँगला में अनुवादों की परम्परा अल्पकाल से ही है। हिंदी भक्तमाल का अनुवाद बँगला भक्तमाल कहा जाता है किन्तु यह पद्यिश अविकल अनुवाद नहीं है यह Adaptation है। अवलंबन या आधार भी (Adaptation) अनुवाद या रूपान्तर (Translation) का एक रूप कहा जा सकता है। अनुवादों और आधारित-ग्रंथों (Adapted Works) में भी अन्तर है। अविकल अनुवाद सतश्लोकी समश्लोकी पंक्ति प्रति पंक्ति अनुवाद को ही अनुवाद कहा जाता है। भावानुवाद का भी अनुवाद कहेंगे। भावानुवाद में भाव वही रहता है किसी मात्रा में शब्दावली में अवश्य परिवर्तन हो जाता है। यह अनुवाद पंक्ति प्रति पंक्ति नहीं होता। आधार लेकर जो अनुवाद होते हैं उसमें भाषा का तो रूपान्तर होता ही है। भावों को भी परिस्थिति अनुकूल घटाया-बढ़ाया जा सकता है। आधार लेकर पुराने भावों को नई भाषा के सांचे में ढाला जाता है। नये सांचे में ढालने से सामग्री में भी कुछ परिवर्तन हो जाता है। आधारित अनुवाद नये प्रभावों के द्योतक होते हैं। ऐसे अनुवादों में अनुकूलन क्षमता रहती है।

किसी अंश में यह बात भी सही है कि एक अनुवाद का दूसरी भाषा में होने से

कुछ तो अपनी मूलभाषा की प्रकृति लाता है और कुछ अपनी नई भाषा की प्रकृति को ग्रहण करता है। हर एक अनुवाद थोड़ी-बहुत भाषा में एक नवसृष्टि होती है। वह उस भाषा की सम्पन्नता को बढ़ाता है। यह तो विचारने की बात रहेगी कि हिंदी-ग्रंथों के अनुवादों ने बंगला भाषा और साहित्य को कहाँ तक प्रभावित किया है। किन्तु उन्होंने बंगभारती की समृद्धि को अवश्य बढ़ाया है।

हिंदी-ग्रंथों का अनुवाद अथवा अवलम्बन बंगला में काफी समय से ही होता आया है। नाभादास जी के भक्तमाल का आधार लेकर लालदास बाबाजी ने साधन की मैनासत का अवलंबन लेकर दौलतकाजी ने और जायसी की पद्मावत का आश्रय लेकर आलाओल ने बंगला साहित्य में नयी साहित्यिक परम्पराओं को जन्म दिया जिसके कारण बंगला-साहित्य के इतिहास में एक नया मोड़ उत्पन्न हुआ। हिंदी की अनेक पुस्तकों का आधार लेकर और अनुवाद करके इस्लामिक बंगला-साहित्यकारों ने बंगला साहित्य और भाषा की श्रीवृद्धि की।

किन्तु जिसे ठीक अनुवाद या भाषान्तर कहा जाता है, वह आधुनिक युग में ही प्रचार में आयी है। आधुनिक काल में हिंदी-ग्रंथों का अनुवाद बंगला में हुआ है। अतः हिंदी से बंगला में अनूदित समस्त ग्रंथों की तालिका प्रस्तुत करना अपेक्षित नहीं है। यहाँ स्थाली-पुलाक न्याय से कुछ पुस्तकों की तालिका दी जाती है।

१ 'अनासक्तियोग'—ले० महात्मा गाँधी अनु० विनयकृष्ण सेन १३५२ बंगाब्द, नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२ 'अस्पृश्यों की मुक्ति'— " " " "
३ 'कबीर'—ले० आचार्य क्षितिमोहन सेन नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
४ 'गोदान'—ले० प्रेमचंद, अनु० श्री प्रियरंजन सेन और स्वर्ण प्रभा सेन कलकत्ता सन् १९५२ ई०।
५ 'चित्रलेखा'—ले० भगवतीचरण वर्मा।
६ 'छत्रप्रकाश'—ले० लाल कवि।
७ 'जपजी'—ले० गुरु नानक अनु० किरणचांद दरवेश १९१२ ई० बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता।
८ 'तुलसी ग्रंथावली' दो भाग—ले० तुलसीदास।
९ 'दादू वाणी'—ले० सन्त दादू अनु० श्री योगेशचन्द्र मजूमदार, १९२८ ई०।
१० 'दोहावली'—ले० तुलसीदास अनु० ब्रह्मानन्द चटर्जी १२६१ बंगाब्द।
११ 'नन्ददास का भ्रमर गीत'—ले० नन्ददास अनु० श्री पणवानन्द वाजपेयी।
'पद्मावत'—ले० मलिक मोहम्मद जायसी अनु० सैयद आलाओल।
'प्रेमसागर'—ले० लल्लू जी लाल।

BIBLIOGRAPHY

ENGLISH

Name of the Book.	*Author*	*Press*	*Library*
Anglo Bengali Dictionary of Colloquial expressions	R.P. De	[illegible] Lane, Calcutta.	[illegible] Library Calcutta.
Beginning of Secular Romance in Bengali Literature.	Dr S.N. Ghosal	Visva Bharati [illegible] Niketan 1959	Visva Bharati, Shanti Niketan.
Bengali Ramayana.	Dr D.C. Sen	University of Calcutta	Calcutta University Central Library
Bengali Literature.	J C Ghosh	Oxford University Press London [illegible]	[illegible] Vidya [illegible] University
Chaitanya and his Companions.	Dr D.C. Sen	Calcutta University [illegible]	[illegible] Library Agra.
Descriptive Linguistics	Gleason		
Dictionary of Linguistics.	Mario Apel.	Oxford University London [illegible]	[illegible] Agra University
Eastern Proverbs & Emblems	The Rev J. Long.	[illegible]	
Element of the Science of Language	J.I.S. Taraporewala	[illegible] Calcutta University [illegible]	B S P G Calcutta.
Encyclopaedia of Religion and Ethics.	James Hastings	[illegible]	P B L [illegible] University

No	Name of the Book	Author	Press	Library
11	Encyclopeadia of Americana.		The Americana Corpora tion, New York.	Agra University Central Library
12.	Encyclopeadia of Brittanica.		The Bri ttanica Ltd.	Central Library Agra University
13	Folk Literature of Bengal.	Dr D C Sen	Calcutta Univer sity	National Library, Calcutta.
14.	Folk Literature of Mithila.	Dr J.K. Misra	Tirhuta Publica- tion Allahabad.	„
15	The Grammer of the Hindi Language	S.H. Kallog	Routledge & Kegan- paul 29 Broadway House 68- 75 Carter Lane, London.	
16	A History of Bengali Literature.	Dr Sukumar Sen	Sahitya Akadami New Delhi, 1960	Sahitya Akadami.
17	History of Bengali Language and Literature.	Dr D C. Sen	Calcutta Univer sity 1954.	National Library Calcutta.
18	History of Brajbuli Literature.	Dr Sukumar Sen	Calcutta Univer sity 1935	„
19	History of Indian Philosophy Vol III & IV	S.N Das Gupta	Cambridge Univer sity 1940	„
20	History of Maithili Literature Vol. I.	Dr J.K. Misra	Tirhuta Publica tion Allahabad	
21.	Indian Words in English.	J Subha rao	Oxford at the Clerandon Press, 1954.	H.B.L. Agra University
22.	Indian Philosophy Vols I & II.	Dr S. Radha- krishanan	George Allen & Unwin Ltd. London.	

No	Name of the Book.	Author	Press	Library
23	Introduction to the Science of Languages.	A.H.Sayce		H.B.L. Agra University
24.	Kaleidoscopic Survey of the Indian Languages	V.K. Narasinphan A.Venketecharya V.K.N Charl.	India G Directones & Publications (P) Ltd. Madras 18.	
25	Language.	Edward Spir	Harcourt Brace & Co New York 1921	
26.		Bloom Field		
27	"	J V Vendreys	Routledge & Keganpaul 29 Broad way House 68-75 Carter Lane London.	
28.	Language its nature Development & Origin	Otto Jesperson		
29	Linguistic Change.	E. H. Sturtevant	New Haven Yale University 19.6.	
30	Linguistic Survey of India	J A Greirson		National Library Calcutta
31	New Hindustani Eng Dictonary	S. W Fallon	R.C. Tenple Trumbre & Co London.	Central Lil
32.	Modern Vernacular Literature of Hindustan	J A. Greirson	Asiatic Society 57 Park St Calcutta 16 1880	H.B.L. Agra University
33	Obscure Religious Cults as back ground of Bengal Literature.	Dr S. B. Dass Gupta	Calcutta University 1946.	National Library Calcutta.
34.	One hundred poems of Kabir	Ravindra nath Tagore	Mackellen Co 1916 New York	"
35	Origin and Development of Bengali Language. Vols. I & II	Dr S. K. Chatterji	University of Calcutta 1926.	
36	Philosophy of Ravindranath Tagore	Dr S. Radha krishanan Pike		

No	Name of the Book.	Author	Press	Library
38	Ramkrishan Commomiration Volumes I II, III and IV			National Library Calcutta.
39	Rabindra Nath Tagore his Works and Personality	V Lesny		
40	Semantics.	Hughr	W.H. Northrn Co New York 1941	H.B.L. Agra University
41	Subject & Predicate	Manfred Sardmamm	Edinburgh the University Press 1954.	
42.	The Religion of Man.	Rabindra Nath Tagore		National Library Calcutta.
43	The Vaishnava Literature of Medieval Bengal.	Dr D C Sen	University of Calcutta.	H.P Bagchi, Bani Mandir Library Agra.
44	The Oxford Dictionary of English Proverbs.	William George Smith	Oxford at the Clarendon Press. 1957	H.B.L. Agra University
45	The Concise Oxford Dictionary			
46	The History of Bengali Language	B Mojumdar	University of Calcutta.	H.P Bagchi Bani Mandir Library Agra.
47	Western Influence in the Modern Bengali Literature.	Priya Ranjan Sen	B.M. Dass Gupta Saraswati Library College St. Calcutta 1947	
48.	Les Chants Mystiques Les Dohakosa at Les Carya.	Dr M. Shadidullha	Adrien Maisonneuve. Paris.	Hindi Vidyapith, Agra University

PERIODICALS

1 Asiatic Society of Bengal Journal.
2 Modern Review
3 The Journal of department of Letters, Calcutta University
4 Viswa Bharati Quarterly

सहायक ग्रन्थों की सूची

बँगला

क्रमांक	ग्रन्थ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
१	अन्नदामंगल	भारतचन्द्रराय गुणाकर	बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता (१३१८ बंगाब्द)	वाणी मंदिर श्री हरप्रसाद वाजपेयी आगरा।
२	अप्रकाशित पद रत्नावली	श्री सतीशचन्द्र राय	"	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।
३	आराकान राज सभाय बांगला साहित्य	एनामुलहक अब्दुल करीम साहित्य विशारद	१९३५ ई०	"
४	अभियान	ताराशंकर बंद्योपाध्याय	रंजन पब्लिशिंग हाउस २५।२ मोहन बागान रो कलकत्ता (१९५२ ई०)	वाणी मंदिर आगरा।
५.	इस्लामिक-बांगला साहित्य	डॉ० सुकुमार सेन	वर्द्धमान साहित्य सभा प्रथम संस्करण १९५८ ई०	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
६	उत्सर्ग	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती शांति निकेतन १९०२ ई०	हिन्दी विद्यापीठ पुस्तकालय आगरा।
७	कबीर	श्री क्षितिमोहन सेन	विश्वभारती शांति निकेतन कलकत्ता	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८	श्री कृष्ण कीर्तन	चण्डीदास	वसंतरंजन राय बंगीय साहित्य परिषद् १९२३ बंगाब्द	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रंथागार, कलकत्ता।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
९.	क्षणदा-गीत चिंतामणि	विश्वनाथ चक्रवर्ती	काशीनाथराय वृन्दावन संस्करण १३१५ बं०	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रंथागार, कलकत्ता ।
१०	खेया	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती, शांति निकेतन ।	विश्वभारती शांति निकेतन ।
११	गीत-चंद्रोदय	नरहरि चक्रवर्ती	हरिदास दास श्रीधाम हरि बोल कुटीर, नवद्वीप, प्रथम संस्करण, ४६१ श्रीगौराब्द ।	
१२	गीतांजलि	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती शांति निकेतन १९११ ई० ।	
१३	गीतालि	"	"	
१४	गीतिमाल्य	"	"	
१५.	गीत-वितान तीन खण्ड	"	"	साहित्य परिषद् कलकत्ता ।
१६	गोरक्ष संहिता	अज्ञात नाम कवि	बांग्ला साहित्येर इतिहास से उद्धृत प्रथम खंड वर्द्धमान साहित्य सभा ।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता ।
१७	गोपीचंद्रेर-गान प्र० खंड	श्री विश्वेश्वर भट्टाचार्य	श्री दीनेशचन्द्र सेन कलकत्ता विश्व-विद्यालय, १९२२ ई०	वाणी मंदिर, आगरा ।
१८	गौरचरित चिंतामणि	नरहरिदास चक्रवर्ती	स्वामी हरिदासदास श्रीधाम हरिबोल कुटीर, नवद्वीप ।	
१९.	गौरपद तरंगिणी	श्री जगबंधु भद्र	बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता संस्करण १३१० बं०	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता ।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
२०	गोविंद-दासेर पदावली	गोविन्ददास	वसुमती-साहित्य मंदिर कलकत्ता।	बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता।
२१	गौड़ीय-वैष्णव जीवन	श्री हरिदास दास	श्रीधाम हरिबोल कुटीर नवद्वीप प्रथम संस्करण ४६२ चैतन्याब्द।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२२	गौड़ीय-वैष्णव साहित्य	"		"
२३	चर्य्यापद	श्री मणीन्द्र मोहन बसु	कमला बुक डिपो १५—बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट कालेज स्क्वायर, कलकत्ता।	वाणी मंदिर, आगरा।
२४	चलंतिका	राजशेखर बसु	एम० सी० सरकार एंड संस लि० १४—बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट, कलकत्ता १२।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२५.	चंडीदास पदावली	चंडीदास	वसुमति-साहित्य मन्दिर १६६, बहु बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।
२६	चैतन्य चरितामृत	कृष्णदास कविराज	राधागोविन्दनाथ भक्ति ग्रंथ प्रचार भण्डार, ११ नं० सुरेन ठाकुर रोड बालिगंज कलकत्ता १३५२ बंगाब्द।	वाणी मंदिर, आगरा।
२७	चैतन्य चरितेर उपादान	विमानविहारी मजुमदार	कलकत्ता विश्व विद्यालय कलकत्ता १९३९ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
२८	चैतन्य भागवत	वृन्दावनदास ठाकुर	श्री सुबोधचन्द्र मजुमदार देव साहित्य कुटीर २१।१ झामा पुकुर लेन कलकत्ता १३६१ बंगाब्द ।	वाणी मंदिर, आगरा ।
२९	चैतन्य मंगल	श्री जयानन्द	नगेन्द्रनाथ बसु कालीदास नाग, बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता सं० १९०५ ई० ।	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता ।
३०	जयन्ती उत्सर्ग	चारुचन्द्र भट्टाचार्य	श्री अमरनाथराय रवीन्द्र-परिचय सभा कर्तृक-प्रका शित १३३८ बंगाब्द ।	वाणी मंदिर, आगरा ।
३१	जीवन-स्मृति	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	पुलिन बिहारी सेन विश्वभारती द्वारकानाथ ठाकुर लेन कलकत्ता ।	"
३२	ढोंड़ाई चरित मानस (दो चरण)	सतीनाथ भादुड़ी	बेंगल पबलिशर्स १४ बंकिम चाटु र्ज्या स्ट्रीट, कलकत्ता १२ ।	"
३३	दादू	श्री क्षितिमोहन सेन	विश्वभारती शांति-निकेतन ।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता ।
३४	नाथ संप्रदायेर इतिहास दर्शन ओ साधन प्रणाली	कल्याणी मल्लिक	कलकत्ता विश्व विद्यालय १९५० ई० ।	"
३५	पदकल्पतरु (पांच खण्ड)	श्री वैष्णवदास	श्री सतीशचन्द्रराय बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रन्थागार, कलकत्ता ।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
३६	पद्मावती	सैयद आलाओल	१ हबीबी प्रेस मछुआ बाजार, कलकत्ता १३१८ ब० २ देवनागरी लिपि डॉ० सत्येन्द्र नाथ घोषाल।	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रंथागार, कलकत्ता। हिन्दी विद्यापीठ, आगरा विश्व विद्यालय।
३७	पुरुषोत्तम रवीन्द्रनाथ	अमल होम	एम० सी० सरकार एंड संस १४—बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट कलकत्ता-१२ १३६२ ब०।	वाणी मंदिर आगरा।
३८	पुस्तक-परिचिति	आहमद शरीफ	बांग्ला-विभाग ढाका विश्व विद्यालय १९५८ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
३९.	पुंथि-साहित्य (दो खण्ड)	श्री पंचानन मंडल	विश्वभारती शांति निकेतन १९५८ ई०	विश्वभारती पुंथि शाला शांति निकेतन।
४०	बंगभाषा ओ साहित्य	डॉ० दीनेशचन्द्र सेन	कलकत्ता विश्व विद्यालय १९१४ ई०।	कलकत्ता विश्व विद्यालय केन्द्रीय पुस्तकालय।
४१	बंग-साहित्य परिचय (दो भाग)	"	"	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
४२	बांगला पुंथि साहित्य		ढाका विश्व विद्यालय पाकिस्तान १९५८ ई०	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
४३	बांगला-क्रिया पदेर तालिका	डॉ० रवीन्द्रनाथ टाकुर	विश्वभारती शान्ति निकेतन	हिन्दी विद्यापीठ आगरा।
४४	ब्रह्म संगीत	श्री कार्तिक चन्द्र	नं० ११ कार्नवालिस स्ट्रीट ब्राह्म मिशन प्रेस ब्राह्म सम्वत् ९१।	वाणी मंदिर, आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
४५	बांगला प्राचीन पुथिर विवरण	आब्दुल करीम, साहित्य विशारद	बंगीय साहित्य परिषद् १३२० बंगाब्द ।	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रन्थागार ।
४६	बांग्लार बाउल	श्री क्षितिमोहन सेन	कलकत्ता विश्व विद्यालय १९५४ ई० ।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता ।
४७	बांग्लार वैष्णव भावापन्न मुसल मान कवि	श्री यतीमोहन भट्टाचार्य	बुक सोसाइटी आव इंडिया लि० २ बंकिम चटर्जी स्ट्रीट कलकत्ता १३६६ बंगाब्द ।	वाणी मंदिर, आगरा ।
४८	बांग्लार-बाउल वा बाउल गीत	श्री उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य	ओरियंट बुक कम्पनी ९ श्याम चरण दे स्ट्रीट कलकत्ता १२ । प्रथम सं० १३६४ बंगाब्द ।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता ।
४९	बांग्ला विश्वकोष	नगेन्द्रनाथ वसु	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता ।	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता ।
५०	बांग्ला भाषा प्रसंगेर भूमिका	डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी	कलकत्ता विश्व विद्यालय प्रथम संस्करण १९४९ ।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता ।
५१	बांग्ला साहित्य	डा० मनोमोहन घोष	इण्डियन पब्लिसिटी सोसाइटी २१ बलराम घोष स्ट्रीट कलकत्ता ।	
५२	बांग्ला प्रवाद	डॉ० सुशील कुमार दे	ए मुखर्जी एण्ड कम्पनी लि०, २ कालेज स्क्वायर, कलकत्ता । द्वितीय संस्करण १३५९ बंगाब्द ।	वाणी-मन्दिर, आगरा ।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
२३	बाँगाली ओ बाँगला साहित्य	प्रमथनाथ विशी	श्री शचीन्द्रनाथ मुखोपाध्याय बेंगल पब्लिशर्स १४ बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता १२।	वाणी मन्दिर, आगरा।
२४	बाँगला-साहित्येर इतिहास (चार भाग)	डॉ॰ सुकुमार सेन	वर्द्धमान साहित्य सभा वर्द्धमान।	बंगीय साहित्य परिषद ग्रंथागार, कलकत्ता।
२५.	बाँगाली संस्कृति	गोपाल हालदार	प्रफुल्ल राय बरणी बुक स्टाल १६ वृन्दावन बसु लेन कलकत्ता १९४७ ई॰।	वाणी मन्दिर, आगरा।
२६	बाँगला साहित्येर रूपरेखा (तीन भाग)	गोपाल हालदार	ए मुखर्जी एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड २-कालेज स्क्वायर कलकत्ता १२ १३६२ बङ्गाब्द।	बंगीय साहित्य परिषद, कलकत्ता।
२७	बाँगला भाषार अभिधान (२ भाग)	श्री ज्ञानेन्द्रमोहन दास	दी इण्डियन पब्लिशिंग हाउस २२।१ कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता १३१३ बंगाब्द।	
२८	बाँगला साहित्येर इतिवृत्ति (कथा)	श्री भूदेव चौधरी		नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२९.	बाँगला साहित्येर कथा (प्रथम भाग)	डॉ॰ मोहम्मद शहीदुल्ला	पाकिस्तान १९५८ ई॰	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
३०	बाँगला साहित्येर कथा	डॉ॰ सुकुमार सेन	–	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
३१	बाँगला साहित्य (दो खण्ड)	श्री मणीन्द्रमोहन बसु	श्री धीरोदलालदत्त कमला बुक डिपो, १५-बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट, कलकत्ता (१९४६)	वाणी मंदिर आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
९२	बांगला साहित्ये मुसलमानेर अवदान	डॉ० दीनेशचन्द्र सेन		बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।
९३	बांगालीर गान	श्री दुर्गादास लाहिड़ी	बंगवासी १८।२ भवानी चरणदत्त स्ट्रीट, कलकत्ता (१३१२ बंगाब्द)।	वाणी मंदिर, आगरा।
९४	बांगला प्राचीन पुथिर विवरण तृतीय खण्ड सं०१	बसंतरंजन राय और ताराप्रसन्न भट्टाचार्य		बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।
९५	विचित्र साहित्य	डॉ० सुकुमार सेन	श्री अम्बिका प्रसाद विश्वास इस्ट एण्ड कम्पनी ६२ कैनिंग स्ट्रीट, कलकत्ता १, १९५६ ई०।	वाणी मंदिर, आगरा।
९६	बेताल पंचविंशति	श्री ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	श्री सुनीतिकुमार चटोपाध्याय रंजन पबलिशिंग हाउस २५।२ मोहन बागान रो कलकत्ता १३४६ बंगाब्द।	"
९७	वैष्णव पदावली	डा० दीनेशचन्द्र सेन	कलकत्ता विश्वविद्यालय तीसरा संस्करण १९४६।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
९८	वैष्णव महाजन पदावली	श्री उपेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय	वसुमति साहित्य मन्दिर कलकत्ता।	श्री बुद्धदेव भट्टाचार्य की निजी पुस्तक।
९९	बौद्ध गान ओ दोहा	म० म० हरप्रसाद शास्त्री	बंगीय साहित्य परिषद् ग्रंथागार १३२४ बंगाब्द १९१६ ई० प्रथमबार	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
७०	भक्तमाल ग्रन्थ	श्री लालदास बाबाजी	श्री अविनाश चन्द्र मुखोपाध्याय कवि भूषण श्री पूर्णचन्द्र शील, ४० मदन हाट स्ट्रीट, कलकत्ता। १३१० बंगाब्द।	वाणी मन्दिर आगरा।
७१	भक्तमाल ग्रंथ	श्री लालदास बाबाजी	उपेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय बसुमती साहित्य मन्दिर द्वि० संस्करण, कलकत्ता।	वाणी मंदिर आगरा।
७२	भक्ति रत्नाकर	नरहरि चक्रवर्ती	स्वामी हरिदासदास नवद्वीप हरिबोल कुटीर, गौराब्द ४२१।	बंगीय साहित्य परिषद कलकत्ता।
७३	भक्त कबीर	अध्यापक उपेन्द्र कुमार दास	ओरियण्ट बुक कम्पनी ९ श्याम चरण दे स्ट्रीट कलकत्ता १२। १९५५ ई०।	वाणी मन्दिर, आगरा।
७४	भारतचन्द्र ग्रंथावली	भारतचन्द्रराय गुणाकर	बंगीय साहित्य परिषद् २४३।१ अपर सरकुलर रोड कलकत्ता १३५७ बंगाब्द।	वाणी मंदिर, आगरा।
७५	भानुसिंह ठाकुरेर पदावली	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती शान्ति निकेतन।	विश्वभारती पुस्तकालय शान्ति निकेतन।
७६	भारतेर साधक (चार खण्ड)	शंकरनाथ राय	श्री सुधीर मुखर्जी पारस संडीकेट, ८७ धर्मतल्ला स्ट्रीट कलकत्ता—१३।	वाणी मंदिर, आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
७७.	माध्येर मध्ययुगेर साधनार धारा	आचार्य क्षितिमोहन सेन		नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
७८	भाषार इतिवृत्त	डा० सुकुमार सेन	वर्द्धमान साहित्य सभा वर्द्धमान।	बंगीय साहित्य परिषद, कलकत्ता।
७९.	मध्ययुगेर कवि ओ काव्य	श्री शंकरीप्रसाद बसु	जनरल प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स लि० ११९ धर्मतल्ला स्ट्रीट कलकत्ता।	वाणी मन्दिर आगरा।
८०	मानुषेर धर्म	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्वभारती ग्रन्थालय २ बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट कलकत्ता १९४९ ई०।	वाणी मंदिर, आगरा।
८१	मीराबाई	श्री मन्मथनाथ वसु	इण्डियन असोसियेटेड पब्लिशिंग को० प्रा० लि० ९३ हरिसन रोड, कलकत्ता-७ चतुर्थ संस्करण १९६४ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८२	मीराबाई	श्री भुवनमनसिंह	आदर्श कार्यागार १९१ कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता १९२८ ई०।	लेखक के पास
८३	मृणालिनी	श्री बंकिमचन्द्र चटर्जी	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता। १३४५ बंगाब्द।	वाणी मंदिर आगरा।
८४	मैमनसिंह गीतिका (पूर्व बंगगीतिका)	डॉ० दीनेशचन्द्र सेन	कलकत्ता विश्व विद्यालय १९५८।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८५.	रवीन्द्र-काव्य प्रवाह	श्री प्रमथनाथ बिशी	श्री गौरीशंकर भट्टाचार्य मित्रालय १० श्यामाचरण दे स्ट्रीट प्रथम खण्ड १३५२ बंगाब्द, द्वि० खंड १३५६ ई० कलकत्ता।	वाणी मंदिर, आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
८६	रवीन्द्र साहित्य परिक्रमा (प्र० खंड)	उपेन्द्रनाथ भट्टाचार्य	रमाप्रसाद मिश्र दी बुक हाउस, १५ कालेज स्क्वायर, कलकत्ता (प्र० संस्करण १३५४ बंगाब्द)	वाणी मंदिर, आगरा।
८७.	रवीन्द्र जीवनी या साहित्य प्रवेशिका (चार भाग)	श्री प्रभातकुमार मुखोपाध्याय	विश्वभारती-शांति निकेतन विश्व भारती ग्रंथालय २ बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, कलकत्ता (१३५५ बंगाब्द)	मेथडस लाइब्रेरी कलकत्ता। वाणी मन्दिर, आगरा।
८८	रवीन्द्र जिज्ञासा	श्री तपनकुमार बंद्योपाध्याय	सजीतकुमार बंद्योपाध्याय शांति लाइब्रेरी, कलकत्ता।	वाणी मन्दिर, आगरा।
८९	रवीन्द्रनाथ	श्री नलिनीकान्त गुप्त	रामेश्वर एण्ड को० चन्दन नगर, १३४६ बंगाब्द।	वाणी मन्दिर, आगरा।
९०	रवीन्द्र काव्य निर्झर	श्री प्रमथनाथ विशी	श्री सुरेशचन्द्रदास जनरल प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स ११९, धर्मतल्ला स्ट्रीट कलकत्ता (१३५३ बंगाब्द)	वाणी मन्दिर, आगरा।
९१	रवीन्द्र प्रतिभार परिचय	सुधी रामदास	२२, कार्नवालिस स्ट्रीट कलकत्ता ६ (१३६० बं०)	वाणी मन्दिर आगरा।
९२	रवीन्द्र विचित्रा	प्रमथनाथ विशी	श्री प्रह्लादकुमार प्रामाणिक, ओरियंट बुक कं० ६, श्यामाचरण दे स्ट्रीट कलकत्ता १२।	वाणी मन्दिर, आगरा।

क्रमांक	ग्रन्थ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
८३	रवीन्द्रनाथेर सौंदर्य दर्शन	प्रवास जीवन चौधरी	श्री अमियरतन मुखोपाध्याय ए० मुखर्जी एण्ड कं० (प्राइवेट) लि० २, कालेज स्क्वायर, कलकत्ता १२। प्रथम प्रकाश (२५ वैशाख १३६३ बंगाब्द)	वाणी मन्दिर, आगरा।
८४	रवीन्द्र दर्शन	श्री हिरण्मय बंद्योपाध्याय।	साहित्य संसद् ३२ ए० आपर, सरकुलर रोड कलकत्ता ९। (द्वि० संस्करण १९६१ ई०)	वाणी मन्दिर, आगरा।
८५	रवि रश्मि (दो खण्ड)	चारुचन्द्र बंद्यो-पाध्याय	ए मुखर्जी एण्ड कम्पनी कलकत्ता १३४६ बंगाब्द।	वाणी मन्दिर, आगरा।
८६	रवीन्द्र रचनावली (समस्त खण्ड)	श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर	विश्व भारती शांति निकेतन। २, बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट कलकत्ता। पुनर्मुद्रण १९५८ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता आगरा विश्वविद्यालय हिन्दी विद्यापीठ आगरा।
८७	रवीन्द्र संगीत	श्री शान्तिदेव घोष	विश्वभारती ग्रंथालय ५ बंकिम चाटुर्ज्या स्ट्रीट, कलकत्ता (१३६२ बंगाब्द)	वाणी मन्दिर, आगरा।
८८.	रवीन्द्र साहित्येर परिचय	डॉ० सुधीन सेन	रीडर्स कार्नर ५, शंकर घोष लेन कलकत्ता ६।	वाणी मन्दिर, आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
९९	रवि परिक्रमा	श्री कनक बंद्योपाध्याय	ए मुखर्जी एण्ड को० लि० २, कालेज स्क्वायर कलकत्ता १२। १३६० बंगाब्द।	वाणी मन्दिर, आगरा।
१००	राग ओ रूप (प्रथम भाग)	स्वामी प्रज्ञानानन्द	श्री रामकृष्ण वेदान्त आश्रम दार्जलिंग। १९५७ ई०।	वाणी मदिर आगरा।
१०१	रामनिधि गुप्त	ईश्वरचन्द्र गुप्त	श्री भवतोषदत्त १९५८ ई०।	सम्पादक की निजी पुस्तक।
१०२	रामरसायण	श्री रघुनंदनदास गोस्वामी	आहिरी टोला कामारपाड़ा स्ट्रीट १०-विद्यारत्न चन्द्र कलकत्ता।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
१०३	रामायण	कृत्तिवास ओझा	डा० दीनेशचन्द्र सेन बंगीय-साहित्य परिषद्, कलकत्ता।	बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता।
१०४	विचित्र-साहित्य (प्रथम खण्ड)	डॉ० सुकुमार सेन	श्री अम्बिकापद विश्वास ११६ सीताराम घोष स्ट्रीट कलकत्ता-९।	वाणी मन्दिर, आगरा।
१०५	विद्यापति पदावली	खगेन्द्रनाथ मित्र एवं विमानबिहारी मजुमदार	श्री सुधीरकुमारदास गुप्त कमला प्रिंटिंग वर्क्स १ नं० काशीमित्र घाट स्ट्रीट बागबाजार कलकत्ता नूतन संस्करण १९२६ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
१०६	विद्यापति चण्डीदास	चारुचन्द्र बंद्योपाध्याय	सुबोधचन्द्र मजूमदार देव साहित्य कुटीर २२।५ झामापुकुर लेन, कलकत्ता।	वाणी मंदिर, आगरा।

क्रमश	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
१०७	विद्यापति ठाकुरेर पदावली	नगेन्द्रनाथ बसु	बसुमति साहित्य मन्दिर	बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता।
१०८.	विद्यासागर ग्रंथावली	ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	श्री सुनीतिकुमार चटोपाध्याय, रञ्जन पब्लिशिंग हाउस २५।२ मोहन बागान रो, कलकत्ता १९५४ ई०।	वाणी मंदिर, मथुरा।
१०९.	षोड्श शतकेर बांगला साहित्य	श्री त्रिपुराशंकर सेन	एस० चक्रवर्ती प्रफुल्लकुमुद साह बेरी ५ नं० श्यामा चरण दे स्ट्रीट कलकत्ता १२। १९५१ ई०।	वाणी मंदिर, मथुरा।
११०	संगीत परिक्रमा	नारायण चौधरी	इंडियन आसोसिएटेड पब्लिशिंग को० लि० ९३ हरिसन रोड कलकत्ता १३६२ बंगाब्द।	वाणी मन्दिर, मथुरा।
१११	संगीत मंजरी	रामप्रसन्न बंद्योपाध्याय	४८ बहु बाजार स्ट्रीट, १९१५ ई०	दिल्ली विश्वविद्यालय पुस्तकालय
११२	संगीत ओ संस्कृति (प्रथम तथा उत्तर भाग)	स्वामी प्रज्ञानानंद	श्री रामकृष्ण वेदान्त मठ, कलकत्ता। १९५६ ई०।	वाणी मन्दिर, मथुरा।
११३	साहित्य प्रकाशिका	श्री प्रबोधचन्द्र बागची	कालिदास चटोपाध्याय विद्याभवन विश्वभारती, शांति निकेतन।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
११४	साहित्य साधक चरितमाला (चारों खण्ड)		बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता।	बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता।

क्रमश:	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रस एवं समय	पुस्तकालय
११५.	सांगीतिकी	दिलीपकुमार राय	कलकत्ता विश्व विद्यालय, कलकत्ता १९३८ ई०	वाणी मन्दिर, आगरा।

हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची—

१ चरणदासेर दोहा चरणदास बंगीय-साहित्य-परिषद् पुंथिशाला, कलकत्ता।
२ कबीर गीत रामानन्द यति एशियाटिक सोसाइटी आव बंगाल कलकत्ता। पुंथिसंख्या ब० क्रमांक ए २० समय, १७७६ शकाब्द।
३ तुलसीदास कबीरदास रूपसनातन, मीराबाइर दोहा : प्राचीन बंगला-पुथिर विवरण द्वितीय भाग (पुंथि-परिचय प्रथम एवं द्वितीय खण्ड) श्री पंचानन मण्डल पुंथिशाला विश्वभारती शांतिनिकेतन १९३८ ई०।
४ मीराबाई कलकत्ता विश्वविद्यालय बंगला विभाग पुंथिशाला कलकत्ता।
५ पद्मावती (भाषाप्रीत) कलकत्ता विश्वविद्यालय बंगला विभाग पुंथिशाला कलकत्ता।

६ पदभेद ग्रन्थ पुंथिशाला विश्वभारती शांतिनिकेतन।

पत्र-पत्रिकायें—

१ उद्बोधन
२ प्रवासी
३ बंगीय-साहित्य परिषद् पत्रिका (१९००—१९६२ ई०)
४ वसुमति (मासिक)
५. विश्वभारती पत्रिका
६ युगान्तर
७ सुदर्शन
८ शनिवारेर चिठि

सहायक ग्रन्थों की सूची

हिन्दी

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
१	अपभ्रंश साहित्य	डॉ० हरवंश कोछड़	भारती साहित्य मंदिर, फुव्वारा दिल्ली। संवत् २०११ वि०।	नैशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
२	अवधी-कोष	रामाज्ञा द्विवेदी समीर	हिन्दुस्तानी एकेडेमी उत्तर प्रदेश इलाहाबाद १९५५ ई०।	सुरजमल जालान स्मृति भवन पुस्तकालय, कलकत्ता।
३	अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय (दो भाग)	डॉ० दीनदयालु गुप्त।	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग। सं० २००४ वि०	श्री नागरी प्रचारिणी सभा आगरा।
४	आधुनिक हिन्दी साहित्य	डॉ० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	हिन्दी परिषद् इलाहाबाद यूनिवर्सिटी (१९५४ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
५	उर्दू हिन्दी शब्दकोष	केदारनाथ भट्ट	रामनारायणलाल इलाहाबाद १९५५ ई०।	”
६	उत्तरी भारत की सन्त परम्परा	श्री परशुराम चतुर्वेदी	भारती भंडार, लीडर प्रेस लि० इलाहाबाद। (सं० २००८ वि०।	नैशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।

क्रम	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
७	कबीर	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	हिन्दी ग्रंथ रत्नाकर, कार्यालय बम्बई।	नैशनल लायब्रेरी कलकत्ता।
८	कबीर ग्रंथावली	कबीरदास	श्यामसुन्दरदास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा।
९.	कबीर का रहस्यवाद	डॉ० रामकुमार वर्मा	साहित्य भवन लि० इलाहाबाद। १६४८ ई०।	नैशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
१०	कीर्तिलता (कीर्तिपताका)	विद्यापति ठाकुर		
११	गोरखबाणी (गोमेगुरीबाणी)	डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।	नैशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
१२	जायसी ग्रंथावली	जायसी	रामचन्द्र शुक्ल काशी नागरी प्रचारिणी सभा १६१२ ई०।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा आगरा।
१३	तुलसी ग्रंथावली (दो खण्ड)	तुलसीदास	काशी नागरी प्रचारिणी सभा। सं० २००४ वि०।	नैशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
१४	तुलसी शब्द सागर	हरगोविन्द तिवारी	हिन्दुस्तानी एकेडेमी प्रयाग। १६५४ ई०।	श्री सूरजमल जालान स्मृति भवन कलकत्ता।
१५	दादूवाणी	संत दादूदयाल		„
१६	दोहाकोश	महापंडित राहुल सांकृत्यायन	राष्ट्रभाषा परिषद् पटना। १६५७ ई०	नैशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
१७	नंददास ग्रंथावली	व्रजरत्नदास	काशी नागरी प्रचारिणी सभा सं० २००६ वि०।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
१८	पद्मावत	जायसी	डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, साहित्य सदन चिरगाँव झाँसी। प्रथमावृत्ति (सं० २०१२ वि०)।	नेशनल लायब्रेरी, कलकत्ता।
१९	पुरातत्त्व निबंधावली	राहुल सांकृत्यायन	इंडियन प्रेस लि०, प्रयाग। १९३७ ई०।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।
२०	पुरानी हिन्दी	चन्द्रधर शर्मा गुलेरी	काशी नागरी प्रचारिणी सभा प्रथमावृत्ति। सं० २००६ वि०।	"
२१	फोर्ट विलियम कालेज	डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय	इलाहाबाद यूनिवर्सिटी १९४७ ई० इलाहाबाद।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२२	ब्रजभाषा सूर कोश (शोध ग्रन्थ)	डा० दीनदयाल गुप्त	लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ।	सूरजमल जालान स्मृति भवन लाई० कलकत्ता।
२३	ब्रजभाषा	डा० धीरेन्द्र वर्मा	हिन्दुस्तानी एकेडेमी, प्रयाग। १९५४ ई०।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय, आगरा
२४	बंगला साहित्य की कथा	डा० सुकुमार सेन	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, सं० २००६ वि०।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
२५	बृहत् पर्यायवाची कोश	भोलानाथ तिवारी	किताब महल इलाहाबाद १९५४ ई०।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय, आगरा।
२६	बृहत् हिन्दीकोश	कालिकाप्रसाद	ज्ञान मण्डल बनारस। सं० २०१३ वि०।	

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
२७.	बिहारी भाषाओं की उत्पत्ति और विकास	नलिनी मोहन सान्याल	रामनारायणलाल, इलाहाबाद।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
२८	भक्तमाल	नाभादास प्रिया दास की टीका सहित।	नवलकिशोर प्रेस लखनऊ। पंचम बार सन् १९४० ई०।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा।
२९.	भक्तकवि व्यासजी	वासुदेव गोस्वामी	प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, मथुरा, २००९ वि०।	,,
३०	भारत का भाषा सर्वेक्षण	जार्ज ग्रियर्सन उदयनारायण तिवारी	प्रकाशन शाखा सूचना विभाग प्रथम संस्करण १९५९ ई०।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय आगरा।
३१	भारतीय आर्य भाषा और हिन्दी	डा० सुनीतिकुमार चटर्जी	राजकमल प्रकाशन दिल्ली, १९५४ ई०।	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
३२	भारतीय संगीत का इतिहास	उमेश जोशी	—	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय, आगरा।
३३	भारतीय प्रेमाख्यान की परम्परा	परशुराम चतुर्वेदी	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली १९५६ ई०।	सूरजमल जालान स्मृति भवन, कलकत्ता।
३४	मध्यकालीन धर्म साधना	डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी	साहित्य भवन, इलाहाबाद सं० २०११।	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
३५.	मध्यकालीन प्रेम साधना	परशुराम चतुर्वेदी	आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली (१९५२ ई०)	,,

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
३६	मानस-शब्द सागर	बद्रीदास अग्रवाल ।	काशीप्रसाद विजय कुमार अग्रवाल । १९५५ ई० । ८१ बीडन स्ट्रीट, कलकत्ता ।	सुरजमल जालान स्मृति भवन कलकत्ता ।
३७	मिश्रबंधु विनोद (चार खण्ड)	मिश्रबंधु	गं० पु० मा० लखनऊ	श्री नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा ।
३८	हिन्दी मुहावरे और कहावतें	बालमुकुन्द 'वर्मा'	विद्या प्रकाशन दिल्ली (१९५७ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय आगरा ।
३९	मूल बीजक	कबीरदास	खेमराज श्रीकृष्ण दास सं०, २००८ वि० ।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा आगरा ।
४०	मैनासत	साधन	श्री अगरचन्द नाहटा ग्रंथ वीथिका हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा ।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्व विद्यालय आगरा ।
४१	मैनासत	श्री हरिहरनिवास द्विवेदी	श्री वत्स द्विवेदी विद्या मंदिर प्रकाशन, ग्वालियर प्रथम संस्करण (१९५९)	डा० सत्येन्द्रजी की निजी पुस्तक ।
४२	रवीन्द्र कविता कानन	सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली । (१९५५ई०)	लेखक की निजी पुस्तक ।
४३	राजस्थानी कहावतें	डॉ० कन्हैयालाल सहल	भारतीय साहित्य मंदिर, दिल्ली । (१९५८)	हिन्दी विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा ।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
४४	राजस्थानी-कहावतें (दो भाग)	नरोत्तमदास स्वामी	राजस्थानी साहित्य परिषद् कलकत्ता। (१९५७ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
४५	राधा का विकास	डा० शशी भूषणदास गुप्त		,,
४६.	रामकथा उत्पत्ति और विकास	रेवरेंड फादर कामिल बुल्के	हिन्दी परिषद प्रयाग। विश्व विद्यालय, प्रयाग। (१९५०ई०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
४७.	रामचरितमानस	डा० माताप्रसाद गुप्त	हिन्दुस्तानी एकेडेमी उत्तर प्रदेश इलाहाबाद।	
४८	रास पंचाध्यायी	नन्ददास	ब्रजरत्नदास नागरी प्रचारिणी सभा काशी।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा, आगरा।
४९.	विनय पत्रिका	गोस्वामी तुलसी दास	वियोगी हरि, साहित्य सेवा सदन, काशी (२००६ वि०)	सूरजमल जालान, स्मृति भवन, कलकत्ता।
५०	विद्यापति की पदावली	विद्यापति ठाकुर	बसन्तकुमार माथुर, भारती भाषा भवन दिल्ली। (२००८ वि०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
५१	विद्यापति ठाकुर की पदावली	नगेन्द्रनाथ गुप्त	इंडियन प्रेस प्रयाग एक लिपि विस्तार परिषद् कलकत्ता (१९१०ई०)	लेखक की निजी पुस्तक।
५२	विद्यापति ठाकुर	उमेशचन्द्र मिश्र	हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद। (१९४९ ई०)	सूरजमल जालान स्मृति भवन, कलकत्ता।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
८३	विद्यापति (कीर्तिलता)	विद्यापति ठाकुर	बाबूराम सक्सेना, नागरी प्रचारिणी सभा काशी (सं० २०१० वि०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८४	संगीत शास्त्र	के० वासुदेव शास्त्री	प्रकाशन शाखा सूचना विभाग उत्तर प्रदेश (प्र० सं० १९५८ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
८५.	संस्कृत साहित्य का इतिहास (दो भाग)	कन्हैयालाल पोद्दार	नागरी प्रचारिणी सभा काशी। द्वितीय संस्करण (२०११ वि०)	"
८६	संगीत राग-कल्पद्रुम	श्री कृष्णानन्द व्यास रागसागर	नगेन्द्रनाथ गुप्त, बंगीय साहित्य परिषद् कलकत्ता (१९११ ई०)	"
८७	संत सुधा सार	वियोगी हरि	सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन दिल्ली (१९५३ई०)	सुरजमल जालान स्मृति भवन, कलकत्ता।
८८	सिद्ध साहित्य	डा० धर्मवीर भारती	किताब महल प्रकाशन इलाहाबाद। प्रथम संस्करण (१९५५ ई०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८९.	सुन्दर ग्रंथावली	सुन्दरदास	नागरी प्रचारिणी सभा काशी।	श्री नागरी प्रचारिणी सभा आगरा।
९०	सूर की भाषा	डा० प्रेमनारायण टंडन	हिन्दी साहित्य भंडार, गंगाप्रसाद रोड लखनऊ (१९५७ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
९१	सूर ब्रजभाषा शब्दकोष (२ भाग)	डा० दीनदयाल गुप्त	लखनऊ विश्वविद्यालय लखनऊ।	सुरजमल जालान स्मृति भवन कलकत्ता।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रन्थकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
६२	सूरसागर (२ भाग)	डा० नन्ददुलारे वाजपेयी	नागरी प्रचारिणी सभा काशी (प्र० सं० २००७ वि०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
६३	सोलहवीं शती के हिन्दी और बंगाली वैष्णव कवि	डा० रत्नकुमारी	भारती साहित्य मन्दिर दिल्ली (१९५७ ई०)	"
६४	हिन्दी काव्य में निर्गुण सम्प्रदाय	डा० पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल		सूरजमल जालान स्मृति भवन कलकत्ता।
६५.	हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों का त्रयोदश त्रैवार्षिक विवरण (सन् १९२६ २८ई०)	डा० हीरालाल	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी। (सं० २०१०वि०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।
६६	हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग	नामवरसिंह	साहित्य भवन लिमिटेड इलाहाबाद (१९५४ई०)	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
६७	हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं का वैज्ञानिक इतिहास	समशेरसिंह नरूला	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली। (१९५७ई०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
६८	हिन्दी उर्दू और हिन्दुस्तानी		हिन्दुस्तानी एकेडेमी इलाहाबाद (१९३२ ई०)	डी० ए० वी० कालेज जालन्धर।
६९	हिन्दी काव्यधारा	राहुल सांकृत्यायन	किताब महल प्रकाशन इलाहाबाद (१९४५ई०)	नेशनल लाइब्रेरी, कलकत्ता।
७०	हिंदी बांगला अभिधान	श्री गोपालचन्द्र वेदान्त शास्त्री	बंगाल भाषा एडुकेशन सोसाइटी कार्नवालिस स्ट्रीट श्याम बाजार, कलकत्ता ४।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
७१	हिन्दी काव्यालंकार सूत्र	आचार्य वामन	डा० नगेन्द्र आत्माराम एंड संस दिल्ली। (१९५४ई०)	हिन्दी विद्यापीठ, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।
७२	हिन्दी प्रेमाख्यान काव्य	डा० कमल कुल श्रेष्ठ	मथुरा प्रसाद शिवहरे, अजमेर (१९५३ ई०) प्र० संस्करण।	"
७३	हिन्दी व्याकरण	कामताप्रसाद गुरु	नागरी प्रचारिणी सभा काशी।	"
७४	हिन्दी भाषा का इतिहास	डा० धीरेन्द्र वर्मा	हिन्दुस्तानी एकेडेमी उत्तर प्रदेश प्रयाग (१९५३ ई०)	"
७५	हिन्दी भाषा का उद्गम और विकास	उदयनारायण तिवारी	साहित्य भवन इलाहाबाद (१९५७ ई०)	
७६	हिन्दी मुहावरा कोश	भोलानाथ तिवारी	किताब महल इलाहाबाद। (१९५४ई०)	"
७७	हिन्दी पर फारसी का प्रभाव	पं० अंबिकाप्रसाद वाजपेयी	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग (द्वि० संस्करण सं० २००१ वि०)	"
७८	हिन्दी विश्वकोश	श्री नगेन्द्रनाथ बसु	९-विश्वकोष लेन बाग बाजार कलकत्ता (१९२४ई०)	"
७९.	हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डा० रामकुमार वर्मा	रामनारायणलाल इलाहाबाद। च० संस्करण (१९५८ ई०)	"
८०	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल	नागरी प्रचारिणी सभा काशी (छठा संस्करण २००७ वि०)	"

क्रमांक	ग्रंथ	ग्रंथकार	प्रेस एवं समय	पुस्तकालय
८१	हिन्दी साहित्य का सुबोध इतिहास	डा० गुलाबराय	साहित्य रत्न भंडार आगरा (१९५५ ई०)	लेखक की निजी पुस्तक।
८२	हिन्दी साहित्य	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी	अतरचन्द कपूर एंड संस कश्मीरी गेट दिल्ली (१९५२ ई०)	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
८३	हिन्दी साहित्य का आदिकाल		बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना (१९५२ ई०)	नेशनल लाइब्रेरी कलकत्ता।
८४	हिन्दी साहित्य की भूमिका		हिन्दी ग्रन्थरत्नाकर, बम्बई (१९४० ई०)	"
८५.	हिन्दी विद्यापीठ ग्रंथ वीथिका		डा० विश्वनाथ प्रसाद हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।	हिन्दी विद्यापीठ आगरा विश्वविद्यालय आगरा।
८६	हिन्दी शब्दसागर	श्यामसुन्दर दास	नागरी प्रचारिणी सभा काशी। (१९२९ ई०)	"
८७	हिन्दी साहित्य का बृहत इतिहास (प्रथम भाग)	राजबली पाण्डेय	नागरी प्रचारिणी सभा काशी (सं०२०१४ वि०)	"
८८	हिन्दी में उच्चतर साहित्य	मंगलनाथसिंह	राजबली पाण्डेय नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी प्रथम बार (सं० २०१४ वि०)	"
८९	हिन्दी साहित्य कोष	डा० धीरेन्द्र वर्मा	ज्ञानमण्डल लिमिटेड बनारस (प्रथम संस्करण सं० २०१५)	"

पत्र-पत्रिकायें

१ अवन्तिका।
२ आलोचना।
३ कल्याण (विशेषांक)।
४ नागरी प्रचारिणी सभा पत्रिका, काशी।
५ भारतीय साहित्य।
६ विशाल भारत।
७ सरस्वती।
८ साहित्य सम्मेलन पत्रिका प्रयाग।
९. साप्ताहिक हिन्दुस्तान।
१० साहित्य-सन्देश।

अप्रकाशित प्रबन्ध :

१ मध्ययुगीन भक्ति एवं सूफी साहित्य में प्रतीकतत्त्व ले० डॉ सत्येन्द्र सन् १९५७ ई०। (अब प्रकाशित)।
२ हिन्दी में अंग्रेजी के आगत शब्दों का भाषा तात्त्विक अध्ययन लेखक डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया प्रयाग १९५८।

अपभ्रंश

१ पउमचरिउ लेखक—स्वयंभू, सं० आचार्य जिनविजय मुनि, डॉ० हरिवल्लभ चुन्नीलाल भायाणी सिंघी-जैन-शास्त्री-शिक्षापीठ—भारतीय विद्या भवन, बम्बई। प्रथम भाग वि० सं० २००९।
२ प्राकृत-पैंगलम चन्द्रमोहन घोष ऐशियाटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल। १९४० ई०।

संस्कृत

१ ऋग्वेद
२ श्रीमद्भागवत
३ नारद भक्ति सूत्र (गीताप्रेस गोरखपुर)
४ काव्य प्रदीपम्
५ महापुराण
६ काव्यालंकार
७. उज्ज्वल नीलमणि

सहायक ग्रन्थों की अतिरिक्त सामूहिक सूची

१ अकबरी दरबार के हिन्दी कवि—डॉ० सरयूप्रसाद।

२ काव्य परिक्रमा—श्री अजितकुमार चक्रवर्ती विश्वभारती ग्रन्थालय १३६२ बं०।

३ उपनिषद् रवीन्द्रनाथ प्रभृतिर मौ बाँगला साहित्य - श्री असितकुमार बंद्योपाध्याय श्री शशिभूषणदास गुप्त।

४ कवि जीवनी—ईश्वरचन्द्र गुप्त रचित, श्री भवतोष दत्त सम्पादित १९२८ ई०।

५ भक्ति का विकास—डॉ० मुंशीराम शर्मा—चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी १९५८।

६ रवीन्द्र संगीतेर भूमिका—कणिका बंद्योपाध्याय एम० सी० सरकार।

७ रवीन्द्र काव्यालोक—अमिता मित्र।

८ रवि प्रदक्षिण—श्री मोहितलाल मजुमदार, बंगभारती ग्रंथालय। १३६२ बं०।

९. रवीन्द्रनाथ—अजितकुमार चक्रवर्ती विश्वभारती १९५४ ई०।

१० रवि दीपिता—श्री सुरेन्द्रनाथदास गुप्त।

११ रवीन्द्र काव्य कालिदासेर प्रभाव—डॉ० विमलज्योति समद्दार।



पत्र-पत्रिकायें

१ अवन्तिका।
२ आलोचना।
३ कल्याण (विशेषांक)।
४ नागरी प्रचारिणी सभा पत्रिका, काशी।
५ भारतीय साहित्य।
६ विशाल भारत।
७ सरस्वती।
८ साहित्य सम्मेलन पत्रिका प्रयाग।
९ साप्ताहिक हिन्दुस्तान।
१० साहित्य-सन्देश।

अप्रकाशित प्रबन्ध

१ मध्ययुगीन भक्ति एवं सूफी साहित्य में वार्तातत्त्व ले० डॉ० सत्येन्द्र सन् १९५७ ई०। (अब प्रकाशित)।
२ हिन्दी में अंग्रेजी के आगत शब्दों का भाषा तात्त्विक अध्ययन लेखक डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया अप्रैल १९५८।

अपभ्रंश

१ पउमचरिउ लेखक—स्वयंभू, सं० आचार्य जिनविजय मुनि डॉ० हरिवल्लभ चुन्नीलाल भायाणी, सिंघी-जैन-शास्त्री-विद्यापीठ—भारतीय विद्या भवन बम्बई। प्रथम भाग वि० सं० २००९।
२ प्राकृत-पैंगलम चन्द्रमोहन घोष ऐशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल। १९५० ई०।

संस्कृत

१ ऋग्वेद
२ श्रीमद्भागवत
३ नारद भक्ति सूत्र (गीताप्रेस गोरखपुर)
४ भाषा परीक्षा
५ महापुराण
६ काव्यालंकार
७ उज्ज्वल नीलमणि

सहायक ग्रन्थों की अतिरिक्त सामूहिक सूची

१ अकबरी दरबार के हिन्दी कवि—डॉ० सरयूप्रसाद।

२ काव्य परिक्रमा—श्री अजितकुमार चक्रवर्ती, विश्वभारती ग्रंथालय १३६२ बं०।

३ ऊनविंश शताब्दीर प्रथमार्ध ओ बांगला साहित्य—श्री असितकुमार बंद्योपाध्याय श्री शशिभूषणदास गुप्त।

४ कवि जीवनी—ईश्वरचन्द्र गुप्त रचित श्री भवतोष दत्त सम्पादित १९५८ ई०।

५ भक्ति का विकास—डॉ० मुंशीराम शर्मा—चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी १९५८।

६ रवीन्द्र संगीतेर भूमिका—कणिका बंद्योपाध्याय, एम० सी० सरकार।

७ रवीन्द्र काव्यालोक—अमिता मित्र।

८ रवि प्रदक्षिण—श्री मोहितलाल मजुमदार, बंगभारती ग्रंथालय। १३६२ बं०।

९ रवीन्द्रनाथ—अजितकुमार चक्रवर्ती विश्वभारती १९५८ ई०।

१० रवि दीपिता—श्री सुरेन्द्रनाथदास गुप्त।

११ रवीन्द्र काव्य कालिदासेर प्रभाव—डॉ० विमलकांति समदार।

